राजस्थानी रनिवास

राहुल सांकृत्यायन

१९५३

राहुल-प्रकाशन, मसूरी

प्रकाशिका—
कमला देवी
राहुल-प्रकाशन
हैपीवेली, मसूरी

मुद्रक
श्यामसुन्दर श्रीवास्तव
नेशनल हेराल्ड प्रेस,
लखनऊ

प्राक्कथन

मेरी इस पुस्तक के बारे मे कहा जा सकता है, कि यह देर से लिखी गई, क्योकि इसमे राजस्थान की सात पर्दे मे रहनेवाली जिन रानियो और ठाकुरानियो की बेबसी, दु खगाथा और वहा के पुरुषो की स्वेच्छाचारिता का वर्णन किया गया है, वह अब अतीत की वस्तु होने लगी है, इसलिए इससे परतन्त्र असूर्यम्पश्याओ को अन्धकार मे सहायता नही मिल सकती। इसका उत्तर यह भी हो सकता है, कि इतिहास से विस्मृत हो जानेवाली इस जीवन का लिपिबद्ध होना जरूरी है, ताकि असूर्यम्पश्याओं की अगली सन्ताने तथा इतिहास के प्रेमी भी उनके बारे मे जान सके। साथ ही यह भी ध्यान मे रखने की बात है, कि यद्यपि राजस्थान के तहखाने टूट रहे है और उनके भीतर पीढियो से पले प्राणी बाहर निकलते आ रहे है, लेकिन तो भी तहखानो के बिलकुल साफ और खतम होने मे कुछ देर लगे बिना नही रहेगी, इसलिए हो सकता है, स्वेच्छा से मालिक के अस्तबल के किनारे फेरा लगानेवाली मुक्त-दासियो को इस पुस्तक से कुछ सहायता भी मिल जाये।

इस पुस्तक मे सभी स्थानो और व्यक्तियो के नामो को बदल दिया गया है, इसका कारण स्पष्ट है——लेखक व्यक्ति को थोडा और सामन्त-समाज को ज्यादा दोषी मानता है, इसलिए व्यक्ति का नाम देकर उसको मानसिक कष्ट पहुचाने से कोई फायदा नही। हो सकता है, घटनाओ और व्यक्तियो के समीप रहनेवाले पाठक उन्हे पहचान जाय, लेकिन उन्हे भी हर एक व्यक्ति के सभी पहलुओ को मिलाकर अपनी राय देनी चाहिए। इस पुस्तक मे स्थान-स्थान पर व्यक्तियो के गुणो का भी चित्रण हुआ है। हतभागिनी गौरी के दु खो का कारण आप ठाकुर साहब को कह सकते है, लेकिन साथ ही जब यह भी देखते है, कि कितनी ही बार वह गढे से बाहर निकलने की कोशिश करते है, लेकिन सफल नही होते। सौत के ऊपर आप गुस्सा कर सकते है, लेकिन वह भी क्या करे ? उसे अपने को सुखी रखना है। दाव-पेच खेलती है, केवल इसीलिए कि कही उसके भाग्य का फैसला

दूसरे के फेंके पासे द्वारा न हो जाय। साथ ही वह अपने वर्ग मे इसी तरह का शिष्ट-आचार देखती है, इसलिए उसे उसका अनुसरण करना बुरा नही लगता। सबसे अधिक दोषी आप सेठ को ठहरा सकते हे। उसके चरित्र मे सचमुच कही पर भी शुक्ल स्थान दिखलाई नही पडता, लेकिन वह भी सामन्ती समाज का विधाता नही। हा, वह उस वर्ग का प्रतिनिधि जरूर है, जो कि पेड़ पर से गिरे आम को बीच मे ही से अपने हाथ मे आज किये हुए है। उसके चरित्र से यही मालम होगा, कि सेठो का हृदय सामन्तो से भी निकृष्ट है।

यह कोई उपन्यास नही है, इसे कहना शायद अनावश्यक है। यहा आई हुई घटनाए १९१० ई० से १९५२ ई० तक की है। इस सीमा को एकाध ही जगह उल्लघन किया गया है। सारी घटनाए राजस्थान की है, एकाध जगह ही उन्होने बाहर पैर रक्खा है।

मसूरी, २--७--५२ राहुल साकृत्यायन

समर्पित

इसी दुखियारी गौरी को
जिसने अपनी और अपनी
बहिनों की गाथा सुनाई

विषय-सूची

—— ० ——

तैयार होता? ठाकुर का वश भले ही निर्वंश हो जाता, लेकिन हिन्दू उसके लिए इतनी दूर तक जाने के लिए तैयार न होते। ठाकुर ने अपने नवजात शिशु को बकरी के खून मे नहलाया, लेकिन राजपूतो मे बहुप्रचलित जगली सूअर के शिकार और मास को हराम कर दिया, और तभी से सलमिया राजपूत केवल हलाल किये हुए जानवर के ही मास खाने लगे। यह दोनो रूढिया बीसवी शताब्दी के प्रखर बुद्धिवाद के प्रकाश मे बहुत कुछ लुप्त हो गई। सलीम के आशीर्वाद से सन्तति चलने के कारण जसपुर के राजकुल का यह वश सलमिया कहा जाने लगा, और जिस प्रदेश मे इनकी ठाकुराइया बनी, उसे 'सलमाडा' कहा जाने लगा।

एक समय तो मालूम होता था, कि सलमिया नाम का कोई कुल धरती पर अपना अस्तित्व नही रख सकेगा, किन्तु पीछे खानदान इतना बढा, कि नरपुर के सलमिया ठाकुर नरसिंह के नौ बेटो के अपने अलग-अलग नौ गढ कायम हो गये। मगलपुर भी सलमियो का इसी प्रकार का एक गढ था, जिसके गद्दीधर ठाकुर जीवसिंह थे। ठाकुर जीवसिह के चार पुत्रो मे ईसरसिंह मगलपुर के उत्तराधिकारी हुए, और उनके कनिष्ठ सहोदर बलवन्तसिंह नरगढ के ठाकुरो मे एक के निस्सन्तान होने पर वहा गोद (दत्तक) गये। ठाकुर जीवसिंह की दूसरी पत्नी के दो पुत्रो मे रूडसिह भी इसी तरह नरगढ (नरपुर) के एक ठेकाने मे गोद गये। नरपुर मे तब चार ठेकाने हो गये थे, और जब किसी ठेकाने के ठाकुर का कोई अपना पुत्र नही रहता, तो वह अपने भाई-बन्दो के लडके को लेकर पुत्रवान् बनता।

ठाकुर बलवन्तसिंह अपने कुल के एक परिवार की निस्सन्तानता दूर करने के लिए नरपुर गये थे, लेकिन उन्हे भी अपने उत्तराधिकार के लिए पुत्र छोडने का सौभाग्य नही प्राप्त हुआ।

गौरी की माता शान्तिकुमारी लठिया वश की थी। जनपुर के सम्बन्धी लठिया ठाकुरो मे से एक का ठेकाना पिहुवा था। यही के ठाकुर के छोटे भाई ठाकुर जुलुमसिह महाराजा राखीसिंह के समय जयपुर-दरबार के कृपापात्र बन गये और उन्हे जयपुर की ओर से जागीर भी मिली। उनके पुत्र गजसिह की ही पुत्री ठाकुरानी शान्तिकुमारी थी, जिनका देहान्त सन १९४२-४४ ई० मे हुआ। जैसा कि पहले कहा, 'गौरी' इन्ही ठाकुरानी की पुत्री थी। नरपुर के चार ठाकुर कुलो में दो के स्वामी मगलपुर से गोद लेकर गये। ठाकुर बलवन्तसिह और ठाकुर रूडसिह दोनो चचा-ताऊ के लडके थे। रूडसिंह के मरने पर फिर बालसिह को गोद लेना पडा। ठाकुर बलवन्तसिह के दो लडके हुए थे, किन्तु वह बाल्य मे ही

जाते रहे। उनका ब्याह नरपुर गोद जाने के बाद हुआ, और जब उनकी कोई पुत्र-सन्तान नही रही, तो उन्हे भी गोद लेकर ही पुत्रवान् बनना पडा।

ठाकुर बलवन्तसिह के बडे सहोदर ईसरसिह दीर्घ-जीवी रहे। उनके सात लडके हुए, लेकिन सब मर गये, और अन्त मे उन्होने भरतसिह को गोद लिया। पुत्री गौरी को तो ठाकुर ईसरसिह पुत्री नही पुत्र की तरह मानते थे। राजस्थान के राजपूतो मे पुत्री भारी अभिशाप समझी जाती थी। कोई भी राजपूत पुत्री का मुख नही देखना चाहता था, और अग्रेजो के शासन छा जाने तथा बहुत-से कानूनी निर्बन्धो के होने के बाद भी अभी तक छुटभैये राजपूत अपनी लडकियो को मार डालते रहे हैं। अधिक दया दिखानेवाले माता-पिता अफीम चटाकर सद्योजात बालिका का जीवन खतम कर देते। दूसरा बहुप्रचलित तरीका था--चौडे मुह के घडे मे सद्योजात बालिका को रखकर उसके मुह पर खेरी (जेर) को रख देते, जिसके कारण सास के लिए हवा न मिलने से शिशु तुरन्त मर जाता। फिर उसे गाड आते थे। कभी-कभी गाडने पर कोई-कोई शिशु जीवित भी देखा गया। यशपाल ने अपने जीवन-स्मरणो मे एक जगह लिखा है, कि असाध्य रोग के कारण उसे अपने कुत्ते को जहर दिलवाकर मारना पडा, उस वक्त उसकी आखो मे आसू भर आये, और उसके बाद से फिर उसे हिम्मत नही हुई, कि दूसरे कुत्ते को पाले। लेकिन यह राजपूत माता-पिता न जाने किस धातु के बने थे, कि अपनी अबोध सन्तान को दुनिया को पहली आखो से देखने का भी अवसर न देकर अपने हाथो मार डालते। लेकिन यह एक किसी खास आदमी की बात तो नही थी। सारी जाति की जाति इस कार्य को जातीय और धार्मिक कृत्य समझकर शताब्दियो से करती आ रही थी, फिर उसमें निर्दयता और अमानुषिकता का प्रश्न कैसे उठ सकता था? पति के मरने पर स्त्रियो को सती कराना भी तो इसी तरह का एक निष्ठुर रवाज था, जब कि मुह से कुछ न-बोलनेवाली अबोध बालिका को नही, बल्कि सोच-उमझ रखनेवाली नारी को भी जीते-जी आग मे जला दिया जाता!

गौरी को जहा तक अपने कुलवालो के बारे मे देखने-सुनने का मौका मिला था, उसे पता नही है, कि ठाकुरो मे भी लडकियो को मारा जाता था। उसे किसी अपनी सम्बन्धिनी के सती होने की बात भी मालूम नही है।

× × ×

ठेकाने के ठाकुर आखिर कुछ पीढियो पहले गुजरे उसी करमा, लठिया, भँवरी, सरगा गद्दीधरों के ही तो राजकुमार थे, इसलिए उनका दरबार, उनका अन्त.पुर तथा सारी जीवन-चर्या सामर्थ्य के अनुसार जसपुर-जनपुर-जलपुर-उग्रपुर

के दरबारो का ही छोटा रूप था। उन्ही बडे दरबारो के गुण और दोष इनके यहा भी पाये जाते थे। स्त्रिया ठाकुरवश और राजवश मे पैदा होने के कारण पुण्य-भागिनी नही बल्कि वस्तुत अभानिगी थी। परदा इतना जबर्दस्त था, कि अन्त-पुर से बाहर झाक तक नही सकती थी। उसी घर मे या आगन मे उन्हे अपना सारा जीवन बिताना पडता था। यदि सास कठोर न हुई, तो वह अपनी बहुओ और लडकियो को आगन मे आख-मिचौनी या दूसरे साधारण से खेल खेलने को छुट्टी दे देती, नही तो सास के जीवित रहने तक हाथ-पैर बाधकर पडा रहना ही उनकी एकमात्र जीवन-चर्या थी। हाथ से उन्हे कोई काम करना महापाप था। ठेकाने की ठाकुरानियो मे शायद ही कोई एक-दो तरह का भी खाना पका सकती हो। खाना बनाने के लिए उनके यहा पुश्तैनी ब्राह्मण और दारोगा (जाति) मौजूद थे, फिर ठाकुरानी को अपने हाथ से खाना बनाने की क्या अवश्यकता? अपनी परिचिताओ मे से गौरी एक ही दो का नाम ले सकती है, जो कि किसी नौकर के स्वस्थ और सशक्त न रहने पर अपने स्वामी को सब कुछ रहते भूखा मरने से बचा सकती। ठाकुरवश में पैदा हुई महिलाओ को बाल्य ये पितृकुल मे रहकर अन्त पुर के नियन्त्रणो के साथ शारीरिक-परिश्रमहीन जीवन बिताना पडता था। किसी समय राजपुताना के इतिहास मे वीर-रमणिया रही, जो मत्यु से खेला करती थी। मृत्यु से तो शायद अभी भी खेलती है, लेकिन स्वेच्छा से नही, और न किसी शत्रु के मद को चूर्ण करने के लिए!

जब ठाकुर लोगो के लिए भी पढने-लिखने की बहुत पर्वाह नही थी, तो उनकी लडकियो के बारे मे क्या कहना? लेकिन इस विषय मे गौरी कुछ अधिक सौभाग्य-शालिनी थी। पितृवचिता होने पर भी ठाकुर ईसरसिंह जैसा वात्सल्यपूर्ण हृदय वाला अभिभावक चचा उसे मिला था। ठाकुर ईसरसिह अपनी अनुज-बधू को बहुत मानते थे, और वह अक्सर मगलपुर मे रहती थी। पति के मरने के बाद तो बल्कि मगलपुर ही उनका निवासस्थान बन गया था। नरपुर से नौ मील पर मखनपुर मे पिता की कोठी थी, जहा पर गौरी का जन्म हुआ था। जब ताऊ ईसर-सिंह को पुत्री के जन्म का पता लगा, और शायद खबर देनेवाले ने बडे सकोच के साथ इस दु खजनक घटना को उनके पास तक पहुचाया, तो ठाकुर ईसरसिह ने तुरन्त अपने परिजनो को हुक्म दिया—"पुत्री नही पुत्र हुआ, इसलिए तुम लोग गाना-बजाना करो।" राजपूताने की बहुत कम राजवशजा या साधारण-वशजा राजपूत-लडकियो को ऐसा सौभाग्य प्राप्त हुआ होगा। डेढ वर्ष बाद पिता के मर जाने पर तो अब ठाकुर ईसरसिह गौरी को अपनी आखो की पुतली बनाकर रखते

थे। जब दरबार लगता, तब भी गद्दी-मसनद पर ठाकुर के साथ उनकी नन्ही सी बिटिया बैठी रहती। जब दरबारी किस्से-कहानिया कहते, तो भी वह वहा मौजूद रहती। घर मे बल-बच्चो के नाम से केवल नौकरो के ही थे, इसलिए गौरी को उन्ही के साथ खेलना पडता। बहुत समय तक तो उसे पता नही लगा, कि मुझमें और दूसरे बालको मे क्या अन्तर है ? वह छत के ऊपर चली जाती और साथ ले गई चीज को बालको के साथ बाटकर खाती। जूठे-मीठे का अभी उसे कुछ पता नही था।

राजस्थान मे भारत की दूसरी जगहो की तरह ही अधिक सख्या गरीबो की है। ठाकुर ईसरसिंह बडे दयालु स्वभाव के थे। उनके यहा गरीबो को समय पर खाना भी दिया जाता और जाडे के दिनो मे तो ड्योढी मे सैकडो स्त्री-पुरुष जमा हो जाते, जिन्हे वह रुई-भरी रजाइया या अगरखे बाटते। वह पुराने चाल के ठाकुर थे। अभी विलायती साहबो के सम्पर्क मे आकर उनका जीवन बहुत खर्चीला नही हो गया था, जिसके कारण कि ठेकाने की सारी आमदनी मोटरो और विलायती विलास-सामग्रियो पर खर्च हो जाती। गौरी को अपने बालपन की जीवन-घटनाओ मे से एक याद है। उस समय वह शायद आठ-नौ वर्ष की होगी। उसने देखा कि उसके साथ खेलनेवाली लडकी का बोर (सिरफूल) चादी का है। उसे क्या मालूम कि उसके अभागे देश मे ऐसी लडकिया बहुत है, जिनको चादी का बोर भी नसीब नही होता। उसने धीरे से अपनी दादी की सन्दूकची को खोला और उसमे से सोने का कोई दाना ले जाकर लडकी को दे दिया।

ठाकुर ईसरसिंह के असाधारण स्नेह का एक फल यह हुआ, कि गौरी के लिए अक्षर-ज्ञान भी आवश्यक समझा गया। पहले जोशी ने आकर वर्ण-परिचय कराया, फिर सात-आठ वर्ष की उमर मे मास्टर ने बाकायदा पढाना शुरू किया। घर और बाहर यद्यपि मारवाडी बोली जाती थी, और आज भी बहुत-सी ठाकुरानिया और रानिया ऐसी मिलेगी, जो मारवाडी मे ही बोल सकती है। लेकिन, शिक्षा मे मारवाड़ी का कोई स्थान नही। उसे तो हिन्दी मे ही होना चाहिए। पाच-छ वर्ष (१३ वर्ष की उमर) तक गौरी अपने मास्टर से हिन्दी और कुछ अग्रेजी भी पढती रहती। थोडा-सा गणित भी पढाया गया, लेकिन बाकायदा स्कूल की पढाई न होने के कारण उसे इतिहास आदि दूसरे विषयो का कोई परिचय नही कराया गया। ताऊजी का कृतज्ञ होना चाहिए, जो उसे इतना भी पढने का मौका मिला, नही तो दूसरी असूर्यम्पश्याओ की तरह उसे भी नौकर-नौकरानियो के किस्से-

कहानिया और समय-समय पर हो जानेवाले कथा-पुराणो तक ही अपनी शिक्षा को सीमित रखना पडता। कहानियो मे भूतो की कहानिया भी गौरी को बहुत अच्छी लगती। वह उन्हे बहुत शौक से सुनती, जबकि बेचारी मा बराबर इसी कोशिश मे रहती, कि यह मनहूस कहानिया उसके कानो मे न पडे, नही तो रात को सजीव भूत-प्रेत आकर उसका प्राण लेने लगेगे। गीत गाने का भी गौरी को बहुत शौक था और बचपन से ही दूसरी स्त्रियो के मुह से सुनकर वह मारवाडी गीतो को गाया करती। पुत्री की इस रुचि को देखकर घरवालो ने सगीत-शिक्षा का प्रबध कर दिया। गौरी का ननिहाल जसपुर मे था। ननिहाल के अलावा राजधानी मे अपनी हवेली थी, इसलिए अक्सर वहा जाकर रहने का मौका मिलता। जसपुर में उसे पक्के सगीत और हारमोनियम सीखने का मौका मिला। ब्याह से पहले कई वर्षों तक वह एक बंगाली गुरु से गीत और वाद्य सीखती रही, जिसका अभ्यास बाद मे भी कितने ही समय तक उसने जारी रक्खा।

यद्यपि रानियो और ठाकुरानियो के लिए यह अनावश्यक सी चीज थी, लेकिन तो भी चिट्ठी लिखने भर उन्हे सिखला दिया जाता था। फिर धार्मिक पूजा-पाठ के लिए तुलसी-रामायण, गगालहरी, गोपाल-सहस्रनाम, हनमानचालीसा का भी पाठ कर लेना कितनी ही अन्त पुरिकाओ की शक्ति के भीतर की चीज थी। ठाकुरो के गढ के भीतर अपने मन्दिर हुआ करते थे, जिनमे पूजा-दर्शन के लिए अन्त पुरिकाए भी पहुच जाती थी। घोर परदे के कारण गढ के भीतर के गोपाल-जी के मन्दिर मे पुजारी ब्राह्मणी होती थी। मन्त्र-दीक्षा भी कोई ब्राह्मणी ही देती, जैसा कि ठाकुरानी शान्तिकुमारी की गणेशीबाई ब्राह्मणी ने दिया। मन्दिर की पूजा या कथा से मीराबाई को भले ही आख खोलने का अवसर मिला हो, किन्तु १९ वी-२० वी सदी की अन्त पुरिकाओ पर तो उसका प्रभाव आयु के ढलने के बाद ही कुछ दिखाई पडता था।

राजस्थान यदि हमारे शताब्दियो पुरानी रीति-रवाजो का सग्रहालय रहा है, यदि पुराना शुद्ध सामन्ती शासन और जीवन वहा १९४८ तक अक्षुण्ण रहा है, तो वेश-भूषा मे भी यदि उसने अपनी बहुत-सी पुरानी चीजो को कायम रक्खा, तो इसमे आश्चर्य की क्या बात ? सभी तरह के रग का पूरे थान भर का सूती घाघरा वहा की स्त्रियो की जातीय पोशाक थी। ढाई हजार वर्ष पहले घाघरे का पूर्वज अन्तर्वासक (लुगी) था, और चुनरी का उत्तरासग (चादर)। लेकिन उस वक्त इतने कपडे की अवश्यकता नही थी। शायद दोनो के लिए उससे अधिक कपडा नही लगता था, जितना कि आजकल साधारण साडी मे। वस्तुत ढाई हजार वर्ष पुराने

उत्तरासग और अन्तर्वासक को एक करके जहा साडी का निर्माण हुआ, वहाँ अन्तर्वासक के ढाई-तीन गज के कपडे को विकसित करते हुए थान भर के घाघरे मे परिणत कर दिया गया। पहले घाघरे भारी और सूती हुआ करते थे। अब तो राजस्थान की अन्त पुरिकाओ ने उसे हल्का करते हुए रेशमी लहगा बना दिया है, और नई पीढी ने तो अपना मत साडी के पक्ष मे दे दिया है। चुनरी उस समय भी तरह-तरह के रगो की मलमल या रेशमी की होती थी, जिनमे अन्त पुरिकाए या उनकी सेविकाएँ स्वय गोटे लगा लेती। सीना-पिरोना रानियो-ठाकुरानियो के लिए वर्जित चीज नही थी, और वह गोटे के तरह-तरह के काम अपने हाथ से कर लिया करती थी। घाघरा और चुनरी के अतिरिक्त अधबहिया चोली भी स्त्रियो की पोशाक थी, जिसके ऊपर जाडो मे सदरी (जाकेट) पहन लेती और ऊपर से साल ओढ़ लेने पर अन्त पुरिकाओ का पूरा वेष समाप्त हो जाता। अधबहिया को पूरी बाह का बनाने मे बडी-बूढियो से बहुत लोहा लेना पडा, और साडी तथा ओवरकोट तक पहुचने पर तो मानो राजस्थान के अन्त पुर मे भयकर क्रान्ति आ गई। आज तो सिरमौर रानिया जानती ही नही, कि उनकी पूर्वजाएँ कैसे रहती थी। हा, अन्त पुरिकाएँ पगरखी (जूती) पहले से ही पहनती आई थी, जिन पर चमकते हुए तारो का काम होता था। विधवाएँ या पूजा मे जानेवाली खडाऊँ भी पहनती।

आभूषण तो अन्त पुरिकाओ के लिए सबसे आवश्यक चीज थी। आखिर बनाव-शृगार ही तो एक ऐसा क्षेत्र है, जिसमे उनके लिए पूरी आजादी थी। चाहने पर वह अपने सारे समय को उसमे लगा सकती थी। चौबीसो घण्टे पहननेवाले जेवरो मे मुख्य-मुख्य थे—बोर (सिरफूल), कानो मे ऊपर की ओर तीन-तीन बालिया, नीचे मच्छी लटकती साकली के साथ टोपिया, जो एक-एक कान मे तीन-तीन तोले तक की होती थी। यह कहने की अवश्यकता नही, कि रानियो और ठाकुरानियो के आभूषणो मे चादी का प्रयोग वर्जित था। आजकल भारत के मालिक सेठो के पूर्वजो को पैरो मे सोना डालने के लिए अपने ठाकुरो से बहुत खर्चीला वरदान लेना पडता था, नही तो उन्हे सोने के आभूषण के साथ पैरो से भी वचित होना पडता। गले मे लटकनदार, नाक में बडा-बडा काटा और नथनी। राजस्थान की अन्त पुरिकाएँ इस सब बात मे सौभाग्यशालिनी थी, कि उन्हे आन्ध्र महिलाओ की तरह नाक मे चार-चार छेद न करा केवल एक ही से छुट्टी मिल जाती थी। बाहो मे बाजू, फिर कलाई मे हाथीदात या लाख के चूडे होते थे—लाख के चूडे अधिक प्रचलित थे। चूडो के बीच मे सोने

के पत्तर लगी चूडिया, फिर गोखरू या दूसरे आकार के मासे (ककण) होते। पैरो मे एडी से बित्ता ऊपर तक कील लगे जेवर पहने जाते, जिनका भार कभी-कभी एक-एक पैर मे अस्सी-अस्सी तोले—पूरा एक सेर होता था। इनके निचले भाग मे किंकिणी लगे नूपुर होते, जिनकी आवाज का गोस्वामीजी ने सीता के फुलवारी मे जाने के समय सुन्दर वर्णन किया है—'किकिणि-ककण-नूपुर ध्वनि सुनि।' दसो अगुलियो मे किकिणी लगे हुए गोलिए (छल्ले) होते, और हर हाथ मे दो-दो अगूठिया भी।

यह तो हर वक्त पहनने के जेवर थे। विशेष समय के जेवरो की गिनती करना भी मुश्किल है। कानो से शिर के ऊपर तक मोतियो की लडे लटकती रहती, सिर मे बिन्दी पहनी जाती, गले मे हसली जैसे हास और बाडली होती। फिर अजन्ता के समय से भी पहले प्रचलित वनमाला की तरह के जनेऊ या बद्दी कण्ठ से जाघ तक लटकती, जिसकी लडिया कमर से पीठ की ओर चली जाती। पैरो मे पान की आकृति का पगपान सारे पैर को ढाके रहता और करपृष्ठ को हथफूल।

अन्त पुरिकाओ को अपने ससुर और जेठो के ही नही, बल्कि देवर के सामने भी परदा करना पडता। हा, घूघट निकालकर देवरजी के साथ वह बात कर सकती थी। पद मे छोटे भतीजो और दूसरो के सामने परदा नही था, लेकिन सास दामाद के सामने नही जा सकती थी। अपने सामने पैदा हुए नौकरो से परदा करने का रवाज नही था। जब अन्त पुर से बाहर निकलती, तो उनकी पालकी या सवारी पर जबर्दस्त परदा रक्खा जाता। जब मोटरो का रवाज हुआ, तो अन्त पुरिकाओ के लिए काले शीशेवाली मोटरे तैयार की गईं, जिनसे वह 'राम झरोखे बैठि के सबका मुजरा ले' के अनुसार भीतर से सबको देख सकती थी, बाहरवाले अन्तर्हिता देवी को नही देख सकते थे।

× × × ×

यदि दिल्ली के दरबार का अनुकरण जयपुर-जोधपुर का दरबार कर रहा था, और जयपुर-जोधपुर का अनुकरण उनके ठेकानेवाले ठाकुर, तो इन दोनो ही का अनुकरण अन्त पुर की ठाकुरानिया करती थी। अन्त पुरिकाएँ अपनी बूढियो के सामने आचल पकडकर झुककर मुजरा करती, और बडी-बूढिया बहुओ को आशीर्वाद देती—"सीलीं हो, सपूती हो, बूढ सोहागन हो, सात पूत की मा हो।" देवता के सामने अन्त पुरिकाएँ जिस प्रकार प्रणाम करती, उसे सलमाडा की भाषा में 'ढोकना' और जनपुर की भाषा मे 'धोकना' कहते है। यह भी एक उल्लेखनीय बात

है, कि इस प्रकार धरती पर मत्था टेककर प्रणाम करने को नेपाली भाषा मे भी ढोकना कहा जाता है। ससुर भी तो आखिर देवता है, इसलिए कपडे मे लिपटी बहू उसके सामने भी ढोकना करती है। सास के लिए प्रणाम है सामने बैठकर हाथ जोड लेना। लौडियो मे बडी-बूढियो के प्रति सम्मान प्रकट करना आवश्यक समझा जाता था, और वह मुसलमानी जमाने के अवशेष के तौर पर मुट्ठी बाधकर दोनो हाथो को अपने गाल मे लगा वारना लेती, जिसे हम पुस्तको मे 'बारी जाऊँ' के रूप मे पढते है। जवाब मे ठाकुरानी बैठकर बूढी लौडी के सामने हाथ जोडती। छोटी लौडिया घूघट निकालकर पगे लागती, जिसका जवाब खाली हाथ जोडकर दिया जाता। रानियो को ठाकुरानिया हाथ जोड झुककर मुजरा किया करती थी, लेकिन अब यह प्रथा सक्षिप्त कर दी गई है, और नमस्ते की तरह "खम्मा घणी" (क्षमा बहुत) कहकर हाथ जोड देना पर्याप्त समझा जाता है। सलमाडा के ठाकुर लोग अपने भाई-बन्दो से मिलते समय इष्ट देवता के अनुसार "जै गोपीनाथजी की, जै रुगनाथजी की" करते है। शाम-सुबह की इस तरह की प्रणामापाती को 'रामाशामा' कहा जाता है। शाम के वक्त जब ठाकुर साहब गद्दी पर बैठे होते है, और नौकर मशाल बालकर वहा लाता है, तो दरबारी लोग ठाकुर साहब को मुजरा करते है।

भोजन-विभाग की जिम्मेवारी रानी और ठाकुरानी को नही है, क्योकि उन्हे खाना खाने भर से ही वास्ता है। ठाकुरो और राजाओ के यहा भीतर और बाहर दो रसोईघर होते है। भीतर अन्त:पुर मे दारोगन (खवासिन) या ब्राह्मणी स्त्री भोजन बनाती है, और बाहर बावर्ची। पहले बारी लोग बाहर के बावर्ची होते थे, पीछे मुसलमान रसोइए भी रक्खे जाने लगे। ठाकुरो के भीतरी-बाहरी दोनो रसोईघरो मे दोनो ही वक्त मास का बनना आवश्यक है। सलमिया लोग जगली सूअर को स्वेच्छापूर्वक त्याग चुके है, किन्तु औरो के यहा शूकर-मास बहुत बढिया माना जाता है। बकरी-भेड के अतिरिक्त शिकार से मिले हरिन, खरगोश, तीतर, बटेर, तिलोर आदि के मास बना करते है। दोनो वक्त दो-तीन प्रकार का मास और पुलाव बनना साधारण सी बात है। मास-प्रेमियो के लिए मीठी चीज प्रिय नही रह जाती, इसलिए जरदा या हलवा जैसा कोई एक मीठा भोजन पर्याप्त समझा जाता है। हा, छ-सात प्रकार की सब्जिया जरूर बनती है। पूर्वी भारत मे मास के साथ भात का मेल माना जाता है, लेकिन राजस्थान मे गेहु या बाजरे के रूखे फुल्के पर्याप्त समझे जाते है। मगल या एकादशी आदि के दिनो में धर्मभीरु ठाकुर या अन्त पुरिकाए मास खाना नही पसन्द करती। उस दिन दालबाटी,

चूरमा पूडा, मालपूआ जैसी चीजे बना ली जाती है। जहा राजस्थान के ब्राह्मण और बनिये घोर घासाहारी है, वहा वहा के राजपूतो, विशेषकर साधन-सम्पन्न ठाकुरो और राजाओ का बिना मास के एक वक्त भी काम नही चल सकता। पुराने ढग के ठाकुरो मे भोजन का मुख्य दो ही समय था, मध्यान्ह-भोजन और पहर रात गये रात्रि-भोजन। सुबह को ऋतु के अनुसार दूध या लस्सी पी ली जाती थी। मास की तरह ही राजस्थान के ठाकुरो और राजाओ मे शराब की सनातन काल से छूट रही है और उसे पानी से अधिक महत्त्व नही दिया जाता। हा, उनमे असयमी शराबी भी होते थे,जिनमें से कितने ही तो जयपुर के महाराजा माधोसिह की तरह रात-दिन शराब में गर्क रहते। उससे नीचे दोपहर या शाम से ही शराब शुरू कर देते। मदिरा के एकान्तसेवी दिन का भोजन तीन-चार बजे शाम से और रात का भी तीन-चार बजे रात से पहले नही खतम कर पाते। उनके यहा शराब का दौर चलता रहता है। रात को दस बजे से जिनके यहा शराब शुरू होती, उन्हे सयमी कहना चाहिए। ठाकुर या राजा साहब इस समय अन्त पुर मे जाते, गद्दी-मसनद लग जाती, सारी रानिया या ठाकुरानिया अपने पति के पान मे शामिल होती। गर्मी के दिनो के लिए शराब की बोतलो को ठण्डे पानी मे डालकर ठण्डा कर लिया जाता। फिर चादी-सोने की चुस्किया (प्यालिया) रख दी जाती। सभी सौते अपने स्वामी के साथ पान-गोष्ठी रचाती। बाहर शराब पीने पर ठाकुर या राजा साहब के सामने तवायफ (रडी) नाचती-गाती, किन्तु अन्त पुर मे तवायफ का प्रवेश निषिद्ध था, वहा यह काम ढोलनिया करती। तरह-तरह के शृगारी गाने होते। ठाकुर साहब चुस्की मे भरी शराब को अपनी पत्नी के सामने फैलाते। वह उसे हाथ मे ले मनुहार करती प्रसादरूपेण पान करती। यह पानगोष्ठी भी अन्त पुरिकाओ के नीरस जीवन की सरस झाकी थी। कोई आश्चर्य नही, यदि आज राजस्थान के ठेकानेवाले ठाकुर उन दिनो को भुलाने की जगह अपने प्राणो को दे देना ज्यादा पसन्द करते है।

असूर्यम्पश्याओ के लिए मनोविनोद का क्षेत्र बहुत सकुचित था। पुश्तो से चले आते गाने-नाचने को वह सीख लेती थी। यदि खुलकर नाचने का रवाज होता, तो इससे शारीरिक व्यायाम भी हो जाता और अधिकाश अन्त पुरिकाए जो तपेदिक मे घुल-घुलकर प्राण देती है, उसकी नौबत न आती, न उस तरह के निष्क्रिय जीवन के कारण जो उन्हे बन्ध्या या मृत सन्तति की मा बनना पडता,वह भी न होता। लेकिन गाने-नाचने को भी तो आगे दूसरो के जिम्मे दे दिया गया, जिसके कारण उन्हे इस सुलभ व्यायाम से भी वचित हो जाना पडा। त्योहारो मे तब भी उत्साह

होने पर गाना-नाचना कर लेती। शादी के समय मे भी इसका अवसर मिलता। पीहर जाने पर थोडा-सा उन्हे और स्वच्छन्द मिलने-जुलने का मौका मिलता—यद्यपि माता और भाभी के दृढ शासन के भीतर ही। ठाकुरानियो को अपने राजा के अन्त पुर मे भी जाकर अपनी दुनिया को कुछ बडा करने का मौका मिलता। जसपुर-जनपुर के राजा नई सभ्यता के लाने मे पहले थे, इसलिए वहा जाने पर ठेकाने की ठाकुरानियो को भी नई हवा लगे बिना नही रहती। तीर्थ आदि करने का सौभाग्य बहुत कम ही अन्त पुरिकाओ को मिलता, और सो भी अधिकतर विधवाओ को ही। विधवा होना ठाकुरानियो के लिए जीवन-मृत्यु जैसा था। पति के मरते समय अक्सर पत्नी को खबर नही दी जाती। सबेरे खबर मिलती, तो स्त्री आकर पनि के शव का चरण-स्पर्श करके चूडिया निकालकर वही लाश पर डाल देती। लौडिया भी उनका अनुकरण करती, लेकिन सातमासी के बाद उनकी चूडिया फिर हाथ मे आ जाती। पति के मरते ही ठाकुरानियो को छ महीने के लिए कोठरी मे बन्द कर दिया जाता। इसी कोठरी मे खाना-सोना ही नही, बल्कि शौच-स्नान भी करना पडता। वहा सूर्य का भला दर्शन कहा ? दरवाजे पर भी मोटा परदा डाल दिया जाता। ऐसी अधेरी कोठरी मे यदि वह तपेदिक के चगुल मे न फँसे तो आश्चर्य की बात होती। छ महीने के बाद कोई-कोई सौभाग्यशालिनी विधवा पीहर चली जाती।

× × × ×

बचपन मे गौरी की तीर्थयात्रा काफी लम्बी हुई थी। उसमे मा के मायकेवालो की जमात मिलकर पचास-साठ आदमी हो गये थे। गौरी को ठीक क्रम तो याद नही, लेकिन वह सम्भवत. मथुरा, प्रयाग, काशी, गया, जगन्नाथ, मदरास, श्रीरगम, रामेश्वर, बम्बई, अहमदाबाद, पुष्कर के रास्ते हुई हुई थी। मथुरा मे जाने पर गौरी को अपनी ही उमर की पुरोहित की लडकी से बहिन ('बहेली') बनने की इच्छा हुई, और दोनो जमुनाजी मे स्नान करके बहिन बन भी गई। दोनो सबेरे के वक्त छत पर जाकर दही-रोटी का कलेवा करने लगी। उन्हे मालूम नही था, और नई-नई बहेली बनने की उमग भी थी, इसलिए नही खयाल किया, कि यहा अपना दरबार नही, बल्कि दूसरे ही किसी का राज्य है। एकाएक छत पर तीन-चार बन्दर आ गये। उन्होने दोनो बहेलियो को ढकेलकर लेटा दिया। उनकी तो सुध-बुध खो गई। बन्दरो ने दो-चार चपत लगा माखनचोर कन्हैया का अभिनय करते दही-रोटी से अपना कलेवा कर लिया। बहेलियो के चिल्लाने पर लोग

दौडे-दौडे आये, जिससे फिर उनके प्राणो मे प्राण आये। बहेली बनने का शायद अच्छा मुहूर्त्त किसी से दिखलाया नही था।

मथुरा की स्मृति बहुत मीठी नही है। तागे पर चढकर लोग भिन्न-भिन्न देवालयो के दर्शन करने जा रहे थे। गौरी भी अपनी नौकरानी राधारानी की गोद मे एक तागे पर बैठ गई। तागा किसी टीले की ओर जा रहा था। घोडा गिर गया। राधारानी भी गौरी को लेकर वही ढेर हो गई। खैर, गौरी के माथे मे मामूली-सी चोट आई। कसूर घोडे का था, नही तो राधारानी की भी गत बने बिना नही रहती।

इसी तीर्थयात्रा मे कही पर यात्री लोग नाव पर बैठे थे। नाव रस्सी के सहारे ऊपर की तरफ खीची जा रही थी। बीच मे पानी पीने के लिए शायद भैसो का झुण्ड आ गया था। एक भैस रस्सी मे उलझ गई, और नाव टेढी होकर उलटने लगी। मा ने देवताओ की बडी-बडी मिन्नत मानी। सब लोग अन्तिम घडी की प्रतीक्षा मे राम-राम कर रहे थे। गगा-लाभ मे कोई सन्देह नही था। किसी की अकल काम कर गई। उसने रस्सी काट दी और नाव फिर सीधी हो गई। लोगो के रोने-चिल्लाने को देखकर गौरी भी डर गई थी।

तीर्थ-यात्रा मे कामता के ठेकानेदार नानाजी और दूसरे जागीरदारो के भी परिवार थे। कहने की अवश्यकता नही, कि पण्डो का भाग खुल गया। गौरी को बन्दरो ने जरूर डरा दिया था। वैसे भूतो की कहानी सुनने का बहुत शौक होने पर भी मा की तरह उनसे डरती नही थी, लेकिन उसके लिए सबसे बडी डर की चीज थी रेल का इजन और यदि कही वह सीटी देने लगता, तो गौरी के तो प्राण चले जाते। वह आखो को मूदकर कानो मे अगुली डाल लेती, लेकिन तो भी भय के मारे प्राण छूटने लगते। मा इसके लिए पीटती भी थी, लेकिन ऐसे यदि भय दूर होता, तो मा ने भूत का डर क्यो नही अपने मन से छुडा लिया? गौरी का छोटा भाई डेढ वर्ष की उमर मे जाता रहा, उस वक्त वह चार वर्ष की थी। राजस्थान मे रानिया और ठाकुरानिया अपने बच्चो को स्वय दूध पिलाती है। शायद राजपूतनी के दूध का महातम माना जाता है, वैसे आजकल दाइयो या बोतल के दूध से भी बच्चो के पालने का रवाज चल पडा है। हा, यदि किसी मा के दूध न हो, या बीमारी आदि का कारण हो, तो दाई भी दूध पिला लेती है। भाई के रिक्त स्थान को गौरी ने स्वीकार किया था, इसलिये वह मा का दूध भी पीने लगी। वह सारी यात्रा मे ही दूध नही पीती रही, बल्कि मा का दूध छुडाना लोगो के लिए बहुत मुश्किल हो गया। वे कडवी चीज लगा देते, लेकिन तब भी वह मा का

दूध नही छोडती। रेल मे मा की गोद मे लेटी दूध पिया करनी। नाना ने पीछे बहुत कसम दिलवाकर किसी तरह गौरी को दूध पीते बच्चे से ऊपर उठाया।

मा अपनी इकलौती पुत्री को बहुत प्यार करती थी, लेकिन बच्चो को सुधारने के लिए दण्ड भी आवश्यक है, इस सिद्धान्त को वह मानती थी। गौरी को अच्छी लडकी बनाने के लिए वह दण्ड के हथियार को प्रयोग करने से नही चूकती थी। गौरी बाहर खेलने जाती। कभी देर भी हो जाती। फिर किवाड की फाक से झाककर मा के चेहरे को देखती। यदि उस पर प्रसन्नता की रेखा झलकती तो पहुँचकर मा से लिपटकर बाते करने लगती, और यदि उसका अभाव देखती तो चुपके से जाकर बैठ जाती। उस समय महलो मे तिल के तेल के दिये जला करते थे। गौरी ने एक बार देखा, कि लौडी उस पर किसी चीज को रखकर काजल पार आख मे लगा रही है। गौरी ने सोचा, मै भी क्यो न अपने हाथ से काजल बनाकर आख मे लगाऊँ। वैसे काजल का उस घर मे अभाव नही था, लेकिन अपने हाथ के काजल का कुछ और ही महातम था। गौरी काजल बनाकर लगाने के लिए इतनी उतावली हो गई, कि झट उसने अपने कुर्ते को दीये की टेम पर रख-कर काजल बनाना शुरू कर दिया। लेकिन वहा काजल कहा बनता? धुआ निकलते ही गलती मालूम हो गई और उसने झट से हाथ से मसल दिया। उसे क्या मालूम था, कि वह आग से खेल रही है। मा को कहा, तो उसने समझा कि यह लडकी मेरी गोद सूनी करना चाहती है, इसलिए पीट-पीटकर समझाया—कही आग और बढी होती, तो तू जल मरती।

मा इस तरह से अपने शासन द्वारा लडकी को अनेक बार सुधारने का प्रयत्न इस तीर्थ-यात्रा मे भी करती रही। मदरास की एक और बात है, जो गौरी की बाल्य-स्मृति मे सुरक्षित है। वहा उसने काली-काली औरतें अधिक देखी, जिसके कारण वह बहुत डरने लगी। उसे मालूम होता, ये डायनें कही मुझे मा की गोद से छीनकर अन्तर्धान न हो जायँ।

सब अनुशासन रहते भी गौरी मे जिद्द की मात्रा काफी बनी रही। किसी चीज का हठ पकड लेने पर मजाल क्या था, कि उसे रोका जा सके। शायद काशी की बात है। सब लोग गगा मे नहा रहे थे। सीढिया जरूर थी, लेकिन गगा वहा किनारे पर ही गहरी हो जाती है। लोग गौरी को भीतर घुसकर नहाने नहीं देते थे। उसने जिद्द पकडी—"मै तो गगा मे नहाऊँगी।" गगा-स्नान का महातम अभी उसके कानो मे नही पडा था, और न उसे समझने की उसमे शक्ति ही थी। लेकिन स्वच्छ हरे-हरे गगा के गम्भीर जल मे सैकडो लोगो को नहाते देखकर उसका

भी मन मचल जाय, तो आश्चर्य क्या ? उसने इतना रोना-धोना और हाथ-पैर पटकना शुरू किया, कि नाना-नानी को नहलाने का प्रबन्ध करना पडा—किसी ने उसी हाथ से पकडे सीढियो से उतरकर डुबकी लगवाई।

यात्रा का शायद अन्त था। लोग अब अपने ही राजस्थान के तीर्थराज पुष्कर में आये। पुष्कर मे गगा नही है, उसकी जगह एक बडा तालाब है, जिसमें कभी किसी ने लाकर घडियाल रख दिये, जो तीर्थवासियो की मुक्तहस्तता और अभयदान के कारण अब सख्या में भी काफी हो कभी-कभी खतरे का कारण बन जाते है। गौरी को इन घडियालो की याद तो नही है, लेकिन उसकी जगह एक दूसरी दुर्घटना की क्षीण स्मृति मौजूद है। नानी की मामी स्नान करने उतरी थी। पैर जरा गहरे मे चला गया और ऊब-चूब करने लगी। जब क्षण मे मामला खत्म होता हो, तो बुद्धि से काम लेने की किसको फुर्सत थी, और अन्त पुरिकाओ मे तो उसका अभ्यास भी नही होता। अपनी मामी को बचाने के लिए नानी ने हाथ फैलाया, और वह भी आगे बढ गई। उनको बचाने के लिए नौकरानी ने हाथ का सहारा देना चाहा। गौरी किनारे-किनारे खडी यह रोमाचकारी तमाशा देख रही थी। वह चिल्ला उठी, 'टीनो की टीनो जावे।' लेकिन तीनो की तीनो जाने नही पाई। गौरी की मा की मौसी ने जब हाथ का सहारा दिया, तो उसे यह ख्याल नही था, कि वह चौथी सख्या पूरा करने को बढ रही है। इसे सौभाग्य ही समझिये, जो वह ठोस धरती पर पैर रक्खे गज-ग्राह की तरह तीनो को उबारने मे सफल हुई। जनाना घाट था, जहा पर पुरुषो का प्रवेश निषिद्ध था, इसलिए तीनो की जगह अगर दसो पुष्कर-लाभ करती, तो भी परदा हटाकर बचाने के लिए वहा पहुँचना शेषशायी भगवान् के लिए भी असम्भव था।

× × × ×

तीर्थयात्रा से लौटने पर गौरी अपनी मा के साथ कामता ननिहाल गई थी। मामा की शादी थी। मामा के समवयस्क लडके के साथ गौरी खेल रही थी। ब्याह मे बने सकरपारे दोनो खा रहे थे। छोटे लडको मे झगडा पैदा करने के लिए किसी बुद्धि-युक्त कारण की अवश्यकता नही होती। लडके को ऐसे ही मन में आ गया, और उसने गौरी को धक्का दे दिया। वह गिर पडी। सिर मे चोट आई और पैर के अगूठे से खून बहने लगा। पहले उसने रोना शुरू किया, लेकिन तुरन्त ही ख्याल आ गया—यदि मा को मालूम हो गया, तो लडके के साथ खेलने का निषेध हो जायगा। खेल से वचित होना गौरी के लिए भारी क्षति थी, इसलिए वह चुप रह गई। मा ने जब खून देखकर पूछा, तो झूठ बोल दिया—"ऐसे ही गिर गई

थी।" इसी शादी मे रण्डी नाच रही थी। नाना, मामा और दूसरे सरदार महफिल मे बैठे उसका नाच-गाना देख रहे थे। गौरी भी नाना की गोद मे बैठी तवायफ की रसीली तान और भाव-भगियो को देख-सुन रही थी। वह बिचारी क्या समझती ? उसी समय उसकी आखे दुखने को आ गई। उसने उसका अर्थ लगाया कि तवायफ ने नजर लगा दी। मालूम नही नजर के छुडाने का क्या उपचार किया गया और कितने दिनो बाद वह तवायफ की नजर से मुक्त हुई।

इसी समय की कामता की एक और घटना है। कामता उन बडे ठेकानो मे था, जिन्हे हाथी रखना पडता था। पुराने काल मे युद्ध मे हाथियो का बडा उपयोग होता था, इसलिए जागीरदारो को अपने सेनापतित्व मे जहा सैनिको को लेकर राजसेवा करनी पडती, वहा अपने हाथियो को भी लाना होता। हाथी के लिए राज्य की ओर से जागीर मे अलग गाव मिलता था। अग्रेजो के शासन-कालमे भला हाथियो का क्या सैनिक उपयोग हो सकता, लेकिन राजस्थान की कोई पुरानी परम्परा आसानी से तोडी थोडे ही जा सकती है ? यदि किसी हाथीवाले ठेकानेदार ने हाथी नही रक्खा, तो उससे हाथीवाला गाव छीन लिया जाता। गौरी की नानी की बडी लालसा थी, कि एक बार हाथी की सवारी कर ले। किसी समय रानिया खुले मुह हाथियो पर बैठकर लोगो के सामने घूमा करती थी। कभी-कभी हाथीवान केवल रानियो को ही सजे हाथी पर बिठाकर निकलता, जब कि एक उच्च स्थान पर बैठकर अन्त पुरिकाओ को अपने सौन्दर्य का परिचय देने का मौका मिलता था, लेकिन वह तो सहस्राब्दियो बीती बात है। हाल की अन्त पुरिकाएँ सात परदे के भीतर रक्खी जाती थी। उन बेचारियो को परदे मे लिपटकर भी हाथी पर बैठने का सौभाग्य नही प्राप्त होता था, इसलिए उसके लिए तरसती थी। नानी की तीव्र लालसा को देखकर उनके बेटो-भतीजो को दया आई। उन्होने हाथी पर सवारी कराने का निश्चय करा लिया। लेकिन जब तक नाना गढ मे हो, तब तक वह ऐसी हिम्मत कैसे कर सकते थे ? नाना किसी काम से एक दिन कही बाहर चले गये। फिर गौरी के मामा इस अवसर से लाभ उठाकर हाथी को स्वय भीतर ले आये। अन्त पुर का फाटक काफी बडा था, जिसके भीतर हाथी जा सकता था। सवारी कराने के लिए हाथी को बैठाया जाने लगा। इसी समय वह मतवाला हो गया। लोगो मे भगदड मच गई, हाथी चिघाडने-चिल्लाने लगा। उठकर उसे दौडते देखकर अन्त पुर में आतक मच गया। सबने सुरक्षित जगहो मे शरण लेने की कोशिश की। गौरी छत के ऊपर बैठी इस तमाशे को बडी भयभीत दृष्टि से देख रही थी। नानी की साध पूरी नही हुई, और बिना पूरी हुए ही वह हमेशा के

लिए बुझ गई । कुछ ही क्षणो की तो देर थी, अगर हाथी नानी को पीठ पर चढा-कर मस्त हुआ होता, तो क्या गति हुई होती ? कुछ ही मिनटो मे हाथी फाटक से बाहर की ओर भागा । उस समय तो नानी भी हाथी की पीठ पर होती, और हाथी सरपट लगाता । गिरकर भी प्राण बचने की आशा तो नही थी । ऐसी अवस्था मे हाथी पर चढने की साध क्यो न सदा के लिए खतम हो जाती ? मामा ने हाथी-वान को बिना बुलाये शायद परदे के खयाल से स्वय ही साध बुझवाने की सोची थी । बुरी साइत रही होगी । लेकिन उन्होने जोतिसी से साइत तो पूछा नही था, कि इस अपराध के लिए उसे दण्ड मिलता । पीछे हाथीवानो और बहुत से आद-मियो ने घेरकर किसी तरह हाथी को काबू मे किया ।

अध्याय २

परिवार

जीजा——उस समय अनादि काल से चली आई सयुक्त-परिवार की प्रथा पूर्ण रूप से राजस्थान मे विराजमान थी। सयुक्त-परिवार-प्रथा अच्छी है या बुरी, इसे यहा कहने की अवश्यकता नही , लेकिन, उसमे 'मै और मेरे' का भाव बहुत कम रक्खा जाता था, इसे बुरा तो नही कहा जा सकता ? पहले बतला चुके है, कि गौरी के पिता बलवन्तसिह चार भाई थे। चारो मे सबसे बडे रूडसिह थे। रूडसिह और चेकरसिह एक मा के लडके थे, और ईसरसिह तथा बलवन्तसिह दूसरी मा के। ईसरसिह और बलवन्तसिह दोनो भाइयो मे असाधारण स्नेह था। बलवन्तसिह नरपुर गोद चले गये थे——रूडसिह भी वही गोद गये थे, और ईसर-सिह पैतृक ठेकाने मगलपुर की गद्दी पर रहे। ईसरसिह अपने अनुज बलवन्त सिंह के बिना नही रह सकते थे। दोनो एक साथ या तो नरपुर चले जाते, या मखनपुर या मगलपुर मे। एक दूसरे की छाया की तरह रहते देखकर लोगो ने उन्हे राम-लक्ष्मण कहना शुरू किया था। ईसरसिह की कई सन्ताने हुईं, लेकिन अन्त मे कोई उनमे से नही बची, और उन्हे गोद लेकर अपनी गद्दी आबाद करनी पडी। गौरी अपने ताऊ को ही बाबोसा (बाप) समझती। ईसरसिह को अपनी एक लडकी वंदकुमारी (वदनी) थी, जो कि गौरी से दस-ग्यारह साल बडी थी। सयुक्त-परिवार-प्रथा के अनुसार ईसरसिंह कभी अपनी लडकी से खुलकर बोलते नही थे। वह अपने काका बलवन्तसिंह के स्नेह की पात्र थी, लेकिन बलवन्तसिह के स्नेह से भी वह बचपन ही मे वचित हो गई। वदनी की मा की जब अन्तिम घडिया आई, तो उसने अपने लक्ष्मण देवर को बुलाकर कहा——"लालजीसा (देवर), अब इस लडकी को आपके हाथो में छोडती हू, घर मे दूसरी आ जायगी, फिर मेरी बिटिया को कौन पूछेगा।" लालजीसा को यह कहने की अवश्यकता नही थी, क्योकि उनके लिये वदनी ही अपनी लडकी थी, लेकिन भाभी को दिये वचन को वह अधिक दिनो तक पालन करने मे समर्थ नही हुए। काकोसा (चचा) के मरने के बाद यदि ईसरसिंह अपनी बेटी के साथ वैसे ही छत्तीस का सम्बन्ध रखते, तो यह हृदयहीनता

समझी जाती, और वह हृदयहीन नही, बल्कि बडे दयालु और उदार-हृदय पुरुष थे ।

वदनी सोलह-सत्रह वर्ष की हो गई । अब कुल की मर्यादा के अनुसार उसका विवाह हो जाना चाहिए था । राजस्थान के ठाकुरो और राजाओ मे सोलह-सत्रह वर्ष की आयु विवाह के लिए छोटी मानी जाती है, और आम तौर से वहा बीस-पचीस वर्ष की उमर मे विवाह होते है । करमो के भाई-बन्द सलमिया कन्या का ब्याह कुल देखकर ही करते है । सलमिया लठियो मे जागो और मलवो को दे सकते है, उमगो और कलपो को भी नही दे सकते । हरिये सलमियो की कन्या प्राप्त करने के अधिकारी होते, यदि वह कठा या ब्रलदी के राजा होते । जलपुर के भवरियो की लडकी सलमिये ले सकते थे, दे नही सकते । भवरियो मे भी लडकी का ब्याह बडी टेढी खीर था, क्योकि राजकुमारी किसी राजा से ही ब्याही जा सकती थी । इसका फल यह होता, कि कभी-कभी साठ-साठ वर्ष की कुमारिया घर मे बैठी रहती । सरगो को लडकी देना राजस्थान के सभी राजवश और ठाकुर-वश अहोभाग्य समझते थे । तवर, पवार, चवाण, पडियार इस योग्य नही माने जाते, कि वह सलमियो की लडकी पाये । ठाकुरो की लडकी सोलह से पचीस या ऊपर तक ब्याही जाती । लडको के ब्याह मे उन्हें अपने कुल-प्रमुख राजा की आज्ञा लेनी पडती, जो अठारह वर्ष से कम होने पर कभी नही मिल सकती थी । इस प्रकार हम देखते है, कि भारत मे जहा सर्वत्र बाल-विवाह का अखण्ड राज्य था, वहा राजस्थान के राजवश और ठाकुरवशो मे वह सोचने की भी बात नही थी । वदनी का ब्याह मालवा के एक जागीरदार बलमू के यहा ठीक करने के लिए छुट-भैये (साधारण राजपूत) नौकर-चाकरो के साथ गये, और सगाई ठीक कर आये । प्रथा के अनुसार वर-कुल से दो लौडिया लडकी को देखने आई । थी तो यह बडी अकल की बात, क्या जाने परदे मे अन्धी-लूली-लगडी लडकी न मत्थे मढ दी जाय । लेकिन यदि हाथी के दात की तरह दिखाने के लिए दूसरी लडकी रख दी जाती, तो कौन रोकनेवाला था ? लेकिन पुरुष को ऐसे खतरे की कोई चिन्ता नही हो सकती थी, क्योकि वह एक छोड दो और कई से ब्याह कर सकता था । लडकी को देखने के लिए आई नौकरानियो को देखकर गौरी भी मचल पडी । सोचा——यह कोई बडी बात होगी । और फिर ग्यारह-बारह वर्ष बडी होने पर भी वंदनी के तो वह नाक मे दम किये रहती थी । वह बापवाली लडकी थी, और वदनी बेचारी बाप रहते भी बे-बापवाली । वह कितनी ही बार हाथ मे पडे सोने के कड़ो से अपनी बहिन को पीटती, कभी चोटी पकडकर ढकेल देती और बेचारी को चोट

भी लग जाती । लेकिन कोई बस नही था, क्योकि गौरी के सामने उसे अपने न्यायपक्ष के लिए कोई आशा नही थी । मा इसके लिए गौरी को अक्सर मारती, लेकिन इसका कोई असर नही होता । वदनी की सहेलिया गौरी को अपने साथ खेलाना नही चाहती, क्योकि वह जाकर खेल की पूरी रिपोर्ट अपने बाबोसा को देती । एक दिन वदनी बडे बाईसा की सहेली ने छोटे बाईसा (छोटी बाई साहबा) गौरी के लिए दरवाजा बन्द कर दिया । गौरी आग-बगूला हो गई, और मौका देखकर एक बार उसने पीछे से आकर सहेली को चोटी पकड धरती पर पटक दिया, उसकी नाक से खून बहने लगा । इस पर मा ने खूब पिटाई की ।

इस प्रकार वदनी उमर मे बडी होकर भी गौरी से हेठी ही रहती । गौरी भला यह क्यो पसन्द करने लगी, कि उसका ब्याह-सगाई न हो, और वदनी पहले ही बाजी मार ले जाय । उसने हठ ठान लिया---"मुझे भी ब्याह कराना है, मुझे भी नौकरानियो को बुलवाकर दिखलाओ ।" उसने सारे महल को अपने शिर पर उठा लिया। आखिर खबर बाबोसा के पास गई। उन्होने हर तरह समझाने की कोशिश की, लेकिन गौरी को तो वदनी की रीस करनी थी । अन्त मे चोटी-कघी कर पहना-ओढाकर उसे भी बैठा दिया गया, और मालवा से आई लौडियो को देखने के लिए कहा गया । उस समय तो बला टल गई, लेकिन यह अभिनय यही तक खतम होने-वाला नही था । जब ब्याह की रस्मके लिये वदनी शिर खोलकर तेल-हल्दी और दूसरे रवाजो के लिए बैठी, तो गौरी ने भी अपना शिर खोल दिया, और वह भी तेल-हल्दी की माग करने लगी । बडी मुसीबत आई । फिर बाबोसा ने समझाया और अन्त मे यह कहकर मनाने मे सफल हुए—"वदनी की शादी तो ऐसे ही छोटे-मोटे गरीब ठाकुर के घर हो रही है, तेरी शादी हम ऐसे घर मे थोड़े ही करेगे, तेरी शादी के लिए हम राजा का लड़का ढूढ रहे है ।" बाबोसा पर गौरी का पूरा विश्वास था, और उसे सचमुच ही वदनी के ऊपर हसी आई--वह गरीब के घर जा रही है, मै तो रानी बनूगी ।

वदनी यद्यपि पिता को बाप कहने का भी हक नही रखती थी, लेकिन वह अपनी चाची और दादी की लाडिली थी । गौरी भी विशेषकर दादी के साथ अपना हक बटाने मे पीछे नही रहती थी । दादी की सन्दूकची पर उसका हमेशा हाथ रहता । लडकियो को अपने सहेलियो मे बाटने के लिए एक-एक रुपये के पैसे रोज मिला करते, लेकिन गौरी का काम इतने से थोडे ही चल सकता था, उसे तो अपनी सहेलियो का चादी का गोल (सिरफूल) भी सोने का करवाना था । लडक-पन से ही उसे घुड़सवारी का शौक था । बहुत छोटीहोते समय एक बूढा गूजर उसे

गोद मे लेकर घोडे पर बैठकर सवारी कराता। गृजर को वह बाबा कहा करती। बाबा का घोडा अन्धा था, जिसे रग के कारण सब्जा कहा जाता। जब ठाकुर साहब बाहर निकलते, तो उनके पीछे-पीछे चलनेवाले दस-पन्द्रह सवारो मे सब्जा पर गोद मे गौरी को लिये बाबा भी रहता। अन्धा होने से बेचारे घोडे को सूझता तो था नही, इसलिए वह अक्सर ठोकर खाता। गौरी नही चाहती थी, कि लगाम बाबा के हाथ मे रहे। घोडा भलेमानुस था, तो भी ठोकर लगने पर कहा तक अपने को सम्हालता। ऐसे समय गौरी उछलकर सब्जे के कन्धे पर आ जाती, और अयालो को पकडकर छिपकली की तरह ऐसी चिपकती, कि मजाल क्या जमीन पर पडे। दादी इसके लिए अपनी पोती को बन्दरी कहा करती। दादी की बन्दरी ने और सयानी होने पर अन्धे घोडे को छोड दिया, और स्वय अकेली एक घोडे पर सवारी करती। साईस साथ-साथ चलता, लेकिन वह लगाम को उसके हाथ मे थमाकर अपने घोडसवार होने की शान पर बट्टा लगाने के लिए तैयार नही थी। घोडे पर सवार होकर निकलने से पहले दादी की सन्दूकची मे हाथ फेर लेना जरूरी था, और साईस खाली हाथ जाने नही पाता था। इस पर 'छोटा बाईसा' की सवारी मे जाने के लिए साईसो मे झगडा होता। हर एक उसके साथ जाना चाहता। और दादी पूछती—'आज बन्दरी कितना लेगी।' गौरी सारा खजाना खाली करना नही पसन्द करती, अन्दाज ही से कुछ ले जाती, जिसका दादी को बहुत रज नही होता।

गौरी लडकपन मे बहुत सी कथा-कहानिया सुन चुकी थी। खेती-बारी के भी किस्से सुने। सलमाडा राजस्थान के रेगिस्तानो मे है, जहा रेत के टीले जगह-जगह देखने मे आते है। वर्षा वहा कभी-कभी हो जाती है। गौरी को वर्षा को होते देख बोवाई का स्मरण हो आया। वह खेलने के लिए रेत के टीले पर गई। पानी से भीगी रेत को देखकर उसने खेती करने की ठानी, और हाथ के सोने के कडो को खोलकर बो आई। सोचा——बीज उगेगा, फिर छोटा-मोटा पौधा होगा, जिसमे न जाने कितने सोने के कडे फलेगे, फिर मै भी भर हाथ पहनूगी और अपनी सहेलियो को भी बाटूगी। दादी की सन्दूकची के भरोसे यह सब थोडे ही हो सकता था। घर आने पर जब पूछा गया—"हाथ सूना क्यो है", तो गौरी ने अपनी सारी चतुराई खोलकर रख दी। टीले मे बहुत खोजा गया, लेकिन वह कडा कहा मिलने-वाला था। गौरी ने पीछे समझा, अबकी वर्षा कम हुई, इसलिए अकुर नही निकला।

× × × ×

ताऊजी——ईसरसिह यद्यपि गौरी के पिता के बडे भाई, अतएव ताऊ थे,

लेकिन वह उन्हे अपना बाप जानती थी। ताऊ के बहुत से मधुर स्मरण आज भी उसे याद है। वह राम-लक्ष्मण जैसे भाई थे, फिर सत्ताईस वर्ष की उमर मे छोटे भाई के मरने का ईसरसिह को कम अफसोस कैसे हो सकता था ? वह दो वर्ष बडे थे। इस भ्रातृ-वियोग के कारण उन्तीस वर्ष की उमर ही मे उनकी दोनो आखे जाती रही। देखने मे वह भली-चगी दीख पडती, लेकिन उनमे ज्योति नही थी। उसके बाद ताऊ ने उन्तीस वर्ष राज तक किया। एक ओर ईसरसिह और बलवन्तसिह जैसे भाई भी राजस्थान मे देखे जाते थे, और उसी राजस्थान की एक दूसरी कथा भी बहुत प्रसिद्ध है। जयपुर और जोधपुर के राजा तीर्थयात्रा करने हरद्वार गये। दोनो गगा मे स्नान करते हाथ से पानी पर थापी मारकर खेल रहे थे। उनके साथ मुसाहिबो और नौकर-चाकरो की पूरी पलटन थी। राजा ने चारण कवि (बारेठ) सूर्यमल को बुलाकर कहा—"हमारे यश के बढाने के लिए कोई कविता बनाओ।" सूरजमल ने वचनबद्ध कराके क्षमा मागते हुए कविता सुनाई—

जयपुर, जोधपुर दोनो मिले, मिले थाप थाप।
कमधज मार्यो डीकरो, मुरधर मार्यो बाप।

"कमधज यानी जयपुर राजा ने अपने बूढे बाप को मारकर राज्य किया, और मुरधर यानी जोधपुर के गद्दीधर ने अपने बाप को मारकर गद्दी हासिल की थी।" सूरजमल ने दोनो राजाओ के अखण्ड निर्मल यश को अपनी कविता मे बखान दिया। सूरजमल से बहुत पहले की सस्कृत की कहावत मशहूर है—"जनकभक्षा राजकुमारा।" अर्थात् राजपुत्र अपने बाप के खानेवाले होते है। ऐसे राजस्थान मे ईसरसिह और बलवन्तसिंह का असाधारण प्रेम एक अनहोनी सी बात थी। यद्यपि ताऊ को मगलपुर की गद्दी मिली थी, लेकिन जैसा कि पहले कहा, वह अपने अनुज के साथ ही बराबर रहना चाहते थे। नरपुर के चार ठेकानो मे जिस ठेकाने के स्वामी बलवन्तसिह थे, उसी की सम्पत्ति दलनपुर था, जो सलमिया नरसिंह के एक बेटे दलनसिह की जायदाद थी और उसी के नाम पर इसका यह नाम पडा था। पीछे नि सन्तान होने के बाद वह दूसरो के हाथ मे होते अब बलवन्तसिंह के पास था। दलनपुर का ही भाग पवानी गाव था। किसी समय पवानी को कोई नहीं जानता था। लेकिन आज तो राजधानी भी पवानी के पानी भर रही है। राजधानी की नथेल पवानी के हाथमे है, और वहा के बडेबडे देवताओ को विश्राम पवानी की रेतीली भूमि मे मिलती है। किसी समय पवानी के महासेठ अभी बिलकुल साधारण से बनिये थे। ठाकुर साहब को भेट मे एक चादी का कलमदान और

कलम देना भी उनके लिए बडी बात थी, लेकिन जब बनिये से वह सेठ बने, तो उन्होने रुपयो के ऊपर लगी गद्दी पर ठाकुर साहब को पधराकर सम्मानित किया। फिर एक समय आया, जब महाराजा ने सेठ को पैर मे सोना पहनने की भी आज्ञा दे दी, और अन्त मे यह भी मजूर किया, कि अब दलनपुर भी पवानी के नाम मे विलीन हो जाय। इतना होने पर भी जब तक स्वतन्त्र भारत मे रियासतें विलीन नही हुईं, तब तक पवानी के जगतसेठ को भी ठाकुर साहब के सामने हाथ जोडकर, "अन्नदाता, अन्नदाता" कहते जीभ घिसानी पडती थी।

ईसरसिह सचमुच ही दैवी विभूति थे, सामन्ती युग के वह अपवादरूप अनर्घरत्न थे। उन्तीस वर्ष की उमर मे ही अन्धे हो गये थे, लेकिन उससे पहले ही वह अपने राज्य के छोटे-बडो के स्नेहपात्र बन चुके थे। आखो ने जवाब दिया, तो स्मृति उनकी तेज हो गई। वह अपने हर एक गाव के छोटे-बडो को जानते। जब उनके दरबार मे किसी गाव का कोई किसान आता, तो एक-एक आदमी का नाम लेकर उसके बारे में पूछते। लोगो का दिन कैसे कट रहा है, इसकी खोज-खबर लेते, अकाल या फसल के मारे जाने की खबर पाते ही कर लेना बन्द कर देते। ठेकानो को फौजदारी और दीवानी का अधिकार था, इसलिए लोग अपने झगडो का फैसला कराने सीधे ठाकुर साहब के पास पहुचते। ठाकुर साहब पहले ही पूछते—"मेरे पास आने के लिए किसी कामदार को रिश्वत तो नही देनी पडी।" किसी कामदार को रिश्वत लेने की हिम्मत भी नही होती थी। उन्होने अपने शासन-प्रबन्धको को इस तरह सगठित किया था,कि किसी की उचित-अनुचित बात उनसे छिपी नही रह सकती थी। मगलपुर का ठेकाना बहुत दूर-दूर तक फैला हुआ था। रेगिस्तान मे आबादी इतनी घनी तो होती नही, इसलिये कितने ही किसानो को दिनो चलकर ठाकुर साहब के पास पहुचना पडता। ठाकुर साहब ने हुकम दे रक्खा था, कि हमारी प्रजा को ठेकाने के हर एक गाव में हमारी ओर से आदमियो के लिये भोजन और पशुओ को चारा दिया जाय।

दूसरे कितने ही धार्मिक दानानुदानो की तरह मगलपुर के ठाकुर रोज चार-पाच सेर की रोटी हाथ से छूकर कुत्तो को खिलाते थे। एक बार हाथ से छूते वक्त उन्होने पूछा—"रोटी कम क्यो है?" उनका अन्दाजा ठीक था, दो रोटी चूल्हे के पास छूटी मिली। एक बार वह अपनी सोने की जजीर नहाने के बाद गले मे डाल रहे थे, उस वक्त उन्होने हाथ लगाते ही कह दिया—जजीर हल्की और छोटी क्यो? पता लगा, उनके अन्धेपन से फायदा उठाकर किसी ने कुछ कडिया तोड ली थी। अन्धे रहते एक अच्छी-खासी रियासत का तीस वर्ष तक सुप्रबन्ध करना

कोई मामूली बात नही थी। वह थोडा सा हिन्दी पढे हुए थे, लेकिन राजस्थान के और दरबारो की तरह वहा हिन्दी नही मारवाडी चलती थी। उनके बडे भाई ठाकुर रूडसिह (नरपुर) ने जसपुर और फिर राजकुमार कालेज मे शिक्षा प्राप्त की थी। अग्रेजी सभ्यता और सस्कृति से वह भली प्रकार परिचिन थे। इस प्रकार मगलपुर के वश मे पश्चिमी शिक्षा पहुच चुकी थी, और उसके लाभ को भी समझा जाने लगा था। रूडसिह जसपुर मे टाइफाइड से जवानी ही मे मर गये। इस पर समझा जाने लगा, कि कुल मे अग्रेजी पढना नही सहता। सभी भाइयो के यहा विद्वानो, कवियो और कलाकारो का बहुत सम्मान था। जगह-जगह के पण्डित, कवि, गवैये, कलावन्त उनके यहा आते और पच्चीस से पाच सौ रुपये तक इनाम पा मगलपुर के ठाकुर का गुणगान करते विदा होते। सगीत की महफिल जमती, अच्छे-अच्छे गुनी अपना कर्तब दिखलाते। इससे गौरी को भी सगीत का चस्का लगा। इसे देखकर उसके बाबोसा ने सगीत से उसे परिचित कराना आवश्यक समझा। रूडसिह कितनी ही बार गौरी से आग्रह करते—एक बार मुझे भी "मेरो बबोसा" कह दे, फिर जो चाहे सो दूगा। लेकिन गौरी ने कभी ईसरसिह को छोडकर किसी दूसरे को "मेरो बबोसा" नही कहा। ईसरसिह की दूसरी पत्नी ने बचपन मे कभी कह दिया था—"मै तेरी आया हू।" बेचारी बच्ची को 'आया' कहना नही आया और वह जीवन भर 'याया' कहती रही। उसे जब अपनी याया की ओर से बाबोसा को सन्देश देना होता, तो कहती—"बाबोसा, अपणी याया बुलावे।"

× × × ×

जीजा (जीजी) वदनी से लडकपन मे गौरी की बडी लाग-डाट रहती। लेकिन जीजा के शिर खोलकर शादी की रसम शुरू करते समय अपना शिर खोलकर जिद्द ठानने मे उसे सफलता नही मिली। उस समय उसने बाबोसा से बहुत गिडगिडाकर कहा था—"और नही तो जीजा के ससुर से ही मुझे परणा (ब्याह) दो।" लेकिन, ईसरसिंह ने कहा—"क्या तू जीजा की नौकरानी है, कि इस तरह जाके रहना चाहती है।" खैर, गौरी ने अपना जूडा बधवा लिया और जब जीजा ससुराल गई, तो उसकी मीठी-मीठी याद उसे सताने लगी। साल भर बाद जीजा भरी गोद लौटी। गौरी जीजा के लडके को गोद मे लेने का बडा आग्रह करती, लेकिन वह अक्सर उसके हाथ से छूट जाता। उस समय मगलपुर मे प्लेग था, लोग घर छोडकर बाहर चले गये थे, ठाकुर ईसरसिह भी पास के सठवार गाव के जाटो की हवेली मे चले गये थे। यही पर गौरी का पहलेपहल एक दात टूटा। उसे बडी चिन्ता हुई। लोगो ने कहा—"अब तो तू ऐसी ही रह जायगी।" उसने बूढियो के दात टूटे देखे

थे, डरने लगी, कि कही मै भी बूढी न हो जाऊ। इस सकट-काल मे उसकी समवयस्का एक जाट लडकी ने बडा काम दिया। वह झट गोबर उठा लाई, और बोली—इसमे दात डाल छान पर फेककर यह मन्तर पढो——"गोबर जल्दी सूखे, दात जल्दी आवे।" सचमुच ही गौरी का दात जल्दी निकल आया।

ईसरसिह सयम-नियम के बडे पाबन्द थे। वह चार बजे तडके ही उठकर शौचादि से निवृत्त हो पहले कुछ देर तक मुगदर फेरते, फिर साढे छ-सात बजे घूमने के लिए पैदल निकल जाते। उस समय कोई आदमी उनका हाथ पकडे रहता और पीछे-पीछे दस-पन्द्रह आदमी अन्नदाता का अनुगमन करते। दो मील टहलकर लौटने के बाद एक गिलास दूध और फिर हुक्का पीते। उस समय ठाकुरो मे हुक्का पीने का रवाज था, लेकिन अन्त पुरिकाओ मे तम्बाकू का प्रचार नही हुआ था। आगे तो कलयुग के छा जाने पर अब कितनी ही अन्त पुरिकाए भी बहुमूल्य सिगरेटो का स्वाद लेने लगी है। दोपहर को बारह बजे के आसपास ठाकुर साहब भोजन करते, और सो भी नियम से मा के पास जाकर उन्ही के हाथो खाते। मारवाड मिर्च खाने मे मदरास का कान काटता है, लेकिन ठाकुर ईसरसिह मिर्च नही खाते थे। दोनो शाम तीन-तीन, चार-चार प्रकार का मास खाना ठाकुरो का कुलधर्म था, लेकिन वह केवल मासरस लेकर ही सन्तुष्ट हो जाते। मीठे चावल की जगह नमकीन चावल उन्हे अधिक पसन्द था। इसी तरह गेहू-बाजरे की सूखी रोटिया उनके लिए परमान्न थी। उनका खाना बिलकुल सादा था। शराब राजस्थान के राजपूतो के लिए पानी का ही दूसरा नाम है, इसीलिए उससे परहेज करने की जरूरत नही थी, और ठाकुर साहब को नीद कम आती थी, जिसमे उसकी सहायता का महातम बहुत गाया जाता था, इसलिए सोते वक्त दो चुस्की शराब की ले ठीक दस बजे सो जाते थे। पीछे किसी ने नीद लानेवाली गोली बतला दी, तो उन्होने शराब भी छोड दी और गोलिया खा लेते थे। इसे कहने की अवश्यकता नही, कि भाई की मृत्यु के बाद ठाकुर ईसरसिह के लिए जीवन एक नीरस सी चीज रह गई थी, और वह उसे अनासक्त रूप से ही बिताना चाहते थे। शायद इसीलिए उनकी जीवन-चर्या घडी की सुइयो के साथ बधी थी। रोज घण्टा भर टहलना जरूरी था, वर्षा के समय बाहर नही निकला जा सकता था, इसलिए वह छत पर ही टहलकर उस नियम को पूरा कर लेते।

× × × ×

राजस्थान की अन्त पुरवाली नारिया बडी अभागिनी थी, इसमे कोई सन्देह नही। इसका एक उदाहरण गौरी को अपने बचपन मे ही बूवा चन्दनकुमारी के

रूप मे देखने को मिला था। बुवा रूडसिह से भी बडी, अर्थात् चारो भाइयो की बडी बहिन थी। उनका ब्याह कसौरा के जासर राजा अनरदेव से हुआ था। राजा की छ रानिया थी, जिन्हे बहुत नही कहना चाहिए। उन पर भी सन्तोष न कर उन्होने पीछे एक पासबान रख ली। पासबान रखेली और रानी के बीच की स्थिति की नारी को कहा जाता है, जिसके पुत्र को उत्तराधिकार पाने का हक नही होता, लेकिन कितनी ही बातो मे उसका आदर रानी जैसा होता, बल्कि राजा मोहित होकर ही तो किसी सुन्दरी को अपनी पासबान बनाता, इसलिए अन्त पुर मे पासबान की अधिक चलती। कसौरा की बाकी पाचो रानियो ने पासबान के पैरो मे सोना पडते, तथा रानियो जैसे परदे के भीतर प्रवेश करते ही नई सौत के सामने सिर झुकाने मे बुद्धिमानी समझी, लेकिन सलमिया रानी इसके लिए तैयार नही हुई। पासबान नाराज हो गई, जिसके कारण राजा साहब की कृपा से भी बुवाजी को वचित होना पडा और वह कडी यन्त्रणा मे पडी। कसौरा उनके लिए नर्क था ही, साथ ही पति देवता ने उनकी गुस्ताखी के लिए यह भी दण्ड दे रक्खा था, कि वह अपने पीहर जाने न पाये। गौरी के पिना के मरने के समय तथा खुद गौरी की शादी के समय दो बार ही कुछ दिनो के लिए बुवाजी को पीहर आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इस प्रकार के उदाहरण बचपन से ही गौरी को बतला रहे थे, कि उसके कुल की नारियो के भाग्य मे क्या-क्या बदा है।

अध्याय ३

सासों का राज

सासे बहुओ को पराई लडकी समझ बराबर उन्हे शका की ही दृष्टि से नही देखती, बल्कि मुश्किल से कोई ऐसी सास मिलती, जो बहू के जीवन को दूभर नही बना देती थी । हा, सासो का जितना ही कठोर बरताव बहुओ के साथ होता, उतना ही उनका प्यार पोते-पोतियो के ऊपर न्यौछावर होता ।

गौरी की दादी जिन्दा थी । वह वैसी कठोर सास नही थी, लेकिन आज से सौ वर्ष पहले हुई अपनी सास की स्मृतिया उनके लिए बडी कडवी थी । सासूजी को ठेकानो मे 'भाभीसा' या 'बूजीसा' कहा जाता था—सलमाडा मे भाभीसा और मारवाड मे बूजीसा–जेठानी को भी भाभीसा पुकारा जाता । भाभीसा का दरबार बहुओ के लिए आदिम और अन्तिम न्यायालय था । मानो बहू को हाथ-पैर बाधकर भाभीसा के हाथ मे दे दिया गया था । सोकर उठने की जिस समय आदत होती—वह चार बजे रात से सात बजे सबेरे तक किसी समय हो सकती थी—उसी समय बहू ठाकुरानी को स्वय हाथ-मुह धो सासू के पास हाजिर होना पडता । आमतौर से बहुएँ थोडे दिनो बाद सासू के सामने घूघट हटा देती । सबेरे ही पहुचकर बहू उकडू बैठ 'पगे लागी' करती । सासू चौकी पर बैठी होती । यदि किसी बहू की शामत आई हो, और उसके आने से पहले नौकरानी ने पीकदान सामने रखकर झारी मे पानी ले हाथ धुलाना शुरू कर दिया, तो उसी समय गोत्रोच्चार शुरू हो जाता, और सासू उसकी सात पीढी के मा-बाप को चुन-चुनकर कडवी-मीठी सुनाती । लेकिन बहू ऐसा मौका देने के लिए तैयार नही होती । वह पहले ही पहुच जाती । पीछे पहुचने पर भी लौडी के हाथ से रामसागर (झारी) ले सासू के हाथ पर पानी डालने लगती । हाथ धो लेने पर कीकड (बबूल) की दातवन अर्पित करती । दात हुआ तो सासू दातवन करती । यदि सास उस वक्त प्रसन्न रही तो मुह खोलकर दो बात भी करती, नही तो मुह को सुजाकर तुम्बा कर लेती, अथवा इसी बहाने मा-बाप को चार गालिया सुनाती । इस वर्ग की स्त्रियो मे सास गाली भले ही दे ले, लेकिन उन्हे हाथ छोडते नही देखा जाता था । बहू को तो मुह

से बोलना हराम था, जब तक कि वह चार-पाच बच्चो की मा न हो जाती। सामने बैठी हुई बहू से सास अगर कुछ पूछनी, तो वह अपनी ननद या नौकरानी के कान मे फुसफुसाकर जवाब देती।

हाथ-मुह धुलाकर बहू को अपनी कोठरी मे जाने की छुट्टी मिल जाती। सास उस समय कलेऊ के लिए दही के माथ रात की ठण्डी रोटी या बाटी (एक तरह के परावठे) भेजती। यदि खुश होती, तो लड्डू या और कोई मिठाई भी साथ भेज देती। यदि नाखुश होती, तो जान-बूझकर भूल जाने का बहाना तो था ही, और बेचारी बहू दोपहर के भोजन की आशा पर पेट पर पत्थर बाध लेती। छिपकर बाजार से मगाना बहुत खतरनाक था, क्योकि सास के भेदिये हर जगह मौजूद थी, वह जाकर कह देती—"रानीसा (या लाडीसा) ने आज तो अमुक चीज बाजार से मगवाई।" फिर सास की बडबडाहट शुरू हो जाती। बेचारी बहुएँ मूली और गाजर भी खाने के लिए तरसा करती। मायके से जो चीज आती, उसे खोलने का हक था सास का, और उसमे से कुछ बहू को दे देना या न देना उनकी मर्जी पर था। लेकिन जीवन की इस सारी कडवाहट मे बहू के लिए एक सहारा था, वह था पीहर से साथ आई बाढी (डावडी)। राजवशो और ठाकुरवशो मे यह आम रवाज था, जब लडकी को ब्याहने के लिए बरात आती, तो उसके साथ आये दुलहा के नौकरो मे से कितनो के साथ बहू की सहेली नौकरानियो की शादी करा दी जाती, जो लडकी के माथ जाकर उसके जीवन भर छाया की तरह रहती। ऐसी साथ आई पीहर की नौकरानियो को भी सास की होने पर याजी, दादी-सास की होने पर दादी, नानी की नानी, मामीसा की मामी के आदरवाचक शब्दो से पुकारा जाता। बहू के ऊपर याजी का भी रोब-दाब सास से कम नही होता था। वह चाहती, तो सास से बहू को बचा सकती, और चाहती तो आग मे घी डाल सकती थी।

कलेऊ के बाद पहर भर दिन तक बहू अपनी कोठरी मे सिलाई या बच्चे हुए तो उनके खिलाने-पिलाने का काम कर सकती थी। नौ बजे फिर सास के दरबार मे हाजिर होना पडता। सास जब तक जिन्दा रहती, तब तक बहू मसनद लगाकर गद्दी पर नही बैठ सकती। वह गद्दी पर बैठी सास के सामने एक कोने दरी पर बैठ जाती। यदि सासूजी कुछ पूछती, तो जैसा कि कहा, दूसरो के कानो मे फुस-फुसाकर बहू बडी नम्रतापूर्वक जवाब देती। नौ बजे से बारह बजे तक तीन घण्टे सास के दरबार मे ही रहना पडता। सासू अपनी नौकरानियो, लडकियो या दूसरो से बातचीत करती या सुनती रहती। बहू भी अपने आसपास बैठी ननद

या जेठानी-देवरानी से फुसफुसाते समय काटती। फिर दोपहर के खाने का समय नजदीक आने पर सासूजी के हुक्म पर दरबार बर्खास्त होता, और बहू अपनी कोठरी मे पहुँच जाती।

पुराने जमाने के रनिवासो की कोठरिया कितनी तग और बुरी होती, इसे आज भी हम आगरा या ग्वालियर के किलो मे देख सकते है। इन कोठरियो मे दरवाजा छोडकर हवा या रोशनी के लिए और कोई रास्ता नही होता था। कोठरिया बनानेवाले जानते थे, कि यह किसी मुक्त व्यक्ति के लिए नही, बल्कि आजन्म बन्दिनी के लिये बनाई जा रही है, क्या जाने किसी वक्त वह मुक्त होने की चेष्टा करे। दरवाजे मे जाडे के दिनो मे रूई-भरे लाल परदे लगा दिये जाते, जिससे एक फायदा जरूर था, कि कोठरी ज्यादा ठण्डी नही होने पाती थी। गर्मियो मे दरवाजो पर चिक लटकी रहती, या खस की टट्टि या लगा दी जाती। अग्रेजो ने भारत मे आकर हाथ के पखो की जगह छत से लटकनेवाले पखो का प्रचार कर दिया, जो राजस्थान मे भी पहुँच गये थे। किन्तु अधिकतर अन्त पुरिकाओ को नौकरानी के हाथ के पखे की ही आशा रखनी पडती थी। बहूरानी के कोठरी मे पहुचते ही, छाया की तरह उनकी लौडी भी आकर हाजिर होती। यदि सासू का दरबार मीठा रहा, तो नौकरानी हास-परिहास और विनोद की बाते करके स्वामिनी के आनन्द को और बढाने की कोशिश करती, और यदि वहा झिडकी खानी पडी होती, जिसके कारण वही पर गिराये पाच बूदो से सन्तोष न करके बहूरानी अपनी कोठरी मे आखो से सावन-भादो बरसाती, तो पीहर की यह आजन्म सहेली उन्हे हर तरह से सान्त्वना देती।

यह बतला चुके है, कि महलो मे मरदाना और जनाना अलग-अलग दो रसोईखाने हुआ करते थे, जिनमे जनाने रसोईखाने मे पाचिकाएँ साग-सब्जी, दाल-रोटी या और चीजे पकाती, और मरदाने रसोईखाने मे बावर्ची तरह-तरह के मास या मिठाइया तैयार करते। एक जगह रसोई तैयार हो जाने पर दूसरे रसोईखाने को खबर दी जाती, और दोनो की तैयार होने पर फिर खानेवालो के पास थाल भेजे जाने लगते। ये थाल बहुत बडे-बडे होते, जो अक्सर चादी के होते। कटोरिया भी चादी की ही रहती। कभी-कभी फूल या कासे के थाल भी इस्तेमाल किये जाते। बहूरानी को भोजन सास भिजवाती। भिजवाती नही, बल्कि थाल आ जाने पर खबर जाती, और बहू की नौकरानी अपनी मालकिन की थाल वहा से ले आती। थाल मे चार कटोरियो मे साग-सब्जिया होती। एक नमक की भी कटोरी अलग रहती। तले या सिके पापड को भी एक कटोरी में

रक्खा जाता। साथ ही फुल्के या बाटिया थाल के एक किनारे पर रक्खी रहती। राजस्थान मे चावल का रवाज न होने से वह साधारण भोजन मे शामिल नही किया जाता। थाल एक सफेद कपडे से ढँका रहता। इसी तरह बाहरी रसोईखाने से भी कुछ खाने की चीजे आ जाती। बहू के लडके-लडकिया होती, तो भी वह अक्सर अपनी दादी-दादा के साथ जाकर खाते। मा के रुखे-सूखे खोने को वह क्यो पसन्द करने लगे ? यदि सास अच्छी होती, तो इतना भोजन भेजती, जिसमे बहू और उसकी बादी का काम अच्छी तरह चल जाता। नौकरानी यदि बहू का अछूता खाना खानेवाली होती, तो बहू थाल मे से उसके लिये खाने की चीजे अलग कर देती, लेकिन अक्सर नौकरानिया मालकिन का जृठ खाना पसन्द करती, क्योकि जूठन मे अधिक स्वादिष्ठ चीजे मिलती, तथा जूठन खाना धर्म और जाति के नियम से वर्जित भी नही था। सास यदि जिद्दी और गुसैल होती, तो बहू को हमेशा भूखा रखने के लिए बहुत कम भोजन भेजती। गौरी की दादी अपनी सास के बारे मे बतलाती थी—मेरी सास मुझे बराबर भूखा रखने का ही प्रयत्न करती। इतना ही नही, बल्कि वह बहू को पीहर भी जाने नही देती, और तीन-तीन, चार-चार वर्ष तक घुला-घुलाकर फिर कभी मा-बाप के बहुत आग्रह और ससुर के जोर देने पर बहू को कुछ दिनो के लिए मायके जाने देती। यदि बहू अपने पति के सामने आह निकालती, तो वह कह देता—"बूजी (अम्मा) की ऐसी ही आदत है। चुपचाप सुन लो।" बहू के जीवन मे सदा चुपचाप सुनते आसू बहाना ही बदा रहता। सास पहले ही से बेटे के सामने बहू की शिकायत जड देती।

दोपहर के खाने के बाद दो-तीन घण्टे बहू को छुट्टी रहती। इस समय चाहे वह सो जाती, सिलाई करती, या दु ख-सुख की बाते सुनती-सुनाती। जाडो मे एक वक्त स्नान पर्याप्त समझा जाता, लेकिन गर्मियो मे चार बजे दूसरा स्नान करना होता। इसके बाद बहू को पूर्ण शृगार करना पडता। वह नये घाघरे-चुनरी को पहनती। काजल-टीका और तरह-तरह के आभूषण से अपने को सजाकर सास के सामने उपस्थित होती। सास का यह भी कर्तव्य था, कि देखे कि बहू मेरे बेटे को रिझाने के लिए क्या-क्या तैयारी कर रही है। चार बजे से चिराग जलने तक फिर सासू के दरबार मे हाजिरी देनी पडती, लेकिन चिराग जलते ही सासू के पा लगने के बाद छुट्टी मिल जाती। सलमाडा के रवाज के अनुसार सासू के सामने कोई बहू अपने बच्चे को दूध नही पिला सकती थी। जनपुर मे इसके लिए उतना कडा प्रतिबन्ध नही था। लडका दूध के लिए रोता, तो बहू को अलग कमरे में जाकर दूध पिलाने की छुट्टी मिल जाती।

पहर भर रात गये बहू को आखिरी बार सास के दरबार मे जाना पडता। सास अच्छी हुई या उस समय उसका मन अच्छा रहा, तो गद्दी पर बैठे-बैठे पैर फैला देती और बहू उसे दबाकर अपना कर्त्तव्य पालन कर लेती। नही तो प्रतीक्षा करने के लिए छोड देती। भोजन कर लेने के बाद जब सासूजी पलग पर लेट जाती, तो बहुए देह दबाती, फिर छुट्टी लेकर अपनी कोठरी मे पहुचती। रात का भोजन या तो उन्हे पहले ही मिल गया रहता, या अब आकर खाती। दस-ग्यारह बजे रात तक भोजन आदि से निवृत्त हो बहू अपने पति के आने की प्रतीक्षा करती। यदि पति की और पत्निया न होती, तो उसका आना निश्चित था। वह चोर की तरह दबे पाव रात मे अपनी पत्नी के पास पहुचता। पत्नी से अधिक घनिष्ठता दिखलाना उस समय के समाज मे बहुत बुरा समझा जाता था।

× × × ×

अक्सर ठाकुरो और राजाओ की कई-कई पत्निया होती, और उनमे से जिसका मान पति या बेटे के कारण ज्यादा होता, उसी का शासन चलता। बाकी सासे भी अपने नीरस जीवन को अपनी कोठरियो मे बैठकर बिता देती। सासे कितनी ही बार रनिवास पर ही शासन नही करती थी, बल्कि राजा साहब या ठाकुर साहब के राजकीय कर्तव्यो मे भी दखल देती थी। परदा तो इतना सख्त था, कि नब्बे वर्ष की परदादी भी मजाल नही था, कि अपनी छाया को भी बाहर फेक सके। एक बार रथ मे जाते सोई हुई किसी रानी की अगुली परदे से बाहर हो गई, उसी वक्त उसके पति ने तलवार से अगुली को काटकर निकाल दिया। सौभाग्यवती सासे सत्तर-अस्सी वर्ष की हो जाने पर भी अपने सन-जैसे बालो मे मोतियो की लडिया लटकाती, आखो मे खूब काजल लगाकर शृगार करके षोडशी बनने की कोशिश करती। अब तो चूडी, काटा (नाक की लवग) और सिर की बिंदिया सोहाग का चिह्न माना जाता है। उस समय इनके अतिरिक्त गर्दन में टेटा, सिर के सामने बोर या रखडी (सिरफूल), पैरो के घुघरू या बेघुघरूवाले बिछवे भी सोहाग के चिह्न माने जाते। सास के सामने जाने पर छोटी जलेबी भर की नथ को पहनना बहुत आवश्यक समझा जाता। नथ का उतना ही महातम था, जितना पुरुषो के लिए जनेऊ का। पूजा के समय नाक मे नथ जरूर रहती। अभी भी, जबकि जनपुर और दूसरे कितने ही रनिवासो मे पश्चिमी प्रभाव के कारण बाल कटवा लिये गये है, और खान-पान तथा दूसरे चाल-व्यवहार मे पाश्चात्य सभ्यता का रग गहरा पड गया है, तो भी विशेष अवसरो पर चोटी कटी रानी नथ, टेटा, घाघरा-लुगरी पहनना जरूरी समझती है, और कुछ अपटुडेट रानियां

निर्बन्ध न होने पर भी सासू का पैर दबाने जाती है। गौरी के बचपन मे उनकी पर-दादी का युग अभी उठ नही गया था। आज तो बूढी सासे उस बीते युग के लिए बहुत अफसोस करते हुए कहती है—"अब की बहुए बहू थोडे ही है, यह तो बछेरे है।" सास का बहू के ऊपर जहा इतना रोब-दाब था, वहा बेटी के ऊपर कोई रोब नही चलता था और यदि किसी भाग्यवान् बहू को अच्छी ननद मिल जाती, तो उसका नीरस जीवन कुछ सह्य हो जाता था। सासू तो बहुओ के लिए पूरी डायन थी। पीठ पीछे उसे बहुए गाली देते नही थकती थी, और बराबर मनाती रहती—कब यह दतटुट्टी डायन इस दुनिया से बिदा होगी।

आज की बहुए कितनी सौभाग्यशालिनी है। उन्हे सबेरे तडके ही उठकर दातवन कराने के लिए सास के पास जाकर झिडकी नही खाना पडती। नौ-दस बजे कभी-कभी मुह दिखलाने गई, तो 'पालगी' करके पन्द्रह मिनट भी बैठने की जरूरत नही पडती। सास खुद ही कह देती—"बहू, काम हो तो चली जाओ।" बहुए खाने के लिए भी सासुओ की परतन्त्र नही है, और न पैर ही दबाना आवश्यक है। वैसे जनपुर की रानी जैसी कितनी ही लायक अपटुडेट बहुए अब भी राजमाता का पैर दबा आती है, लेकिन यह तो उनकी नम्रता और लायकी का प्रमाण है। कहा सासुओ के सामने भी न मुह खोलती और न परदा ही से बिलकुल मुक्त हो सकती थी, और कहा ससुर से भी परदा नही। ससुर के साथ बहुए बाते करती है। एक मेज पर बैठकर सभी राजकुल के राजा-रानी, राजमाता खाना खाती है। उग्रपुर जैसे अब भी कुछ पुरानपन्थी राजवश है, जहा आधुनिकता कम मात्रा मे प्रविष्ट हो सकी है, लेकिन सास का राज तो अब सभी जगह सपने की बात हो गई है।

× × × ×

लडकपन की विचित्र-विचित्र कहानियो मे गौरी ने एक यह भी सुनी थी—पहले आसमान बहुत नीचा था। इतना नीचा, कि आदमी लकडी लेकर छू सकता था। गौरी ने कहानी कहनेवाली से पूछा—"तब मकान बडे-बडे कैसे बनते होगे?" उत्तर मिला—"जहा आसमान थोड़ा ऊचा था, वहा मकान भी कम-ऊचे बन जाया करते थे। किसी भगन ने झाडू देते वक्त अपनी बुहारी ऊपर उठाई तो वह आसमान से लग गई। आसमान अछूत के झाडू के लग जाने से इस तरह अशुद्ध हो गया, और वह चिढकर ऊपर उठ गया, इतना ऊपर, जितना कि आजकल है।

मकानो मे जरा-सा बाहर निकले छज्जो पर घूमना बहुत खतरनाक बात थी, लेकिन बचपन मे गौरी को उन पर घूमने मे बडा आनन्द आता था। उसको और

कठिन बनाते घडे मे पानी भरकर सिर पर रख घूघट निकालकर पनिहारिन बनकर वह घूमा करती। कोने पर आने पर आगे बढना सबसे कठिन होता, लेकिन उसे भी वह फाद जाती। मगलपुर मे एक ही गढ मे दो ठाकुर थे। दोनो की हवेलियो के बीच मे छत पर एक दीवार थी। रास्ते-रास्ते जाना होता, तो बहुत चढना-उतरना और चक्कर काटना पडता। गौरी भला यह क्यो करने लगी? वह हमेशा उसी विभाजक दीवार को फादकर दूसरी हवेली मे जाती। अपनी ओर पट्टा रखकर दीवार पर चढती, दूसरी ओर रसोई के घर की दीवार मे कितने ही छेद थे, जिन पर पैर रखकर वह आराम से उतर जाती। उधर के ठाकुर आहट पाकर कहते—"देखो बन्दरी आ रही है।" बाग मे भी पेडो पर चढना गौरी के लिए एक बडे मनोरजन की बात थी। आम-अमरूद, नीमू-कमरख के पेडो पर चढकर अपनी सहेलियो के लिये फल गिराती। उसके इस तरह के खेलो को देखकर मा का दिल काप उठता। वह कभी-कभी पीटती भी, लेकिन गौरी को तो ऐसे साहस के खेलो में बडा आनन्द आता था। दूसरी ही घडी मौका मिलने पर वह मा के थप्पडो को भूल जाती, और वही काम करने लगती। चुगली करनेवाले अपने काम पर कई बार पछता चुके थे, इसलिए कोई उसके रास्ते मे नही आता।

× × × ×

खाली मीनारो मे चमगीदडियो ने डेरा डाल रक्खा था। चमगीदडियो से कितने ही लोग बहुत डरते, लेकिन गौरी उनसे नही डरती। रूमाल मे डला बाधकर छत पर फेकती, कोई न कोई चमगीदडी फर्श पर आ पडती। उसे कपडे मे लपेट टाग मे लम्बा डोरा बाध देती। फिर हाथ मे लिये किसी डरनेवाले के कपडे मे चुपचाप चिपका देती, वह डर के मारे भागता और कितनो के लिलार से तो पसीना छूटने लगता। बडा मजाक रहता। कभी-कभी अपने राजपूतो की तकियो मे वह रात के समय चिपका आती। डरनेवाले अपना सारा बिस्तरा नीचे तबेले मे फेककर भाग जाते और गौरी की शैतानी की शिकायत करते फिरते। रूडसिह बाबोसा भी अपनी भतीजी पर बहुत स्नेह रखते थे। एक बार कही से उनको एक काठ का साप मिल गया, जो देखने मे बिलकुल साप की तरह मालूम होता था, और जरा सा ही इशारे पर उसका फन हिलने भी लगता। एक बनिया गढ मे किसी काम से आया था। गौरी ने साप के फन को बनिये के पास कर दिया। बनिया जान लेकर भागा। गौरी ने साप को लड़को के हाथ मे थमा दिया। वह उसके पीछे-पीछे दौडे। बनिया जान लेकर

भागा जा रहा था। लोगो ने उधर हल्ला किया--"पकडो-पकडो !" फाटक के दरबानो ने समझा, कोई चोर भागा जा रहा है, और उन्होने उसे पकड लिया। पीछे बनिये को पहचानकर छोड दिया। बेचारा पसीने-पसीने था। उसका दम फूल रहा था।

सलमाडा अपने सापो के लिए बहुत प्रसिद्ध है। जोड मे रहते समय गौरी को बहुत साप दिखलाई पडते थे। सलमाडा मे भादौ बदी ९ को सापो के देवता गूगाजी की पूजा बडी श्रद्धा से की जाती है, जिसमे कि साप किसी को न छूये। कुम्हार काली मिट्टी का घोडा बना, मिट्टी की मूर्ति के हाथ मे मिट्टी का भाला देकर बैठा देता है, यही गूगाजी है। उनके गले मे महादेवजी की तरह साप लटकता है। गूगाजी की पूजा मे खीर, गुलगुले चढाये जाते है। कहते है, गर्भिणी स्त्री को देखकर साप अन्धा हो जाता है। एक दिन गौरी ने आगन मे चार हाथ लम्बा काफी मोटा काला साप देखा। उसके बदन से निकलता चमडा केचली की शक्ल मे अभी लगा हुआ था। दिन के दोपहर का समय था। साप वहा फुफकार मारता हिल-डोल रहा था, लेकिन कही भाग नही सकता था। लोगो ने बतलाया, कि अभी एक गर्भिणी लौडी इधर से गुजरी है, उसी के कारण साप अन्धा हो गया है। हल्ला-गुल्ला होने पर बाहर से आदमियो ने आकर साप को मार दिया। साप की केचली आख सहित सारे शरीर का मुर्दा चमडा ही है। हो सकता है, केचली छोडते सामय पर्दा पडे रहने के कारण साप को आख से दिखलाई न पडता हो। साप धन की डोरी पर बैठता है। इसलिए केचली को भी धन देनेवाली चीज समझकर लोग उसे घर मे रखते है।

सलमाडा मे पाटडा या पीले रग की गोहे भी बहुत होती है, जिनके बारे मे मशहूर है, कि उन्हे गढ की किसी दीवार मे चिपका उनसे रस्सी बाध ऊपर चढा जा सकता है। गोह एक बार किसी चीज से चिपककर फिर उसे छोडना नही जानती। मखनपुर मे गौरी ने दोपहर को एक पीले से साप को देखा। वह एक चूहे के बिल मे चार अगुल घुस गया था। इसी समय लोगो ने उसकी पूछ पकड ली। कितना ही जोर लगाया, लेकिन साप को नही खीच पाये। अन्त मे उसकी पूछ को दीवार मे खूटी से बाध कर दो आदमियो ने लकडी से दबा पूरा जोर लगाकर किसी तरह उसे बाहर निकाला। मुह के बाहर निकलते ही लाठियो से उसे कूच दिया गया। जहा इतने अधिक साप निकलते हो, वहा साप से निर्भय लोग भी काफी मिल जाते है। नब्बू खैराती साँप को पूछ से पकड घुमाकर एक झटका देता, जिससे उसकी हड्डियो की जजीरे टूट जाती। ऐसे साप को जमीन

पर छोड देने पर भी उसके लिए दौडना मुश्किल होता। नब्बू खैराती तो विशेषज्ञ था, गढ की बहुत-सी लौडिया भी भागते साप को पूछ से पकड घुमाकर जमीन पर पटककर मार देती।

सापो की कहानिया और भूतो की कहानिया भी बचपन मे गौरी के लिए बहुत प्रिय थी। सापो अर्थात् नागदेवता के अपने चारण-भाट होते है, जिनको बडुवा कहा जाता है। वह सापो की बाबियो पर बैठकर उनके कुल का यशगान करते है। नागदेवता खुश होकर अपनी बाबी के पास पैसा-रुपया रख जाते है, और बडुवा आशीर्वाद देते उठा लाते है। गौरी उस समय बहुत छोटी थी। एक दिन एक बडुवा एक छोटी सी लोहे की डिबिया लेकर आया। डिबिया के भीतर एक सुनहले रग का साप था। बडुवा ने बतलाया—"हमारे जजमान सापराज के कवरजी खो गये थे। मै उन्हे ढूढने पर लगा था, बडी मुश्किल से ढूढ पाया। अब इनके पिताजी के पास ले जा रहा हूँ। वह मुझे काफी इनाम देगे।"

सलमाडा मे काले नाग बहुत मिलते है। यह तीन-चार हाथ लम्बे होते है, और गुस्सा होने पर छत्र की तरह अपना फन निकाल लेते है। साप काटने पर झाडने-फूकनेवाले बुलाये जाते। काटे हुए आदमी को लिटा दिया जाता, और ढोल बजाते हुए मन्तर गाने लगते। दो-तीन घण्टे इस तरह करने के बाद डसनेवाला साप वहा स्वय आ जाता और विष उतर जाता है। और प्रदेशो की कहावतो मे आता है, कि साप को मन्त्र-बल से जबर्दस्ती पकडवाकर उसी के मुह से घाव से विष को चुसवाया जाता है। अजमेर से ब्यावर जानेवाली सडक पर अजमेर से दस-ग्यारह मील पर खरवा आता है। गौरी के बाबोसा रूडसिह के मामा खरवा के वही ठाकुर साहब थे, जो अपनी स्वतन्त्र-भावनाओ के लिए अग्रेजो के कोप के भाजन हुए और प्रथम विश्व-युद्ध के समय अपनी जागीर से दूर ले जाकर नजरबन्द कर दिये गए। यही सडक पर एक छोटा-सा मन्दिर है। किसी को साप काटने पर उसे इस मन्दिर मे ले जाया जाता है, और घाव के स्थान को देवता के मुह से लगा दिया जाता है। देवता विष चूस लेता है, और आदमी बेठा हो जाता है।

सापो की बहुत-सी जातिया सलमाडा मे मिलती है, जिनमे कुछ है—

गुराया—यह पीले रग का साप तीन-चार हाथ लम्बा होता है। इसका पेट सफेद और बाकी शरीर पर काले-काले धब्बे होते है। यह फन निकाल सकता है और बहुत जहरीला होता है।

कुम्हरिया—यह काले रग का साप हाथ-डेढ हाथ लम्बा तथा बहुत मोटा नही होता। यह बहुत जहरीला माना जाता है।

दुम्भी (दूमुही)—यह हाथ-दो हाथ लम्बा मोटा साप है। आदमी को यह नही काटती।

पितर—यह सफेद रग का निर्विष साप बहुत पूज्य माना जाता है। समझा जाता है, कि मरे पितर इसके रूप मे अपनी सन्तानो के घर कभी-कभी देखने-सुनने के लिए आ जाते है। स्त्रिया इस साप को मारने नही देती।

सापो को पकडकर मारनेवाली स्त्रिया सलमाडा मे काफी मिलती है, यह हम कह आये है। बाबोसा का एक शरीर-रक्षक था। उसकी स्त्री अपने बच्चे के साथ घर मे सो रही थी। इसी समय खाट के नीचे से एक काला साप निकला। स्त्री ने खाट से उतर पूछ पकडकर पटककर उसे मार दिया। आकर फिर चारपाई पर लेटी। इसी समय चूल्हे मे दूसरा साप दिखाई पडा। उसने उसे भी उसी तरह पटककर मार दिया। फिर तीसरा साप निकला और उसे भी उसने मार दिया। बिना लाठी के हाथ से पूछ पकडकर काले साप का मारना बडे साहस की बात है। मरे साप को लोग गडहा खोदकर उसमे कपडा डालकर दफना देते है। विश्वास किया जाता है, कि ऐसा करने पर फिर साप उस घर मे नही आता।

झाउल—शाही की तरह का सारे शरीर पर काटोवाला एक छोटा जन्तु 'झाउल' राजस्थान के इस इलाके मे होता है। कभी-कभी साप से उसकी लडाई हो पडती है। साप अपने फन को झाउल के पीठ पर मारकर काटो से क्षत-विक्षत हो मर जाता है।

सलमाडा मे बिच्छू कम होते है। जो होते भी है, वह बहुत छोटे-छोटे तथा बहुत कम विषवाले।

कनखजूरा (कनसला)—बहुत निकलता है, और कभी-कभी किसी के बदन मे भी चिपक जाता है। एक बार किसी लडकी का ब्याह हो रहा था। लडकी मडवे मे बैठी थी और हवन हो रहा था। इसी समय एक कनखजूरा कपडे के भीतर से उसकी जाघ मे चिपक गया। दर्द हो रहा था, लेकिन ऐसे समय वह विकलता कैसे दिखलाती? भावर पड जाने के बाद उसने बतलाया। तब तक कनखजूरा इतना चिपक गया था, कि खीचने पर वह छोड नही रहा था। उसके सैकडो पैर चमडे के भीतर घुसे हुए थे। जर्राह ने आकर चीरकर कनखजूरे को निकाला। कनखजूरा कभी-कभी मुह से काटता भी है, जिससे हल्का-सा दर्द

होता है, और पीछे वहा बहुत-सी फुन्सिया निकल आती है। तो भी कनखजूरे से प्राणो का डर नही है।

गोहिरा—मादा को पाटला या गोह कहते है, और नर को गोहिरा। शायद यह वही बित्ते भर से बडा जन्तु है, जिसे कही-कही बिसखोपडा भी कहते है। जीभ साप-सी चिरी और चार पैर तथा लम्बी पूछ होती है। कोई-कोई गोहिरे हाथ भर के होते है। कहते है, गोहिरा जिसको फूक मार दे, वह आदमी तुरन्त मर जाता है।

सलमाडा मे यदि साप ज्यादा है, तो वहा पर सपेरे भी बहुत है, जो सापो को पकडते है। गौरी एक दिन हाथी पर चढकर घूमने जा रही थी। उसी समय एक सपेरा किसी बिल के पास बैठा पुगी (बीन) बजा रहा था। साप फन हिलाता इसी समय उसके सामने आया। सपेरे ने मौका पाकर शिर पकड लिया, फिर मुह को दबाकर उसने अगुली डाल उसके भीतर से एक नीले रग की थैली-सी निकाल बाहर रक्खी और साप के दातो को भी दिखलाया। विष के दातो के भीतर उसी तरह का सूराख था, जैसा इजेक्शन देने की सूई मे। सपेरे ने गौरी को बतलाया, कि साप आदमी को काटते समय मुह से दबा लेता है, फिर इसी नीली थैली मे से जहर निकालकर दातो के रास्ते घाव मे डाल देता है। यदि जहर पूरा प्रवेश कर जाय, तो आदमी नही बचता। थैली को गौरी ने लकडी से पीटकर तोडना चाहा, लेकिन वह बहुत चीमड थी, और नही टूटी।

गौरी ने मणिधर सापो के बारे मे भी सुना था। लोग कहते थे, कि वह जब अपनी मणि को बाहर निकालकर रखता है, तो रात को बिजली के दीपक की तरह प्रकाश हो जाता है, और उसी प्रकाश मे वह चरता-चुगता है।

सलमाडा मे गिरगिट भी बहुत है। चौमासो मे कितनी ही बार गौरी ने उन्हे अपने सामने हरा, लाल, पीला और काला होते देखा।

गौरी वैसे कूदने-फादने, पेड पर चढने आदि मे बडी निर्भय थी। चमगीदडियो से लोग डरते थे, लेकिन वह निडर होकर उन्हे पकड लेती और दूसरो को डराती फिरती। लेकिन सापो के बारे मे वह उतनी निडर नही थी, तो भी उनकी कथाए उसे बहुत प्रिय थी। उसने अपनी आखो के सामने कितनी ही स्त्रियो को साप पकडकर मारते देखा, तो भी उसे हिम्मत नही हुई, कि स्वय वैसा करे। शायद, यदि उसके परिचितो में साप से खेलनेवाले कोई होते, तो उसका भी डर छूट जाता, फिर विष निकाले सापो के रखने का शौक तो उसे हो ही जाता, और तब काठ के

सापो से लोगो को डरवाने की जगह वह जीते सापो से लोगो को तग करती। उसके खेलवाडी स्वभाव के लिए सचमुच ही यह नया आविष्कार होता, यदि सापो से उसका स्नेह हो जाता। यदि चमगीदडियो की तरह किसी के तकिये के नीचे और किसी के साफे के भीतर वह जीते नागराज को रख आती, फिर कैसा रहता ? निर्भय स्वभाव की गौरी इस खेल से वचित रह गई, इसे सयोग ही कहना चाहिए ।

सलमाडा मे सापो की करामात के बारे मे बहुत-सी बाते प्रचलित है। दो भाई किसान खेत बोने गये थे। हल चलाते-चलाते थककर शमी (खेजडी, जाटी) के नीचे आकर ठण्डा होने के लिए खडे हो गये । शमी के पेड पर काला नाग बैठा हुआ था । उसने छोटे भाई के शिर मे काट खाया । उसे मालूम हुआ, कि कुछ चुभ गया । बडे भाई ने कहा, शमी का काटा चुभ गया होगा । उसके बाद साप-काटे को भूल गये और दोनो भाई अपने काम मे लग गये । साल भर बाद फिर उसी शमी के नीचे काम करके खडे हुए, तो भाई को ख्याल आया, और वहा काले साप को बैठा देखा। उसने कहा—"शायद इसी साप ने पिछले साल तुझे काटा ?" यह सुनते ही छोटा भाई 'ऐ, ऐ' कहते गिरकर वही मर गया।

कोई आदमी रास्ते पर जा रहा था। वहा से फण फैलाये एक साप निकला । आदमी ने तलवार निकालकर एक बित्ता भर फण को काट दिया और अपने रास्ते चला गया। पास मे कोई नगर था, जहा बाजीगर तमाशा दिखा रहा था। वह आदमी भी भीड मे खडा होकर तमाशा देखने लगा । उसे यह मालूम नही हुआ, कि साप का फण फुदकता-फुदकता उसके पीछे आ रहा है । फण ने लोगो के बीच मे पहुँच और सबको छोड केवल काटनेवाले को आकर डसा और वह वही मर गया । इसीलिए फण को काटा नही, बल्कि कुचला जाता है ।

साप-काटे की दवा भी कभी-कभी अचानक मिल जाती है । रास्ता जाते-जाते एक आदमी को साप ने काट खाया। उसने समझ लिया, कि अब तो जीना नही है। वह बालू के एक टीले पर बैठ गया और खूब रेत फाकने लगा । सारा जहर पेट मे गई रेत मे समा गया, उसके बाद उसने कुछ कै की, और जहर उतर गया। जोड गाव के जगल मे फतेह खा की एक पक्की कबर है। साईसो को विश्वास है, कि उस पर पैसे दो पैसे की खाड चढा देने पर साप नही काटता, और वह ऐसा किया करते है ।

सलमाडा मे शायद ही कोई गाव या कस्बा हो, जहा साल मे एक-दो आदमी साप या गोहिरे के काटे न मरते हो। एक दारोगा (राजकुल का परिचारक) सोचने लगा, जब तक रोटी बनती है, तब तक एक चिलम ही पी ले। चिलम छान मे खोसी हुई थी। वह उतारने लगा। उसी समय गोहिरे ने फूँक मार दी और दारोगा वही धडाम से गिरकर मर गया।

नाराणा दारोगा गौरी के दादाजी का हुक्काबरदार था। उसकी औरत घर मे खाना बना रही थी, और नाराणा अलमारी पर से कोई चीज उतार रहा था। वहा तीन-चार हाथ लम्बा काला साप बैठा था। वह उसके हाथ मे काटकर चिपक गया। हाथ हटाकर नाराणा ने झटका दिया, साप नीचे गिरा और उसके साथ ही नाराणा भी गिरकर वही मर गया।

गौरी को घोडा चढानेवाला गूजर—जिसे वह बाबा कहा करती थी—अपने बचपन की कहानी कह रहा था। उधर गिरगिट की शक्ल के साडे बहुत रहते है। लडके बिलो मे पानी डालते और जब साडे निकलते, तो उन्हे पकड लेते। साडे किसी को काटते नही, इससे लडके बहुत निडर थे। एक बार उन्होने किसी बिल मे पानी डाला, तो भीतर से साडे की जगह काले साप ने मुह निकाला। एक लडके ने साडा समझकर उसके मुह को झट पकड लिया। साप ने अपने बाकी शरीर से लडके के हाथ मे चूडिया चढा दी। लडका मुह छोडने की हिम्मत नही रखता था, क्योकि तब साप काट खाता। साप की चूडियो से हाथ मे खून आना-जाना बन्द हो गया था, इसलिए हाथ नीला पडने लगा। सयोग से इसी समय एक सपेरा आ गया। उसने साप को पकड लिया और लडके की जान बची।

सलमाडा मे फोग के छोटे-छोटे झाड होते है, जिनके बारीक दानो का रायता बहुत अच्छा बनता है। कोई औरत फोग तोड रही थी। इसी समय एक गेहुआ रग का साप झाड मे दिखाई पडा। औरत ने उसकी पूछ पकड घुमाकर पटक दिया, वह वही मर गया। साप अक्सर अपनी सापनी के साथ रहता है, और साप के मारने पर सापनी बदला लेती है। औरत ने उसी समय देखा, कि सापनी झाड से उतरकर जमीन पर खडी हो गई है। उसकी बहुत थोडी-सी पूछ जमीन पर थी, बाकी सारा धड हवा मे खडा था और वह बडे जोर से फुफकार रही थी। औरत पूछ को पकड नही सकती थी। मारे तो कैसे मारे? इसी समय पास मे उसने कोई लकडी पडी देखी, और उससे मारकर सापनी को गिरा दिया। फिर पूछ पकड पटककर मार दिया।

सलमाडा की तरफ यद्यपि बिच्छू नही होते, लेकिन राजस्थान के दूसरे स्थानो

मे कही-कही बहुत बडे बिच्छू होते है । गौरी ने एक बार सुना, कि उसके मा के ननिहाल दिगो मे एक छोटा-सा पत्थर पडा हुआ था। वर्षा मे जब आकाश से बूदें पडती, तो वह जलते तवे की तरह उस पत्थर पर पडकर छन-सी हो जाती। लोगो को ख्याल आया, कि देखे पत्थर के नीचे है क्या ? पत्थर हटाया गया, तो वहा हथेली भर का एक काला बिच्छू निकला। लोगो ने उसे मार दिया और फिर हडिया मे बन्द करके जसपुर के राजवास-सग्रहालय मे भेज दिया।

अध्याय ४

पुराने जगत् की स्मृतियां

उस समय रनिवास की स्त्रियो की दुनिया सचमुच ही बहुत छोटी थी। विद्या और पुस्तको का भी सहारा नही था, जिसके द्वारा, कुछ समय के लिए ही सही, एक बडी दुनिया के भीतर मानसिक तौर से पहुचा जा सके । छोटी लडकी को कुछ स्वतन्त्रता जरूर रहती, जो और भी बढ जाती, यदि पिता के स्नेह के ऊपर उसका एकान्त अधिकार होता। गौरी अपने बडे चाचा (ताऊ) को ही बाबोसा (पिता) जानती, और वह अपनी भतीजी को बेटी से बढकर प्यार करते। बाबोसा पुराने युग के दुर्लभ सत्पुरुषो मे से थे । उनका अपना जीवन बहुत सीधा-सादा था, जिस पर बहुत खर्च करने की अवश्यकता नही थी। लेकिन वह मुक्तहस्त थे। मगलपुर मे उन्होने लडको के लिए हाईस्कूल खोल रखा था, जिसमे तीन-चार सौ लडके पढा करते थे। फीस की तो बात ही क्या, कितने ही लडको को वह खाना-कपडा भी देते थे। हेडमास्टर पण्डित कृष्णदास गौरी को पढाया करते थे। रोज चार बजे लडको के खेल के समय गौरी भी देखने जाती और रविवार को लडको मे लड्डू बाटने का काम बाबोसा की ओर से उसे ही मिलता था। बाबोसा के पास तीन-चार सौ नौकर थे। उस समय खाने-पीने की चीजे बहुत सस्ती थी। लेकिन तीसरे दरजे के नौकरो की तनख्वाह इतनी कम थी, कि सर्दी मे वे ठिठुरने लगते। बाबोसा की अपनी आखे तो जाती रही थी, लेकिन उनके लिए गौरी की आखे अपनी-जैसी थी । गौरी का दिल किसी को दुखी देखकर द्रवित हो जाता। वह सर्दी मे ठिठुरते नौकरो को देखकर बाबोसा से कहती, और बाबोसा उनके लिए रुईदार कोट बनवा देते। बाबोसा प्रजा का दु ख-सुख देखने के लिए गावो मे जाया करते थे, उस समय गौरी भी साथ रहती। गाव के लोग गौरी के द्वारा बाबोसा के सामने अपनी अर्जी पेश करते । अर्ज करने के लिए तो बाबोसा के दरबार मे कोई रुकावट नही थी । हा, गौरी की आखो से वह अपने लोगो के दु ख-सुख को प्रत्यक्ष देखते, और उनकी ओर से जो दया की दृष्टि होती, उसका कारण लोग गौरी को ही समझते, इसीलिए वह प्रजा के स्नेह की भारी पात्र थी ।

मनोविनोद के साधनो मे रनिवास के सीमित क्षेत्र मे नौकरानियो को व्यग्य और उपहास का लक्ष्य बनाना भी एक था। चालीस-पैतालीस वर्ष की नौकरानी पार्वती जहा हसोड स्वभाव की थी, वहा वह बडी जल्दी चिढ भी जाती थी। किसी ने ताली पीट दी, कि पार्वती बडबडाने लग जाती, मारने दौडती। ऐसे समय के लिए स्वयजात कवि भी पैदा हो जाते थे। गौरी की सखिया पार्वती को देखकर कहती––

जाला बीजा राम का, भलो पसार्‌यो पेट ।
थारी जावे कानि देखता, काची रै गई जेठ ।

इस पर पावती गाली देते हुए कहती–"थारी मा राड मर जौ, थारे बाप काची रै गई होगी जेठ।" 'थारी जावै' का अर्थ है तुम्हारी सन्तान और 'जेठ के काची रह जाने का अर्थ है, रोटी कच्ची रह जाना। जाला पार्वती के बाप का नाम था, उसकी जेठ कच्ची रह जाने का मतलब था पार्वती कच्ची बुद्धिवाली (मूर्खा) रह गई। पार्वती को बिगाडकर लोग पारी कहा करते। उसको खिझाने के लिए कोई भी बात काफी थी। और नही हुआ तो कह दिया––"सीताराम सटक गये। तुम्बी-लोटा पटक गये।" इसमे पार्वती की कोई बात नही थी, लेकिन उसे आग-बबूला बनाने के लिए यह भी कहना पर्याप्त था। चाहे पार्वती के चिढाने मे गौरी का भी हाथ काफी रहता हो, लेकिन वह अपने अन्नदाता की बिटिया पर कैसे गुस्सा प्रकट कर सकती थी ?

माल्या राणा की बहू––लडकपन के विनोद मे सहायक होनेवाली एक और प्रौढा परिचारिका माल्या राणा की बहू थी। रनिवास मे गाना-बजाना करनवाली स्त्रियो को ढोलनी कहते है। शायद ढोल बजाने के कारण यह नाम उन्हे दिया गया। माल्या ढोलन गाने-बजाने आती तो रानिया कहती––"माल्या के बहू को दारू पिलाओ।" कासे-पीतल की कटोरी या काच के गिलास मे उसे शराब दी जाती। शराब ठेकानो के लिए कोई महगी चीज नही थी। उनकी अपनी भट्टिया होती, जिनमे काम के लिए शराब चुआ ली जाती––आम लोग ठेके की भट्टियो से शराब लेकर पिया करते थे। शराब की कटोरी हाथ मे पडते ही माल्या की बहू मुट्ठी बाधकर कनपटी मे लगा वारना देती। गौरी की मा या दादी बैठी-बैठी देखा करती, और हुक्म देती––"और लाओ, और लाओ।" लेकिन माल्या की बहू को नशा चढ आता, तो वह अपने रग मे आ जाती और रनिवास की रानिया उसकी नजर मे मुसलमानो की बहुए दीख पडती। किसी को वह कहती––

"कौन, कमरदी खा की बहू है, क्या ?" उसकी बोलचाल इतनी शान्त होती कि मालूम नही होता, वह नशे मे है। जब यह एक मजाक का ढग था, तब कमरदी खा की बहू कहने पर गौरी की मा क्यो नाराज होने लगी ? उसे लोग बात मे लगाये रखना पसन्द करते, क्योकि गाने की छुट्टी देने पर वह गन्दे गीतो का राग अलापने लगती। एक बार रनिवास से बिदा लेकर वह घर की ओर जा रही थी। रास्ते मे गधा या गाय बैठी देखकर उस पर सवार हो कहने लगी–"मै तो घोडे पर चढ कर जा रही हूँ।" फिर किसी ने उसकी सास को खबर दी। वह मात्या की बहू को उठाकर ले गई। दूसरी नौकरानियो को नशे मे करने पर उनमे से कोई रात भर गीत गाती, कोई नाचती। एक बार एक नौकरानी को खूब शराब पिलाई गई। हास-परिहास होने के बाद वह तिमजिले महल की सीढियो पर चढकर ऊपर की ओर जाने लगी। उसकी दो वर्ष की बेटी उसी समय सामने आ गई। वह उसे हाथ मे पकडकर हर सीढी पर पटकती-उछालती ले चली–"यह क्या है?" बस यही उसके मुह से निकल रहा था। उधर बच्ची बेचारी प्राणो के लिए चिल्ला रही थी। खैर, लोगो ने सुना और आकर बच्ची को छुडाया। बारह-एक बजे रात तक पीना, गाना-बजाना और हास-परिहास जारी रहता। गौरी के बाबोसा की आदत थी, दस बजे ही सो जाने की। कभी-कभी महफिल बाबोसा के शयन-कक्ष के ठीक ऊपर होती, और कभी कुछ हटकर। तब भी उस समय हल्लागुल्ले के बाबोसा के कान मे जाने मे कोई रुकावट नही थी। वह उन्हे कुछ हल्की-सी झिडकी भी देते, जानते ही थे कि इन पिजडे के पछियो के जीवन के लिए यही तो एक सहारा है, इसीलिए बहुत क्रोध नही दिखाते थे। हा, नौकरो मे यदि कोई शराब पीकर ऊधम मचाते देखा जाता, तो उसकी पाच दिन की छुट्टी काट लेते, अर्थात् वह पाच दिन के लिए बिना दाम मिलनेवाली खाद्य-सामग्री से वचित हो जाता। रनिवास मे पाच-छ बोतलो से काम चल जाता, लेकिन बाहर ठाकुर साहब के दरबार मे बीस-पच्चीस बोतलो का खर्च था। शराब राजस्थान के बाम्हनो और बनियो मे मास की तरह वर्जित भले ही समझी जाती हो, किन्तु राजपूत उसकी कसर निकाल लेते है। लडकी ब्याहने के लिए जब बरात आती, तो वरपक्ष बडे कढाव मे शराब भर देता, जिसे पील कहते है। सारे गाव के लिए शराब की सदावर्त जारी हो जाती। यह कढाव जनवासे मे रक्खा जाता, जहा जाकर हरएक आदमी जितना चाहे उतनी शराब पी सकता था। लेकिन राजस्थानी अभी नेपाल के नेवार राजाओ से बहुत पीछे थे। वहा उत्सवो के समय शराब भरने के लिए टोटीदार हौज बने होते थे, जिन्हे काठमाडू मे आज भी देखा जा सकता है। इन हौजो से

कोई भी जाकर रात-दिन चौबीसो घण्टे शराब लेकर पी सकता था—एक भी पैसा खर्च करने की जरूरत नही थी ।

बारात की ठाठ—बारात के समय लडका और लडकी दोनो पक्ष अपने हाथो को खोल देते । जब कसौरावाली बुआ का ब्याह हुआ था, तब दूसरे समयो की तरह ठाकुर साहब का मगलपुर के कलालो को हुक्म था—जो भी आये, उसे एक पाव शराब दो, कसाई को हुक्म था—जो भी आये,उसे एक पाव मुफ्त मास दो । इसी तरह मोदी को मसाले, तेल, घी के साथ एक सेर आटा देने का हुक्म था । जो मास नही खाना चाहते, वे कन्दोई (कान्दू या हलवाई) के पास से एक पाव मिठाई मुफ्त ले सकते थे । तीन दिन के लिए ठाकुर साहब की ओर से यह सदावर्त जारी रहता, जिसे 'खुली चिट्ठी' कहा जाता था । मगलपुर के दूकानदारो को हुक्म था, कि बराती यदि कोई चीज खरीदे तो, उसका दाम मत लेना, दाम ठाकुर साहब के खजाने से तुम्हे मिलेगा । उस समय एक पूरी कोठरी नए-नए जूतो से भरकर तैयार रक्खी रहती । यदि किसी का जूता खो जाता, तो वह वहा जाकर अपने पैर के नाप का जूता पहन आता । इसके लिए महीनो पहले से ठेकाने के मोचियो को जूते बनाकर देने पडते । खैरियत यही थी, कि इन जूतो के चमडे अपने यहा के सिझे होते, इसलिए बाहर रुपया भेजकर उन्हे खरीदने की अवश्यकता नही थी ।

गौरी के स्वभाव मे बचपन से ही एक प्रकार की दृढता थी । यदि एक बार उसके मुह से "न" निकल गया, तो वह "न" ही रहता, जिसे बाबोसा भी शायद कभी-कभी हटाने मे समर्थ न होते । गौरी और वन्दनी कुमारी अपने बाप के साथ खाना खाती । खाने मे चिढाने के लिए वन्दनी कोई चीज अपनी ओर सरका लेती, गौरी लड पडती । बाबोसा बडी लडकी को मना करते, तब भी कितनी ही बार तुनककर गौरी बिना खाये ही उठ जाती । बाबोसा बहुत मनाते, लेकिन नाही जो कर दिया था । पीछे भूख के मारे चाहे अतडिया ऐठती ही रहती, लेकिन वह खाये बिना ही सो जाती । गौरी को छाछ पीना बहुत प्रिय था । वह उसे दूध से भी अधिक पसन्द करती थी । जाडो मे छाछ पीना स्वास्थ्य के लिए बुरा समझा जाता, लेकिन गौरी क्यो अपने प्रिय पेय से वचित हो ? उसे वचित करने के लिए एक रास्ता भी निकल आया था । रनिवास की तरवती और अमरी दो नौकरानिया जहा रग मे काली थी, वहा कपडो को भी गन्दा रखना उन्हे पसन्द था । उनके हाथ की छुई किसी चीज को खाना गौरी पसन्द नही करती थी । बिस्तर से उठते ही गौरी 'छाछ-छाछ' चिल्लायेगी, यह सोचकर वही कही तरवती और अमरी को दही

बिलोने के लिए बैठा दिया जाता। गौरी देखती कि काली-कलूटिया छाछ बना रही है, तो वह बहुत क्रुद्ध होती और जब उसे उनकी बिलोई छाछ दी जाती, तो वह छाछ के गिलास को ही पटक देती।

रथो पर यात्रा—अस्सी-नब्बे वर्षकी अत्यन्त बूढी अन्त पुरिकाओ को भी जहा कठोर पर्दे मे रहना पडता हो, वहा रानियो के लिए यात्रा करना कैसे आसान होता? वे रथ पर एक जगह से दूसरी जगह ढोई जाती थी। ये रथ एक या दो शिखरवाले सुन्दर यान होते थे, उनमे चुनकर बहुत सुन्दर बैलो की जोडी नाधी जाती। सलमाडा रेगिस्तानो का इलाका है, जहा पर चार की जगह होने पर भी रथ के भीतर एक या दो से अधिक सवारी नही चढाई जाती। वैसे तो बालू की भूमि रुई के गाले बिछी धरती-जैसी कोमल थी, लेकिन कही-कही उसमे बालू के टीले आ जाते थे। वहा एक ओर के पहियो के ऊपर उठने से रथ ही लुढक न जाये और फिर रानी साहिबा का पर्दा ही खतम न हो जाय, बल्कि जन्म भर के लिए वह कही अपाहिज न बन जाय, इसके लिए रथ के दोनो ओर दो-दो साईस चलते थे, जिनका काम था ऐसे स्थानो पर पहिये को दबाकर रथ को लुढकने से बचाना। इन रथो के बनाने मे काफी कला का परिचय दिया जाता था। रथ के आगे की ओर निकले छज्जे मे सारथी बैठता और भीतर घोर पर्दे के भीतर रानी साहिबा विराजती। आगे-आगे घोडे पर सवार होकर एक चोबदार चलता और रथ के पीछे भाला हाथ मे लिये कमर मे तलवार लटकाये दस-पन्द्रह सवार अनुगमन करते, जिनमे से किसी-किसी के पास बन्दूके भी होती। रथ के भीतर गद्दा-तकिया बिछा रहता। उसमे इतनी जगह होती कि रानी साहिबा इच्छा होने पर इत्मीनान से पैर पसार-कर सो सकती थी। भीतर गुम्बज मे सुन्दर झालरे लटका करती। बाहरी दुनिया को देखने के लिए चादी या पीतल की बहुत झीनी चार अगुल की जालिया पर्दे मे सिली रहती। उनसे रोशनी और हवा भला क्या आती, हा इच्छा होने पर रानी साहिबा उनसे बाहर की चीजो को देख सकती। रथ के ऊपर लाल या गुलाबी लट्ठे का पर्दा पडा रहता, जिसे चादनी कहते थे—विधवा अन्त पुरिकाओ का पर्दा सफेद रग का होता। दिन मे भी अधेरी रात मालूम होनेवाले रथ के भीतर बैठाये जाने पर गौरी रोने-चिल्लाने लगती। फिर नौकरानी या मा के हाथ मे फानूस मे मोमबत्ती जलाकर दी जाती, तो वह उसको देखकर चुप हो जाती। बचपन से ही उसे दीपक देखकर खुशी होने की आदत पड गई थी। रेगिस्तान मे दचके खाने का डर नही था। टीलो के कारण लुढकने का

डर अवश्य था, जिसका प्रबन्ध कैसे किया जाता था, इसे हम अभी बता चुके है ।

मगलपुर से मखनपुर का दस मील का रास्ता सारा रेगिस्तान का है, जिसको पार करने मे तीन घण्टे लगते थे। इससे मालूम होगा कि बैल काफी तेज चलते थे । रास्ते मे दो बार जानवरो को पानी पिलाकर सुस्ताने के लिए खोल दिया जाता । इसी समय परिचारकवृन्द चिलम-तम्बाकू पीते। रानी साहिबा चुपचाप रथ के भीतर बैठी या लेटी रहती । उनकी नौकरानिया एक-एक ऊट पर दो-दो करके पीछे-पीछे चलती । यदि रानी को अवश्यकता होती, तो वह रथ को थप-थपाती । फिर नौकर-नौकरानी को ऊट से उतारकर रथ के पास ले आते, और रानी साहिबा अपनी फरमाइश उनके सामने रखती । लेकिन अक्सर नौकरानियो की आवश्यकता नही पडती, रथ के भीतर आवश्यक कितनी ही चीजे पहले ही से रख दी जाती थी । मिट्टी की सुराही टूट जायगी, और रेगिस्तान मे पानी अमृत है, इसलिए सुराहिया रागे की होती थी । इन भारी भरकम सुराहियो का पानी मिट्टी की सुराही जितना ठण्डा तो नही होता था, लेकिन तब भी भीगे कपडे से ढके होने के कारण काफी ठण्डा रहता था । सुराही की गर्दन पर चादी का खोल मढा रहता और उसका यही भाग बाहर दिखाई पडता था । पानी के अतिरिक्त खान की भी चीजे वहा भरी रहती। रनिवास मे पान का बहुत रवाज था, पानदान भी इसके लिए वही पडा रहता। पुराने युग की ताम्बूल-वाहिकाओ का इस समय रवाज शायद बडे राज्यो मे ही रहता हो । रनिवास इस तरह जहा एक या अनेक रथो मे आगे-आगे चलता, वहा पीछे-पीछे राजा या ठाकुर साहब सदल-बल घोडे पर चलते । गौरी के बाबोसा अन्धे थे, इसीलिए वह ऊटनी (साडनी) की सवारी करते थे । साडनी पर आगे नौकर बैठता और पीछे बाबोसा । दस-बारह वर्ष की गौरी भी अक्सर अपने बाबोसा के आगे साडनी पर बैठती। गर्मियो मे मखनपुर की यह यात्रा तीन बजे रात ही को शुरू हो जाती, क्योकि दिन चढने पर बालू तप जाती, उस वक्त चलना बडा ही दुस्सह होता ।

जाडो मे दोपहर का खाना खाने के बाद एक-दो बजे यात्रा शुरू होती । मगलपुर एक मील रह जाता । वहा एक पक्का तालाब था । कभी तालाब सूख भी जाता था । यही रनिवास थोडी देर के लिए विश्राम लेता । स्नान करना होता, तो यहा जनाना घाट तो नही था, लेकिन बनी हुई पक्की छतरी के किनारे कनात घेरकर परदा कर दिया जाता । यही राजरानी यदि बनाव-शृगार करना चाहती, तो कर लेती । वह यह भी जानती कि अब सासू के राज्य मे दाखिल होना है, इसलिए उसके लिए भी मन को तैयार कर लेती ।

अध्याय ५

मासी-भांजी

गौरी का अपनी मौसी कमलकुमारी से असाधारण स्नेह था। दोनो की उमर एक-जैसी थी, शायद मौसी एकाध साल बडी थी, लेकिन रिश्ते मे वह और भी बडी थी और समवयस्का सखी होने पर भी गौरी उसे मासी कहकर पुकारा करती।

मौसी या नाना का परिवार इस बात का उदाहरण था, कि राजस्थान में सामन्त-कुल किस तरह बनते और बिगडते रहते है। जनपुर मे पिहुवा नाम का एक ठेकाना था, जहा के ठाकुर लठिया-वीर दुर्लभसिह के वशज चाचला थे। राजस्थान के राजवशो की तरह ठाकुर-वशो मे भी सम्पत्ति का स्वामी ज्येष्ठ पुत्र होता है। आखिर मान-मर्यादा तो सम्पत्ति पर ही निर्भर करती है। यदि वह बटने लगे, तो सौ गाववाले मालिक पाच पीढी मे पाच गाव के स्वामी भी नही रह जायगे। छोटे पुत्रो को वही मिलता था, जो बाप दे जाता या भाई के अनुग्रह से प्राप्त होता। १९ वी सदी मे पिहुवा के ठाकुर के चार छोटे भाइयो मे तीन थे—फलसिह, जोखसिह और सीलूसिह। छोटे भाइयो को शायद कुछ बीघे खेत या कुए मिले थे—पिहुवा का ठेकाना तीन-चार गावो का ही था। छोटे भाई अपनी थोडी-सी भूमि पर ठाट-बाट से कैसे रह सकते ? वह अपनी खेती-बारी को शायद आज के भूमियो की तरह अधिया पर लगा देते और स्वय सौ-पचास साडनियो (ऊट-ऊटनियो) को पालते-चराते थे। पिहुवा का इलाका राजस्थान के मरु-स्थल मे था, जहा चारो ओर बालू ही बालू दिखाई देती, लेकिन वह ऐसी नही थी, कि उसमे वृक्ष-वनस्पति का कही नाम न हो। दूर-दूर हो सही, इस मरुभूमि मे कही नीम, कही खेजडी, कही कीकड, कही काटेदार खेर के वृक्ष होते, जिनके पत्तो को ऊट बडे प्रेम से खाते। फलसिह की साडनिया अपने लम्बे शिर को उठाकर दूर-दूर खडे वृक्षो की पत्तियो को चुग रही थी और फलसिह स्वय एक नीम के वृक्ष के नीचे बैठे थे। इस निर्जल भूमि मे पानी अमृत से भी ज्यादा मूल्य रखता है। वह घर से दीवडी (चमडे की सुराही) भर पानी, दो बाजरे की रोटी (सोगरा) और लाल मिर्च की चटनी साथ लाये थे। वृक्ष की छाया मे बैठे फलसिह न जाने

क्या-क्या सोच रहे थे । छोटे भाइयो को कौन अपनी लडकी देता ? इसीलिए अभी उनका ब्याह नही हुआ था। उनकी कल्पना भी दूर-दूर नही जा सकती थी। वह वृक्ष के नीचे पडे थे । इसी समय एक साधु आया और उसने बडे नम्र किन्तु अदीन स्वर मे कहा—"बच्चा, बहुत भूख लगी है, कुछ पास हो तो दे ।" फलसिह ने एक बाजरे की रोटी पर मिर्च की चटनी रखकर दे दी । साधु ने खाकर कहा—"बहुत दिन का भूखा हू, अभी भूख नही गई ।" फलसिह ने आगा-पीछा सोचे बिना दूसरी रोटी भी उठाकर दे दी । फिर साधु ने पानी मागा और वह सारी दीवडी खाली कर गया । मशक का पानी भारत के दूसरे स्थानो के लिए भले ही वर्जित हो, लेकिन इस मरुभूमि ने सनातन काल से उसे शुद्ध समझा । पुरबिए राजपूत चाहे चौके के बाहर रोटी खाने मे धर्म का नाश समझते हो, लेकिन राजस्थान के सबसे कुलीन राजपूत थैली मे रोटी लिये जूता पहने कही भी घूमते उसे खा सकते है ।

भाग जग गये—साधु ने रोटी खा, पानी पी, तृप्त हो, प्रसन्न मुद्रा मे कहा—"बच्चा, जा यहा से उठकर सीधे पूरब की ओर चला जा। तेरा भाग जग जायगा ।" कहते है, फलसिह साधु की बात पर विश्वास करके अपनी साडनिया वही छोड पूरब की ओर चल पडे । भूखे-प्यासे थके-मादे दस-पन्द्रह दिन बाद वह जसपुर पहुच, रिसाले मे भर्ती हो गये—लम्बे-तगडे जवान थे और उस पर भी राजपूत, फिर सिपाही की नौकरी क्यो न मिलती ? फलसिह चिलम पर तार की बहुत सुन्दर जालिया बुनते थे । रिसाले के अफसर को उन्होने सुंदर तार से बुनकर चिलम दी थी । एक बार वर्तमान जसपुर-महाराजा के धर्मपिता माखनसिह के धर्मपिता राखीसिह घूमते हुए उसी रिसाले मे आ निकले । रिसाले के अफसर ने चिलम भरवाकर हुक्का सामने रखा । राखीसिह ने सुन्दर चिलम को देखकर पूछा—"किसने बनाया है ?" अफसर न सिपाही का नाम बतलाया । फिर राखीसिह ने फलसिह को बुलाकर नाम-धाम पूछा । उन्होने जवाब दिया—"मै पिहुवा का चाचला हू ।" राखीसिह ने कहा—"कल ड्योढी आ जाना ।"

दूसरे दिन फलसिह महाराजा की ड्योढी पर चले गये । कुछ दिनो वह हुक्का भरते रहे, लेकिन राखीसिह को यह मालूम होते देर नही लगी, कि यह राजपूत तरुण हुक्का भरने के लिए नही पैदा हुआ है । इसलिए रसोई का दारोगा बना कुछ समय बाद उन्हे अपना मुसाहिब बना लिया । अब तक फलसिह ने अपने दूसरे दो भाइयो जोखसिह और सीलूसिह को भी बुला लिया था । फलसिह को महा-

राज ने जसपुर से चार मील पर अवस्थित नौला की तीस-चालीस हजार आमदनी की जागीर बकस दी। जोखसिह को कमला और सीलूसिह को भी सापा की जागीर मिली। इस प्रकार तीनो भाई अब ठेकानेदार ठाकुर हो गये। जसपुर के रतन बाजार मे उनकी अपनी तीन हवेलिया हो गई। साडनी चरानेवालो के भाग जग गये और तीनो के परिवार रईसी ठाट मे रहने लगे। बडे भाई फलसिह की बात को दूसरे भाई ब्रह्मवाक्य की तरह मानते, और बडी हवेली का ही शासन तीनो पर चलता।

जसपुर का राजवश भी कैसा था कि दर्जनो रानियो के होते भी पुत्र का मुख देखने के लिए तरसा करता। जसपुर ही क्यो, दूसरे राजवशो और ठाकुरवशो मे भी निस्सन्तान होना कोई असाधारण बात नही थी। दूसरी तरफ इन चाचलो का कुल था कि तीसरी पीढी मे वह तीन से डेढ-दो सौ का हो गया। गौरी की मा शान्तिकुमारी मझले भाई जोखसिह की पोती थी। सीलूसिह की पोती कमलकुमारी गौरी की मौसी थी। दोनो एक दात की काटी रोटी खानेवाली थी। उनकी हवेलिया अलग-अलग थी और छ महीने की लडकी को ही जब पर्दे मे डाल दिया जाता हो, तो भेट-मुलाकात करना कैसे आसान हो सकता था? एक बार गौरी के बाबोसा अपनी बेटी को देखने आये, तो कनात घेरकर छ महीने की बच्ची को गोद मे लेकर लौडी ने दिखलाया। दोनो सखिया जब एक दूसरे के पास नही होती, तो हवेली की छतो पर चढ जाती, जहा चारो ओर ऊची-ऊची दीवारे खडी होने पर भी किसी तरह शिर ऊपर निकाल दूर से इशारे से बाते करती, पर्दे से बाहर रहनेवाली अपनी नौकरानी लडकियो से सन्देश भेजकर बुलाती। इकट्ठी होने पर सब कुछ भूलकर दोनो रात-रात खेला करती।

आधी रात का खेल—कमलकुमारी के पिता चैनसिह अन्धे थे। उनके लडके कमलसिह की शादी हुई। नई मामी का गौरी से प्रेम था और अपने से नौ-दस वर्ष छोटी आठ-नौ वर्ष की गौरी के साथ वह खेलना पसन्द करती। पर्दे की कठोरता के कारण जान पडता है, राजस्थान की अन्त पुरिकाओ के वयस्क होने मे भी बहुत देर लगती थी, पचीस वर्ष तक बचपन ही घेरे रहता। चाहे अलग-अलग पलग भी बिछे रहते, लेकिन मासी-भाजी (कमलकुमारी और गौरी) एक ही बिस्तरे पर सोती। नाना-नानी जब सो जाते, तो पलग से उठकर दोनो खेलने लगती। खेल क्या थे? दिन मे गुड़ियो के खेल और रात मे किसी न किसी चीज की नकल। एक दिन दोनो पनिहारिन बनी। आधी रात से ऊपर हो गया था, जब कि यह कल्पना दिमाग मे आई।

दोनो ने लहगे के ऊपर की चुनरी का घूघट निकाल लिया, और कही से छोटे-छोटे मिट्टी के घडे ला शिर पर रखकर "जल भरन चली एक बाकी ब्रजनारी" का अभिनय करने निकली। लेकिन असावधानी से दोनो के घडे टकरा गये और उनके फूटकर गिरने की आवाज से नाना जग उठे। दोनो सखिया तब तक दौडकर बिस्तर मे दुबककर सो गई थी। नानी को तुरन्त खयाल आया, कि यह काम अवश्य इन्ही दोनो शैतान लडकियो का है। दोनो पकडी गई और उन्होने डरते-डरते कबूल किया कि हम पनिहारिन का खेल खेल रही थी।

गुड्डे-गुडियो का खेल तो सदा ही होता रहता था। एक बार दोनो सखियो ने सोचा कि हमे अपने गुड्डे-गुडियो का ब्याह रचाना चाहिए। गौरी के गुड्डे का नाम ईशरसिह था और कमल की गुडिया का नाम शिरेकुमारी। दूल्हा-दुल्हन की 'माताओ' ने जब ब्याह की बात पक्की कर ली, तो बिचली (गौरी के नाना की) हवेली से सात थाल पडले (मेवो, बताशो, कपडो से भरे) कन्या के घर भेजे गये। गुडिया-दुल्हन के लिए सोने का टेवटा और छोटी मोतियो के भी कितने ही जेवर थे। बरातियो की सख्या दर्जन से ज्यादा न थी। बरात ठाट-बाट से निकली। दूल्हा-गुड्डा को काठ के हाथी पर बैठाकर थाल मे रख घर की माणसा (लौडी) राधा के शिर पर रखा गया था। बैड-बाजा के साथ जाती बरात को देखकर जसपुर के इस मुहल्ले के कितनो ने तो समझा, सचमुच ही बरात है। साथ मे औरते भी गीत गाती जा रही थी। दुल्हन की हवेली में पहुचकर बरात का स्वागत हुआ। दूल्हा-दुल्हन कोई ऐसी-वैसी जात के थोडे ही थे। बाकायदा पण्डित बुलाया गया, वेद-मन्त्रो के साथ हवन हुआ और वर-कन्या की मताओ ने पाणिग्रहण करवाया। बरात मे आनेवालियो मे आठ-नौ वर्ष की मा गौरी ही नही थी, बल्कि उसकी नानी और कुछ मामिया भी शामिल हुईं। चावल और लापसी का सुमधुर ज्योनार हुआ। तीन दिन तक बरात कन्या के घर रही, इसके बाद दुल्हन को बिदा कर दिया गया।

गौरी बराबर तो ननिहाल मे नही रह सकती थी, वह अपने बाबोसा के पास मखनपुर चली गई। मौसी कमलकुमारी ने आदमी भेजकर अपनी गुडिया को मगवाया। दो महीने लडकी को पीहर मे रखा। लेकिन गुड्डा बेचारा रो रहा था, इसलिए गौरी ने अपने नौकर दुर्गा के साथ जमाई को भेजा। जमाई की सुसराल मे बडी खातिर हुई। दुर्गा को भी चलते वक्त पाच रुपये बख्शीस मिले। बिदाई के साथ पन्द्रह सेर के सकरपारे मिले थे। इससे पहले गुडिया को बच्चा भी पैदा हो गया था, जिसका भी जन्मोत्सव दादी गौरी ने बडे

ठाट-बाट से किया था। मा के साथ वह भी ननिहाल गया था। अब लौटते वक्त उसे हाथो मे सोने के कडे और गले मे सोने की हसली पहना दी गई थी।

दोनो सहेलियो के खेल अगर एक ही तरह के हो, तो चमत्कार ही क्या था? जसपुर आने पर यह हो नही सकता था, कि दोनो को अलग रखा जा सके। दोनो भरसक एक ही साथ रहना चाहती। ननिहाल मे मगलपुर से भी कडा पर्दा था। मगलपुर मे तेरह-चौदह वर्ष की हो जाने तक गौरी को पर्दा करने की जरूरत नही पडी थी। ननिहाल मे उसकी कडाई के बारे मे कुछ कहना ही नही। लेकिन ताऊ-नाना भरतसिह को जल्दी ही गौरी ने अपने पक्ष मे कर लिया। गौरी अपनी आयु से कही अधिक समझदार थी। उसकी बाते बडी दिलचस्प होती। भरतसिह की वह बडी लाडली थी। वह स्वय राज्य के एक अफसर थे। जब कोई भाई-अफसर उनके घर मिलने आता, तो अपनी दोहती (दौहित्री) की बातो की तारीफ किये बिना नही रहते। फिर गौरी बुलाई जाती और उससे अफसर बात करते। इस प्रकार गौरी के लिए तो पर्दा नही था, लेकिन कमल बेचारी को उतना सुभीता कहा? वह अपनी भाजी के भाग्य पर ईर्ष्या कर सकती थी।

नाक-कान कैसे छिदवाये? ज्यादा दिनो तक लडकी को नाक-कान छिदाये बिना कैसे रखा जा सकता था। उधर गौरी इसके लिए तैयार नही होती थी। कितना ही कहते, लेकिन वह रो-चिल्लाकर हल्ला मचा देती। नाना भरतसिह जसपुर मे हीरा-मोती के बडे पारखी माने जाते थे। रतन बाजार के जौहरी भी अपनी चीजो को परखाने और दाम करवाने के लिए उनके पास जाते थे। उनके पास उनका अच्छा सग्रह भी था। नाना गौरी से कहते—"जो तू छिदा ले, तो तेरी नाक के लिए झलकादार (जडाऊ मोतियो का) नथ गढा दूगा और कानो के लिए सुन्दर-सुन्दर बालिया।" गौरी को लालच हो आया, लेकिन हिम्मत नही होती थी कि कान-नाक छिदवाये। नानी किसी तीर्थ मे गई थी। वहा उन्हे पीतल के लड्डू-गोपाल मिल गये थे। उन्हे लाकर नानी ने हवेली मे एक जगह गोपालबगला (काठ का मन्दिर) बनवाकर गोपालजी को पधरा दिया। नानी कुछ दिनो तक तो स्वय आरती-पूजा करती रही, फिर एक पुजारिन रख ली गई। गौरी के दिमाग मे यही खयाल चक्कर मार रहा था, कि कैसे बिना दु:ख सहे झलकादार नथ और बालिया पा जाऊ। गर्मियो का मौसम था। दोपहर के समय घर मे लोग सो गये थे। इसी समय गौरी गोपालबगले पर पहुच गई। उसने देवताओ की बहुत-सी करामात की कहानिया सुनी थी, जिन पर उसका पूरा विश्वास था। उसने लड्डू-गोपाल के सामने हाथ जोडकर कहना शुरू किया—"हे गोपालजी,

देख तुझसे एक बात कहती हू । अगर तू सच्चा है, तो मेरी सोती के कान छिदवा दीजो । मै भलकादार नथ पहनूगी, बालिया पहनूगी और तुझे खूब कलाकन्द खिलाऊगी । जो ऐसा नही किया, तो मै तुझे खूब पीटूगी ।" गौरी को क्या मालूम था कि उसकी प्रार्थना को लड्डू-गोपाल नही, बल्कि पीछे खडी उसकी नानी सुन रही है । नानी चुपचाप उलटे पैर चली गई । दूसरे दिन उन्होने सुनारी बुलवाकर गौरी से कहा—"देख, गापालजी ने तेरा नाक-कान छिदाने के लिए सुनारी को भेजा है । तूने लड्डू-गोपाल से बिनती की थी क्या ?" गौरी इनकार कैसे करती ? उसे सचमुच विश्वास हो गया कि सुनारी को गोपालजी ही ने भेजा है । छिदवाने मे दिल तो कापता था, लेकिन गोपालजी के विश्वास ने उसके दिल को मजबूत कर दिया और सुनारी ने भी अपना काम बडी फुर्ती और चतुराई से किया । गौरी रोई जरूर, रोने से भी अधिक उसके आसू बहे, लेकिन वह भागी नही । नाक-कान छिदते ही बालिया और नथ उसके हाथ मे दे दिये गये, लेकिन कान बहुत दिनो तक पके रहे, जिससे बेचारी अधीर होते हुए भी जेवरो को पहन नही सकती थी । इस समय उसकी उम्र छ-सात वर्ष की होगी । नानी घाघरे-लुगरी पहनाकर अपनी नतनी को जेवर से सजाती, लेकिन अब गौरी को जेवरो से चिढ हो गई थी । वह उन्हे पहनना नही चाहती थी और नानी से रो-रोकर कहती—"मै तो सेठानी-सी लगती हू ।" उस समय राजस्थान की सेठानिया भद्दे गहनो से लदी सामन्ती महिलाओ की नजर मे बहुत हीन-रुचि की दीख पडती थी । गौरी तो, यदि चुनरी-दुपट्टा बराबर नही आता, तो उसे फाड डालती थी ।

मासी-भाजी की प्रीति—ननिहाल मे सबसे आकर्षण की चीज गौरी के लिए उसकी मौसी कमलकुमारी थी । लेकिन लडकिया तो 'चिडिया रैन-बसेरा' की तरह मायके या ननिहाल मे रहती है । उन दोनो को सुभीता यह जरूर था, कि जसपुर के ठाकुर होने के कारण उनकी अपनी हवेलिया राजधानी मे भी थी, जहा उन्हे अक्सर आने का मौका मिलता था । लेकिन पीछे जहा गौरी को जनपुर के एक ठाकुर से ब्याह करना पडा, वहा उसकी मासी बिहार (सहरसा) के राजा से ब्याही गई । जसपुर के चकरौता के ठाकुर के लडके सहरसा मे अपने नाना के गोद गये थे । वहा जाने के बाद अब मासी-भाजी का मिलना कैसे हो सकता था ?

एक दफा दोनो सखिया किसी दूसरी हवेली मे गई थी । खेलने के लिए वे बेकरार थी, लेकिन नानिया-मामिया उन्हे बात मे फसाये हुए थी । दोनो सखिया अगुली से इशारा करती थी । फिर कुछ सोचकर मुस्कराती और अन्त मे खुलकर

हसने लगती। नानी ने गौरी को चूटी काट ली और वह 'सी' कर उठी। इसी समय मासी की आखो मे आसू आ गये। दोनो दातकाटी रोटी खानेवाली जो थी। "क्यो आसू आया", पूछने पर फिर हसी आ गई। बडी-बूढियो ने देखा कि लडकिया खेलना चाहती है, और उन्हे खेलने की छुट्टी मिल गई।

गौरी की मासियो और मामियो की कमी नही थी। उसकी एक समवयस्का मासी लाज थी, लेकिन एक प्राण दो शरीर तो गौरी और कमल के ही थे। उन्हे सारी दुनिया एक दूसरे के बिना फीकी-फीकी मालूम होती।

जसपुर कुछ-कुछ भारत के प्राचीन नगरो की तरह पर बसा हुआ है। धनी-मानी लोगो की जहा शहर मे बडी-बडी हवेलिया थी, वहा शहर के बाहर हर हवेली के अपने सुन्दर बाग होते। नगला का बाग इसी तरह का था, जिसके भीतर तीन-मजिला भव्य महल बना हुआ था। कमल और गौरी तीसरी मासी लाजकवर के साथ सीढी से नीचे उतर रही थी। दोनो सखियो के दिमाग मे शरारत सूझी और उन्होने लाजकुवर को छेडने का निश्चय कर लिया। लाजकुवर बेचारी क्या जानती थी? वह आगे-आगे उतर रही थी, उसके पीछे गौरी थी और सबसे पीछे कमल। लाजकुवर की मा छुटपन मे ही मर गई थी और वह अपनी भाभी के साथ बचपन से ही जनपुर मे रहने के कारण वही की भाषा बोला करती थी। यह भी मजाक का एक अच्छा कारण था। जब आखिरी सीढी उन-रने को आई, तो मासी का इशारा पाते ही गौरी ने धक्का दे दिया और लाजकुवर हाथ के बल गिर पडी। उसके हाथ मे हाथीदात की चूडिया थी, जो पक्के फर्श से लगते ही टूट गई। शायद कुछ चोट भी लगी हो, लेकिन उसे चोट की परवा नही थी। वह तो चिल्ला रही थी—"ओय रे म्हारी चूडिया भाग्गी।" मासी-भाजी ने "चूडिया भाग्गी" का अर्थ समझा चूडिया भाग गई। इस पर खूब ठहाका लगा-कर हसने लगी। लेकिन भाग्गी का अर्थ था भग्न हो गई। लाजकुवर रोती-चिल्लाती रही—"ओय रे म्हारी चूडिया भाग्गी।" लडकी का चिल्लाना सुनकर नानी दौडी-दौडी आई और देखकर उन्होने दोनो शैतान लडकियो को बहुत डाटा। लेकिन शैतान लडकिया बात बनाने मे भी बहुत उस्ताद थी। उन्होने कह दिया—"मासी के ऊपर बन्दर झपटा, वह मेरे ऊपर गिरी और मेरे धक्के से लाजकुवर गिर गई।"

अन्त पुरिकाए दो-दो बच्चो की मा हो जाने पर भी बच्चियो की तरह ही रहती है या उन्हे रहना पडता है, क्योकि बच्चो के निर्दोष खेलो के सिवा दूसरे विनोद के साधनो का मिलना उनके लिए कठिन होता है। गौरी की मामिया भी

उसके साथ खेलना चाहती, लेकिन सासूजी के राज मे खेलने की स्वतन्त्रता कहा ? वे इसके लिए गौरी से सिफारिश करवाती। एक बार गौरी की दो बच्चो की मा, दो मामियो को खेलने की छुट्टी मिली। सावन का महीना था। युगो से झूला झूलना और सावन गाने का रेवाज था। मुसलमानो के आने से पहले जब इतना कडा पर्दा नही था और जब राजपुत्रिया स्वयवर मे खुले मुह राजाओ की सभा मे घूमकर जयमाला डालती, उस समय उन्हे और उन्मुक्त हो मनोविनोद का अवसर मिलता होगा। कालिदास और दण्डी के समय तो वे नागरिको की सभा मे नृत्य और सगीत के कौशल दिखलाकर प्रशसा प्राप्त कर सकती थी। लेकिन अब वह समय कहा ? झूला झूलने के लिए हवेली के ही एक बडे कमरे को तैयार किया गया था। कडियो से सूत की रस्सिया लटकती, जिस पर एक बालिश्त चौडा लकडी का तख्ता रख दिया जाता। इस तख्ते पर एक समय एक या अधिक से अधिक दो झूलनेवाली खडी होकर झूल सकती थी। मामी दुबली-पतली नही थी। वह तख्ते पर बैठ गई और तीन सहेलिया उन्हे झुलाने लगी। तख्ता काफी ऊपर तक पेंग मारने लगा। इसी समय कडी का एक कुण्डा निकल गया और तेईस-चौबीस वर्ष की हट्टी-कट्टी मामी धडाम से जमीन पर आ पडी। चोट तो लगी ही, किन्तु उससे भी ज्यादा भय की चीज थी धडाम से गिरने की आवाज। आवाज होते ही नानी दौडी आईं। इधर तीनो सखिया हसने लगी, जिसमे गिरी मामी भी झट से उठकर शामिल हो गई, लेकिन दरवाजे से चिल्लाहट आ रही थी, जो खोलने मे जितनी ही देर हो रही थी, उतनी ही तेज होती जा रही थी। खोलने पर नानी ने दोनो बहुओ पर गुस्सा उतारते हुए डाटना शुरू किया—"घोडिया हो रही है, बछेरिया हो रही है, जरा भी लाज नही।"

पतंगो का खेल—जसपुर मे कनखे (पतगो के) उडाने का बडा रेवाज है। राजा-रानी से लेकर सभी पतग के खेल मे शामिल होते है। तिमजिले-चौमजिले मकानो की खुली छतो के चारो ओर ऊची दीवार खीची होने से बेपर्द होने का डर नही था, इसलिए सभी छतो से गुड्डिया आसमान मे छोडी जाती थी। मकर की सक्रान्ति तो जसपुर के लिए पतगो की सक्रान्ति थी। वहा माना जाता था, कि उस दिन यदि कोई पतग न उडाये, तो उसे पाव (पामा या दाद) हो जाती है। गौरी के ननिहाल जैसे घरो मे बच्चे, बच्चियो को पतग खरीदने के लिए उस दिन दो-चार रुपये प्रत्येक सम्बन्धी से मिल जाते थे। उस दिन जसपुर का आकाश इन पतगो के मारे लाल-पीला हो जाता था। पाच बजे सबेरे ही पतग लूटने के लिए गौरी छत के ऊपर पहुची। उसके हाथ मे एक बास की लग्गी मे बेर की काटेदार

डाली बधी हुई थी। एक टूटे हुए पतग की डोर ऊपर से गुजरी, जिसे गौरी ने काटो मे फसाकर हाथ से पकड लिया। पतग वहुत ऊपर उड रहा था, हवा तेज थी, इसलिए उतारने पर बडी मुश्किल से उतर रहा था। गौरी के छोटे-छोटे हाथ दुखने लगे। उसने मा को पुकारा। फिर किसी तरह पतग को नीचे उतारा गया। उसमे डेढ सौ हाथ लम्बी डोरी निकली। पतग आधा नीला और आधा पीला (डड्ढीदार) था। किसका पतग था, यह कौन बतलाता ?

राजा-रानी का महल मगलपुर हवेली से दूर था। कभी-कभी तो महाराज और उनकी रानियो मे पतग लडाने की होड लग जाती और सूती तारो को कमजोर देखकर चादी के तार खिचवा लिए जाते। लोग आसमान मे दूर तक अपने पतगो को चढाकर उडाते हुए शाम हो जाने पर खम्भे मे डोरी को फसाकर छोड देते और इस प्रकार रात-रात भर पतग उडा करते। कभी-कभी वे इस तरह छोड देने पर गिर भी जाते थे। पतग उडाना अन्त पुरिकाओ के मनोविनोद का एक एक अच्छा साधन था, किन्तु एक छत से दूसरी छत को देखना आसान नही था। इसलिए लडानेवाले या वालिया नही जान पाती थी कि उनके कनकौवे किनसे लड रहे है।

मोन्तेसरी की शिक्षा-प्रणाली अब जारी हुई है, लेकिन राजस्थान के अन्त - पुर की लडकियो को जो भी शिक्षा मिलती थी, वह मोन्तैसरी प्रथा के अनुसार ही। उनकी प्राय सारी शिक्षा खेल-खेल मे ही होती, और लडकी ही नही, बहू हो जाने पर भी वह खेल खेला करती। मासी कमल, भाजी गौरी और कोई-कोई मामी भी शामिल होकर खेलती। गर्मियो मे दोपहर को नाना-नानी सो जाते, तो ढोलनियो को बुला लेती, और नाच-गीत की महफिल जम जाती। दरवाजा बन्द होता, जिससे कोई अनपेक्षित व्यक्ति आने नही पाता। राज-दरबारो मे रानियो की बाया या पातरे होती, जिनको कत्थक और सगीत के उस्ताद बाकायदा शिक्षा देते, ठाकुरो के यहा बस ढोलनिया ही नृत्य-गीत-विशारदा महाकलाकारिणिया थी। वह गरबा नाचती, जो राजस्थान मे डण्डियो का नाच कहा जाता। फिर दस-पन्द्रह स्त्रिया मिलकर चक्कर लगाते हुए घूमर नाचती। तोयसा और घारवा के नाच होते। हारमोनियम और ढोल के बाजे ही वहा सुलभ थे। ढोलनिया उन्ही के सहारे पात्रो की नकल करती।

जिस तरह अपनी बडी-बूढियो को नाच-महफिल लगाते देखती थी, उसी तरह मासी-भाजी भी दोपहर को अपना दरबार लगाती। बडी-बूढिया पान के साथ जर्दा जरूर खाती थी, फिर उसकी नकल किये बिना दरबार की शान कैसे

पूरी होती। वह जब मामी या नानी को पान लगाते देखती, तो चुपके से चुटकी मे जर्दा निकाल लेती। दरबार जमा रहते समय खाना नही हो सकता था, लेकिन उसके बाद फिर वह पान के साथ जर्दा खाती। शिर मे चक्कर आता, फिर कै करने बैठ जाती। कभी मा या नानी ने देख लिया, तो जर्दे को छीनकर फेक देती और एकाध थप्पड भी जड देती।

दोनो सखिया तो चाहती थी, कि उनका सारा जीवन बचपन मे सिमटकर चला आये, दोनो साथ-साथ रहे और अपनी शैतानी से दूसरो को तग किया करे। जसपुर मे बडे नाना के लडके की शादी हुई। बहू पहले पहल आई। ड्योढी मे उसे लेने के लिए कुल की सारी नारिया इकठ्ठी हुई थी, उस भीड मे मासी-भाजी का प्रवेश कैसे होता? दोनो ने एक-एक आलपीन हाथ मे ले ली, सोचा इसी से रास्ता निकालेगे। उनके रास्ते मे एक मामी आ पडी। कभी मासी कमल बडी सावधानी से पिन चुभाती और मामी एक ओर हो जाती। फिर गौरी की पिन उसके शरीर मे लगती। वह कहती--"न जानै काई काटै ?" लडकियो की शैतानी का उसे पता नही लगा। लौटकर वह अपने शरीर पर हाथ फेरते कह रही थी--न जाने क्या काट रहा था। और दोनो सखियो को हसी रोकनी मुश्किल हो रहा था।

× × × ×

खेल के नये-नये आविष्कारो के लिए अनन्त क्षेत्र पडा हुआ था। आसपास किसी भी घटना को देखकर उसके बल पर एक खेल बना लेना दोनो सखियो के बाये हाथ का खेल था। एक मामी की छोटी सी लडकी मर गई। बेचारी उसके लिए रो रही थी। जसपुर मे छ महीने के बच्चे के बराबर के मिट्टी के छोरे बहुत बिका करते थे। रबड के बाबो के प्रचार होने से बहुत पहले से यह मिट्टी के छोरे वहा बहुप्रचलित थे। दोनो सहेलियो को यह एक चमत्कारिक कल्पना सूझी। गौरी ने एक मिट्टी का छोरा खरीद मगवाया। उन्होने कमरे के भीतर जा दरवाजे को बन्द कर लिया। फिर छोरे की एक टाग तोड उसे लिटा पास मे बैठकर खूब रोने लगी। आसू तो निकलता नही था, और रोने मे ओढनी का भीगना भी अभिनय का एक अग था, इसलिए मुह से थूक निकाल-निकालकर उन्होने अपनी ओढनी को भिगो डाली। उनका रोना-धोना जरा भी कम हुए कितनी ही देर तक चलता रहा। नानी ने समझा, बहू के शोक मे सवेदना प्रकट करने के लिए कुछ स्त्रिया आकर रो रही है। वह बहू के कमरे की ओर जा रही थी, लेकिन आवाज दूसरे कमरे से आ रही थी। जितनी नजदीक होती गई, उतनी ही आवाज तेज होती गई। सहेलिया दरवाजे मे भीतर से जजीर लगाना भूल गई थी। नानी ने खोल-

कर देखा, तो घूघट निकाले दोनो अपनी चुनरिया भिगोये हिचकी बाधे रो रही है, और दोनो के बीच मे छोरा पडा है। नानी को गुस्सा भी आया, और सफल अभिनय का प्रभाव भी उनके ऊपर पडा था। उन्होने बहुत डाटा, तो दोनो ने कहा—"हम तो अपने छोरे के लिए रो रहे है। देखो ना, इसका पैर टूट गया, बेचारा मर गया।" इस समय दोनो सहेलियो की उमर आठ-नौ वर्ष की थी।

मामा का जवान लडका मर गया था। नानी को उसका बडा अफसोस था। वह अक्सर नगलावाले बाग मे चली जाती। गौरी का मन अकेले कैसे लगता ? उसने मासी कमल को बुला लिया था। उस दिन नानी के आने की उम्मीद नही थी, इसलिए किसी नये खेल को इतमीनान से खेलने की योजना बनी। तै हुआ, आज शराब पीने का खेल हो। दोनो सखियो ने अपनी गुडियो को भी सामने बैठा लिया। शराब के साथ चीखने (ठोग) की भी अवश्यकता होती है, जिसके लिए बहुत से पापड सेक लिये गये और कुछ बेसन के सेव भी बाजार से मगाँ लिये गये। शराब की जगह पानी मे केसर डालकर बोतल मे भर लिया गया। अपनी उमर की चार-पाच और लडकिया भी पान-गोष्ठी मे शामिल हुई। उनकी शराब की महफिल इतनी गरम हुई, कि पता नही लगा, किस वक्त नानी की बग्गी दरवाजे पर आकर खडी हुई। सीढियो पर नानी के खासने की आवाज आई, तब खतरा मालूम हुआ। लेकिन करे क्या ? उस वक्त सर्दियो के दिन थे। कमरो मे सफेद चद्दर के साथ रुई के गद्दे बिछे हुए थे झट उन्होने पापडो को गद्दे के नीचे दबा दिया, लेकिन नानी इतनी जल्दी आ पहुची, कि वहा बोतल छिपाने का कही टौर नही मिला। बोतल को हाथ मे लेकर पीठ की ओर करते दीवार के सहारे खडा होने मे गौरी ने त्राण समझा। शायद वह इसमे सफल भी हो जाती, लेकिन नानी पूछ-ताछ करती गौरी को पास बुला रही थी। गौरी अपना हाथ पीछे किये आगे बढने की हिम्मत नही करती थी। फिर नानी ही आगे बढी। इसी समय उनका पैर उस स्थान पर पडा, जहा गद्दे के नीचे पापड छिपाये हुए थे। उन्होने चुर-चुर करके भेद खोल दिया। गद्दा उलटकर देखा, तो वहा बहुत-से सिके हुए पापड चूर-चूर होकर पडे है। उनको पता लग गया, कि यह शैतान लडकिया बडो की नकल करती होगी; और डाटकर पूछा—"तुम शराब तो नही पी रही थी ?"

"नही, हम तो अपनी गुडियो को खिला रही थी।"

"तो मेरे पास आती क्यो नही ?"

नानी के पास जाने के सिवा गौरी के लिए कोई चारा नही था। मासी कमल

भला ऐसे समय अपनी सखी को सहायता दिये बिना कैसे रह सकती थी ? उन्होने पीछे हाथ करके बोतल को थामना चाहा, लेकिन हाथ मे न आकर बोतल नीचे गिर गई। चादर पर केशर का रग ही रग फैल गया। नानी को सब बात समझ मे आ गई। उन्होने गुस्सा कम करके डाट बतलाते हुए यही कहा—"इसमे छिपाने की क्या बात थी ? यह शराब थोडे ही थी ?"

नकली शराब का अभिनय करते-करते एक बार दोनो सखियो को असली के अभिनय की भी इच्छा हो आई। वैसे दोनो सखियो के आग्रह के कारण घर-वालो के नाक मे दम था, इसलिए कभी मासी के पास भाजी को और कभी भाजी के पास मासी को भेज दिया जाता। लेकिन डर लगा रहता, कि यह शरारती लडकिया तिमजिले-चौमजिले मकानो की सीढियो से गिरकर कही हाथ-पैर तोड न ले। लडकी तो मिट्टी का भाडा है, अगर ठोकने-ठठाने पर कही जरा भी खोट निकल आई, तो उसे कौन पूछेगा, इसलिए दो-तीन दिन से अधिक उन्हे आखो से ओझल नही रहने दिया जाता। जब मासी को बुलाने के लिए कोई नौकरानी आती, तो भाजी बहुत हाथ-पैर जोड कुछ दे-देवाकर भी एकाध दिन और रहने के लिए राजी कर लेती। इसके लिए गौरी को कभी-कभी चमकद्वार के जागता बीर को भी सवा सेर कलाकन्द की मनौती माननी पडती। वीर को वैसे तो सब जगह लड्डू का ही भोग लगता है, लेकिन जसपुर मे कलाकन्द की बर्फी ज्यादा प्रसिद्ध है, इसलिए चमकद्वार बीर लड्डू से अधिक कलाकन्द को पसद करते है। दोनो सखियो के खेलो मे भोजन बनाने का भी अभिनय शामिल था। लोहे के चूल्हे छत पर रख दिये जाते, आटा-घी, मास-तरकारी-मसाला सब मगा लिया जाता। खाना बनाने मे मामिया भी सहायता करती। बने हुए भोजन के लिए कभी-कभी नाना भी निमन्त्रित किये जाते। नवरात्र के दिन थे, तरह-तरह के भोजन बने हुए थे। मासी कमल के पिता अन्धे थे। वह सोते वक्त रात को एक चुस्की शराब पी लिया करते थे, और कभी-कभी शराब की बोतल लाकर दोनो सखिया ही नाना को देती। एक दिन उनकी इच्छा हुई, कि देखे शराब कैसी होती है। अपने नाना-नानी, मामा-मामी, मा-बाप को रोज ही शराब पीते उन्होने देखा था, लेकिन अब तक स्वय चख नही पाया था। अन्धे नाना ने बोतल लाने के लिए कहा। दोनो ने अलमारी मे से बोतल निकाली, फिर जरा-सा चुस्की मे डालकर चखा। बुरा नही लगा। थोडा-थोडा करके दोनो एक छटाक पी गई। मुह से बदबू आनी ही थी, और शिर भी घूमने लगा था। जल्दी-जल्दी लाकर उन्होने बोतल को नाना के सामने रक्खा। नाना अन्धे थे आख के, नाक के नही।

उनको कमल के मुह से गन्ध आती साफ जान पडी। बतेरा पूछा, लेकिन वह "ना" करती रही। पैसे का भी लोभ दिया। उन्होने भी देखा, कि बात तो अब छिपी नही है, फिर साहस करके कहा—"हा, हमने शराब पी है।" नाना हसने लगे, लेकिन साथ ही बहुत शिक्षा देते रहे, अब कभी न पीना। लेकिन आचरण के विरुद्ध दी हुई शिक्षा का बच्चो पर क्या प्रभाव पडता है ?

× × × ×

एक बार परिवार कलाता के बाग मे गया हुआ था। दोनो सखिया भी शामिल थी। इस बाग मे बहुत-से आम, जामुन, नारगी, अमरूद, फालसा, आवला आदि के पेड थे। फूल भी बहुत तरह के लगे हुए थे। कुए से बैल चरखे द्वारा पानी निकालते थे। बाग मे एक तिमजिला महल था, नहाने के लिए कई हौज थे, जिनमे बच्चो के लिए कुछ छोटे होज भी थे। हौजो मे पानी भरा रहता था। सावन के सोमवार को 'बनसोमवार' कहा जाता था। उस दिन व्रत रक्खा जाता, और केवल एक बार निरामिष भोजन सो भी केले के पतो पर किया जाता। दोनो सखिया और भी कितनी ही लडकियो के साथ पहले कमरख के पेड के नीचे गई। पके हुए पीले-पीले कमरख डालियो मे लटड रहे थे। भला ऐसी खट्टी चीज खाना किसे पसन्द आता ? लेकिन उन्हे किसी के निकाले आविष्कार का पता था। पानदान मे से चूना निकालकर उन्होने फालसे के पत्ते पर ले लिया था। चूने के साथ कमरख खाने पर उसकी खटास दूर हो जाती और वह मीठी लगने लगती। कमरखो का खाना खत्म होने के बाद अब वह एक बडे हौज के किनारे पहुची। यह बडो के तैरने के लिए था, लेकिन उनको क्या पता था ? किसी ने कहा—"चलो कूदकर इसमे खेले," और एक के बाद एक धमाधम सब कूद गई। कूदने ही ऊब-चूब करने लगी। चिल्लाहट एकाएक बन्द हो जाने, या चिल्लाने के कारण नाना का ध्यान उधर गया। उन्होने आदमियो को बुलवाया। जाकर कुण्ड से उन्हे निकाला गया। ठाकुरो के लिए यह घाटे का सौदा तो नही था, क्योकि एक-एक लाख-लाख का खर्च करानेवाली थी। सयोग से कुण्ड मे पानी पूरा भरा नही था, इसलिए किसी के पेट मे पानी नही गया, नही तो एकाध को गगा-लाभ तो जरूर हुआ होता।

तीनो हवेलियो मे आपस मे बडा प्रेम था, और सावन के महीने मे हर सोमवार को किसी एक हवेली मे भोज रहता। इसके लिए लोग बगीचे मे चले जाते। बग्गिया अन्त पुरिकाओ को पसन्द नही थी, क्योकि घोडे तेजी से दौडते थे और अपने पर्दे की जालियो से वह रास्ते के बाजारो, दृश्यो को जल्दी-जल्दी

मे देख नही पाती थी। इसलिए वह बैल के सग्गड (रथ)को अधिक पसन्द करती थी। दल मे बीस-पच्चीस से अधिक तो स्त्रिया होती, और बच्चो की सख्या पचास से क्या कम ? सबेरे सग्गड, बग्गिया और दूसरी सवारिया हवेली से बाग के लिए चल देती। वहा रसोइये और रसोइदारिने खीर, मालपूये, दाल, चूरमा, बाटी, कद्दू का रायता तैयार करती। बच्चे दरख्तो पर चढते। बाग मे जनाना और मरदाना अलग-अलग चार तख्ते थे, और बाहर चारो ओर ऊची दीवार खीची हुई थी, इसलिए पर्दे की ओर से सब निश्चिन्त थे। बडे पेडो पर झूले पडते, जिस पर दो-दो अन्तःपुरिकाए खडी होकर झूलती और नीचे बाकी महिलाए खडी हो झूलना गाती। बहुए भी झूलती, और लडकियो के बारे मे तो कहना ही क्या ? भोजन मे सबसे प्रिय चीज इस समय दूध मे पका आमरस और पूडी को माना जाता था। खेलकर केलो के पत्ते पर परोसे खाने को वह खाते। गौरी बडी चचल और बोलतू लडकी थी। उसे लोग भी चिढाना पसन्द करते थे। जब किसी हवेली से निमन्त्रण आता, तो नानी से गौरी के लिए चुपके से कह जाते। जब गौरी अपने को निमन्त्रिता समझकर वहा पहुचती, तो लोग कहते—"यह कौन आई है, ऐसी लडाकन को किसने बुलाया ?"—लडाकन जसपुर की बोली मे बिना निमन्त्रित स्त्री को भी कहते है। बेचारी गौरी दरवाजे के बाहर रोने लगती, और फिर प्रतिज्ञा करती –"मै फिर कभी इस घर नही आऊगी।" लेकिन यह प्रतिज्ञा देर तक कहा चल सकती थी, विशेषकर जब कि वह मासी की हवेली होती।

× × × ×

कमल की अकेली भाभी थी कमलसिह की बहू। उनका पीहर जसपुर से दूर नही था, इसलिए मायके से बराबर कसार और दूसरी चीजे आती रहती थी। दोनो सखिया भाभी से कहती—"लाओ भाभीसा, अपने पीहर का कसार—" कसार मीठा मिला हुआ भुना आटा होता है। भाभी बाटकी भरके कसार लाकर दोनो के सामने रख देती। दोनो सखिया मुह मे कसार भरकर बोलती–"सा-सू", और मुह का सारा कसार उड जाता। इस तरह "सा-सू" कहकर जब एक बाटकी कसार उड जाता, तो फिर दूसरी बाटकी की फरमाइश करती। भाभी इन शैतान लडकियो की माग को ठुकरा नही सकती थी, और वह तीन-तीन चार-चार बाटकी खाली कर देती। कमरे मे गद्दे के ऊपर चारो ओर कसार बिखरी हुई थी। इसी समय मासी की मा आ गई। देखकर डाटने लगी। दोनो सखियो ने कहा–"हम क्या करे ? सासू के नाम पर, सारा कसार उड गया।" नानी ने

ठण्डे दिल से समझाना चाहा—"देखो, सारे कमरे मे मक्खिया भिनकने लगेगी, उडाना है तो रास्ते की तरफ उडाओ।"

बच्चे भी जानते है, इसलिए अपने साथ अच्छे बर्ताव करने वाले के लिए प्राण देते, और जो ठीक से बर्ताव नही करता, उसके पास भी नही फटकते। बीरन मामा गौरी के बहुत प्रिय थे, और मामी भी उतनी ही प्रिय थी। रात को वह अपने यहा गुड्डी (गौरी) को जरूर बुलाते, और हर रोज कोई न कोई चीज उसके लिए लाके रक्खे रहते। कभी कोई फल होता, कभी कोई मिठाई, तो कभी कोई खिलौना। उनके पिता अर्थात् गुड्डी के बडे नाना पर्दे के बहुत पाबन्द थे, और अपने छोटे भाई को बराबर हिदायत करते रहते—"लडकी को बाहर न निकाला करो, कोई देख लेगा। अभी ब्याह करना है।" एक दिन नाग नाना कामता गये हुए थे। नाग-नाना के रहते समय गौरी को कुछ सम्हलकर रहना पडता, लेकिन आज वह निश्चिन्त हो शाम को बाहर बैठी थी। इसी समय नागसिह आ गये। गौरी ने आवाज सुन ली, और उसने नाना भरतसिह से कहा—"बडे नानोसा को हवेली मे मत आने दो, यह बहुत खराब है।" नतनी की बात सुनकर नाना ने नौकरो को आवाज दी—"जरा बास-डण्डा लेकर आना।" नौकरो ने समझा साप निकला है। वह लाठी-बास लेकर आये। तब तक नागसिह भी ऊपर आ गये थे। भरतसिह ने नौकरो से कहा—"भाई को खूब पीटो, नैनी (गौरी) का हुक्म है।" फिर उन्होने अपने भाई को बतलाया कि पर्दे मे बन्द करने के उनके आग्रह को नैनी कितना बुरा मानती है। सुनकर सब लोग हसने लगे।

बडे नाना यदि पर्दे के कट्टरपन्थी थे, तो उनकी पत्नी अपनी छहो बहुओ के ऊपर कठोर शासन के लिए बदनाम थी। मजाल क्या कि पुराने कायदे-कानून से बहुए जरा भी इधर-उधर हो जाय। और सासे तो बहुओ का खाना उनके पास भेज दिया करती, लेकिन वह छहो बहुओ को बुलाकर सामने खिलाती, और खिलाने मे भी चरक-सुश्रुत के पथ्यो का पूरा ध्यान रखती। मात्रा कम रहे, तो स्वा-स्थ्य ठीक रहता है, जीभ की बात मानने से तन्दुरुस्ती खराब हो जाती है। बीरन मामा और उनकी बहू को गौरी जैसी चतुर भाजी मिली थी। बिचली हवेली के अलग-अलग कमरो मे भाइयो के लडके-बहुए रहा करती थी। गुड्डी की नानी पास ही मे रहती। वह बेचारी उतनी कठोर नही थी। गौरी वहा से बेसन, आटा, घी, मसाला, मास सब चीजे लेकर जाती। कहा खाना बनाया जाय, इसकी समस्या नहानेवाली कोठरी ने हल कर दी। मामी-भाजी बस वही जुटकर खाना

बनाने लगती। मास की गन्ध नीचे बुढिया के पास पहुच जायगी, इसलिए उसे बिना छोक-बघार के कूकर मे पकाया जाता। खाना बन जाने पर फिर मामा भी आ कभी-कभी गन्ध से बचने के लिए होटल से पका-पकाया गोश्त मगा लेते। मामा के पास सन्देश लेकर गौरी जाती। मा ने जैसे बहुओ के लिए खाने का कानून बनाया था, वैसे ही छहो भाई भी साथ खाया करते थे। बीरन मामा "आज पेट खराब है या भूख नही हे," कहकर अपने कमरे मे चले आते, फिर तीनो साथ बैठकर खाते। हर हफ्ते दो बार यह चोरी का भोजन जरूर तैयार होता, लेकिन चोरी बराबर कैसे छिपी रहती। बीरन की अपनी बहिन की एक लडकी थी। वह एक दिन उसी समय पहुच गई, जबकि खाना बन-परोसकर तैयार था। उसने तुरन्त जाकर बूजीशा (नानी) के पास चुगली लगाई। लडकी भी गौरी की उमर की ही थी, लेकिन उतनी समझदार नही थी। उसने महाभारत करवा के छोडा। सास एकाएक आ धमकी और बहू को खूब डाटने-फटकारने लगी। गौरी की प्रत्युत्पन्नमति ने कुछ काम दिया। उसने कहा--"हमने तो गुडियो के लिए खाना बनाया था", लेकिन वहा दो-चार गुडियो नही बल्कि सौ गुडियो के महाभोज के बराबर भोजन तैयार था। यह कहने पर गौरी ने कहा--"साथ मे खेलनेवाली लडकिया भी तो है, उनको भी देकर खाती है।" नही कहा जा सकता, महाचण्डिका का क्रोध कुछ कम हुआ या नही। उन्होने देखा, देवरानी की ओर खुलनेवाला दरवाजा इस चोरी मे सहायक होता है, इसलिए उस दरवाजे मे कडी लगवा दी। मामा के आने से पहले ही महाभारत हो चुका था। आकर उन्होने नौकरानी को कहा--"गुड्डी को बुला लाओ।" कुवरानी ने कहा--"उधर तो बूजीशा ने कडी लगवा दी है।" बीरन मामा ने अकल से काम लिया। सडासी से कडी को खोल दिया, पर्दा भी टाग दिया और फिर उसके बाद कडी उसी तरह खुलती और बन्द होती रही, पुराना रास्ता फिर साफ हो गया। चुगलखोर लडकी से बचने के लिए अब वह सीढियो के दरवाजे मे साकल बन्द कर दिया करते, और उसे पास भी फटकने नही देते।

मामा इछरा महाराज के अग-रक्षक (ए०डी०सी०) थे। जब वह वहा चले जाते, तो सास बहू को अपने पास बुलाती। लेकिन मामी अपनी भाजी को बुलाकर आठ-नौ बजे रात तक मन-बहलाव करती।

× × × ×

बीरन के एक बडे भाई सम्हारसिह थे। उनका स्वभाव गौरी को पसन्द नही था, अर्थात् वह बच्चो के साथ प्रेम करना नही जानते थे। जब गौरी खेल खेलती

रहती, तो वह डाटते और पर्दे से बाहर जाने का भी विरोध करते। गौरी नाना से इस मामा की बडी शिकायत करती–"सब मामा अच्छे है, यह मुझे डाटते है।" नाना उसको सन्तुष्ट करने के लिए कहते–"जरा धीरज धर, वह जो नीचे लगडी धोबन रहती है न, बस आने दे उसे, एक गोभी के फूल पर सम्हार को बेच दूगा। गौरी बहुत खुश होती, कि उसके कडवे मामा लगडी धोबन के हाथ मे बिकने-वाले है, सो भी एक गोभी के फूल पर।

चेचक के टीके का लाभ लोगो को मालूम हो गया था और अब सयाने लोग बच्चो को टीका लगवाना जरूरी समझते थे। लेकिन बच्चो के लिए वह प्रिय बात नही थी। नाना ने समझा, यदि मै टीका लगवाऊगा, तो गौरी बिगड बैठेगी, फिर पास नही आयेगी। उन्होने सोचा–सम्हार तो पहले ही से इसके लिए कडवा है, इसलिए उसी के जिम्मे यह काम देना चाहिए। डाक्टर को बुलवाया गया। एक अच्छा-सा कपडा हाथ मे देकर कहलवाया गया–"गौरी के लिए कपडा नाप लो, जरा जल्दी सी देना।" गौरी ने समझा, दर्जी है, अच्छा नया कपडा बनाके लायेगा। वह पास चली गई। डाक्टर ने कपडा नापने का ढोग रचते-रचते क्षण भर मे गौरी को टीका लगा दिया। वह खूब रोई और उसने नाना के पास जाकर कहा–"सम्हार मामा ने दर्जी के पास ले जाकर मुझे सूइया चुभवा दी।" सम्हार मामा के साथ का बिगाड दृढ हो गया।

अध्याय ६

भूतों का भय

मौसी-भाजी की दोस्ती ने जसपुर मे आकर्षण पैदा कर दिया था। गौरी जब मगलपुर मे रहती, तो वहा बाबोसा के स्थापित किये हुए हाई स्कूल के हेडमास्टर उसे पढाते, लेकिन जब वह जसपुर जाती, तो पढे को भी बेपढा कर देना पडता। वहा तीनो हवेलियो की लडकियो को एक जोशन (जोशण) पढाने आती–जोशन का अर्थ जोशी ब्राह्मण की स्त्री नही समझना चाहिए। अध्यापिका वस्तुत जैन-महिला थी। वहा अध्यापिकाओ को, विशेषकर पुराने ढग की अध्यापिकाओ को जोशन कहा करते थे। जोशन बेचारी ने किसी आधुनिक ढग की पाठशाला का मुह नही देखा था और न जोड से अधिक गणित पढा था। गौरी गुणा-भाग भी जानती थी, और यह भी जानती थी, कि जोशन को चालीस तक भी पहाडे नही आते। उसे पता था, कि जोशन की विद्या की गहराई कितनी है। वह बीच-बीच मे कुछ टोक देती, तो जोशन कहती––"तुम मुझे पढा रही हो?" इस प्रकार पाच-छ महीने जसपुर मे रहना पडता, मगलपुर की पढाई पर जोशन पुचारा फेर देती। जोशन काका-पापा कहते पुराने ढग से वर्ण-परिचय कराती–"पापा पाट कडी। " और गौरी पढती––"पापा पाट कडी। जोशन ऊपर खाट पडी। जोशन पाड्यो हेलो। निकल भाग्यो चेलो।"

"जोशन ने हल्ला किया, तो चेली निकल भागी।"––यह बात वस्तुत नही होती थी। नानी का जोर था, कि नतनी कुछ पढ जाय। अक्षरज्ञानशून्य होने से उन्हे क्या पता था, कि जोशन क्या पढा रही है। जोशन कभी नाराज होती और कभी हस देती। बहुत होने पर नानी से जाकर शिकायत करती, तो नानी खूब डाटती। उन्होने जोशन को हुक्म दे रक्खा था, कि अब अगर शरारत करे, तो उसे पीटना। जोशन एक दिन डरते-डरते पीटने को तैयार हुई, तो उसकी बाल-शिष्या ने कहा––"खबरदार, अगर मेरे सामने नजर भी उठाके देखा। तुझे पढाने का भी तरीका मालूम है? न जोड आता न गुणा-भाग आता। आ, मै तुझे गुणा-भाग सिखाती हू।" बेचारी जोशन खीझकर बाल नोचती–मै राड

कही बेवकूफ हू ! ऐसी लडकी तो मैंने कही नही देखी ।" धीरे-धीरे चेली और गुरुवानी ने एक दूसरे को परख लिया और यह भी समझ लिया, कि साथ चलने के सिवा छुटकारे का कोई रास्ता नही है । चार-पाच साल तक गौरी जब-जब ननिहाल आती, तो वही जोशन पढाती । अन्त मे मुक्त होने पर गौरी को अफसोस नही हुआ ।

गौरी बात की जिद्दी तो थी ही, लेकिन उसके हृदय मे किसी-किसी के लिए बहुत कोमल स्थान था और वह असाधारण प्यार के कारण ही । मंगलपुर मे बाबोसा की बात को वह ब्रह्मवाक्य मानती और जसपुर मे मामा वीरन की बात को । तुलसीदास ने सच ही कहा है—"हित-अनहित पसु पछिउ-जाना ।" बीरन-सिह अपनी भाजी को गुड्डी कहा करते थे और उसके साथ बहुत प्यार करते थे । गुड्डी आठ-दस वर्ष की थी, तो टाईफाइड हो गया । उस वक्त वह ननिहाल मे जसपुर मे थी । मौत के पजे से तो निकल भागी, लेकिन बहुत कमजोर थी । डाक्टर ने बतलाया कि इसे सेब खिलाना चाहिए । गौरी (बीरन मामा की गुड्डी) नारगी को बडे प्रेम से खाती । किसमिस को भी चूना लगाकर खा जाती, लेकिन अच्छे से अच्छे सेब से भी उसका भारी बैर था । घर के और लोग जब हार गये, तो उन्होने बीरन मामा की शरण ली । बीरन अपनी भाजी के मनो-विज्ञान को अच्छी तरह जानते थे । वह एक सेब्र लाये और साथ ही जौहरी के यहा से जडाऊ का एक सुन्दर सोने का जेवर भी । गुड्डी से कहा—"सेब खा ले, बस यह जेवर तेरा हो जायेगा ।" गुड्डी जेवर हाथ मे ले सेब खा गई । मामा ने सलाह दी—"जेवर कोई चुरा लेगा, मा के पास रख दे ।" गुड्डी ने भली लडकी की तरह जेवर को अपनी मा के हाथ मे दे दिया । दूसरे दिन दूसरा जेवर और एक सेब लेकर मामा हाजिर हुए । गुड्डी उसे भी खा गई और जेवर को मा के पास रख दिया । इसी तरह कई दिन तक नये जेवर के साथ नये सेब आते रहे, और गुड्डी प्रसन्न मन से जेवर लेकर सेब खाती रही । उसने सोचा होगा, अब तो बतेरे जेवर मेरे पास हो गये है । किन्तु उसे क्या पता था, कि मा के पास से जेवर रोज जौहरी के पास लौट रहे है, और आज उसके हाथ मे आया जेवर भी जौहरी के पास पहुच जायेगा । खैर, गुड्डी इस प्रकार सेब खा-खाकर स्वस्थ हो गई । वह जेवरो के लिए मामा से लड नही सकती थी, क्योकि जेवर तो मामा को रखने के लिए देती नही थी । मालूम नही, मा से कैसी पटी, शायदा कहा होग—"कौआ ले गया ।"

मामा बीरन और मामी उसी हवेली मे बगल के कमरे मे रहते थे । मामा

को अपनी गुड्डी से बातचीत किये या खेले बिना चैन नही पडता था। वह रोज अपनी नौकरानी झकारी को गुड्डी को बुलाने के लिए रात को भेजते थे। वहा पास की सीढियो मे एक नही, कई भूतनिया रहती थी, जो कभी घूघरू बजाती, कभी पत्थर गिराती, कभी और कोई शैतानी करती। रात के वक्त नानी और मा गौरी को भेजना नही चाहती और कह देती—"चुपचाप सो जा।" लेकिन जब झकारी के पैरो की आहट मालूम होती, तो गौरी अपने बिस्तरे पर उठ बैठती। अब भला 'सो गई है' कहकर झकारी को लौटाया कैसे जाता ? दिल मसोसकर बडे भय के साथ गौरी को भेजना ही पडता। वहा जाने पर मामा कहते—"भूतनी नाच रही थी सीढियो पर। तूने देखा कि नही ?" गौरी ने सपने मे भूतनी भले ही देखी हो, किन्तु जागते तो उसने कभी नही देखा। वैसे भूतनियो का उसे डर नही था, यह बात नही कही जा सकती।

× × × ×

चार-पाच पीढियो की बनी एक चौमजिली कोठी थी, जिसके बीच मे बडा आगन था। इतनी हवेली के भीतर रहनेवाले आदमियो की सख्या बहुत नही कही जा सकती। एक दिन नानी भी दोपहर को सो रही थी। अभी शायद नीद नही लगी थी। इसी समय तीन औरते घूघट निकाले पास आकर बोली— "इधर तो यह राड हमेशा रात-दिन सो जाती है, हमे जाने नही देती।" नानी एकदम चौक उठी, और फिर उन्हे रास्ता छेकने की हिम्मत नही हुई। गर्मियो के दिनो मे, हमारे बहुत-से शहरो की तरह लोग आसमान के नीचे खुली छत पर सोना बहुत पसन्द करते है। अगल-बगल मे नानी और मा की चारपाइया थी और बीच की चारपाई मे गौरी लेटी हुई थी। रात को एक-दो बजा होगा, जब कि नानी की नीद खली। उन्हे पान और तम्बाकू खाने का बहुत शौक था। वह उठकर पान बनाने लगी, देखा, सिरहाने की ओर कोई पखा झल रही है। वैसे उनकी लौडी पार्वती सोने मे एक थी, वह चक्की चलाते-चलाते भी सो जाती थी। इस वक्त वह खडी पखा झलेगी, इसकी आशा तो नही थी, लेकिन सोचा, क्या जाने वह आज्ञाकारिणी दासी ही इस समय सेवा मे हाजिर हो। नानी को यह पसन्द नही आया, कि वह मेरे ऊपर पखा झले और बच्ची को वैसे ही छोड दे। पान लगाकर यही कहने के लिए उन्होने जब उधर मुह फेरा, तो कही किसी का पता नही था। नानी ने अपनी बेटी को जगाया, नौकरानियो को भी जगा दिया, लेकिन ढूढने पर कही किसी का पता नही लगा। हवेली मे पखा झलकर अन्तर्धान हो जानेवालियो की क्या कमी थी ? कई तो ठाकुरानिया भूतनी होकर जहां-

तहा घर मे रहती थी—एक ठाकुरानी प्रसव के समय मर गई थी, दूसरी तपेदिक से, तीसरी के दिल की धडकन एकाएक बन्द हो गई थी। यही तीन नही, नौकरानियो मे से भी तीन-चार अकाल-कवलित हो भूतनी बनके हवेली मे जब-तब धमा-चौकडी लगाया करती थी। कभी वह घूघट निकाले छत पर टहलती, कभी सीढियो पर धमधमाती चलती। सबसे नीचे की मजिल, जिसके सामने बडा आगन था, तो केवल भूतनियो के ही लिए था। वहा कोई न रहता था, और न रहने की हिम्मत करता था। एक दिन एक नौकरानी बाजरा कूटने आगन मे गई। दिया जलाने का शाम का वक्त था। भला यह भी कोई समय है आगन मे काम करने का ? किसी भूतनी से नही रहा गया। उसने आकर नौकरानी की पीठ पर थाप लगाई। वह डर गई। इसके बाद वहा मल्लयुद्ध होने लगा, उठा-पटकी, और नौकरानी की चिल्लाहट सुनाई देने लगी। ऊपर की मजिलो से जहा-तहा से मुह निकालकर ठाकुरानियो और नौकरानियो ने आगन की ओर देखा। घबराहट और चिल्लाहट साफ सुनाई दे रही थी, लेकिन किसकी हिम्मत थी, कि गोपाले की बहू को बचाने के लिए जाये ? पराई आग मे कूदनेवाली वहा एक भी नही थी। बाहर मरदाने मे सन्देश भेजा गया। जब तक लोग आवे, तब तक मल्लयुद्ध खत्म हो चुका था। गोपाले की बहू बेहोश पडी थी, उसकी नाक से खून निकल रहा था, मुह के ऊपर चोट के नीले निशान पडे हुए थे ? घरवाले उसे अपने यहा ले गये, जहा पहुचते-पहुचते वह मर गई। हवेली मे एक भूतनी की सख्या और बढी।

भूतनिया नौकरानियो से ही मल्लयुद्ध नही करती थी, वह ठाकुरानियो को भी नही छोडती थी। एक मामी के शिर पर भूतनी आने लगी। लोग परेशान हो गये। अन्त मे भूत निकालनेवाले सयाने की सहायता लिये बिना कोई चारा दिखाई नही पडा। अन्त पुर मे पुरुषो का जाना सर्वथा वर्जित था। लेकिन यहा प्राणो का सवाल था। चुपके से सयाना बुला लिया जाता। दो दासिया पर्दे को पकडकर बहू के सामने खडी हो जाती। मिर्चो की धूनी दी जाती। धुआ नाक मे पहुचते ही घबडाहट पैदा कर देता। कानी अगुली पर्दे से बाहर कराई जाती, जिसे सयाना अपनी अगुलियो के बीच दबाते हुए मन्तर पढता। मन्तर और अगुलियो के दबाने से ही नही, बल्कि मिर्च के धुएँ से भूतनी पनाह मागने लगती—"छोड दो, मै अब कभी नही आऊगी। यह अच्छा मसालेदार मास खाकर निकली। मुझे गन्ध लगी। मेरा मन चल गया, इसलिए मैने पकड लिया।" भूतनी चली जाती। मिर्च का धुआ देना बन्द कर दिया जाता। दस-पन्द्रह दिन मे

सब भूल भूतनी फिर लौट आती। असल मे यह कोई ऐरी-गैरी नत्थी-खैरी भूतनी नही थी, बल्कि कुवरानी की खास अपनी सौत थी। मगलपुर या ननिहाल के ठाकुरो मे एक से अधिक स्त्रियो का विवाह करने का रवाज नही-सा था। पहली स्त्री मर जाती या सन्तान नही होती, तभी दूसरा ब्याह किया जाता। मरी सौत पितरानी (देवता) बन जाती। उसके मृत्यु के दिन मीठा चावल पकाकर पितरानी सौत की पूजा की जाती। उसको प्रसन्न रखने के लिए सोने की मूर्ति बनाकर गले मे तवीज की तरह पहनी जाती, लेकिन यदि चून (आटा) की सौत भी बुरी होती है, तो भूतनी-सौत तो और भी बुरी होती है। वह अपने सुख को दूसरी को भोगते देखकर कैसे आख मूद सकती है ? बहूरानी को वही सौत हर पन्द्रहवे दिन आ जाया करती, और उस वक्त सयाने को बुलाना पडता। घर के मालिक ठाकुर साहब ने एक दिन सयाने को जनानी ड्योढी के भीतर जाते देख लिया। उन्होने पूछ दिया। नौकर-चाकरो ने जवाब दिया—"बिचला कुवरानीसाकू भूतनी आ गई। स्याणा भूतनी निकालने जावे।' ठाकुर साहब ने तुरन्त हुक्म दिया—"इसे यही रोक दो।" फिर अपने एक बेटे को बुलाकर कहा—"तेरी भाभी को भूतनी आई है, स्याना नही, तू जाकर उसे निकाल। यह ले टमटम का चाबुक, इसे खूब भिगो ले। इस समय तो वह तेरी भाभी नही, बल्कि भूतनी है। 'सरदारो ने मुझे भेजा है' कहकर ताबड-तोड चाबुक चलाना। भाभी का मोह न करना।" देवर साहब सचमुच ही चाबुक भिगोकर भाभी के पास पहुचे, और सरदारो का हुक्म सुनाया। बस क्या थी, भूतनी सर पर पैर रखकर भागी, और जब तक सरदार जीते रहे, तब तक उसने फिर अपनी सौत को नही दुख दिया।

× × × ×

भूतनी अच्छी भी होती है, बुरी भी। मालूम होता है, महलो की भूतने उतनी कठोर नही होती। राजस्थान के राजाओ के यहा लौडिया और नौकरानिया तो होती ही है, और आधा दर्जन रानियो का होना भी कोई आसाधारण बात नही है। इनके अतिरिक्त अन्त पुर की शोभा के लिए एक और भी प्रथा जारी है। यद्यपि दासता की प्रथा बहुत पहले से उठ चुकी है, लेकिन तो भी मालन, गूजरन या किसी और जात की गरीब मा दो-डेढ सौ मे अपनी सुन्दर लडकी को किसी रानी के हाथ बेच देती। रानी ऐसी लडकी को बडे स्नेह से पालती, कथक और उस्ताद रखकर उसको बाकायदा नृत्य और गीत की शिक्षा दिलवाती। मामूली नृत्य-सगीत नही, बल्कि शास्त्रीय कला मे निष्णात करने की कोशिश करती। ऐसी खरीदकर पाली हुई कला-प्रवीणा तरुणियो को जसपुर मे 'पर्दे

की बाया' कहा जाता और कसौरा मे 'पातर' (पतुरिया)। पूर्वी उत्तर-प्रदेश या बिहार मे पतुरिया साधारण नाच-गान करनेवाली वेश्या को कहा जाता है, लेकिन राजस्थान मे उसका ऐसा निकृष्ट अर्थ नही लिया जाता। पातरे रानियो की तरह ही पर्दे मे रहती, और राजा की नही, बल्कि रानी की पातर होती। उन्हे आजीवन अविवाहिता रहना पडता। रानी साहिबा अपनी पातर को खूब अच्छा खिलाती-पिलाती। कलेऊ के लिए सबेरे ही कटोरी भर मेवा और दूध भेजती, सुन्दर कपडा पहनाती, जेवर सारे सोने के या जडाऊ होते, केवल पैरो मे वह सोना नही, चादी पहनती। पातर का काम था महाराजा साहब के अपनी रानी के पास आने पर उनके सामने नाचना-गाना। कभी-कभी किसी पातर पर राजा साहब का मन फिसल जाता, और उसे वह पासबान बना लेते, तो फिर वह रानी के दर्जे के पास तक पहुच जाती। वर्तमान जसपुर-महाराजा के पूर्वज महाराजा मानकसिंह की पाच-छ रानिया थी, और पातरो की सख्या तीन सौ। कसौरावाली बुआ के पास पन्द्रह पातरे थी। वह अपने मायके आती, तो स्टेशन से जरी के पर्दे पडे आठ-कहारो की महादोल (पालकी) के ऊपर चलकर आती, साथ मे उनकी पातरे सजे हुए रथो पर बडे रोब-दाब के साथ होती। पासबानो की सन्तान को पुत्र का अधिकार प्राप्त नही था, उत्तराधिकार तो रानी के लडके को ही मिलता था। ऐसा न होता तो जसपुर मे गोद लेने की अवश्यकता नही पडती। जसपुर मे राजा के ऐसे लडको को 'लालजीसा' कहते, और उनको राज से जागीरे मिलती। जनपुर मे पासबानो के लडके 'रावराजा' या 'बाबा' कहे जाते। रानियो को अपनी पातरो से ईर्ष्या नही, बल्कि स्नेह होता था, क्योकि उनके द्वारा वह पति को अपनी ओर आकृष्ट करने की कोशिश करती। कसौरावाली बुआ की एक सुन्दरी तथा कलानिपुण पातर रूपविलास अठारह-उन्नीस वर्ष की उमर मे ही मर गई। शायर के शब्दो मे "हसरत उन गुचो पे है जो बिन खिले मुर्झा गये।" रूपविलास का इस ससार मे रूप और विलास खतम हो गया, लेकिन वह नही चाहती थी, कि दूसरी उससे छीने हुए भाग्य का उपभोग करे, इसलिए वह कभी किसी पातर पर और कभी किसी लौडी पर आ जाया करती। अपनी मालकिन रानी साहबा के प्रति उसका सम्मान अब भी पहले-जैसा ही था, और अब भी वह उनके सामने नही आती थी। कभी वह सीढियो पर चलते अपने नूपुरो की मधुर झकार से अपने नृत्य-कौशल का परिचय देती, कभी दूसरी सेविकाओ को आवाज देकर कहती—"दाता (मालकिन) को पर्दा कर दो। मै आ रही हू।" जब किसी के शिर पर आती, और पूछा

जाता, तो कहती—"अरी भेना, मै तो न्ह्या आई थी नूई घूमने-फिरने, यह अतर लगाये हुई थी, बस मेरा मन बस गया।" कभी किसी दूसरी के शिर पर आकर कहती—"यह बढिया गोश्त खा रही थी, चटपटी सुगन्ध मुझे अच्छी लगी, मै इसके साथ खाने बैठ गई। पूछ लो इससे, कितनी रोटी खाई।" पूछा जाता, तो जहा खानेवाली ने चार रोटी खाया होता, वहा दस रोटिया गायब मिलती। एक दिन वह नौकरानी रामी के शिर पर आ गई। बडी डकार ले रही थी। अन्त-पुरिकाओ ने पूछा—"रूपविलास, आज तू क्यो बडी डकार ले रही है?" उसने कहा—"यह बाजरे की रोटी पापड की तरकारी से खा रही थी। मुझसे नही रहा गया, मैं भी खाने बैठ गई। उतने से काम नही चला, तो मैंने छीके पर रक्खी रोटियो को भी खा लिया। जाकर देख लो, वहा की आठ रोटिया मै खा गई हू।" लोगो ने जाकर देखा, तो सचमुच ही आठ रोटिया वहा से गायब थी। रूपविलास बडी भलेमानुस भूतनी थी। वह खाने मे ही शामिल नही होती थी, बल्कि चक्की पीसने मे भी नौकरानियो को सहायता देती थी। बेचारी पातर के मक्खन-से हाथो ने जीवन मे कभी ऐसा परिश्रम नही किया था, वह दुखने लगते, तो उसकी शिकायत करती। कभी-कभी उसको मजाक सूझता, तो सीढियो पर अठलाकर चढती-उतरती किसी को धक्का भी दे देती।

रूपविलास अपने जीवन से असन्तुष्ट नही थी, लेकिन उसकी मालकिन चाहती थी, कि किसी तरह उस बेचारी को प्रेतयोनि से बचा ले। साथ ही इससे दूसरी अन्त पुरिकाओ की भी रक्षा होती। वह एक बार रामी पर आई, तो मालकिन ने पुछवाया—"रूपविलास, दाता फरमाये, कि तेरे को गयाजी भेज दे।" रूपविलास बहुत रोई—"दाता, मरकर भी मुझे अपने चरणो मे रहने दो।" लेकिन दाता का बडा आग्रह था, रूपविलास को गयाजी भेज ही दे। दाता की बात को कभी जीवन भर रूपविलास ने नही ठुकराया था। जब वह साज-सगीत के साथ अपने मनोहर नृत्य को दिखलाती, और राजा साहब मुग्ध हो जाते, दाता अपनी पातर की इस सफलता पर फूली न समाती, और पीछे रूपविलास पर दिल खोलकर प्यार और सम्मान न्यौछावर करती। अठारह-उन्नीस वर्ष की उमर मे ही अपने दाता की सब कृपाओ के बदले वह कहा तक उऋण हो सकती थी, इसलिए उसे बराबर अफसोस रहता, और दाता को अब भी प्रसन्न करने की कोशिश करती। कभी सीढियो पर अपने घुघरुओ की आवाज से अपनी नृत्य-कला को दिखलाती, कभी रात की किसी सूनी जगह से अपने कोकिल कण्ठ से कोई मधुर तान छेडती।

लेकिन, दाता रूपविलास को गयाजी भेजकर प्रेतयोनि से छुडाने के लिए तैयार हो गई। बहुत आग्रह करने पर रूपविलास ने कहा—"दाता, मै गयाजी चली जाऊगी, लेकिन हर ठिकाने पर मुझको ले जानेवाला कहता चले—'चल रूपविलास, गया चल'।" ओझा-सयानो ने रूपविलास को मन्त्र पढकर एक बोतल के भीतर बन्द कर दिया और हलवाना काका को उसे गया ले जाने का काम सौपा गया। उसे ताकीद कर दी गई थी, कि हर ठिकाने पर रूपविलास को बुलाकर चलने की बात कहते जाना, लेकिन हलवाना को बराबर याद नही रही। दिल्ली मे रात को ठहरा। सबेरे रूपविलास को बिना कुछ कहे ही चल पडा। खाली बोतल को लिये गया पहुचा, रूपविलास तो लौटकर कसौरा चली आई। दाता फिर रूपविलास को भेजने की फिक्र मे पडी। रूपविलास के मरने पर उसके जेवर रानी के पास रह गये थे। दाता अपनी दूसरी पातर मनभावन को उसे देना चाहती थी। रूपविलास को अच्छा नही लगा, कि मेरा जेवर मेरी प्रतिद्वन्द्विनी पहने। वह किसी के शिर पर आकर बहुत गिडगिडाकर बोली—"दाता, मेरे झूटने (शिरोभूषण) मनभावन को न दे।" रानी को बडा अचरज हुआ, क्योकि मन की बात उन्होने किसी से नही कही थी। रूपविलास उनके मन की बात जान गई। उसके दिल को दुखाना उन्होने पसन्द नही किया और जेवर अपने पास रहने दिये। कुछ समय बाद जब फिर कई अन्त पुरिकाओ पर रूपविलास ने हाथ फेरा, तो फिर उसे गया भेजने का ख्याल आया। हलवाना दो बार खाली बोतल लेकर गया हो आया था, और खर्च भी काफी कर आया था। ऐसे गाफिल आदमी के साथ रूपविलास को भेजना अच्छा नही समझा गया। अब की बार हलवाना के साथ एक और आदमी कर दिया गया और दोनो बोतल-बन्द गिड-गिडाती आसू बहाती रूपविलास को लेकर चले। एक होता तो भूल भी जाता, लेकिन अब तो साथ जानेवाले दो थे, इसलिए हर ठिकाने पर वह कहते चलते—"रूपविलास, उठ चल, गयाजी चल रहे है।" अबकी बार रूपविलास को गया जाना पडा। गयाजी की सीमा के भीतर पहुचकर आज तक कोई भी भूत-भूतनी लौट नही सके। हजारो वर्षो से सारे भारतवर्ष के न जाने कितने करोड भूत-भूतनिया वहा पडे है, रूपविलास भी अब उनमे से एक हो गई, और वह फिर लौटकर नही आई। न मालूम कसौरा की रानी साहिबा को इसके लिए जरा भी दु ख हुआ या नही।

× × × ×

जातको के समय से मरुकान्तार (रेगिस्तानी भूमि) भूतो के लिए बहुत

प्रसिद्ध है। उस समय भी हजारो की सख्या मे चलनेवाले वाणिज्य-सार्थ कितनी ही बार भूतो के फेर मे पड जाते। एक बार कोई सार्थवाह अपने कारवा के साथ मरुकान्तार मे जा रहा था। आगे वह भूमि आनेवाली थी, जहा दिनो चले जाने पर भी पानी का कही पता नही था, चारो ओर केवल बालू ही बाल दिखती। सार्थ को उधर से एक दूसरा कारवा आता मिला। उसकी गाडियो के चक्को मे कीचड लिपटी हुई थी। लोग कमल के फूल अपने गलो मे लटकाये हुए थे, कमल के पत्ते भी उनके पास थे। जलाशय के बारे मे पूछने पर कहा—"पानी के बारे मे क्या पूछते हो, आगे तो महासरोवर लहरे मार रहा है।" सार्थवाह ने सोचा, "फिर गाडियो पर मशको मे पानी भरके ढोने से क्या फायदा ?" पानी वही गिरवा वह आगे बढा। वहा सरोवर का कहा पता था ? सार्थ निर्जल मरु-भूमि मे बढता चला गया, और उसके सभी आदमी और पशु वहा प्यास के मारे मर गये। कुछ दिनो बाद आनेवाले दूसरे सार्थो को देखने के लिए उनकी सफेद हड्डिया रह गई।

ढाई हजार वर्ष पहले भी भूत इस तरह धोखा देकर सारे सार्थ को मार डालते थे। आज भी वहा ऐसे भूतो की कमी नही है। दुर्गा खवास और उपला चोबदार दोनो मगलपुर से मखनपुर जा रहे थे। पास मे घडी तो थी नही, उनको चलना चाहिए था तीन-चार बजे रात को, ठण्डे-ठण्डे रेगिस्तान मे यात्रा तै करना अच्छा होता है, लेकिन वह आधी रात को ही चल पडे। मगलपुर से दो मील चलने पर मीलरास का गाव आता है, जहा एक जोहडी (पोखरी) उस समय सूखी पडी थी। वहा पर आग जलती दिखाई पडी। दुर्गा ने कहा—"चलो वहा चल कर चिलम पी ले। फिर चलेगे।" उपला ने 'हा' कहा। ऊट को उधर ले जाने लगे, तो वह एक डेग भी आगे रखने के लिए तैयार नही था—ऊट अगमजानी होते है। बहुत मारा-पीटा, लेकिन ऊट अपनी जगह से नही डिगा। उपला कुछ सयाना आदमी था। उसने कहा—"हो, कोई बात है, जभी तो ऊट नही चल रहा है।" लेकिन दुर्गा को विश्वास नही आया। वह चिलम पीने पर तुला हुआ था। ऊट से उतर पैदल ही दोनो आग की ओर बढे, लेकिन वह जितना ही आगे जाते, आग उतनी दूर हटती जा रही थी। भूत अपने पुर्खा जातकवाले भूत की तरह चाहता था, कि दोनों को रास्ते से भटका-कर घोर कान्तार में ले जाये। दुर्गा को चिलम पीने का ख्याल छूट गया, और उसने उपला को पकडकर कहा—"मुझे तो डर लग रहा है।" खैर, दोनो की हड्डिया रेगिस्तान में सफेद होने से बच गई, वह समय पर सम्हल गये।

गौरी की मा मखनपुर से मगलपुर जा रही थी। गर्मियो मे रात की यात्रा ही सलमाडा के रेगिस्तानो मे अच्छी समझी जाती है। ठाकुरानी के रथ पर चढकर गावो से निकलने पर लौडिया कुछ दूर तक गाना गाते पैदल ही चली, फिर रथ थोडी देर के लिए रुका, और लौडियो को दो-दो करके ऊटो पर बैठा दिया गया। दुर्गा की बहू और लौडियो के साथ जब पैदल रथ के पीछे-पीछे चल रही थी, तो बगीचे की छाया कुछ दूर दिखाई पडी। वहा फाटक के पास एक स्त्री आधी बैठी आधी सोई नजर पडी। उसने बडी थकावट की आवाज मे नाक से कहा—"ओ जानेवाली, जरा चोल्यो टोकरा उठाती जा।" दुर्गा की बहू ने सोचा—कोई मालन है, बेचारी साग-सब्जी का टोकरा भरे जा रही है। कान्ता की नानी भी उसके साथ थी। दुर्गा की बहू को दया आ गई, अभी वह ऊट पर बैठी नही थी। उसने कहा—"बेचारी कोई मालन होगी, अपना क्या बिगडता है, जाके टोकरे को उठा दे।" कान्ता की नानी अपनी साथी तरुणी से ज्यादा तजर्बेकार थी। उसने डाटकर कहा—"रात-बिरात इस तरह दया नही दिखलाया करते। जाने कौन है वहा प्राणो की गाहक।" दुर्गा की बहू को भी अकल आ गई और दोनो अपने रास्ते चल पडी। तब भी बगीचे के दरवाजे से आवाज आ रही थी—"जो मेरे पास आ जाती, तो मै देखती, कैसे तुम मगलपुर जाती हो।" दोनो लौडिया जवान थी, कान्ता अभी नही पैदा हुई थी, केवल परिचय के लिए यहा कान्ता की नानी कहना पडा। ठाकुरो और राजाओ मे लडकियो के साथ नौकरानी लडकिया भी दान दी जाती है, जिन्हे 'दायजे' कहते है। पाच छोरियो पर एकाध पुरुष भी दे दिया जाता है, जिसे 'घर देना' कहते है। कान्ता की मा दायजे मे मगलपुर से खलपा इसी तरह आई। उसकी नानी कामतागढ से इसी तरह मगलपुर भेजी गई, और उसकी भी मा—डखो से कामता दायजे आई थी।

रामी दायजे मे दी गई थी। वह जवान ही थी, जब कि प्रसव के समय मगलपुर मे मरकर गढ मे भूतनी बनकर रहने लगी। वह बेचारी दूसरो को दुख देना नही चाहती थी, लेकिन यदि लोग अपने ही डरने लगे, तो उसका क्या दोष? कालू की बहू बरामदे मे सो रही थी, याया और गौरी की मा दूसरे बराडे मे सो रही थी। इसी समय रामी आई। उसे देखकर कालू की बहू चिल्ला उठी। भागकर गई, तो देखा, वहा कोई नही है, लेकिन कालू की बहू के मुह पर थप्पड के नीले-नीले दाग थे।

ऐजन एक विधवा लौडी थी। उसके पास मालकन का दिया काफी सोने

का जेवर था, जिसे वह अपनी इकलौती लडकी को देना चाहती थी। जेवर के लाभ से देवर के मन मे पाप बड गया। ऐंजन उस समय अपनी लडकी के साथ मगलपुर आई थी। सलमाडा के कुए बहुत गहरे होते है, डेढ-दो सौ हाथ की रस्सिया लगती है, भला एक आदमी के बूते की यह बात कहा थी, कि वह अकेला घडा निकाल लेता। ऐंजन की मा, उसकी भावज और लडकी तीनो मिलकर कुए पर पानी भरने गई। दो तो रस्सा खीचकर ले जाने लगी और तीसरी जगत् पर खडी हो घडे के पानी को दूसरे बर्तनो मे उडेलने लगी। ऐंजन चूल्हा जलाकर खाना पका रही थी। इसी समय अकेले पाकर देवर ने आ तलवार से उसके शिर को काट दिया। शिर धड से बिलकुल अलग न होकर जरा-सा लगा रह गया। देवर को जसपुर मे फासी हो गई, और ऐंजन शिरकटी भूतनी बन गई। वह इसी शकल मे आती। सुखदेवा की बहू पर उसकी बहुत निगाह थी।

× × × ×

मगलपुर की ही घटना है। गौरी की मा और याया (बडी मा) दोनो देवरानी-जेठानी बैठी हुई थी। जेठानी को प्यास लगी। आसपास मे कोई लौडी नही थी। जेठानियो को प्यास से बेचैन देखकर देवरानी ने कहा—"मेरे हाथ मे क्या मेहदी लगी है, मै पानी लाती हू।" वह पानी लेने घडोची के पास गई। मिट्टी के घडे मे ठण्डा पानी भरा हुआ था। ढक्कन खोला और गिलास को जिस वक्त उसमे डुबोने लगी, उसी समय देवरानीजी को ख्याल आया—"जो कही मोतीबाई आ गई तो।" मोतीबाई कसौरा की बुआ की पातर थी। एक बार अपनी दाता के साथ उनके पीहर आई हुई थी, उसी समय बेचारी मगलपुर मे ही मर गई और फिर लौटकर कसौरा नही गई। मोतीबाई का ख्याल आते ही देवरानी का दिमाग ठिकाने नही रहा। गिलास हाथ से छूट गया और घडे पर गिरने से घडा भी फूट गया। देवरानी बेतहासा भागकर जेठानी के पास पहुची, और जाकर उसने सारी बात कही। जेठानी का प्यास से तालू सूखा जा रहा था, कहने लगी—"ऐसा जानती, तो मै ही जाकर पी आती।" वह देवरानी से कुछ ज्यादा हिम्मत जरूर रखती थी, लेकिन इसमे सन्देह है, कि मोतीबाई के आ जाने पर वह भी डटी रहती। इसीलिए वह घडोची की ओर नही बढी और पीछे लौडी ने आकर पानी पिलाया।

× × . × ×

राजस्थान मे राजाओ के यहा जहां 'पर्दा की बाया' या पातर गाने-बजाने के लिए होती है, वहा ठाकुरो के रनिवास मे वह काम ढोलणिया करती है,

जिन्हे सम्मान के तौर पर रानी कहा जाता है। एक बार चमरबखशा की बहू आदि तीन ढोलणिया सडेला से मगलपुर आ रही थी। दोनो के बीच मे बीस-पच्चीस मील का अन्तर है। प्रसिद्ध वीर टोडर शेखावत का उदयपुर रास्ते मे पडता था। उदयपुर मे अब भूमिये रह गये है––भूमिये ठाकुरो के छुटभैयो को कहते है। ढोलणियो ने सोचा, "चलकर आज उदयपुर के भूमियो की ठाकुरानियो को गाना-बजाना सुनाये, कुछ मिल जायगा और रात को आराम से यही टिक जायगे, फिर कल चलेगे।" उदयपुर का गढ कितने ही समय से खाली था। जब गढ के दरवाजे से ढोलणिया निकली, तो उन्होने तीन-चार औरतो को फाटक के भीतर जाते देखा। सोचा––"शायद आकर अब ठाकुरानिया रहने लगी हो।" वह भी स्त्रियो के पीछे-पीछे चल पडी। गढ के भीतर जनाने महल मे जाकर देखा, तो वहा पाच-सात ठाकुरानिया घूघट निकाले बैठी है। उनके हाथ मे हाथी-दात के चूडे भरे हुए थे। ढोलणियो ने शेखावत-पूर्वजो की महिमा के साथ ठाकुरानियो को आशीर्वाद दिया। ठाकुरानियो ने भी बहुत मीठे स्वर से कहा––"आओ रानीजी, बैठो।" ढोलणिया बैठकर ठाकुरानियो के सामने डफला बजा गीत गाने लगी। एक बार रगमहल फिर डफले की आवाज और ढोलणियो के कण्ठस्वर से मुखरित हो उठा। कितनी देर तक गाना-बजाना करके अब ढोलणियो को सन्ध्या आते देख खाने-पकाने की फिकर पडी। ठाकुरानियो मे से एक जनी उठकर कमरे के भीतर गई और एक थाल मे आटा, दाल, मसाला आदि तथा काफी रुपया और मोहर रखकर ले आई। रानियो ने बहुत खुश होकर आशीर्वाद देते पल्ले को पसार दिया, जिसमे थाल की चीजे ठाकुरानी ने डाल दी। जिस समय वह ठाकुरानी पीछे जाने लगी, तो ढोलणियो ने देखा, कि उसके पजे तो पीछे की ओर है और एडी आगे की ओर। तीनो ने एक दूसरे को इशारा किया और उनके प्राण निकलने लगे। जल्दी-जल्दी वे वहा से हटने लगी। सीधे पाव लौटने पर डर था, कि कही ठाकुरानियो के रूप मे वहा बैठी भूतनिया उनके गले पर न सवार हो जाय। फाटक के बाहर आकर पल्ला खोला, तो देखा आटे की तो राख हो गई है, और मोहर-रुपये कोयले हो गये है। गौरी को जब यह घटना मालूम हुई, तो उसे एक अच्छा प्लाट मिल गया। उसने अपनी सहेलियो को बटोरकर उसी तरह नाटक खेला। हा, उसमे उसने इतना और जोड दिया था, कि जब ढोलणिया आटा-मोहर लेकर चलती, तो भूतनी बनकर बैठी लडकिया उन्हे काट खाने को दौडती––टूटी चूडियो के लगे दात उन्हे डायन बना देते।

राजाओ के राजमहल बहुत पुराने हुआ करते है, जिनके कारण कई पीढियो

के भूत और भूतनिया उनमे बसेरा कर लेते है और कितनी ही बार ऐसा होता है, कि जीवित मनुष्य इन महलो को भूतो के लिए छोड जाते है, फिर उनकी बन आती है। बाकापुर मे एक पुराना किला है, जिसे जलाकोट कहते है। इसी के पास चौफेरा नामक बडा कुआ है, जिससे शहर को पानी मिलता है। पहले तो ऊटो से पानी निकाला जाता होगा, लेकिन अब बिजली से चलती मशीनें वह काम करती है। जलाकोट धीरे-धीरे भूतो का कोट हो गया। महाराजा गुलामसिह की मा—जो अभी भी जिन्दा है—उसी कोट मे रहा करती थी। भूतनियो ने वृद्धा राजमाता का वहा रहना मुश्किल कर दिया था। ठाकुरानिया मिलने के लिए आती, तो यह मुहजोर भूतनिया उन्हे सीढियो पर धक्का देकर गिरा देती। लौडियो और नौकरानियो की बडी बुरी हालत करती। कभी लालटेन लिये एक कमरे से दूसरे कमरे मे उनका जुलूस शुरू हो जाता और कभी नाच-रग जम जाता। एक लौडी अधेरी सीढी से उतर रही थी। उसी समय एक भूतनी ने आकर उसकी चोटी पकड ली और दीवार से उसके शिर को टकरा, नीचे पटक दिया। लौडी बेहोश हो गई। राजमाता ने सयाने बुलाये, जिन्होंने बहुत उपचार किया, फिर वह किसी तरह बची। राजमाता रोज-रोज के इस उपद्रव को कहा तक सहती? उनके पास कोई मिलने के लिए आना नही चाहता। इस समय उनके पोता महाराज शामलसिह गद्दी पर थे। दादी ने पोते से कहलाया। फिर सयाने बुलाये गये। बीच मे दादी को लाजगढ बुलवा लिया गया। सयानो ने मन्त्र पढकर जगह-जगह लोहे की कीले गाडकर जलाकोट को भूतो-भूतनियो से साफ कर दिया।

सचमुच ही ओझे-सयाने न होते, तो राजस्थान के इन राजमहलो मे जीवितो का रहना मुश्किल हो जाता। मगलपुर के गढ मे भी भूतनियो का भारी उपद्रव था, इसके लिए सयानो द्वारा जगह-जगह मेख गाडने पर ही सन्तोष नही किया गया, बल्कि दीवार पर स्थान-स्थान मे हनुमानजी का चित्र बनवा दिया गया।

× × × ×

जाडे के दिन थे। यह गौरी की दादी की सास के समय की बात है। वह अन्त पुर के निचले तल्ले पर खुली तिबारी मे बैठी थी। जाडो मे इन बिना किवाड के दरवाजो को रुई के पर्दो से ढाक दिया गया था। सिगडी मे कोयले की आग जल रही थी। परदादी बैठी-बैठी ताप रही थी। इसी समय घुघरू की आवाज सुनाई दी। परदादी ने समझा, कि उनकी बहू आ रही है। उनके दरबार में बहुओ का एक पैर पर खडा होना स्वाभाविक बात थी, लेकिन यह बहू के आने

का समय नही था। आधा पर्दा उठाकर झाककर देखने के लिए उन्होने नौकरानी को कहा। नोकरानी ने मुह निकालकर देखना चाहा, तो उसके मुह पर जोर का थप्पड लगा, और वह बेहोश होकर गिर पडी। रात के नौ-दस बज चुके थे। अन्त -पुर का ताला लगचुका था। चाभी पहरेदार सन्तरी-अफसर के पास थी। पूरा जेल-खाने-जैसा प्रबन्ध था। जेलर को उस रात को खबर दी गई। ताला खोला गया, ड्योढी खुली। नौकरानी जाल्या की बहू को उसी बेहोशी की अवस्था मे घर भेजा गया। बेचारी छ महीने बीमार रही। जिस वक्त जाल्या की बहू की यह अवस्था हुई, उस वक्त परदादी भी चिल्ला उठी, सारा अन्त पुर उनके आसपास जमा हो गया। वह "पाबू राठौर, पाबू राठौर" रटने लगी। पाबू राठौर के नाम से राजस्थान के भूत भागते है। यह राठौर-वीर गायो की रक्षा करते हुए मारा गया था। उस समय की अनपढ स्त्रियो के लिए 'पाबू राठौर' का नाम भारी अवलम्ब था। जमा हुई स्त्रियो मे किसी को हनुमानचालीसा याद था, वह हनुमानचालीसा का पाठ करने लगी।

राजपूतो के लिए भूतो का ही भारी त्रास नही था, बल्कि मारणमन्त्र और पुरश्चरण भी चलते रहते थे। जब छोटे भाइयो को नाममात्र का ही उत्तराधिकार मिलता, तो वह सारे को लेने के लिए क्यो न मन्त्र-तन्त्र का प्रयोग करवाते? मगलपुर के कुए से कभी-कभी कानफटी सिन्दूर-टिकी बिल्ली निकलती, कभी-कभी सूइयो से बिधा, सिन्दूर-लगा ऊट का शिर भी चरसे मे आ निकलता। अभिचार कराकर भाई-बन्द ठाकुर ईसरसिह को निर्वंश करना चाहते थे। ठाकुर ईसरसिह के सभी लडके एक-एक करके मर गये। जादू-मन्तर करानेवाले बिल्ली और ऊट के शिर पर ही सन्तोष नही करते थे, बल्कि वह सीग लगानेवाले जादूगरो को इस काम के लिए भेजते, जो आसपास मे "सीग लगावे, फसद खोले" कहते घूमते। उनकी आवाज ईसरसिह के बच्चे के कान मे पडते ही वह मर जाते। उनके तीन-चार बच्चे इस प्रकार छ-आठ महीने तक पहुचते-पहुचते मर गये। लोगो ने ठाकुर साहब का ध्यान इस ओर खीचा। उसके बाद हुक्म हो गया, कि कोई सीगडी लगानेवाला मगलपुर न आये। अचानक यदि कोई आ पडे, तो उसके लिए नगारे की आवाज और खाली फैर करके आवाज को दबा देने की कोशिश की जाती।

बैरी द्वारा इस प्रकार के मारण को मूठ भी कहा जाता था। गौरी का भाई छ महीने का बच्चा था। वह बिछौने पर सोया था। गौरी ताजी जलेबिया खा रही थी। उसने अपने गोगा के मुह की ओर देखा, फिर उसके मन मे ख्याल

आया—"अपने गोगा को बिना जरा-सा दिये खाना ठीक नही है ।" वह उस समय तीन वर्ष की रही होगी । उसने झट एक टुकडा काटकर गोगा के मुह मे डाल दिया । छ महीने का शिशु उसे निगल पाता ? वह टुकडा उसके गले में अटक गया और वह खासने लगा । गौरी बहुत डर गई, लेकिन खैर, वह टुकडा घातक साबित नही हुआ । लेकिन उसी रात गोगा के सोने के कमरे की खिडकी को किसी ने थपथपाया । फिर खिडकी खुल गई और उसके द्वारा गोगा के मुह पर टार्च की तरह रोशनी पडी । सुबह होते-होते गोगा चल बसा ।

× × × ×

जादू-मन्तर और भूत-प्रेत से ठाकुरो का महल परेशान था । किसी सेठ को अपने ठाकुर पर दया आई । उसे कोई महासिद्ध साधु मिल गया था । उसने महलो को इन उपद्रवो से सुरक्षित करने के लिए साधु को अपने साथ गढ पर ले जा उसकी खूब महिमा गाई । साधु ने कुम्हार के घर से कच्चा घडा मगवाया । फिर उस पर मन्त्र किया । वहा बैठे लोगो ने देखा, कि घडा खून से लबालब भर गया । साधु ने कहा—"अब इस महल की सारी अलाबला इस घडे मे आ गई ।" साधु की खूब पूजा-प्रतिष्ठा हुई । जान पडता है, उसने नजरबन्द करके घडे मे खून दिखलाया था, क्योकि राजमहल के उपद्रवो पर उसका कोई प्रभाव नही पडा ।

ठाकुर साहब के घर मे लडके जीने नही पा रहे थे । बडी चिन्ता थी । राजरतनी नामक एक राजपूतनी के मन्त्र-तन्त्र की बडी ख्याति फैली हुई थी । वह आधी रात को श्मशान जगाती और भूतो के काचे-कडवे बच्चो तक को नही छोडती थी । राजरतनी के महलो मे जाने मे कोई रुकावट नही थी । उसने देवरानी-जेठानी को देखा, फिर बडी गम्भीरता से कहा—"इसकी दवा तो की जा सकती है, लेकिन उपाय बहुत कठिन है । आधी रात को श्मशानो मे ले जाकर वहा मन्त्र के साथ स्नान करवाना पडेगा ।" आधी रात को रनिवास से नारियो को श्मशान मे ले जाना कोई साधारण अपराध नही होता । दादी को बडी फिकर थी, कोई कुल चलानेवाला बच्चा तो होता । दो-तीन दिन तक आपस मे विचार चलता रहा । अन्त मे दादी ने हिम्मत करके अपने बेटे से कहा—"अपने बच्चे जीते । कुल-दीपक तो चाहिए । यह बहुत तन्त्र-मन्त्र जाननेवाली स्त्री है । बेटे के लिए लोग क्या-क्या नही करते ? ऐसा करने मे क्या हर्ज है ?" लेकिन गौरी के बाबोसा ने मा की बात मानने से साफ इनकार कर दिया और कहा—"ध्रुव-प्रह्लाद का नाम बेटो से नही चला ।" यह तीर खाली गया । विश्वास भी पक्का नही था । इसलिए अन्तःपुरिकाओ ने यह निर्णय किया, कि एक बन्ध्या को राज-

रतनी अपने मन्त्र के बल से पुत्र पैदा करा दे, तो ठाकुरानियो के लिए कुछ सोचा जायगा। इसके लिए एक लौडी राजरतनी के हवाले की गई। आधी रात को वह उसे लेकर चली। साथ मे दारू की बोतल, बकरे का शिर, पेडे तथा दूसरी बहुत-सी चीजे भेज दी गई। कितने ही और लोग भी श्मशान के पास तक गये। स्त्री को श्मशान मे आधी रात की बेला मे चिता पर चौकी रखकर नगा बैठाया गया। फिर मन्त्र पढकर राजरतनी ने उसको स्नान करवाया। श्मशान मे चारो ओर से भूत-भूतनिया आवाज लगा रहे थे—"लाओ, लाओ।" डर के मारे साथ गये लोग चीखने-चिल्लाने लगे। राजरतनी ने तुरन्त दारू की बोतल से चारो ओर धार लगाई, और बलि की चीजे दी। फिर आवाज बन्द हो गई। चारो ओर शान्ति छा गई।

शायद राजरतनी का वह प्रयोग उस स्त्री पर सफल नही हुआ, क्योकि ऐसा हुआ होता, तो देवरानी-जेठानी को श्मशान भेजने की फिर कोशिश की जाती।

अध्याय ७

व्रत-त्यौहार

महलो मे व्रत बहुत ठाट-बाट से होते है । घर की स्त्रियो को व्रत करते देख गौरी भी मचल पडती—"मै भी व्रत करूगी ।" वैसे मा पुराने विचारो की थी, लेकिन व्रत करने की पक्षपातिनी नही थी। एक दिन मगलपुर मे व्रत के लिए गौरी जिद कर रही थी। उसने खाना नही खाया और कह दिया—"मैने तो व्रत किया है ।" माने पहले तो समझाना शुरू किया—"बच्चे व्रत नही किया करते",लेकिन जब उस पर भी नही मानी, तो कहा—"बुहारी (झाडू) के ऊपर बैठकर खा लेने से बच्चो का व्रत नही टूटता ।" वह भादो बदी ६ की ऊबछट थी । बाबोसा ने भी बच्ची की जिद देखकर कह दिया—"करने दो ।" इन व्रतो को जब छोटे बच्चे करना चाहते, तो रोजेवालो की तरह भिनसार को ही उठाकर उन्हे सहरी खिलाई जाती । गौरी को भी खिलाया गया था । दोपहर तक तो उसके बल पर किसी तरह बिताया। दोपहर को ऊबछट की कहानी सुन लेने पर पानी पीने को मिला। खाना रात को चाद देखकर ही खाया जा सकता था । दोपहर के बाद ही गौरी को भूख लग गई, लेकिन वह व्रत तोडने के लिए तैयार नही थी, चाहे उसके लिए अतडिया भले ही ऐठ जाये । बाबोसा ने फरमाया—"इसका ऊजरणा (उद्यापन) आज ही करा दो ।" ऊजरणा के लिए छ कुमारी लडकियो और एक साखिया (साक्षी) लडके को खिलाकर, व्रतवाली खाना खाती है । आज ही ऊजरणा होगा, इसका तो पता था नही, इसलिए दातवन भेजकर छ कुमारियो और एक लडके को निमन्त्रण नही दिया गया था। उसी समय सवार छूटे और उन्होने आस पास के गावो मे से जाकर छ कुवारिया तलाश की । शाम तक छ कुवारिया और एक लडका इक्ठठा कर लिये गये । इसमे जात का कोई नियम नही था, इसलिए मिलने मे मुश्किल नही हुई । सूर्यास्त के समय निमन्त्रित लडकिया और गौरी भी नहा-धोकर खडी हो गईं । अब उन्हे तब तक खडे रहकर आकाश की ओर देखना था, जब तक कि चाद निकल न आये । लेकिन भादो का आकाश मेघ-निर्मुक्त

तो नही होता। घडी गई, दो घडी तीन घडी, चार घडी। आकाश मे चाद का कही पता नही था। काले बादल छाये हुए थे। गौरी की आखे नीद से भारी हो रही थी। भूख लगी हुई थी और ऊपर से घण्टो खडे रहने के कारण पैर दुख रहे थे। लेकिन वह लेटकर अपने व्रत को नष्ट करने के लिए तैयार नही थी। बाबोसा ने दिन भर की भूखी बच्ची को इस तरह तपस्या करते देखा। उनकी बात पर गौरी का अधिक विश्वास था। दूसरे लोग कहते, तो वह कह देती—"नही, मे अपना व्रत खराब नही करूगी।" उसे बहुत समझाया गया, कि मसनद के सहारे लेट जाने मे व्रत नही टूटता। फिर दादी ने कहा—"नीचे लेटने मे व्रत टूटता है, झूले पर बैठने मे कोई हर्ज नही।"—, बरसात मे गौरी का झूला दो-तीन महीने तक बराबर टगा रहता था, जो वहा मौजूद था। झूले पर बिस्तरा लगाकर उसे सुला दिया गया। गौरी इस समय ग्यारह वर्ष की होगी। बाकी निमन्त्रिता लडकिया भी तपस्या मे शामिल थी। आधी रात के करीब जाकर कही से बादल-हटा और चाद का मुह दिखलाई पडा। बाबोसा ने कह रखा था—"इसे चूरमा, हलवा आदि न खिलाना, पेट खाली है, नुकसान करेगा। दूध पिलाके सुला दो।" गौरी को नीद के मारे कहा होश था। उसे यह भी नही मालूम हुआ, कि वह कब दूध पीकर सो गई। कुवारियो को पकवान खिलाया गया। उन्हे एक-एक घाघरा, एक-एक ओढनी, एक-एक कुर्ती का कपडा और एक-एक रुपया दिया गया। गौरी ने ऊबछट का व्रत किया है, भगवान् के पास इसके साक्ष्य देने के लिए लडका लाया गया था। उसे भी भोजन कराकर धोती-जोडा, एक साफा, एक कमीज का कपडा, छाता-जूता और एक रुपया दिया गया। गौरी अब निश्चिन्त थी, कि उसने व्रत को ठीक से किया है, और उसका उसे फल जरूर मिलेगा। लेकिन भगवान् ऐसे बेवकूफ नही थे। उन्होने देखा था, कि खडे रहकर चाद के देखने की प्रतीक्षा न करके वह लेट गई थी, इसलिए वह 'ऊब-छट' नही 'लेट-छट' हो गई।

ठाकुर रूडसिह का भी अपनी भतीजी पर बडा स्नेह था। वह अपने भाइयो मे अधिक सुशिक्षित थे। जब नरपुर मे रहते, तो गौरी को जरूर बुला लेते। बाला-किला मे रहना उन्हे पसन्द नही था और नरपुर के दो मील पर जोड मे उन्होने अपने लिए एक कोठी बनवा ली थी। जोड मे बाजार नही थी, इसलिए बडे तडके ही सवार को नाश्ते की मिठाई के लिए नरपुर भेजा जाता। कदोई (हलवाई) कुम्हारो से फूटे-खोटे मिट्टी के बर्तन खरीद लेते, और उन्ही मे मिठाई भरकर

देते। रोज एक घडा मिठाई का आता। गौरी अपनी सहेलियो और जिनके साथ उसका नेह-नाता था, उनके साथ नाश्ता करती। ठाकुरो के गरीब भाई-बन्द (भूमिया) भी जब-तब रूडसिह के पास आते । इन बेचारो के पास भला इतने साधन कहा थे, कि अपने सौभाग्यशाली भाई-बन्दो की तरह नागरिक वेश और सभ्य तौर-तरीके से रहते ? वह गाव के जाटो की तरह ही गोल-गोल साफा बाधते, बडी-बडी दाढिया लिये ऊटो पर चढकर आते, फिर किसी से "दादाजी मोजरो, तायाजी मोजरो" करते। गौरी उनकी वेश-भूषा को देखकर समझती, कि ये भी गाव के किसान है, लेकिन जब ठाकुर रूडसिह को खडा होकर उनके लिए सम्मान प्रदर्शित करते देखती, तो उसे समझ मे नही आता। रूडसिह अपने इन कम भाग्यशाली भाइयो को बैठाकर उनके साथ खाना खाने के लिए तैयार हुए, और उन्होने अपनी भतीजी से कहा--"आ बेटा, खाना खाये।" गौरी ने कान मे कहा--"आपके दादाजी के साथ खाना नही खाऊगी, उनकी दाढियो से गन्ध आती है।"

बूढे दादा ने लडकी की बात सुन ली। उन्होने कहा--"यह तेरा बाबा है, तो हम भी तो तेरे बाबा है । तेरे बाबा के पास ठेकाना जागीर है, और हमारे पास नही, इसीलिए हमारी दाढी मे तुझे गन्ध आती है ।" बाबोसा ने दादा को समझाया--"यह तो बच्ची है, इसकी बात का ख्याल न करे।" फिर उन्होने गौरी से खाने के लिए कहा, तो वह खा लूगी, कहकर बैठ गई।

× × × ×

जर्दा और पान खाना ठाकुरानियो मे ही नही, बल्कि बिना दात की बूढी-बूढी रानियो मे भी बहुत प्रचलित था, यह गौरी ने देखा था। जसपुर के महाराजा राखीसिह मर चुके थे। उनकी गोद आये माखनसिह उस समय गद्दी पर थे। उनकी गोदमाताओ मे चार-पाच अब भी जिन्दा थी, जिनमे एक रानी दामावतजी थी, जिनका ननिहाल चम्पावतो मे था, अर्थात् उसी कुल मे, जिस कुल की गौरी की मा थी। अब सनसे सफेद बालोवाली, बिना दात की पोपले मुहवाली बुढिया के इने-गिने दिन रह गये थे। मन बहलाव के लिए कोई ढग होना चाहिए, इसीलिए महीने-पन्द्रह दिन पर रानी दामावतजी के यहा से लेने के लिए चोबदार और ढलैत रथो को लेकर आ जाते। तीनो हवेलियो की ठाकुरानिया रथो पर चढकर रानी के रावला मे पहुचती। जसपुर मे मीलो तक रनिवास और दूसरे महल चले गये है। रानियो के महलो को 'रावला' कहते है। ये महल एक बडे आगन के चारो तरफ चौमजिले-पचमजिले होते है। आगन मे से बाहर जाने का एक रास्ता होता है, और

जिसके निकास पर कामदार बैठते है। रथ से उतरकर ड्योढी पर जहा कनाते लगी रहती, वहा मेहमान स्त्रिया जमा होती। हर एक रानी के पास एक-दो नाजर (हिजडे) रहते, जो पुरुष-वेश मे होते और अन्त पुर मे जाने मे उनके लिए कोई बाधा नही थी। नाजरो मे किसी जात के भी हो सकते थे। राज मे उनकी कदर थी, इसलिए यदि किसी के घर हिजडा लडका पैदा होता, तो उसे किसी रानी या बूढे नाजर को चढा देते । नाजर अपने कुल की सहायता करता, और अपनी रानी के प्रभाव के अनुसार कुल के भाग्य को खोल सकता था। नाजर के अतिरिक्त नेवगणिये (नायने) भी मेहमानो के पास आती, और शिर से पैर तक एक-एक चीज को देखकर बोलती जाती। पर्दे के बाहर कामदार कागज पर लिखता जाता—"एक लाल चुदरी गोटे और सल्मे-सितारेवाली, एक रेशमी घाघरा ।" इस तरह कपडो मे से एक-एक को लिखवाकर फिर एक-एक जेवर को हुलिया के साथ लिखवाती। अन्त पुर के भीतर एक महीने का पुरुष-बच्चा भी नही जा सकता था। आठ महीने की गर्भिणी स्त्रियो के गर्भ मे कोई पुरुष न हो, इसलिए उन्हे भी भीतर नही जाने दिया जाता था। बच्चे वा दुधमुहे बच्चेवालियो को अपने बच्चे को बाहर रख जाना पडता, जहा वह आकर दूध पिलाती । मेहमान स्त्रियो के शरीर पर की एक-एक चीज की बाकायदा लिखा-पढी हो जाने के बाद फिर वह रावले के भीतर घुसने पाती। त्योहार होने पर वह रानी के सामने भेट रखती। बडे ठेकानेदार की बहू होने पर एक मुहर को रुमाल पर धर रानीसाहिबा के सामने करती, जिसे वह उठाकर रख लेती । फिर पाच रुपया उनके शिर पर से घुमाकर गद्दी पर रख देती, जिसे नचरावल कहा जाता। नचरावल रानी के नौकरानियो का हिस्सा होता। गौरी उस समय सात वर्ष की थी, जब पहले-पहल रानी दामावत के दरबार मे पहुची। उसे पाच रुपया नजर के दो रुपये नचरावल के लिए दिये गये। जब नजर के रुपये हाथ पर रखकर आगे करने पर रानी ने अपना हाथ बढाया, तो गौरी ने रुपयो को अपने दूसरे हाथ से ढाक दिया। सोचा—"इन रुपयो को क्यो इस दतटुटी बुढिया को दिया जाय।" रानी बहुत हसी—"यह छोरी तो बहुत उस्ताद निकली।" उसे रानी ने एक मुहर इनाम दिया।

मेहमानिने जब वहा पहुची, तो मसनद के सहारे गद्दी पर रानी बैठी हुई थी। बडे ठेकानेवाली ठाकुरानियो के नजर पेश करने पर वह खडी होकर स्वीकार करती। पद मे समानता रखनेवाली रानी के पगा लागी, बहुओ ने प्रणाम किया, लडकियो ने हाथ जोडे। विधवाए पगा नही लगा

करती। वह बडी होने पर दूर से चुपचाप हाथ जोड लेती, और छोटी होने पर प्रणाम कर लेती। राजा के दरबार की तरह रानी के दरबार मे भी हर एक को पद-मर्यादा के अनुसार बैठाया जाता। कुशल-प्रश्न की बात-चीत हो जाने पर फिर तरह-तरह की बाते छिड जाती। सुबह को ही रानी अपने सम्बन्धियो को बुलाती। गपशप होते ही दोपहर के खाने का वक्त आता। फिर दो हाथ लम्बे विशाल पीतल-कासा-जर्मन सिलवर के थालो मे भोजन आता। दोनो मे दस-पन्द्रह तरह की मिठाइया होती। चन्द्रकला, सूर्यकला, गुलाबजामुन, गूदीदाना, नुकलीदाना, मोतीचूर के लड्डू, मूग के लड्डू आदि एक-एक दोने मे रक्खे रहते। सेब, दाल-कचौडी आदि नमकीन चीजे भी इसी तरह दोनो थालो मे रहती। आठ-दस प्रकार की सब्जिया भी होती। नुक्ती का रायता, पापड, फुल्का, बटिया भी सजाकर थाल मे रक्खी रहती।. राजस्थान की राजपूत महिलाए विधवा होने पर मास-शराब छोड देती है, अर्थात् वहा मास और शराब को सौभाग्य का चिह्न माना जाता है। वह देवता से वर मागती—'हे महाराज, म्हारा दारू-मास अमर कर दीजो।' एक-एक थाल पर चार-चार, पाच-पाच का बैठकर खाना केवल मुसलमानो का ही रवाज नही है, बल्कि वह राजपूतो मे भी देखा जाता है। रानी दामावतजी मेहमानो के साथ खाना नही खाती थी। मेहमानो को निर्द्वन्द्व हो खाने का अवसर देने के लिए ही शायद ऐसा करती। खाना खाने के बाद मेहमान स्त्रिया फिर रानी के पास पहुचती। चादी के वरक मे लिपटे या ऐसे ही पान के खल्ले (बीडे) हर एक को मिलते। रानी के मुह मे दात नही था। उनके खल्ले और जर्दे को खल के भीतर डालकर, अच्छी तरह कूटके आधे-आधे तोले की गोलिया बना ली जाती, जिन्हे वह खल्ले की जगह खाया करती। यदि गर्मी का मौसम होता, तो रानी तरुणियो को आराम करने के लिए कह देती, लेकिन बडी-बूढियो को नीद कहा? वह अपने सरस और नीरस जीवन की स्मृतियो की पोथी खोलकर बैठ जाती। रानी की बाया थी ही, इसलिए इच्छा होने पर उन्हे गाने-नाचने के लिए हुक्म दिया जाता, लेकिन विधवा होने से नाच-गाना बहुत सयम के साथ होता। शाम को सूर्यास्त से पहले ही मेहमानियो को फिर खाना खिलाकर बिदाई मिलती। रावला के बाहर आते फिर उसी तरह तलाशी होती। नायने शरीर को सब जगह टटोल-टटोलकर देखती, कही ऐसा न हो, कि कोई चीज छिपाकर लिये जा रही हो। कपडो और जेवरो का नाम ले-लेकर बोलती जाती, जिसे

कामदार कागज पर लिखता जाता । यह मेहमान का स्वागत था या फजीहत ? पाठको को आश्चर्य होता होगा, कैसे कोई आत्मसम्मान रखनेवाला व्यक्ति इन सब बातो को बर्दाश्त कर सकता था ? इस पर यदि नरपुर और मगलपुरवाली ठाकुरानिया रानी के दरबार मे हाजिर होना नही चाहती, तो इसमे आश्चर्य की क्या बात थी ? रानियो का रावला क्या, एक पूरा कैदखाना था। शायद कैद-खाने मे भी इतनी कडाई नही होगी। कढी या कोई दूसरी चीज को भीतर-बाहर जाते समय दरवाजे पर लकडी से टटोलकर देखा जाता, कि कोई चीज छिपाकर तो उसमे नही भेजी जा रही है। सालगिरह के दिन चोबदार और ढलैत रथ लेकर जसपुर मे ठेकानेवालो की हवेलियो पर स्त्रियो को लिवाने के लिए पहुचते, लेकिन न जाने पर बुरा नही माना जाता। ठेकानेवाले चोबदार और ढलैत को इनाम दे देते। गौरी को रावला मे जाने पर सबसे प्रिय चीज जो मिलती थी, वह था नुक्ती का रायता। कटोरियो मे भर-भरकर वह जितना चाहे उतना पी सकती थी, इसलिए मासी-भाजी सब छोडकर नुक्ती के रायते पर टूट पडती। उन्होने कितनी बार अपने यहा उसे बनाने की कोशिश की, लेकिन वैसा स्वाद नही आता था।

× × × ×

सालगिरह—गौरी की उमर उस समय नौ-दस साल की थी। ननिहाल मे जसपुर आई हुई थी। इसी समय महाराज माखनसिह का जन्मदिन आया। दामावतजीमा ने अपने ननिहाल की स्त्रियो को बुला लिया। गौरी भी उनके साथ गई। तमोलिया दरवाजे से गमोरी दरवाज तक मीलो राजमहल चले गये थे। यही अलग-अलग रानियो और राज-माताओ (माजियो) के रावले थे। इन रावलो के भीतर पुरुष के रूप मे केवल बन्दरो के मुह देखे जा सकते थे। जैसा कि पहले कहा, रावला बडे आगन के किनारे चार-पाच तल्लो का होता है। निचले तल्ले मे आगन के पास एक बडा तिबारा रहता, जिसमे बिना किवाडवाले पाच खुले दरवाजे होते है। शादी-ब्याह के समय इस तिबारे का इस्तेमाल होता, या किसी के मर जाने पर स्त्रिया यहा बैठकर पल्ला लेती—रो-धोकर स्यापा करती। निचले तल्ले मे अधिकतर सामान और नौकरानिया रहती। पुराने समय मे विध-वाए भी नीचे तिबारे मे उतार दी जाती। पुराने महलो की तरह इनमे सण्डास के पाखाने का प्रबन्ध हर मजिल पर हर एक निवास के लिए होता, यद्यपि रहने-बैठने के कमरे से दूर, किन्तु स्नानगृह का कोई प्रबन्ध नही था।

किसी भी खाली कोठरी मे स्त्रिया स्नान कर लेती। इस महाबन्दी-गृह की छत पर ऊची-ऊची दीवारे खिची होती, जिनमे कही-कही पैर लगा उचक कर बाहर की दुनिया को देखा जा सकता था, यद्यपि इसे बहुत निषिद्ध माना जाता था। अन्त पुरिकाओ को केवल आसमान के तारो को ही गिनने का अधिकार था। आगन से बाहर जाने की डोढी थी, जिस पर संगीन अपराधियो के बन्द करने के कैदखानो की तरह हथियारबन्द पहरेदार रात-दिन पहरा दिया करते। शाम को सात बजे ही एक भारी ताला लग जाता, और फिर भीतर-बाहर का आना-जाना विश्वासपात्र आदमियो के लिए भी बन्द हो जाता ।

रावलो मे स्त्रियो के आने-जाने के लिए सुरगे होती थी। सुरग का अर्थ यह नही, कि रास्ता जमीन के भीतर से होता था। जमीन के ऊपर होने पर भी दिन को भी इस रास्ते मे अधेरा छाया रहता, और बिना मशाल या लालटेन के एक कदम भी आगे बढा नही जा सकता था। बूढी रानियो के लिए चार पहियेवाले घुडले होते, जिन्हे बहुत कुछ रिक्शे की तरह दो स्त्रिया आगे खिचती, और चार पीछे से धक्का देकर ले चलती। घुडले मे गद्दा बिछा रहता, जिस पर आलती-पालती मारकर बुढिया रानी बैठ जाती। इन्ही अधेरी सुरगो के भीतर आज रानी दामावतजी दूसरी राजमाताओ की तरह सदलबल बडे रावले की ओर जा रही थी। सभी रानिया जहा इकट्ठा होती, उसे 'बडा रावला' कहते। रानिया, राजमाताए (अर्थात् राजस्थान की भाषा मे माजिया) सभी एक समय नही आती। कोई बडे रावले मे पहले पहुचती, कोई पीछे। रानिया प्राय पहले वहा मौजूद रहती। माजी के आते ही रानिया खडी हो जाती, और सासू के पा लगती। उस समय महाराजा राखीसिंह की रागावत, तमलावत, दामावत, छोटे लठिया आदि पाच-छ विधवाए मौजूद थी। बिछे हुए गद्दे पर अपने दर्जे के अनुसार मसनद के सहारे वह बैठ गई। सासुओ के दाहिने गद्दे के ऊपर ही रानियो को अपनी मर्यादा के अनुसार बैठने का स्थान था। माजियो मे बडी के आने पर बाकी खडी हो जाती। अपने मे वह बडी को जीजा कहती, आपस मे वह हाथ जोडकर नमस्ते की तरह मुजरा करती, बहुए पगे लागती या "खम्मा घणी" करती। दाहिनी ओर की पाती मे रानियो के बैठ जाने पर उसी पाती मे आगे गलीचा बिछा रहता, जिस पर पासबाने अपने पद के अनुसार बैठती। यह बतला चुके है, कि भिन्न जाति की स्त्री या पातर को रानियो के नजदीक का स्थान देकर राजा लोग उन्हे पासबान बना लेते थे। इस प्रकार माजियो के दाहिने लम्बी पाती रानी और पासबानो की होती, उसी तरह बायी ओर ठाकुरानियो को

उनके पद-मर्यादा के अनुसार स्थान मिलता। गर्मी होने पर दरबार बाहर आगन मे लगता, नही तो, बडे रावले का हाल बहुत बडा था, वही बैठने का इन्तजाम होता। जसपुर के इस अन्त पुर के दरबार से हम समझ सकते है, कि दिल्ली के शाही महलो मे बेगमे किस तरह बैठा करती थी।

जहा सभी माजिया और रानिया इकट्ठी होती, उसे जसपुर की बोली मे कहा जाता--"आज सात राज शामिल हुए।" महफिल मे अब नृत्य और सगीत का बाजार गरम होता। सभी माजियो और रानियो की अपनी-अपनी बाया (पातरे) अपना कौशल दिखाने के लिए पहले से तैयारी किये रहती। इन बायो के अतिरिक्त कितनी ही खालसे की बाया होती। जिन बायो की मालकिन मर जाती, उन्हे इस नाम से पुकारा जाता। बायो को रानियो की तरह ही घोर पर्दे मे रहना पडता। उन्हे योग्य कत्थक और उस्तादो द्वारा बाकायदा शास्त्रीय नृत्य और सगीत की शिक्षा दी जाती, तरह-तरह के वाद्य सिखलाये जाते, वीणा, सितार, सारगी, पखावज, तबला, मृदग, ढोलक, हारमोनियम--सभी तरह के वाद्यो की शिक्षा होती। बायो को नृत्य-गीत के सिवा और कोई काम नही था। उन्हे अच्छा खाना, अच्छी पोशाक और जेवर मिलता। रानियो के लिए मानो यह राजा को फसाने के लिए बसी थी। वह राजा को छीनकर अपना कर लेगी, इसका भी डर नही था, इसलिए अपनी पातरो से रानियो के ईर्ष्या करने की सम्भावना नही थी।

महाराज माखनसिह की सालगिरह थी। बाहर दरबार लगा हुआ था, जहा लोग नाच-गाने का आनन्द ले रहे थे। इधर बडे रावले मे दूसरी महफिल लगी हुई थी। बायो ने तरह-तरह के नाच दिखलाये। कभी पुगी की नाच हुई--एक कुशल बाई सपेरे की तरह अभिनय करती साप को मुग्ध करते हुए नृत्य करने लगी। फिर दस-बीस इकट्ठा होकर घूमर नाचने लगी। फिर दो तलवारे धार ऊपर करके रख दी गई, और एक बाई ताल के साथ पाच मिनट तक तलवार की धार पर नाचती रही। देखनेवाली महिलाए आश्चर्य के साथ उसकी ओर एक-टक देख रही थी। फिर थाल मे बताशे भरकर रख दिये गये। एक बाई पहले थाली के किनारे पर नाची, फिर बताशो के ऊपर फूल की तरह थिरकी। एक भी बताशा नही टूटा। नृत्य के साथ सुमधुर गाना हो रहा था। अन्त पुर मे पक्के गाने ही की अधिक माग थी, और वहा बूढे उस्तादो का बडबडाना नही था, जिसमे सगीत के नाम पर शान्त बैठी चिडिया को भी उडा देने का प्रयत्न किया जाता है। बीच-बीच मे शराब के प्याले चल रहे थे, जो शराब नही पीती, उनके लिए

शरबत और सोडा-लेमन लेकर बारिने, नायने, मेहरिया घूम रही थी। रानिया सभी मास-शराब ले सकती थी, लेकिन राजमाताओ के वह दिन बीत चुके थे। माजियो का मुह खुला हुआ था। वह पचास से सत्तर वर्ष तक की थी, रानिया भी चालीस-पचास वर्ष की थी, लेकिन उन्होने हाथ-हाथ भर का घूघट निकाल रक्खा था। बडे रावले मे पुरुष के नाम पर एक महीने के बच्चे की तो बात ही क्या, सात-आठ महीने का गर्भ भी नही था। लेकिन तब भी रानिया अपना मुह कैसे दूसरी स्त्रियो को दिखला सकती ? उनका हाथ भी ढका हुआ था। गाने को तो वह कान से सुन सकती थी, लेकिन नाच देखना उनके लिए मुश्किल था। ठाकुरानियो का घूघट बित्ते भर से अधिक लम्बा नही था, और वह घूघट के आड से सब देख सकती थी।

बाहर की महफिल खतम करके महाराजा माखनसिह अब सालगिरह के उपलक्ष मे अपनी माताओ का चरण छूने भीतर आये। पर्दा करनेवाली सभी नारिया वहा से छू-मन्तर हो गई। रानिया भी सासो के सामने कैसे पति के सामने होती, वह भी हट गई। माखनसिह महाराजा राखीसिह की गोद आये थे, इसलिए राजमाताओ से मतलब था धर्ममाताए। गौरी को याद है, एक लम्बा मोटा आदमी, जिसके मुह पर लम्बी-काली दाढी लटक रही है। सलमा-सितारो के कामवाला एक लम्बा चोगा उसके शरीर पर है। तुर्रे-कलगीवाली पेचदार पगडी शिर पर है। कानो मे बालिया, गले मे कण्ठा और भी बहुत से जेवर लटक रहे है। कमर मे जरी का कमरपेटा बधा हुआ है, जिसके पास तलवार लटक रही है। महाराजा ने माजियो के पास पहुचकर हाथ जोडकर प्रणाम किया, उनके सामने मुहर की नजर भेट की। राजमाताओ ने मुहर को दूना करके अपने बेटे के हाथ मे दे दिया। फिर सौ-सौ दो-दो सौ रुपयो की बधी पोटली को महाराजा के शिर पर घुमाकर नचरावल की, रुपये लुटाये। महाराजा थोडी देर के लिए बैठ गये। तब तक के लिए बन्द हुआ नाच-गाना फिर शुरू हो गया। पातरो ने अपना नृत्य-कौशल दिखलाया। फिर दरबार बर्खास्त हुआ। पातरें नाच-गानो के अतिरिक्त ऐसे समयो मे विशेष अभिनय भी करती। इसके बाद रानिया और राजमाताए सुरगो से होकर अपने-अपने रावले मे उसी तरह लौट गईं।

सालगिरह के समय राज्य की ओर से ठेकानो के ठाकुरो के पास थाल भेजे जाते। हर एक ठेकाने मे दो थाल जाते। एक थाल कच्चा होताहै, जिसमे रघे चावल, साबुत उबली मूग रक्खी रहती, साथ ही डेढ सेर घी का एक लोटा और

एक चीनी-भरा लोटा भी रहता। पक्के थाल मे बीस-पच्चीस तरह की मिठाइया, कई तरह की नमकीन चीजे, एक सौ एक पत्तले मालपूये, खीर, रबडी, हलवा, जर्दा केसरिया मीठा चावल, आठ-दस प्रकार की सब्जिया रखकर ऊपर से पत्तल और फिर सफेद कपडे से ढाक दिया जाता। एक-एक थाल मे इतना सामान होना है, कि आठ आदमी मजे से खा सकते। थाल के साथ एक चोबदार, एक ढलैन, एक चपरासी रहता, और थाल किसी स्त्री या पुरुष नौकर के शिर पर चलता। ठेकानो की हवेलियो से उन्हे इनाम मिलता। ठेकानेवाले जब जसपुर मे नही रहते, तो भी उनके कामदार इनाम-भेट देकर थाल ले लेते। थाल मे सभी चीजे दोने मे होती, इसलिए उन्हे निकालकर लोटा, थाल और कपडे को आदमियो के हाथ लौटा दिया जाता।

सालगिरह के दिन राज्य के कच्चे-बच्चे सहित सभी छोटे-मोटे नौकरो-चाकरो को भी भोजन कराया जाता। उनके लिए लापसी, चावल और दूसरे भोजन बनते। ढोलणियो को एक-एक व्यक्ति के लिए आधा सेर भात, उबली मूग-घी-बूरे के साथ तौल-तौलकर दिये जाते। राज को बहुत खर्च करना पडता, लेकिन साथ ही हर एक ठेकानेदार और ओहदेदार मुहरे भेट मे देते, जिससे आमदनी भी होती। आज तो पुराने युग की रियासते खतम हो चुकी। पुरानी रानियो की जगह अब नई रानिया आ गई, जिन्होने पर्दा को ही सात समुद्र पार फाडकर फेक नही दिया, बल्कि अब वह लम्बी वेणियो से भी नफरत करती है। रावलो मे न जाने कैसे अब सालगिरह मनाई जाती होगी!

× × × ×

नवरात्र--दशहरा राजस्थान का जातीय त्योहार है, किन्तु उसका सम्बन्ध अन्त पुरिकाओ से उतना नही है। अन्त पुरिकाए नवरात्र मे बडी ही श्रद्धा-भक्ति से माताजी की पूजा करती है। दीवार पर कुमकुम से त्रिशूल बना दिया जाता, यही माताजी की प्रतिकृति है। वहा खूब पन्नी लगा दी जाती। स्त्रियो के अपने त्योहारो मे ब्राह्मणो के कर्मकाण्ड और वेद-मन्त्रो की उतनी अवश्यकता नही होती। सामने आग मे घी डाला जाता है, जिसे जोत जगाना कहते। ठाकुरानी या रानी माताजी की पूजा करती और लौडिया माताजी के गीत गाती। माता-जी के ऊपर कुमकुम का छीटा अगुलियो से डालना यही पूजा है। लापसी और मिठाई का भोग लगाया जाता। माताजी की पूजा मे शराब की बोतल आवश्यक है। रोज सबेरे पूजा करते समय शराब की धार दी जाती। पूर्वी जिलो मे आज कल यह धार शराब की न होकर लौग और दूसरी चीजो से मिश्रित पानी से

दी जाती है, जिसका अर्थ है असली शराब की जगह नकली शराब देकर माताजी को फुसलाना। रनिवास मे जो स्त्रिया नवरता-व्रत रखती, वह नौ दिन तक एक वक्त खाती, और उनके भोजन मे माताजी का प्रिय खान-पान मास और दारू अवश्य रहता। कितनी स्त्रिया नौ दिन व्रत न रहकर केवल आदि और अन्त के दो दिनो मे रखती। नवमी के दिन लापसी और खीर का भोग लगाया जाता। पशुबलि देना पुरुषो की पूजा का अग है, जो रनिवास मे नही होती। लापसी सवा सेर, सवा पाच सेर या सवा मन की तैयार की जाती। नवमी के साथ स्त्रियो की माता-पूजा समाप्त हो जाती। अगले दिन राजपूत पुरुष दशहरा की पूजा और हथियारो का प्रदर्शन करते।

दीवाली—दशहरे के दूसरे दिन से दीवाली की तैयारी होने लगती। सलमाडा मे महलो की हर साल सफेदी नही होती, और जो दीवारे बज्रलेप की हुई होती, उन्हे चूना न पोतकर साबुन और सोडा से धोते, रग करने के स्थानो मे रग करा दिया जाता। उसी दिन गर्मी और बरसात के साथी पखो को बिदा किया जाता, और छत के पखे खोल लिये जाते। कमरो मे दरी और गलीचो का स्थान अब रुईदार गद्दे लेते। दीवाली के आने की सूचना बीराबारस (कार्तिक बदी १२) से शुरू होती है। भाई की बहन सुबह चार बजे उठकर उस दिन उबटन करती, शिर धोती। अगले दिन धनतेरस होती, जिस दिन भी स्त्रिया शिर धोती और उत्सव की वेश-भूषा ग्रहण करती। उससे अगले दिन रूपचौदस पडती। इसी दिन यदि विधि-विधान ठीक से किया जाय, तो स्त्री को मोहक रूप मिल सकता है। खूब शरीर मे उबटन करके स्त्रिया नहाती। नहाते वक्त उनके सामने घी का दिया जलता रहता, जिस पर महिला की आख बराबर लगी रहती। वह दीप की ज्योत से अपने शरीर की ज्योत को बढाती। उस दिन ऊगा की दातवन की जाती। कडवे तुम्बे का रग सोने-जैसा होता है। आख को वह बहुत भाता है, यद्यपि जीभ उसको बर्दाश्त नही कर सकती। मतीरा (तरबूजा) राजस्थान की कितनी स्वादिष्ठ चीज है, और तपे रेगिस्तान मे उसके खाने से कितनी तृप्ति होतौ ह, लेकिन वह आखो को उतना तृप्त नही करता, जितना कडवा तुम्बा। इसीलिए कहावत है—

मनरजन भूखभजन की तिसिया घणी उमेद।
तन्ने झोलो मत मारो, म्हारी गडतुम्बा की बेल।

किसी मुसाफिर ने मतीरे को आनन्द से खाकर तृषा (प्यास) को घनी तौर से हटानेवाले मतीरे को आशीर्वाद देना चाहा, लेकिन उसके मुह से अन्तिम पद

निकल आया "म्हारी गडतुम्बा की बेल।" और मतीरे को तो झोला मार गया, लेकिन गडतुम्बा खूब फलने-फूलने लगा। स्त्री गडतुम्बा जैसी सुवर्ण-वर्ण होना चाहती है, लेकिन भीतर से वैसी नही, इसीलिए पहले उसकी ओर चाव से देखकर फिर तुम्बे को एडी के नीचे दबाकर तोड देती । रूपचौदस का विधि-विधान इतने से समाप्त नही होता। नहाने के बाद खूब शृंगार (काजल-टीकी) किया जाता है, और अच्छे-अच्छे कपडे पहने जाते है। उसी दिन शाम को कानी दीवाली होती है।

अगले दिन कार्तिक की अमावस्या को सभी जगहो की तरह राजस्थान मे दीवाली मनाई जाती है। ठेकानो मे नौकर-नौकरानियो को सूखा (बिना सिझा) चावल आदमी पीछे आधा सेर तथा घी-चीनी देते है—यह सलमाडा का रवाज है। मालर (जनपुर) मे उसकी जगह नौकर-चाकरो को फुल्के और लापसी दी जाती है। मिट्टी के दीवो को कुम्हार दे जाता, जिन्हे पानी मे रखकर ठण्डा कर लिया जाता। फिर दीवो मे तेल डालकर सात बडे थालो मे सजाया जाता, जिनमे से एक-एक थाल मे इक्कीस दीवे होते। फिर दीवे की पूजा होती। तब सभी जगह दीवे जला दिये जाते है। कमरो मे मन्दिर मे, छत पर, गढ के कगूरो पर दीवो की दो-दो तीन-तीन पाती जगमग-जगमग करने लगती। अगर हवा कुछ तेज दिखती, तो तेल मे रुई बोरकर जलाई जाती। आजकल मोमबत्तिया और बिजली के भी दीवे जलते है। दीवाली की मुख्य पूजा है, लक्ष्मी-पूजा। घर के सारे जेवर रीठे और सूअर के बालो की कूची से दिन मे साफ कर लिये जाते। फिर तोसाखाने मे चौकिया लगा दी जाती। दस बजे रात के करीब वहा एक थाल मे गिन्निया सजाई जाती। एक दो या तीन, जितनी थालो मे आये, जेवरो को सजा दिया जाता। महिलाए सुन्दर कपडो पर अधिक और जेवर पर कम ध्यान देती, क्योकि जेवर लक्ष्मी-पूजा के लिए सजाकर रक्खे जाते। उस दिन घर का सारा नगदनारायण और सभी आभूषण अर्थात् सारी माया यहा तोसाखाने मे इक्ट्ठी रहती है। डाकुओ और चोरो के लिए यह बहुत अच्छा समय है। उन्हे किसी चीज के ढूढने की जरूरत नही। लेकिन ठाकुरो और राजाओ के तोसाखाने बन्दूकधारी सन्तरियो द्वारा सुरक्षित होते है। तो भी ऐसी घटनाए हुई है, जब कि दीवाली को डाकुओ और चोरो ने घर की लक्ष्मी को बटोर ले जाने मे सफलता पाई। कभी-कभी जल्दी लक्ष्मी को घर मे पधारने के लिए उन्होने दीवाली की नकल की। मालवा के मुल्तान-दरबार मे किसी समय एक साधु आया। उसने कहा, मै सारी

माया को दुगुनी कर सकता हूँ। दरबार ने घर भर के सारे जेवरो को एक कोठरी मे जमा कर दिया। साधु तीन दिन की पूजा मे जेवरो को दूना करने के लिए कोठरी मे चला गया, और कह गया, कि तीन दिन से पहले इसे न खोलना। तीसरे दिन कोठरी खोली गई, तो न साधु था, न जेवर। जेवरो और मुहर-रुपयो के पास दीवार पर लक्ष्मी की तस्वीर लगा दी जाती है। दूसरे ठेकानो ओर राज्यो मे इसका निर्बन्ध नही है, किन्तु जसपुर मे लक्ष्मी-पूजा के समय महिलाए सलमा-मिनारे के काले रग के कपडे पहनती है। वहा अगरबत्तिया जलाकर सारे तोसाखाने को सुगन्धित कर दिया जाता है। तेल के दिवलो की जगह आजकल मोमबत्तियो का ज्यादा रवाज है। तब भी दो बडे दीवे घी और तेल भरकर रख दिये जाते है। पहरा लगा रहता है, जिसमे वह बुझने न पाये, नहीं तो न जाने कब लक्ष्मीजी पधारे और तोसाखाने मे अधेरा देखकर उलटे पाव लौट जाय। लक्ष्मीजी को सलमाडा मे पके हुई चावल और मूग के ऊपर घी-चीनी रखकर भोग लगाया जाता है। मारवाड मे उन्हे लापसी जिमाई जाती है। उस दिन महिलाए लक्ष्मीजी के सामने हाथ जोडकर प्रार्थना करती है, लेकिन यह हाथ जोडने की मुद्रा पद्ममुद्रा न होकर भिक्षामुद्रा—पसारी अजली—होती है। प्रसाद बाटा जाता है, आधी रात तक गाना-बजाना होता है। जो भाग्यवती अन्त पुर की नारी अक्षर पढना जानती है, वह गोपालसहस्रनाम का पाठ जरूर करती है, शायद उन्हे लक्ष्मीसहस्रनाम का पता नही है।

दीवाली की रात के भिनसारे नौकरानिया उठ जाती है। इस समय उनका काम है दरिद्रता को घर से बाहर निकालना। घर की सारी बुहारियो (झाडुओ) को इक्ट्ठा करके दरवाजे के बाहर रख आना, बस दरिद्दर को बाहर निकाल देना है। पूर्वी जिलो मे सूप पीटते हुए दरिद्दर को घर से बाहर निकाला जाता है। जनपुर मे भी सूप का निकालना आवश्यक समझा जाता। राजकुलो और ठाकुरो के गढो मे दरिद्दर को गढ के फाटक से बाहर करना पडता है। और बच्चो की तरह गौरी की भी अपनी छोटी-सी आलमारी थी। लक्ष्मी-पूजा के लिए उसे पाच रुपये नकद और एक रुपये के लड्डू मिल जाते थे। आलमारी मे पाटा बिछाकर, पीला कपडा फैला पाच रुपये और कागज पर बनी लक्ष्मीजी की मूर्ति रख देती। फिर अपनी मा और ताई की देखादेखी कुमकुम के छीटे देकर लड्डू का भोग लगाती। तोसाखाने मे जब रात भर अखण्ड दीप जलता, तो गौरी की लक्ष्मी क्यो अधेरे मे रहती? वह चिराग जलता छोड आलमारी को बन्द करके चली जाती और दूसरे दिन हर साल जब आलमारी खोलती, तो लक्ष्मीजी की मूर्ति

और पीला कपडा जला मिलता। यह दुर्भाग्य की बात थी, इसमे मन्देह नही।

दीवाली के दूसरे दिन रामासामा होता। प्रजा मे पुरुष ठाकुर साहब के पास जाते और स्त्रिया भीतर ठाकुरानी के दरबार मे हाजिर होती। ठाकुरानी पीनेवालियो को शराब देती। विधवाएँ शराब नही पी मकती थी, उनके लिए भग का गिलास तैयार रहता। साथ मे लक्ष्मीजी का प्रमाद लड्डू पान-इलायची के साथ तश्तरी मे पेश किया जाता।

उसी दिन अपराह्न मे गोरधन (गोबर्धन) की पूजा की जाती। ड्योढी के सामने नायन काफी गोबर रखकर हाथ-पैरवाला सोता आदमी बना देती, यही गोरधन था। शाम के वक्त ड्योढी पर कनात घेर दी जाती, और अन्त पुर से ठाकुरानिया या रानिया गोरधन पूजने वहा आती। थाल मे बिना जला घी का दीपक तथा हरे या पीले रग के कचरे, बेर के फल, कुमकुम और पानी की घण्टी होती। इस समय बाजरे के हरे सिट्टो का लाना भी शुभ माना जाता। पहले कुमकुम के छींटे दे गोरधन की पूजा होती, घी के दीये को जलाकर गोरधन के पेट पर रख दिया जाता, और कचरे तथा बेर बिखेर दिये जाते। फिर गोरधन की परिक्रमा कर हाथ जोड दिया जाता। इसके बाद पाच-छ महीने का बछडा लाकर गोरधन के ऊपर खूब रौंदाया जाता, अर्थात् गोरधन की पूजा करने की सारी कसर निकाल ली जाती। पूजा हो जाने के बाद स्त्रिया गाती-बजाती अन्त पुर मे चली जाती। राजस्थान मे, विशेष कर सलमाडा मे, हर त्योहार के दिन सासु, ननद और जेठानी के सामने पाच रुपया रखकर पगे लागना आवश्यक समझा जाता है, जिस पर बडी-बूढिया बहू को आशीर्वाद देती—"सीली हो, सपूती हो, बूढ सोहागन हो, सातपूत की मा हो।"

मकरसक्रान्ति–मकरसक्रान्ति भारत के और स्थानो के हिन्दुओ मे भी अपना विशेष स्थान रखती है, लेकिन राजस्थानी रनिवास मे तो उस दिन से कई वार्षिक व्रत शुरू हो जाते है, इसलिए उसका और भी महत्त्व है। भिनसारे बहू उठती है, और 'सूती सेहज जगाणा' (सूती शैया जगाना) की रसम अदा करती है। सास-ससुर मीठी नीद मे सोये रहते है, उस ममय बाजे-गाजे के साथ बहू उनके शय्या-कक्ष के द्वार पर पहुँचती। दोनो उठ बैठते। उनके मामने मुहर या पाच-पाच रुपये रखकर मिठाई बाटी जाती। जेठ को भी पाचो कपडे तथा रुपये की भेट दी जाती। जेठानी को चाहे घाघरा-ओढ़नी और सारे ही कपडे रुपये के साथ भेट किये जाय, लेकिन उसे 'जेठानी को काचली' (अर्थात् जेठानी के लिए चोली) देना कहते है। 'देवर को घेवर, और देवरानी को काचली' भेट की जाती। यह जरूरी नही है,

कि सभी की भेट-पूजा हर साल की जाय। वह एक-एक साल एक-एक की हो सकती है। ननद के सामने भेट की चीजो के साथ चादी के कटोरे मे खीर भरकर उसमे भेट की मुहर डाल कर भाभी पूछती—"खूटी चीर कटोरे नीर। बताओ बाईसा आप रो वीर।" इस पर ननद अपने भाई को बाहर से बुलाकर उसका हाथ पकडे हुए कहती है—"खूटी चीर, कटोरे नीर। देखो भाभी म्हारो वीर।"

मकरसक्रान्ति का दूसरा नाम तिलसक्रान्ति भी है। उस दिन तिलो के खाने और दान करने का बडा महातम है। काले-सफेद तिलो के लड्डू बना लेते है, जिन्हे ब्राह्मणियो और नौकरानियो मे बाटते है। रेवडी और गजक-जैसी तिलवाली मिठाइया बाजार से मगा ली जाती है। पूर्वी उत्तर-प्रदेश और बिहार मे मकरसक्रान्ति को 'खिचडी' कहते है। राजस्थान मे इसे 'खिचडा खाना' कहते है। बाजरा कूटकर मूग की दाल के साथ दोपहर को खिचडा बनाया जाता है, जिसके साथ कढी और घी का होना भी आवश्यक है। राजस्थानवाले 'खिचडी के चार यार, दही-पापड-घी अचार' के ब्रह्मवाक्य को नही मानते। मकरसक्रान्ति के दिन वहा मूली खाने मे बहुत धर्म माना जाता है। शायद साग-सब्जी खाने और दान देने का भी इस दिन कभी बडा महातम माना जाता था, इसीलिए सामर्थ्य अनुसार बडे लोग मालणो (कुजडिनो) का चार-चार पाच-पाच छावडा (टोकरा) साग लुटा देते है। उस दिन छोटी लडकिया सूर्य की पूजा करती है—कलसी मे पानी, हाथ मे चावल ले सूर्य के सामने अर्घ देती है। कोई-कोई इस व्रत को दूसरी सक्रान्ति तक प्रतिदिन पूरा करती है।

वसन्त झेलणा आदि और भी कई तरह के प्रचलित व्रत है, जिनका उल्लेख पुराणो या दूसरी ब्राह्मण-विधियो मे नही मिलता, यद्यपि उनके उद्यापन मे दिये जानेवाले दान ब्राह्मणियो या ब्राह्मणो को ही मिलते है। राजस्थान की अन्त-पुरिकाओ मे प्रचलित कुछ और त्योहार निम्न प्रकार है—

बसन्त—माघ सुदी पचमी को वसन्तपचमी(श्रीपचमी)सारे उत्तर-भारत मे प्रसिद्ध है। इसके उपलक्ष मे कुछ पूजा आदि भी की जाती है। राजस्थान मे पहले ही से जौ बो दिये जाते है, जिनकी उगी हुई पौधो (जोहोरी) को थाली मे सजा शिर पर रखकर ढोलणिया रानी या ठाकुरानी के पास आती है, और थाली को उनके सामने रख वही बैठकर गीत गाती है। रानिया-ठाकुरानिया कुमकुम से वसन्त की इस पौध को पूजती है। फिर उनमे से कुछ पत्तियो को अपने चडो मे डाल लेती है। ढोलणिया फिर वसन्त के गीत गाती है। पूजा करते समय थालियो मे दो या पाच रुपये यथा-श्रद्धा, यथा-प्रसन्नता रख दिये जाते है। वसन्त का दिन राजस्थान मे

फागुन की सूचना देता है। उसी दिन होली के लिए डाडा गाड दिया जाता है, और चग (डफ) लेकर पुरुष धमाल (डोरिया) गाने लगते है। जिस वक्त होली का डाडा खडा हुआ हो, उम समय पीहर या सासरे जाना जनपुर मे शुभ नही माना जाता। जरूरी हो, तो होली के दिन घर से बाहर किसी धर्मशाला या और जगह बिताकर अनिष्ट के निवारण करने का प्रयत्न किया जाता है।

आवला-एगारस--पूर्वी प्रदेशो मे आवले का महातम कार्तिक मे माना जाता है, और उस समय आवले के नीचे भोजन करना-कराना बडे पुण्य की बात समझी जाती है। राजस्थान मे फागुन बदी एकादशी को 'आवला-एगारस' कहते है। वहा आवले के नीचे खाने-खिलाने का कोई महातम नही। हा, कुछ दिन आवले की पूजा जरूर करते है।

शिवरात्रि--फागुन कृष्णा त्रयोदशी (शिवरात्रि का) महात्योहार है। उस दिन व्रत रखकर स्त्रिया फलाहार करती है, जिसे शागार (शाकाहार) कहते है। आलू का हलवा, गाजर का हलवा, बादाम का हलवा--इस प्रकार तरह-तरह के हलवे बनते है। सिंगाडे की पूडिया भी तैयार की जाती है। दोपहर के करीब शिवजी की पूजा की जाती है, जिसमे प्योदी (कलम) वाले बेर, मूली की मोग-रिया, शोगरी, बेलपत्र शिवजी की कुण्डी पर चढाते है। ज्यादा भूख हो, तो पूजा से लौटते ही शागार कर लिया जाता है, नही तो चार-पाच बजे भोजन करते है। रात को सारी रात जागरण करने का बडा महातम है, और इसके लिए रात-रात स्त्रिया भजन गाती है। रनिवास की महिलाएँ पर्दे के कारण शिवालय नही जा सकती, इसलिए उन्हे शिवरात्रि की पूजा रनिवास मे ही करनी पडती है। शिव-रात्रि के दूसरे दिन सबेरे माड निकाला साधारण चावल पकाया जाता है। उस दिन सलमाडा-जैसे कितने ही प्रदेशो के रनिवासो मे जोगनो को अन्त पुर के भीतर नही जाने देते। जनपुर मे उनकी गति अबाध है। जोगन के खप्पर मे भात भर दिया जाता है। एक लाख का चूडा, गुलाबी या पीला रगा दो हाथ कपडा तथा कुछ पैसे जोगन को दे दिये जाते है। उस दिन मीठे या फीके चावल के खाने का महातम है।

लूर-लेना--लूर-लेना फागुन के गीत और नाच को कहते है, जिसका मार-वाड की स्त्रियो मे काफी रवाज है। यह फागुन के हलके-फुलके नाच और गीत शहरो और गावो, कुटियो और महलो मे सर्वत्र होते है। दस-दस, पन्द्रह-पन्द्रह स्त्रियो की दो मण्डलिया बनकर आमने-सामने खडी हो जाती है। फिर एक मण्डली ताली बजाती कुछ कूदती हुई सामने की मण्डली के पास पहुच उसी तरह गीत गाती,

नृत्य-मुद्रा मे लौट जाती है। दूसरी मण्डली भी वैसा ही करती है। लूरलेने की गीत फागुन मे गाये जानेवाले दूसरी जगहो की गीतो की तरह अधिकतर अश्लील होते हैं। काम से निश्चिन्त होकर यह नृत्य-गीत आधी रात के बाद तक होते रहते है। पुरुष भी इन्हे देख सकते है। कुवारी लडकिया अपना अलग लूर लेती हैं। वैसे लडकिया, बूढिया, तरुणिया और प्रौढाए इच्छा होने पर सभो इस नृत्य मे शामिल होती हैं। इस समय गाये जानेवाले गीत वृन्दावनी सारगराग की लय मे होते है। यह कोई आश्चर्य की बात नही है, क्योकि सभी रागो और रागिनियो के उद्गम जनगीत है। यदि सासु की दया और उदारता प्राप्त हो, तो रानिया और ठाकु-रानिया भी लूर लेती है। हा, उनका गाना-नाचना कुछ धीमी गति और धीमे स्वर से होता है।

होली--फागुन की पूर्णिमा को होली जलाई जाती है। जसपुर-जनपुर मे व्यक्तिवाद ज्यादा है, और वहा हर घर अपनी अलग होली लगाता, लेकिन सलमाडा मे ऐसा नही होता। एक होली ठाकुर के लिए गढ के फाटक के सामने लगती है, और दूसरी नगर या गाववालो की किसी रेत के टीले पर। इसके लिए गोबर के गोले छेद कर पहले ही से बडकुले सुखा लिये जाते हैं। हर एक घर के हर एक पुरुष के लिए एक-एक गोबर की गोल ढाल भी बनाई जाती है। इन गोबर के बडकुलो की माला बना ली जाती है। फिर उन्हे कच्चे सूत की गोलियो (कूकडी) और तीन-चार हलदी की गाठो के साथ थाल मे रखकर स्त्रिया उस दिन होली पूजने जाती है। मारवाड मे हरे गेहू कि बाले भी साथ ले जाती है। अन्त पुर की रानिया-ठाकुरानिया अपनी ओर से इस पूजा-सामग्री को नौकरानियो द्वारा होली पूजने के लिए भेजती है। इसी समय मर्द चग लिये धमाल गाते वहा पहुचते है। पूजा कर लेने के बाद होली मे आग लगा दी जाती है, बडकुलो को उसमे डाल दिया जाता है, लेकिन होलो की स्थापना के लिए जो लकडी का (डाडा) पहले पहल गाडा जाता है, उसे सुरक्षित निकालकर अगले साल के लिए रख लिया जाता है। हलदी की गाठ और कूकडी भी लौटाकर घर लाई जाती है; जो गनगौर की पूजा मे काम आती है।

शीतला-पूजा--गनगौर की पूजा के बारे मे अन्यत्र कहा जा चुका है। इसी सोलह-सत्रह दिन की पूजा के भीतर ही चैत बदी ७ को शीतला की पूजा आती है। यह वही पूजा है, जिसे पूर्वी उत्तर-प्रदेश और बिहार मे 'बसियोडा' कहते है। बासी भोजन करने के कारण उसका वहा यह नाम पडा। शेखावाटी मे 'वासेडा' कहते है और दूसरी जगहो पर इसे 'शीलसातम' कहते है। शील का अर्थ है ठण्डा

र्थात् ठण्डा भोजन। जनपुर मे यह ठण्डा भोजन चार-चार पाच-पाच दिन पहले बनने लगता है, नही तो उसी पहली रात को गुलगुले, मीठी पूडिया, फीकी पूडिया, रोटी तथा दूसरे भोजन-पकवान बनते है। सलमाडा मे गुड डालकर साबित बाजरे का मीठा भात पकाया जाता है। इस त्योहार का मुख्य प्रयोजन है बाल-बच्चो को शीतला या चेचक के प्रकोप से बचाना। बच्चो की माए बल्कि होली के दिन ही से बासी खाना खाने लगती है। बाजरे की राब (राबडी) बनाई जाती है। खाटी राबडी के बनाने का कायदा है—बाजरे के आटे को पानी मे फेटकर धूप मे या चूल्हे के पास रख दिया जाता है। शाम को ऊपर का निथरा पानी निकालकर उसे उबालते है, फिर गाढे आटे को उसमे डाल देते है। पन्द्रह-बीस मिनट पकाने के बाद खाटी राब तैयार हो जाती है। इसे दूसरे स्थानो मे खाटी लापसी या डोवाकी राबडी भी कहते है। छाछ मे फेटकर नमक डालकर इसे खाते है। गर्मियो मे यह अच्छा मालूम होता है। बाजरे को कम पानी मे भिगोकर ओखल मे डाल-कूटकर उसके छिलके को दो-तीन बार फटककर भी छाछ मे पकाकर खाटे की राब तैयार की जाती है। राब को रात के समय दूध के साथ और सबेरे दही या छाछ के साथ नमक डालकर खाते है। जनपुर मे इसके बनाने मे बाजरे की जगह मक्की इस्तेमाल करते है।

शीतला-सप्तमी के दिन स्त्रिया शीतला मा के गीत गाती है। अन्त पुर की लौडिया जो निरन्तर काम नही करती, बल्कि विशेष समयो पर सेवा करने आती है, उन्हे 'खालसे की माणसा' कहते है। वह इस समय आकर आठ दिन तक बराबर शीतला मा के गीत गाती है। आज चेचक के टीके के कारण शीतला मा का पुराने युग-जैसा रोब नही रह गया है, नही तो किसी समय इस त्योहार को बडी गम्भीरता के साथ मनाया जाता था। तीन पत्थर रखकर उनमे से एक को शीतला, दूसरे को ओरी (छोटी) और तीसरे को अचपडा मान तीनो प्रकार की शीतलाओ की पूजा गढ के भीतर ही हुआ करती थी। उस दिन की पूजा के लिए जो खाद्य-सामग्री तैयार होती, उसमे बाकी सबको शूचा रक्खा जाता, लेकिन राबडी मे ओठ लगाकर उसे जूठा कर लेना जरूरी समझा जाता। बिना नमक की एक कटोरा राबडी और चार रोटिया शीतला मा के लिए विशेष तौर से तैयार की जाती। तीनो पत्थरो की पूजा सबेरे की जाती। पहले उन्हे ठण्डे पानी से ठण्डा कर लिया जाता, फिर कुमकुम की बिन्दी लगाके राबडी, मक्खन और कच्चे दूध का भोग लगता। ठाकुरानिया और रानिया पर्दे के कारण शीतला-स्थान नही जा सकती, लेकिन उनके भी बच्चे होते है, जिनके लिए शीतला का भय बहुत रहता है, इसलिए

पूजा मे वह अनुपस्थित कैसे रह सकती है ? वह शीतला मा की पूजा घर मे ही कर लेती है और साथ ही सात-आठ थालो मे भोग और पूजा की सामग्री सजाकर जरी के थालपोस से ढाक कोनो मे चादी के झुमके लगा लौडियो को सोने के आभूषणो और अच्छे-अच्छे कपडो से सजाकर थालो को उनके शिर पर रख नगाडो, बैण्डबाजो, निशान और पलटन के साथ गाते-बजाते शीतला के मन्दिर की ओर भेजती है। वहा भी शीतला को ठण्डा करने के लिए दो-तीन मशक पानी डलवाया जाता है। शीतला या चेचक की बीमारी मे रोगी को ताप बहुत सताती है, इसलिए शीतला को ठण्डा करने की बडी अवश्यकता होती है, इसीलिए उसे शीतला कहते भी है। शीतला की पूजा के बाद वहा से एक-एक लोटा पानी लाकर हर एक कोठरी और कमरे मे उसका छीटा लगाकर कहा जाता है--"ठण्डा झोला झोका दीजो म्हारी मा।" शीतला-सातम को चूल्हा नही जलाया जाता, ठण्डा ही खाना खाया जाता है। मा के डर के मारे दूध तक को भी गरम नही किया जाता बच्चो की माताए डर के मारे एक-एक बात को बडी श्रद्धा और भय से करती है ।

गणगौर--राजस्थान मे गणगौर का त्योहार भी बडे तडक-भडक से किया जाता है। यह होली से अगले दिन शुरू होकर सोलह दिन चैत सुदी ३ तक चलता रहता है। रात को होली जलती है, सुबह को रावलो की नौकरानिया ढोलणियो के साथ गाते-बजाते होली जलने की जगह जाती है, और वहा से राख लेकर उसी तरह गाते-बजाते रनिवास मे आती है। पानी डालकर राख की सोलह पिण्डिया बनाके चौडे मुह के मिट्टी के बर्तन, छावडी या टोकरी मे रख, ऊपर की ओर कुम्-कुम और नीचे काजल की टिकी लगा दी जाती है। रानिया और ठाकुरानिया अपने हाथो यह विधि करती है ।

इसके बाद नौकरानिया गाते-बजाते बडे धूमधाम से दूब लेने जाती है। उनके हाथ मे छोटे-बडे तीन-चार गडवे होते है। किसी बाग या कुए पर जाकर वह दूब तोडती है। निचले गडवे मे आधा पानी भरकर उसके मुह पर दूब को सजा दूसरा गडवा रख देती है। इसी तरह बाकी गडवो को सजाकर सबसे ऊपरवाले छोटे गडवे के मुह पर दूब को सजाकर फूल से भर सुन्दर गुलदस्ता-सा बना देती है। फिर चारो गडवो को दो स्त्रिया एक ही लम्बाई-चौडाई और प्राय: एक ही उमर की अपने शिर पर रखती है। उनकी दोनो तरफ हथियारबन्द दो-दो सन्तरी चलते है। वैसे अन्त पुर की नारिया बिना हाथ लगाये ही सचमुच गजगामिनी बन अपने गडवो को लेकर चल सकती है, लेकिन गणगौर का गडवा यदि गिर जाय,

तो इसे भारी असगुन माना जाता, इसलिए वह सारे रास्ते अपने दोनो हाथो को गडवे से लगाये रहती है। घण्टो ऐसा करने मे उनका हाथ जरूर दुखता होगा, लेकिन क्या करे, रानी का हुक्म, और असगुन का भय। इसे कहने की अवश्यकता नही, कि गडवा शिर पर रखने के लिए अन्त पुर की सबसे सुन्दर दो परिचारिकाए चुनी जाती है, और उनके शरीर मे कीमती वस्त्र और भूषण रहते है। ऊपर की ओर उनके बाजुओ से दो-दो हाथ लम्बे फुदने (लूम) लटकते रहते है, जिनमे ताजा तासबादले का काम होता है।

अन्त पुर के दरवाजे पर पहुचने पर डोढी (द्वार) खोलाने का विशेष गीत गाया जाता है। रास्ते मे आते वक्त आगे-आगे ढोलणिया गीत गाती है और पीछे से अन्त पुरिकाए बेताल का गीत सुनाती चलती है। डोढी के भीतर जाने पर रानी साहिबा आगे बढकर शिर से गडवा उतारती है। फिर सोलह पिण्डियो के पास पूर्व की ओर मुह करके दीवार पर कुमकुम और काजल की सोलह टिकिया लगाती है और दोनो हाथो मे दूब को झाडू की तरह सजाकर दूध-दही-पानी की कुण्डी मे--जिसमे एक कौडी और एक साबुत सुपारी पहले ही से रक्खी रहती है--घोल-घोलकर सोलह छीटे देकर पूजती है। यदि रानी या ठाकुरानी का अपनी सौत या जेठानी-देवरानी से बहुत प्रेम होता है और चाहती, कि जन्म-जन्मान्तर तक उनका साथ न छूटे, तो इस समय गणगौर की पूजा दोनो मिलकर करती है। पूजा करते समय स्त्रिया गणगौर के गीत गाती है। रोज सबेरे बिना पानी पिये गणगौर की पूजा इसी तरह चलती है। आठ दिन तक केवल राख की पिण्डियो की पूजा होती, शीलसातो (चैत बदी सप्तमी) आती, तो लौडिया कुम्हार के यहा काली मिट्टी लाने के लिए उसी तरह बाजे-गाजे के साथ जाती। इस मिट्टी से दो जोडे स्त्री-पुरुष की मूर्तिया बनाई जाती है। अन्त-पुरिकाए कुशल कलाकार नही होती, इसलिए यह मूर्तिया भद्दी होती है। यह कहने की आवश्यकता नही, कि एक जोडे को शिव-पार्वती कहा जाता और दूसरे जोडे को माली-मालन। पुरुष के शिर पर साफा-सा बाध दिया जाता, और स्त्री के चारो ओर घाघरे की तरह कपडा लपेट दिया जाता। माली-मालन के शिर पर दो मुकुट बनाकर चिपका दिये जाते है। फिर इन दोनो जोडो को पिण्डीवाली टोकरी मे रख दिया जाता। अब इनकी भी पूजा होने लगती है। काली मिट्टी लाने के दिन ही एक बर्तन मे जौ या गेहू बो दिये जाते है, जिनको बराबर सीचते रहते। धीरे-धीरे उनके जवारे उग आते है। अब रात को जवारे का, सबेरे को गणगौर का गीत होता है।

तीज (चैत सुदी ३) के दिन पूजा खतम होती है। अब गणगौर का जलूस निकलता है। लकडी की एक सुन्दर स्त्री-मूर्ति बराबर के लिए गणगौर बनाकर रक्खी रहती है। उसे चौकी पर बिठाते, कीमती से कीमती कपडे की घाघरा-ओढनी पहनाते, कुर्ती-काचली लगाते। सोने और जडाऊ जेवर से गणगौर को अलकृत किया जाता है। शाम को चार बजे गणगौर के जलूस मे महाराजा चार घोडो की बग्गी पर चलते। बग्गी मे चवर और मोरछल डुलानेवाले भी बैठ जाते है। गानेवाली डावडिया और जसपुर की प्रसिद्ध रण्डिया भी साथ होती है। जलूस जहा रुकता, वही रण्डिया अपना नाच-गाना दिखाती। गणगौर शहर से बाहर ले जा वहा घुडदौड होती। गणगौर फिर वहा से राजा के आगे-आगे लौटती। उसे मीठी चीजे खिलाई जाती, नाच-गाना होता। फिर एक कमरे मे गणगौर को अगले साल के लिए रख दिया जाता। जसपुर मे यह यात्रा दो दिन निकलती है। गणगौर की सुन्दर मूर्ति के लिए कहावत है—"गणगौर-सा मुह।" गणगौर उसी भूभाग मे धूमधाम से मनाई जाती है जहा चौथी सदी ईसवी तक यौधेय आदि गणराज्य थे। क्या यह गण की इष्ट देवी का त्योहार है ?

घुडला---शीतला-सातम की तरह चैत सुदी १४ को घुडला का त्योहार मनाया जाता है। कुम्हार एक मझोले आकार चौडे मुह का ऐसा घडा बनाता है, जिसमे चारो ओर बहुत-से छेद होते है। इसी को घुडला कहते है। घुडले के भीतर दीये को ठीक तरह से रखने के लिए मुट्ठी-दो-मुट्ठी जौ या गेहू रख दिया जाता है। उस पर तेल-भरा दीया जलाकर रख देते है। शाम को रोशनी के समय अच्छे-अच्छे कपडे और जेवर पहनकर कोई लौडी घुडले को अपने शिर पर रखकर नगर मे घूमने के लिए निकलती है। सारे गाव मे घुडला फिरता है और लोग घुडले मे अपनी शक्ति के अनुसार रुपया-दो-रुपया या पाच रुपया डाल देते है। अधिक धनी सेठ लोग रानी या ठाकुरानी के घुडले मे और भी अधिक द्रव्य रख देते है। अन्त पुर मे आने पर रानिया और ठाकुरा-निया, राजा और ठाकुर भी उसमे रुपये डालते है। ठाकुरानिया दीये मे तेल भी डालती है। इस तरह यात्रा हो जाने के बाद जनपुर मे तो तलवार से घुडले की गर्दन काटकर कुए मे फेक देते है, लेकिन सलमाडा मे घुडले के भीतर की चीजे निकालकर उसे सम्हालकर रख दिया जाता है। इस त्योहार को क्वारियो का पर्व समझा जाता है। परम्परा कहती है, घुडले खा नामक कोई मुसलमान सरदार था, जो किसी राजपूत की लडकी को हर ले जा रहा था। राजपूतो ने आक्रमण करके उसकी गर्दन काट ली। घुडले खा की औरतो ने रोते-चिल्लाते

हुए कहा—"हाय ! हमारा खसम बिना नाम-निशान का ही मारा गया।" इस पर राजपूतो ने उसका शिर काट लिया और कहा, कि हम इसका हर साल जलूस निकाला करेगे, इस प्रकार तुम्हारे खसम का नाम बुझने नही पायेगा। कहते है, वही घुडले खा यह घुडला बन गया। इस कथानक मे कुछ गलती हो सकती है, क्योकि छेदवाले घडो मे दीया रखकर पूजा करना भारत के और भागो मे भी देखा जाता है।

आखातीज--वैशाख सुदी ३ की अक्षय तृतीया ही यह आखातीज है। सलमाडा मे आखातीज का विशेष रवाज नही है, लेकिन मालर मे यह सबसे बडा त्योहार है। इस दिन काल-अकाल भाग्य-अभाग्य के लिए सगुन लिया जाता है। वैशाख की अमावस्या के दिन राजाओ और ठाकुरो के यहा गद्दी के पास सातो अनाजो की कूडिया (राशि) लगा दी जाती है, जो कि आखातीज तक वैसी ही बनी रहती है। अमावस्या से ही अमल (अफीम) घोलना शुरू हो जाता है। अफीम को पानी मे घोल कपडे मे रख उसे धीरे-धीरे टपकाकर छान लेते है। यह छना हुआ अफीम-जल या अमल पानी चादी की छोटी-बडी कटोरियो मे थाल के अन्दर रख दिया जाता है। मेवो, बताशो से भरे हुए थाल भी तैयार रक्खे जाते है। राजा या ठाकुर अपनी हथेली मे अमल-पानी डालकर बडे-बूढो-बच्चो सबको देते है। नौकर तक भी अन्नदाता के हाथ से ही अमल-पानी को चाटते है। अमल-पान करने के बाद मुट्ठी-मुट्ठी मेवे-बताशे लोगो को दिये जाते है। जिस तरह राजा और ठाकुर बाहर अमल-पान कराते है, उसी तरह अन्त पुर मे रानिया ठाकुरानिया आगत स्त्रियो को अपने हाथ से अमल चटाती है। खूब गाना-बजाना होता है। उस दिन खाने के लिए गेहू को कूटकर चने की दाल के साथ खिचडा पकाया जाता है। गुड डालकर गेहू की राबडी, गलवानी, बाटी-फुलके भी खाने के लिए तैयार किये जाते है। इसमे कोई व्रत या पूजा नही होती। बस यह खाने-पीने का पर्व है। दरबार मे आये किसानो को भी गलवानी, खीच और गोली रोटी खिलाई जाती है। इन्ही चीजो को राजा-महाराजा लोग भी उस दिन खाते है। सगुन लेने के लिए गाय या भैस का गोबर लाकर लोहे या पत्थर की पसेरी पर रख देते है। फिर जिस बात के लिए सगुन निकालना हो, उसके सफल या असफल होने की मनसा रखते एक लोटे को गोबर पर रखकर दबाते है। लोटा खाली होता है। यदि बात सफल होनेवाली होती है, तो लोटा उठाने पर गोबर के साथ पसेरी भी उठ जाती है, नही तो वह नही चिपकती। गौरी ने एक बार अपनी ननद के लिए सगुन किया था, तो पसेरी लोटे मे चिपक गई और गौरी

उसे आठ-दस हाथ तक लिये फिरी। किसान लोग इस दिन अपने जानवरो और फसल के बारे मे भी सगुन निकालते है।

निर्जला एकादसी—यह जेठ सुदी ११ का व्रत है, जिसे बिना मुह मे पानी डाले भूखा रहकर किया जाता है। उस दिन सलमाडा के ठाकुर और बडे-बडे लोग मिट्टी के ताजे घडे के ढक्कन पर एक-एक खरबूजा और भीतर दो-दो ओले के लड्डू रख सवा बित्ता सफेद कपडे के साथ कुछ पैसो को रखकर ब्राह्मणो को ऐसे चालीस-पचास घडे दान देते है। जब बर्फ सुलभ नही थी, तो ओले के लड्डू मिट्टी के घडे के पानी मे डालकर बर्फवाले शरबत की तरह पिये जाते थे। निर्जला एकादसी का व्रत विधवा-ठाकुरानिया ही अधिक करती है।

देवसोवणी एगारस--निर्जला से एक महीने बाद आषाढ सुदी ११ को होने-वाली एकादसी देवसोवणी एकादसी है। उस दिन देवता सो जाते है, और फिर वह कातिक सुदी एकादसी को ही चार महीने बाद जगते है, इसीलिए उस एका-दसी को देव-उठान कहते है। इस दिन कुवारी लडकिया अपनी गुडियो को पानी मे फेक देती है, और फिर चार महीने तक के लिए उनके गुडियो के खेल बन्द रहते है। तालाब वर्षा होने के कारण उस समय भरे रहते है, वह गुडियो को उनमे भी डालने के लिए ले जाती है। साथ मे गेहू-चने की घूघरी भी ले तालाब पर जाकर खा लेती है। यदि तालाब मे पानी नही रहा, तो गुडियो को कुओ मे फेक देती है। देव-सोवणी से देव-उठान तक नया चूडा भी नही पहना जा सकता।

सावन की तीज—सावन शुरू होते ही झूले लग जाते है। पूर्वी प्रदेशो से राज-स्थान की तीज मे कुछ विशेषता है। यहा व्रत नही रक्खा जाता, और गणगौर की तरह तीज की मूर्ति का जलूस निकाला जाता है। वही गणगौर की काठ की मूर्ति सावन के लहरिये कपडे को पहनाकर तीज की बना दी जाती है। बरसात का महीना होने से तालाबो मे खूब पानी रहता, जिसमे नारियल चढाये जाते और तैरनेवाले लडके कूदकर नारियल लूटते है। बन्दूको का निशाना भी तीज के समय लगाया जाता है। गाना-बजाना भी उसी तरह होता है। अन्त पुरिकाये पर्दे के कारण इसका आनन्द उतना नही ले सकती, क्योकि उनको अपने झूले हरे-भरे वृक्षो पर न टाग घरो के भीतर कडियो मे लगाने पडते है। मारवाड मे अच्छे सास-ससुर अपने बहू-बेटे को झूले पर खडा करके झुलाते है, पास मे खडी लौडिया गाना-बजाना करती है। बेटे-बहू पर निचरावल करके रुपये भी बाटे जाते है। इस समय झूलकर जब कोई स्त्री नीचे उतरना चाहती है, तो उसे रोककर कहा जाता है—"अपने पति का नाम बतलाओ, तब उतरने पाओगी।"

यही एक समय है, जब कि स्त्री अपने पति का नाम ले लेती है, सो भी बडे कविता-य ढग से—

"छोटी-मोटी नगरी, गढपत गाव ।
बापजी शाका बेटा सिह नाउ ।"

"कोरे कागज अग्रेजी कायदा ।
वह तो यहा है नही, नाम लेने मे क्या फायदा ?"

"डब्बी मे डब्बी, डब्बी मे डोरी ।
अमुक सिह नाम, मै उसकी गोरी ।"

"हाथ मे गजरा, म करू अमुक सिह से मुजरा ।"

कुवारी लडकिया उस समय निम्न प्रकार से जवाब देकर उतरने पाती है—

लसरक लोडी (लोढी), लसरक गाव ।
झट आवे लाडो, झट लू उसका नाव ।

सावन की तीज खाने-पीने और मौज करने का पर्व है । उस दिन हलवा, लापसी तथा दूसरे तरह-तरह के पकवान बनते है । माताए अपनी लडकियो को मिठाइया और दूसरी चीजे भेजती है, जिसे सिंजारा कहते है । नई शादी होकर आई बहू के पीहर से लहरिया चूनरी, घाघरा, कुर्ती-काचली और घेवर आता है । पहली बार आने पर सिगारा ज्यादा होता है, और सास के लिए भी कितनी ही चीजे आती है ।

रक्षाबन्धन—सावन की पूर्णिमा को रक्षाबन्धन का त्योहार होता है, इसे मारवाड मे राखडी और शेखावाटी मे राखी कहते है । बाप और भाइयो के हाथ मे उस दिन राखडी बाधी जाती है । पीहर भी कपडे के साथ राखी भेजी जाती है, जो हर एक बाप, भाई और भौजाइयो के लिए अलग-अलग होती है । उसके साथ मिठाई और और कितनी ही चीजे जाती है, जिसे दूना करके वहा से लौटाते है । इस दिन लडकिया और ब्राह्मण राखी बाधने के लिए आते है, उन्हे दक्षिणा मिलती है ।

सातूड़ी तीज—भादो बदी ३ की इस तीज को काजडी तीज या बडी तीज भी कहते है । मारवाड मे इस दिन स्त्रिया व्रत रखती है और तीज के चाद को देखकर सत्तू खाने का महातम मानती है । लेकिन यह सत्तू साधारण सत्तू नही

होता, बल्कि घी मे भुने गेहू के आटे या बेसन मे मीठा डालकर लड्डू बना लेते है, उसी को सत्तू कहकर खाते हैं। सत्तू के लड्डू बाटे भी जाते है।

राजस्थान की नारिया और भी बहुत-से व्रत करती है, जिनको उनकी भाषा मे 'झेलणा' (सहना) कहा जाता है। सभी झेलणे मकरसक्रान्ति से आरम्भ होते हैं।

मौन झेलणा—सूर्य डूबने से पहले राम-राम कहकर स्त्री मौन धारण कर लेती है। आरती के समय सात-आठ बजे रात को हाथ जोडकर चुपचाप मौन छुडाने के लिए किसी के सामने खडी हो जाती है। लेकिन मौन वही छुडा सकती है, जो कि उसकी विधि जानती है, अर्थात् उस मन्त्र को जानती है, जिसके पढने से मौन छुडाया जा सकता है। वह मन्त्र है—

"झालर बाज्या घण्टा बाज्या, बाज्या ताल-मजीरा।
सिरीकिसनजी कासे बैठ्या, चिडी-चिडकला बासे बैठ्या।
उठो राणी, पियो पाणी।
मौनिया की मौन खुल्ली, बोलो मुन्नी राम-राम।"

बस मन्त्र सुनते ही मौनिया अपना मौन छोडकर बोलने लगती है। अगर किसी दिन बीच मे भूलकर बोल दे, तो उसका प्रायश्चित्त है एक दिन का निराहार। साल भर का व्रत कर लेने पर चादी का घडियाल-झालर, चादी का डका, चादी के सात सितारे बनवाकर ब्राह्मण को दे दिया जाता, और इस प्रकार व्रत का उद्यापन हो जाता है।

तारादातन झेलणा—भिनसार को, जब कि आकाश मे अभी तारे होते हैं, तभी उठकर दातवन करने का व्रत 'तारादातन झेलणा' कहा जाता है। यह भी एक मकरसक्रान्ति से दूसरी मकरसक्रान्ति तक चलता है। अगर किसी दिन नीद नही खुली, और तारो के डूब जाने के बाद दातवन करना पडा, तो उसका प्रायश्चित्त एक दिन का निराहार है। साल भर निर्विघ्न व्रत समाप्त हो जाने पर चादी का दातवन और चादी के सात तारे ब्राह्मणी को देकर व्रत समाप्त किया जाता है।

सामी रोटी झेलणा—यह भी साल भर का व्रत है। सुबह दस-ग्यारह बजे गेहू की रोटी पर घी-शक्कर, लड्डू या दही रखकर ठाकुरानी अपने कमरे से बाहर निकलती है, और जो सामने आता, उसे रोटी दे देती हैं। सामने रोटी देने के कारण इस व्रत का नाम 'सामी रोटी झेलणा' पडा। साल भर व्रत करने के

बाद उस दिन तीन सौ साठ रोटिया बनाई जाती है। हलवा, पूवा या घी-शक्कर के साथ इन रोटियो को ब्राह्मणियो मे बाट दिया जाता है।

काजलटीकी झेलणा—यह झेलणा सामी रोटी की तरह ही बहुत कठिन नही है। सुबह-सुबह उठकर सात औरतो को शिर मे ईंगुर की सात टिकिया लगानी पडती है। किसी दिन यदि सख्या कम हो जाती, तो उसे दूसरे दिन पूरा करना पडता है। एक मकरसक्रान्ति से दूसरी मकरसक्रान्ति तक यह व्रत चलता है। व्रत पूरा होने के दिन चादी या लकडी के सिदोरे मे ईंगुर (हिगलू) रख चादी के सात तारो के साथ ब्राह्मणियो को दे दिया जाता है।

धर्मराजजी की बात झेलणा—यह भी एक बडे महत्त्व का व्रत है। मरने के बाद हर एक आदमी को धर्मराज के पास जाना पडता है, जिनका ही दूसरा नाम यमराज है। यदि धर्मराज को पहले से सन्तुष्ट कर लिया जाय, तो नरक में जाने का भय नही रहता। धर्मराज की एक कहानी है, जिसे व्रत रखनेवाली स्त्री रोज सुन लिया करती है। वही धर्मराज की बात है। मरने के बाद जब यमदूत उस स्त्री को धर्मराज के सामने ले जाते है, तो धर्मराज स्वय गवाह बनकर कह देते है—"हा, इसने मेरी बात सुनी है" और फिर न्यायाधीश बनकर उसे स्वर्ग मे भेज देते है। यदि साल भर यह झेलणा बिना नागा पूरा हो जाय, तो फिर यमराज से डरने के सारे कारण खतम हो जाते है। व्रत पूरा करते समय छाबडी मे ज्वार भर उसे घाघरे-लुगडी-चूडी-जूती के साथ ननद या जेठ की लडकी को प्रदान किया जाता है। ननद से भी ज्यादा जेठ की लडकी का महातम माना जाता है। कहावत है—"नणद जिमाई, जेठौती आगण आई।"—अर्थात् ननद के भोजन कराने मे जितना पुण्य है, उतना जेठ की लडकी के आगन मे पैर रखने भर से हो जाता है।

बाट बुहारना झेलणा—रास्ता सबके उपयोग की चीज है, इसलिए उसको ठीक-ठाक रखना एक सामाजिक धर्म है। जातको की कहानियो से पता लगता है, कि किसी समय इस देश में व्यक्तिवाद से ऊपर सामाजिक धर्म को माना जाता था। सडक तैयार करना, पुल बनाना, पान्थशालाए खडी करना जैसे कामो को लोग बहुत चाव से करते थे। 'बाट बुहारना व्रत' भी उसी तरह की सामाजिक सेवा का एक अवशेष है। पर्दे के भीतर घुटती रानिया-ठाकुरानिया बाट बुहारने के व्रत को नही कर सकती। यह काम उनकी नौकरानिया और दूसरी स्त्रिया करती है। बडे तडके ही झाड़ू लेकर घर से निकल पडती है, और अपने पास के रास्ते को कुछ दूर तक साफ कर देती है। यह व्रत भी साल भर का होता

है । व्रत पूरा कर लेने के बाद एक बुहारी और एक छावडी (झाडू-टोकरी) भगन को दे दिया जाता है ।

पति के पैर-खोलना झेलणा—यह पति-पूजा एक विशेष महत्त्व का व्रत है । सुबह के वक्त जब पति बाहर जाने लगते, तो एक गिलास या कटोरी के पानी मे उनके अगूठे को डुबाकर ले लिया जाता है, जिसे पत्नी चरणामृत बनाकर पी जाती है । साल भर तक बिना नागा इस व्रत को करना पडता है । किसी दिन पति देवता कही बाहर गये हो, ऐसे समय व्रत टूट न जाय, इसके लिए चरणामृत को पहले ही से शीशी मे भरकर रख लिया जाता है । साल भर व्रत कर लेने पर पति को सोने की अगूठी, धोती-साफा आदि भेट किया जाता है ।

सास-ससुर के पैर पूजना झेलणा—यह साल भर का व्रत भी मकरसक्रान्ति को आरम्भ होता है । रोज सास और ससुर को एक साथ बैठाकर बहू कुमकुम से उनका पैर पूजती है । ससुर या सास साल मे किसी दिन कही बाहर चले जाय, तो व्रत न टूट जाय, इसके लिए पैरो मे केशर लगाकर कपडे पर उनकी छाप उतार ली जाती है । जिस दिन दोनो मे से एक या दोनो अनुपस्थित रहते, उस दिन उनके पैर की छाप की पूजा कर ली जाती है । भूल या नागा होने का मतलब है, उस दिन भोजन से वचित रहना । व्रत पूरा हो जाने के बाद सोने की अगूठिया और कपडे सास-ससुर को भेट किये जाते है ।

अन्त पुरिकाओ का जीवन कितना बन्धन का होता है, उनके घूमने की परिधि कितनी सीमित होती है, और यदि वह पतिवचिता या उपेक्षिता हुई, तो जीवन बिताना कितना कठिन हो जाता है, इसे कहने की अवश्यकता नही । इसमे शक नही, कि समय-समय पर आनेवाले यह पर्व और त्योहार राजस्थान की चिर-बन्दिनी नारियो के कष्ट को कुछ हल्का करने मे सहायक होते रहे । रियासतो के खतम करने से पहले ही पश्चिमी हवा रनिवासो मे घुसने लगी, और महाराजाओ के थाल अब भोजनगृह की मेज और प्लेटो मे बदल चुके है, जहा कुर्सियो पर बैठे सास-ससुर और बेटी-बहू बिना किसी पर्दे और सकोच के भोजन करते है । इसका यह अर्थ नही, कि रानियो की सख्या कम की जाने का प्रयास होने लगा । वस्तुत इस 'सुधार' का यही उद्देश्य था, कि पूर्व के विलासमय जीवन को कायम रखते हुए पश्चिम के विलासपूर्ण जीवन से वचित न रहा जाय । इसका साकार रूप देखना हो, तो राजपूताना जाने की अवश्यकता नही । इन पक्तियो के लेखक ने तो मसूरी में ही उसे देख अपनी साध बुझा ली । एक तरुणी रानी कितनी ही बार सडको पर बिना पर्दे ही नही, बल्कि शिर-मुह खोले हुए अपनी परिचारि-

काओ के साथ घूमती दिखाई पडती है। उनके बाल कटे हुए है। मालूम होता है, कोई पाश्चात्य सिनेमा की तारिका हो, लेकिन बालो के साथ-साथ राजस्थानी घाघरा और चुनरी तथा ललाट मे सिन्दूर की लम्बी रेखा का होना वह अत्यावश्यक समझती है। पूर्व और पश्चिम का कितना सुन्दर 'सम्मिश्रण' है। घाघरे-चुनरीवाली पुरानी महिलाये तो इन्हे देख 'चोटी-काटी' कहकर गाली देती। लेकिन तो भी चोटी-काटी रानी साहिबा अपने घाघरे और चुनरी का प्रदर्शन करना अत्यावश्यक समझती है। तारीफ यह, कि वह अपने शरीर पर साडी कभी-कभी आने देती है, किन्तु अपनी परिचारिकाओ के शरीर पर नही। उनका शासन चले, तो शायद कम से कम अपने वर्ग की सभी नारियो के लिए कानून बना दे, कि चोटी कटवाकर घाघरा-चुनरी को राष्ट्रीय पोशाक के तौर पर अपनाये और कभी-कभी कोट-पैन्ट भी।

अध्याय ८

शिक्षा-दीक्षा

राजस्थान की अन्त पुरिकाओ के लिए पढना-लिखना बिलकुल अनावश्यक चीज समझा जाता था। बडी-बूढिया कहती—"काईं वठें कामदारो करणो है, जे बेटिया ने इत्ती पढाओ।" तो भी यह मानना पडेगा, कि अपनी मातृभाषा म चिट्ठी-पत्री लिख लेने भर के ज्ञान को बुरा नही समझा जाता था। उससे बढने पर 'हनुमानचालीसा' की बडी माग थी, क्योकि उसके पाठ द्वारा हनुमान्‌जी को प्रसन्न करके भूत-प्रेतो से बचने मे सहायता मिलती थी। गौरी की दादी-नानी अपनी बोली मे चिट्ठी लिख-पढ सकती थी, माता को गुणा-भाग भी मालूम था। वह 'रामचरित-मानस' का भी पाठ कर सकती थी। मा एक कदम बल्कि और आगे बढी थी, और वह 'गीता' तथा 'गगालहरी' का पाठ कर लेती थी। वर्तमान शताब्दी के आरम्भ मे अपनी लडकियो को स्कूल मे भेजने का रवाज नही था, और जब रवाज होने लगा, तो बूढिया कहती—"यह तो अपने हाथो अपनी लडकियो को बिगाडना है ।"

वर्ण-परिचय—६ साल की उमर मे सन् १९१४ मे गौरी को पढने के लिए बैठा दिया गया। बाबोसा के भी अध्यापक कैलास जोशी गुरु नियुक्त किये गये। उनका वर्ण-परिचय निम्न प्रकार तुकबन्दी मे शुरू हुआ—

कक्को कोट कडो। खख्खा खोणे चीरियो।
गग्गा गोरी गाय। घघ्घा जी को घट्टुला।
नन्ना खाणे चादो।

चच्चो चामणो की चच्चा। छछ्छा बिद्दा पोटलो।
जज्जा जेर वाणियो। झझ्झा झाड की लाकडी।
अण्डे खण्डो चादो।

टट्टा दोपोडी। ठठ्ठा ठेकर गाठडी।
डड्डा कूकर पूछडी। ढढ्ढा ढेर वाणियो।
आणे ताणे तीन लीकठी।

तत्तूतियो कान को। थथ्थियो थावर।
दद्दियो दीवट। धध्धो धानक छोड्या जाय।
आगे नन्नो भाग्या जाय।

पापा पाटकी। फफ्फा फालिगा।
बब्बा बाडी बेगणिया। भभ्भा मूछ कटार की।
मम्मा ले कसार की।

जरल्या पटल्यो। रारो रीकलो।
लल्ला लाप सोआडाकी। शश्शो सोलकी।
खख्खो खाड की। सस्सो लीडोटा।
हाहा हिदोली। अडे तडे दो बिदौली।

बारहखड़ी—वर्ण-परिचय के बाद फिर बारहखडी अर्थात् मात्रा लगाने की कला सिखलाई जाती थी, जिसे भी सगीत के साथ रोचक बना दिया जाता था—

'कावडे क। कन्नी का। पच्छू कि। अग्गू की। एकलग के। दोलग कै। काणा कणुवत को। दुमात कन्या कौ। बिस्तीबिन्नी क। आगे दो विन्नी क.।

सीधो—इसके बाद जोशीजी महाराज ने सीधो पढाया, जो कि सस्कृत-व्याकरण के कुछ वाक्यो का बहुत ही भ्रष्ट उच्चारण है, इतना भ्रष्ट कि असली शब्दो का पहचानना बहुत ही मुश्किल है । उच्चारण, जान पडता है, हर एक गुरु का अपना अलग-अलग होता था । गौरी ने गुरु से उसे इस प्रकार सीखा था—

"सीधो वर्ग समावरणाय", जो कि "सिद्धौ वर्ण-समाम्नाय" का गुरुमुख रूप है। आगे सीधो के वाक्य थे—"चतरू-चतरू तास्य, दौसमार्‌या, देसै समाना। लेखू दूध्यावरणो। न सीस वरणो। पूरवो हसवा। पारो दीरगा। सारो वरणा। विणज्यो नामी। इकरा देणी। सध्र कराणी। कादीनाउ विणज्यो नामी। ते बिरधा पचा पचा। विरधानाउ परथमदुतिया। सखोसाड्चा घोखाघोख पितोरणी। अनूनारा नासिका। नीनाणुनामा। आणता सता जरेलावा। रूकमिणशिखा सावा अयती विसारजनिया। कायतो जीभामूलिया। पाए पदमानियो। आयो अन्तन सारो। पूरवो पलारो रता।

इसमे सस्कृत के खण्ड-मुण्ड शब्द है—सबारा, पूर्व, ह्रस्व, दीर्घ, स्वर, वर्ण, व्यजनम्, कादीनाम्, घोषाऽघोषा, अनुनासिका, य-र-ल-वा, विसर्जनीया., जिह्वामूलीया, उपध्मानीया ।

इतना पढाने के बाद फिर गिन्ती आरम्भ हुई।

गिणती—इसे भी राग के साथ पढाया जाता था—

एकावली को एक। दोवावली को दो। तीये को तीन। चौके का चार। पाचे का पाच। छक्के का छ। सत्ते का सात। अट्ठे का आठ। नौके का नौ। एक कै बिन्दी दस। एकै एक ग्यारह। एक घडा पै दो बिन्दी सय। .

फिर पहाड़ा—एक-दू दू। दो-दू चार। तीन-दू छ। चार-दू आठ। पान-दू दस। छ-दू बारह। सात-दू चौदह। आठ-दू सोला (लोलह)। नौ-दू अठारह। दस-दुणी बीस। एक-ती तैया। .

पहाडो के बाद समैया (सवैया) आदि सिखाये जाते—

समैया—सम-समैयो, दो समैयो ढाई। .. ..

डेढ़ा—एक-डेढो। दू-डेढ तीन। ..

घुटा—घुटे घुट। दो-घुटा सात। तीन-घुटा साढे दस।

पूणा—पूण पुणो। दू-पूण डेढ। तीन-पूण सवा दो। ..

ढचा—ढच ढचो। दू-ढचो नौ। तीन-ढचो साढे तेरह। . .

पूचा—पूच पूचा। दू-पूच ग्यारह।

कंका—कन कन कैया। बी-बी चार। तीये-तीये नौ। चौक-चौक सोड। .

कैलास जोशी ने वस्तुत सीधो और सौ तक की गिन्ती सिखलाई थी। इसके बाद गौरी के गुरु स्कूल के प्रधान-अध्यापक पण्डित कृष्णदास हुए। उन्होने स्कली हिन्दी-किताबो से गौरी को पढाना शुरू किया—पहली, दूसरी, तीसरी आदि पाठावलिया। जोड-बाकी, गुणा-भाग और आना-पाई का हिसाब भी सिखलाया और हिन्दी मिडल व्याकरण भी। लेकिन गौरी को बराबर मगलपुर नही रहना पडता था। नानी अपनी बेटी और नतनी को साल मे एक-दो बार जसपुर जरूर बुला लेती। कभी चार-छ महीने, तो कभी पूरा वर्ष जसपुर मे (ननिहाल में) बीत जाता। वहा वही जोशण पढाने आती, जिसके बारे में पहले बतला चुके है। जब-तब गौरी मखनपुर भी जाती, वहा मास्टर काहनजी उसे पढाते। जसपुर में जडाबबाई जोशण का पढाना क्या था, पढाये पर पुचारा फेरना था। तेरह वर्ष की उमर तक गौरी ने हिन्दी पढना-लिखना सीख लिया। हिन्दी की पुस्तके अब उसे समझ मे आती थी। यह १९२१ का साल था, प्रथम विश्व-युद्ध को जीते तीन साल हो चुके थे। राजस्थान के अन्त पुरो पर भी बाहर का कुछ प्रभाव जरूर पड़ा था, लेकिन वह प्रभाव सभी जगह एक-जैसा नही था।

गौरी को स्वय पढने का चस्का छोटी-छोटी पुस्तको—सती सीता, सती सावित्री—से लगा। फिर इडियन प्रेस का महाभारत पढा, राधेश्याम के रामायण को भी देखा। आगे कथाओ के शौक ने उपन्यासो तक पहुचाया।

× × × ×

संगीत-शिक्षा—तेरह वर्ष की उम्र तक पढाई हो जाने के बाद अब आगे का पढना-लिखना तो गौरी अपने ही बल पर कर सकती थी, लेकिन राजस्थान के छोटे-छोटे दरबारो मे सगीत की कदर थी, और वहा गायक, कलावन्त आया करते थे। ठेकाणो मे तो नही, किन्तु जसपुर-जैसी राजधानियो मे सगीत की शिक्षा का प्रबन्ध भी था। जसपुर मे एक गुजनखाना (सगीत-विद्यालय) था, जिसमे ढोली और ढोलणी नृत्य-गीत सीखते। बाया या रानियो की पातरे सख्त पर्दे में रहकर कौमार्य व्रत पालन करने के लिए मजबूर थी, इसलिए वे गुजनखाने मे जाकर शिक्षा नही प्राप्त कर सकती थी। उनको कत्थक और कलावन्त पर्दे मे ही शिक्षा देते। गुनियो के आने-जाने के कारण दरबार के साधारण नौकरो-सेवको को भी कितनी ही राग-रागिनियो की परख हो जाती थी। गौरी अपने बाबोसा के पास बराबर बैठी रहती, जब कलावन्त आकर अपनी कला का प्रदर्शन करते। यद्यपि खुलकर गाने का उसे कभी साहस नही हुआ, लेकिन सुनते-सुनते सगीत का शौक हो गया था। उसके अपने पिता ने—जो कि तरणाई मे ही मर गये थे—सितार और सारगी की शिक्षा उस्ताद अहमद से ली थी। बाबोसा को सगीत सुनने का शौक था। गौरी को प्यार करनेवाले दूसरे चचा रूडसिह ने भी अहमद से सितार सीखा था। जब पढाई-लिखाई बन्द हो गई, तो गौरी को ख्याल आया, क्यो न कुछ सगीत-विद्या ही सीखू। वह गाना नही, बाजा बजाना सीखना चाहती थी, और इसके लिए उसने बाबोसा से कहा, जो अपनी बेटी की किसी माग को भी ठुकराने के लिए तैयार नही थे। किसी ने भी विरोध नही किया। मगलपुर के सगीतज्ञ हणमाणा को हारमोनियम सिखलाने को कह दिया गया। हणमाणा ने गौरी को सरगम सिखलाया। माड का राजस्थान मे बहुत प्रचार होने से गौरी ने उसे भी सीखा। फिर पक्के गाने—भैरवी, कालिगडा, सारग, पीलू, श्यामकल्याण, और दो-चार ठुमरिया बजाना सीखा। साल भर तक शिक्षा होती रही।

गौरी जब बारह वर्ष की थी, तभी उसकी नानी मर गई, इसलिए अब ननिहाल जाना उतना नही होता था, लेकिन जसपुर मे मगलपुर के ठाकुर की अपनी हवेली (हौस) थी, जहा वह जब-तब जाकर महीनो रहती। बाबोसा

भी साथ होते । बेटी की तीव्र इच्छा को देखकर बाबोसा ने जसपुर मे भी सगीत की शिक्षा का प्रबन्ध कर दिया। जसपुर मे साठ वर्ष के वृद्ध कमल महाराज नाम के एक बगाली उस्ताद रहते थे । जसपुर की दूसरी चौपड में सरस्वती-मन्दिर मे उन्होने अपनी सगीत-पाठशाला खोल रक्खी थी, जिसमे बच्चे और वयस्क सगीत-शिक्षा के लिए जाया करते थे । कमल महाराज गाते थे और बाजो मे सितार और सारगी मे भी दक्ष थे । तबला स्वय तो नही बजाते, लेकिन ताल बतलाते थे । कमल महाराज की जसपुर मे काफी ख्याति थी। गौरी ने उनके बारे मे सुना था । उसने बाबोसा और मा से जब आग्रह किया, तो उन्होने मान लिया । रोज तागा भेजकर कमल महाराज को बुलाया जाता और वह दो घण्टा गौरी को अभ्यास कराते । जब-जब गौरी जसपुर जाती, कभी चार मास और कभी साल भर भी वहा रहती, उस समय वह कमल महाराज से सगीत की शिक्षा लेती । यह क्रम तीन-चार वर्ष तक चलता रहा । मगलपुर मे आने पर हणमाणा से भी कुछ सीखती रहती । बिलावल, भीमपलासी, खमाच, हम्मीर, तोडी, भैरव, वसन्त, मलार, देश, आशावरी भूपाली, जौनपुरी-तोडी, मिया की तोडी, सिन्धी-भैरवी, गौड सारग, बागेश्वरी, बिहाग, सोरठ, एमन जैसी बहुत-सी पक्की चीजो को अब वह हारमोनियम पर बजाती। उस्ताद गाने के लिए बहुत जोर देते, लेकिन गौरी का कण्ठ न उस्ताद के सामने और न अपने सगे-सम्बन्धियो के सामने खुलता था । हा, मुह मे वह गुनगुना लेती—हा, कभी-कभी तहखाने के भीतर जाकर दरवाजा बन्द कर अवश्य गाती । पहले कमल महाराज हाथ से सरगम लिख देते । पीछे उन्होने हिन्दी मे लिखी एक सगीत की पुस्तक दी । गौरी ने भी कई पुस्तके मगा ली। उस्ताद जब तानसेन का नाम लेते, तो अपना कान जरूर पकड लेते, और अपनी शिष्या को भी उन्होने हिदायत दे रक्खी थी, कि इस महान् कलाकार का नाम लेते समय उसे अपने सामने बैठा समझकर अपनी हीनता दिखलाने के लिए कान जरूर पकड लेना चाहिए । कमल महाराज तानसेन और दूसरे कितने गवैयो की बाते भी कहा करते थे, लेकिन इन ऐतिहासिक परम्पराओ के प्रति गौरी की रुचि नही थी, इसलिए वह उन्हे याद नही रख सकी। सत्रह वर्ष की उमर तक इस प्रकार सगीत की काफी शिक्षा गौरी को मिली थी । वह राग-रागिनियो को हारमोनियम पर बजाती, उनकी पकड, वादी-सवादी स्वरो तथा सगीत की दूसरी बातो को जानती । ब्याह के बाद भी जब कभी गौरी को जसपुर जाना पड़ता, तो कमल महाराज को बुलाकर उनसे कुछ सीखती।

यह कहने की अवश्यकता नही, कि यह सारी शिक्षा घोर पर्दे के साथ होती। हणमाणा तो उस समय सिखलाने आता, जब कि बाबोसा पास बैठे रहते। जसपुर मे नीचे के कमरे मे एक नौकर तथा दो-तीन लौडिया बैठी रहती, जब कमल महाराज सगीत सिखलाने आते । गौरी की मासी भी कुछ सगीत सीखी थी, लेकिन वह ढोलणियो की माड से आगे नही बढी। उस समय राजस्थान के सामन्त-वर्ग की कन्याओ मे गाने-बजाने का रवाज नही था, वैसे साधारण लोक-गीत सीखने की मनाही नही थी । कोई-कोई रानिया और ठाकुरानिया माड गा लेती । कोई और अधिक जानकर निकली, तो दुर्गा तक पहुँचती, और अपनी सगीतज्ञता का परिचय देते ढोलणियो और बायो को कहती—'दुर्गा गाओ।' लोक-गीत ठाकुरानिया गा लेती थी । तब से अब कितना अन्तर हो गया । अब तो राजकुमारिया सितार आदि बाजे ही नही बजाना जानती, बल्कि कथक और कोई-कोई यूरोपीय नाच भी जानती है । मटकी, तोयसा, धारवा और घूमर-जैसे लोक-नृत्य तो प्रय सभी ठाकुरानिया जानती थी। मटकी अर्थात् शिर पर मटका लेकर चलने का अभिनय करत हुए नृत्य अन्त पुर मे बहुत प्रिय था । गौरी ने अपनी कसौरावाली बुआ की एक पातर से कुछ नाच भी सीखा था ।

× × × ×

खाना पकाना—यह बतला चुके है, कि रानियो और ठाकुरानियो के लिए खाना पकाना बिल्कुल अनावश्यक चीज है, और बहुत-सी तो इस कला से बिल्कुल अपरिचित होती है। गौरी को खाना पकाने की बडी इच्छा होती थी। जब वह सर्दी के दिनो मे मा से इसके लिए आग्रह करती, तो वह कहती—"चूल्हे के पास बैठने पर तेरे गरम कपडे मे आग लग जायगी।" गर्मी के दिनो मे कहने पर—"पसीना होकर जुकाम आ जायगा" का बहाना धरा हुआ था । गौरी की मा और नानी उन थोडी-सी ठाकुरानियो में से थी, जो पाक-विद्या मे बहुत निष्णात थी । उनको बनाते देखते बहुत-सी बाते गौरी को मालूम हो गई। कुछ बडी होने पर बडी तत्परता से वह गुडियो के लिए खाना पकाने लगी । उसके पास गुडियो के खाना बनाने के पीतल के सभी बर्तन थे, पीतल का चूल्हा भी था। मास और बिस्कुट-केक बाहर खानसामे-बारी, नाई, दारोगा बनाते, जिनके पास बैठकर उसने इन चीजो को बनाना सीखा। अचार-मुरब्बे, मिठाइया-पकवान सभी बनाना आ गया। मालपूये गौरी को बहुत पसन्द थे। देखादेखी ही उसने एक बार मालपूआ बनाना शुरू किया, लेकिन वह घी मे घोला आटा डालती, तो वह मालपूआ बनने की

जगह सीरा बन जाता। दो सेर घी बिगाड चुकी थी, इसी समय मा आ गई और उन्होने बतलाया, कि आटे मे दही मिला दे। दही मिलाने पर अब मालपूआ बनने लगा। एक दिन बूआजी मगलपुर आई थी। गौरी ने उन्हे गाजर का हलवा बनाकर खिलाने का निश्चय किया। गाजर को घी मे खूब भून लिया, फिर उसमे चीनी डाल दी। लेकिन कढाई को चूल्हे पर से उतारने का ख्याल नही रहा, जिससे चासनी कडी और काली हो गई। वह कढाई से इतनी चिपक गई, कि लोहे की सीखो से कुरेदने पर भी नही उतरी। लौडियो को दही बिलोते देखकर गौरी को भी बिलोने की बडी इच्छा होती थी। दही नही मिलने पर वह जगल से झरबेरी की पत्तिया तोड लाती और हडिया मे पानी डाल मथानी से बिलोने-बनाने बैठ जाती। पत्ती से फेन निकलने लगता, जिसे वह घी मानकर गुडियो के लिए निकाल लेती, और पानी भी कुछ छाछ का रूप ले लेता। यह छाछ और घी गुडियो के काम आता।

× × × ×

बन्दरो का खेल—जसपुर मे बन्दर बहुत है। राजमहल की ओर हनुमान्जी की खास सेना लाल बन्दरो ने अपना दखल जमाया था। बाकी शहर मे काले बन्दरो (लगूरो) का राज था। वैसे लगूर गावो और नगरो मे नही आते, लेकिन जब उन्हे बाकायदा रोटी और चना बाटा जाय, तो वह क्यो न नागरिक बन जाये? गौरी एक समय जसपुर मे थी, इसी समय उसकी प्रिय सखी (मासी) के ताऊ का श्राद्ध था। तीनो हवेलियो के लोग इक्ट्ठा हुए थे। बन्दर हिलक गये थे, इसलिए बच्चे रोटी या भुने चने लेकर छत पर उन्हे खिलाने चले जाते। गौरी और लडकियो के साथ छत पर गई। बहुत-से बन्दर जमा हो गये। एक छोटा-सा लगूर का बच्चा पास मे बैठकर चना खा रहा था। बास से धमकाया, तो और बन्दर हट गये, और गौरी ने बच्चे को दही ढाकने के बडे ढक्कन के नीचे दबा दिया। बन्दर इस गुस्ताखी को कैसे क्षमा कर देते? उनका रुख कडा देखा, तो ढक्कन को घसीट कर एक कोठरी मे ले जा दरवाजे को बन्द कर लिया। सैकडो लगूरो की फौज अब आक्रमण करने के लिए तैयार हो गई। वह चारो तरफ हम्-हम् करते दात किटकिटाने और किवाड खोलने का प्रयत्न करने लगे। गौरी ने सोचा था, बडा सुन्दर छोटा-सा बच्चा है, इसे पाल लेगे, लेकिन लगूरो के भारी आक्रमण की खबर देर तक छिपाई नही जा सकी। नीचे से महिलाएं ऊपर आईं, और जब उन्हे असली कारण मालूम हुआ, तो मासी की मा ने उसे पीटा और गौरी की मा ने भी गौरी को कुछ थप्पड लगाये। बन्दर का बच्चा छोड़ दिया गया।

बच्चा बेचारा ढक्कन के नीचे से निकलने के लिए कोशिश कर रहा था। दो घण्टे तक यह तमाशा रहा।

वैसे जसपुर के लगूर अपने खिलानेवालो के लिए अब जगली नही रह गये थे। शाम-सबेरे वह खाना मिलनेवाली जगहो मे दस-बीस की सख्या मे आ पहुँचते। गौरी उनके बीच मे बैठ जाती और वे उसके हाथ से रोटी लेकर खा लेते। जसपुर के बाहर बगीचो मे लगूरो के मारे कोई फल बचना मुश्किल था। लगूर आम तौर से किसी को काटते नही, लेकिन कभी-कभी कोई पागल कुत्ते की तरह रात-दिन जहा-तहा घूमता लोगो को काटता। उस वक्त राज की ओर से ढिढोरा पिटवा दिया जाता—"मोल्यो हिडिक गयो छै, कोई वारे मत सोजो।" पागल बन्दर का काटा आदमी कभी-कभी मर भी जाता था। राज की ओर से ऐसे बन्दर को मारने की बहुत कोशिश की जाती, लेकिन वह कुत्ते की तरह केवल धरती पर ही तो नही चलता।

सबसे बडे लगूर को 'डारका डाक्की' कहते। सभी बन्दर उससे डरते, बल्कि छुटभैये बन्दर उससे प्राण बचाकर अलग रहते। 'डारका डाक्की' की जमात मे बन्दरिया ही बन्दरिया रहती। रोटी डालने पर पहले डाक्की खाने आ जाता और जमात की किसी बन्दर या बच्चे की मजाल नही थी, कि वह रोटी के पास फटके। डाक्की पहले पेट भर खा लेता, फिर वह अलग जाकर बैठना। अब जमात की बन्दरियो की बारी आती, और वह आकर हाथ से रोटी ले-लेके खाती। खाना खतम हो जाने पर डाक्की आगे-आगे चलता, और पीछे-पीछे उसकी जमात होती। पूरी नारगी देकर गौरी लगूरो का खेल देखती। वह बाहरी छिलके को ही नही उतारता, बल्कि फाको के ऊपर के रेशो को भी हटाकर खाता, जिससे मालूम होता, कि बन्दर भी आदमी-जैसी अकल रखते है। एक बार एक लौडी अपनी रोटी लेकर जा रही थी। डारका डाक्की छोटी दीवार पर बैठा था। लौडी जब पास से निकली, तो न जाने उसे क्या सूझी, उसने लौडी की चुटिया पकडके कान के ऊपर इतनी जोर से थप्पड मारा, कि कानो की बालिया सीधी हो गईं, और खून निकलने लग गया। लौडी चिल्लाकर भागी। रात को लगूरो का डर नही था, उस समय पागल होने पर ही कोई बन्दर आता। अगर शाम के वक्त कोई बन्दर छत पर छूट जाता, तो वही चुपचाप बैठा सोता रहता। बन्दर आपस मे एक दूसरे की जूए निकालकर खाते थे, यह भी गौरी जैसी लड़कियो के लिए बड़े मनोरजन की चीज थी।

एक समय अन्त पुर मे लाल मुहवाली एक बन्दरी और एक बन्दर पाल लिये

गये थे । बन्दरी का नाम था केतकी और बन्दर का मनसुखा । केतकी इतनी हिल-मिल गई, कि वह रूडी और पारी दो लौडियो का दूध पीती, और रात के वक्त उन्ही के साथ सोती भी। दादी के पास कभी-कभी बैठकर वह उनके पैर का अगूठा चूसती रहती। एक बार दादी के पास कोई सेठानी मिलने आई। सेठानी लम्बा घूघट निकाले हुए थी । उसे दिखाई नही पडा, कि पास मे केतकी बैठी हुई है । सेठानिया रानियो और ठाकुरानियो का पैर पकडकर पगे लागती है । जिस समय वह दादी का पैर पकडने लगी, जान पडता है, केतकी को ईर्ष्या हो गई, और वह बडी सफाई के साथ सेठानी की नथ निकाल मुह मे डालकर भाग गई। सेठानी ने जब नाक को नथ से खाली देखा, तो वहा केतकी के रहने की बात उन्हे मालूम नही थी, इसलिये उसने ठाकुरानी से कहा—"यहा कोई छोरी बैठी थी। जान पडता है, वही नथ निकाल ले गई ।" दादी को मालूम हो गया, कि यह काम केतकी का है। उन्होने रूडी और पारी को केतकी के पीछे भेजा। केतकी चाहे पेड के आखिरी शिरोभाग पर या और किसी दुर्गम स्थान पर बैठी हो, लेकिन जैसे ही उसकी दूध पिलानेवाली रूडी या पारी पहुचकर उसे बुलाती, वह चुपके से पास मे आकर दुबककर बैठ जाती । उन्होने केतकी के मुह मे उगली डालकर देखा, तो सोना तो मिल गया, लेकिन मोतियो को केतकी ने अपने गाल के थैले मे डाल रक्खा था, जिसे एक-एक करके उन्होने निकाला और सेठानी को लाकर दिया ।

अपरिचित होने पर केतकी तग भी करती, और मनसुखा तो जरा भी छेडने पर काटने के लिए तैयार हो जाता। कभी-कभी केतकी को घाघरा सीकर पहना दिया जाता। थोडी देर पहनने के बाद वह उसे चिट्टी-चिट्टी करके फाड डालती, लेकिन गौरी की गुडियो को केतकी बिल्कुल नही छेडती थी। पास के ठाकुर की हवेली की गुडियो को वह जरूर मौका पाते ही उडा लाती और गौरी की गुडियो मे मिला देती। कभी-कभी केतकी को सैर-सपाटे की इच्छा हो जाती, तो वह नगर के फेरे करने लगती । फिर कोई गढ मे खबर देता, तो रूडी और पारी बुलाने जाती। दादी को भी केतकी बहुत मानती थी। जब उसे डराने के लिए दादी थप्पड मारती, तो वह रोने का स्वाग करके बैठ जाती। एक बार गौरी की जीजा बन्दनकुमारी के छिदे कान दुख रहे थे । रात को उसे नीद नही आती थी । मा ने बहुत समझाया—"मै धीरे-धीरे इन बालियो को निकाल देती हूँ, फिर तुझे दर्द नही होगा।" लेकिन बन्दनकुमारी इसे नही मान रही थी । बन्दनकुमारी रात को सो रही थी । केतकी रात को खुली रहती थी।

वह बन्दनी के पास गई और उसने दो बालिया झट-झट निकाल दी । बन्दनी चिल्ला उठी । मा ने केतकी की करतूत देखकर कहा—"मै आहिस्ता-आहिस्ता निकालने के लिए कह रही थी, जब तो निकलवाया नही, और अब केतकी तेरी बडी हितैसिनी बन गई ।"

गौरी की मा ने एक बार मनसुखा को सिलाकर कपडे पहना दिये । पायजामा, कुर्ता और टोपी पहनकर वह छोटा-सा लडका बन गया । केतकी की तरह वह नही था। वह कई दिनो तक अपने इन कपडो को पहने फिरता रहा। केतकी कभी-कभी घोडो के तबेले मे भी सफर करने चली जाती, और उसकी कूद-फाद को देखकर जब घोडे हिनहिनाते और पैर पटकने लगते, तो वह डर जाती। केतकी दूध-रोटी खाया करती थी। मूली से उसे बहुत शौक था। दूसरे फल कभी-कभी दिये जाते । केतकी और मनमुखा आपस मे ही एक दूसरे का जू निकालकर नही खाते, बल्कि केतकी कभी-कभी रूडी के बालो से भी जू निकालकर खाती। उसे अपना नाम मालूम था। एक बार मा अपनी सास के पास नीचे जाने लगी, तो केनकी झट फुदककर उनके कन्धे पर बैठ गई, फिर उनकी ओढनी शिर से उतार पाखाने मे डाल आई।

× × × ×

खेल—पण्डित कृष्णदास से पढ लेने के बाद गौरी को खेलने की छुट्टी मिल जाती, और वह अपनी समवयस्क लडके-लडकियो के साथ बाहर रेत पर या और कही खेलने चली जाती । आखमिचौनी-जैसे भारत की और जगहो पर प्रचलित खेलो के अतिरिक्त राजस्थान के कुछ अपने भी खेल है ।

लोणक्यार—रेत के ऊपर बीच मे रेत की एक ढेरी रखकर वहा रेखा का छोर रख चक्रव्यूह की तरह तीन-चार चक्कर लगा रेखा का छोर बाहर करके वहा भी रेखा से घेरकर रखने की जगह बना दी जाती । भीतरवाली ढेरी को 'लोण की कुडी' कहते, और मुह पर के घेरे को 'डाकन की कुड्डी' । एक पैर पर घुमघुभौवे रास्ते से भीतर जाकर रेत को उठा फिर उसी तरह पीछे लौटकर उसे डाकन की कुड्डी पर रखना होता था । यदि पैर जमीन पर पड जाता, तो हार हो जाती ।

कोर कतरनी—एक लडका या एक लडकी दूसरे के पीठ पर कान के पास अगुली से सकेत करके बोलता—

कोर-कतरनी कोर-कतरनी, छाबुक छैया।
बोल मेरे भैया, क्या लगा मरो दोस।

दो अगुली जोडकर रखने का अर्थ था कतरनी, और एक अगुली का चाकू। जिसकी पीठ पर चढकर बोला जाता, यदि वह सकेत को ठीक बतला देता, तो जीत नही तो हार। हार का अर्थ था, उसी तरह पीठ पर बैठाकर फिर उसी तरह करना।

अन्धा भैसा—एक लडके या एक लडकी की आखो को रूमाल से कसकर बाध हाथ मे लकडी थमा देते। फिर कहते—'अन्धो भैसो गऊ चरावे। ले-ले लाठी मारन आवे।' अन्धा लाठी से लडको को छूना चाहता, और जिसकी लाठी छू जाती, अब उसे अन्धा भैसा बनना पडता।

खोड़ा खाती—एक लडके या एक लडकी के एक पैर को उसी ओर के हाथ से कसकर बाध लकडी थमा देते। वह लकडी से रेत मे कुरेदकर कुछ ढूढती है। इस पर पूछते—

"डोकरी माई, डोकरी माई, के ढूढे ?"
"सार (लोहा) की सूई।"
"के करसी ?"
"कोथली सीस्यो।"
"कोथली को के करसी ?"
"टक्का घालस्यो।"
"टक्का को के करसी ?"
"भैस ल्यास्यो।"
"भैस को के करसी ?"
"दूध पीस्यो।"

फिर "दूध ना पाणी पी" कहकर उसे पीठ के बल लिटा देते। वह उठकर लकडी लिये लगडाती दौडती, और उसकी लाठी जिसे छू जाती, अब उसे अपने हाथ-पैर बधवाकर डोकरी (बुढिया) बनना पडता।

मछली-खेल—एक लडकी को बीच मे रखकर उसके किनारे रासलीला की तरह हाथ मे हाथ पकडे लडकियां चारो ओर खडी होकर एक साथ पूछती—"मछली-मछली, कितना पानी ?" बीचवाली लडकी पहले पैर की अगुलियो को बतलाती। फिर इसी तरह सवाल पूछते, और वह पानी को घुटनो, कमर, छाती,

कन्धे और फिर शिर के ऊपर बतलाती। शिर के ऊपर कहने पर सब लडकिया भाग जाती। मछली लडकी जिसे दौडकर पकड लेती, अब वह मछली बनती।

गौरी उन लडकियो मे थी, जो कि खतरे के खेल खेलने मे जरा भी भय नही खाती। दीवानखाने के जिस कमरे मे ठाकुर साहब दरबार के लिए बैठते, उसके ऊपर रोशनी के लिए खिडकी और कुछ अगुल चौडी दीवार से निकली हुई मेड थी, जिस पर पैर रखकर चलना बहुत खतरे की बात थी। गिरने पर नीचे दीवानखाने मे हाथ-पैर तुडाने के सिवा और कोई चारा नही था। गौरी उमी पर पैर रख चारो ओर घूमती। बूढा राजपूत नौकर दोपहर के वक्त दीवानखाने मे सोता। उसने लडकी को इस तरह घूमते देखकर सोचा, कि कही गिरी, हाथ टूटा, तो मुझसे भी जवाब तलब किया जायगा। बूढे ने बाबोसा से गौरी की शिकायत की। बाबोसा ने बुलाकर डाटा। इस पर गौरी बूढे से नाराज हो गई। बूढा कही इधर-उधर गया था। उसके साफे को उठाकर उसने एक ओर के पल्ले मे कैची से चियडे-चियडे करके रख दिया। शाम के वक्त साफा बाधकर ठाकुर साहब के यहा जाना था। बूढे ने साफा उठाकर देखा, तो उसे मालूम हो गया, कि यह किसका काम है, और कान पकडा, कि अब फिर गौरी की शिकायत नही करूगा। गौरी विचित्र लडकी थी। बाबोसा का डाटना भी उसके लिए भारी दण्ड था। वह आठ वर्ष की थी, जब कि एक दिन बाबोसा के पास लेटी-लेटी उसने कहा—"बाबोसा, जो तू गुस्सा होवे, तो मुझे अकेले मे कहना। लोगो के सामने न डाटना।" बाबोसा ने अपनी मा से कहा—"देख, इस लडकी को क्या सूझा है।" इसके बाद बाबोसा ने वैसा ही करना शुरू किया। जब कोई कसूर करती, तो गौरी को अकेले मे बुलाकर कहते—"तूने यह कसूर किया। इसे छोड दे। नही तो मै सबके सामने डाटूगा।" गौरी तुरन्त मान जाती।

मा—गौरी की मा बडे कोमल स्वभाव की थी। सात वर्ष ही सुहागिनी रहकर वह विधवा हो गई, किन्तु उन्होने अपने बाकी सारे जीवन को इस तरह बिताया, कि नौकर-चाकर सभी उनकी प्रशसा करते नही थकते थे। देवरानी-जेठानी का झगडा मशहूर है, लेकिन अपनी जेठानी—जिसको गौरी याया कहती—के साथ उनका असाधारण प्रेम था। चालीस वर्ष तक दोनो एक दूसरे की छाया की तरह रही। मखनपुर या नरपुर, मगलपुर या जसपुर जहा भी जाती, एक

साथ जाती और एक ही कमरे मे रहती-सोती। कभी जरा-सा भी मनमटाव उनमे नही देखा गया। दोनो की नौकरानियो ने भी उन्हे गुस्सा करते नही देखा। सन्तान के बारे मे दोनो ही निपूती थी। पुत्र के प्रति जो प्रेम होता, गौरी की मा ने उसे दूसरो पर बाट दिया था। सभी ठाकुरानियो की तरह ठेकाणे से मा को खर्च के लिए गाव मिला था। उनके अपने गाव का जब कोई चौधरी (किसान) आता, तो और लोगो के कायदे की तरह चिट्ठी देकर बाहर बनाने-खाने का इन्तिजाम करने की जगह वह भीतर से हलवा-पूडी-लापसी जैसा स्वादिष्ठ भोजन बनवाकर भेजती। कहती–"इनके घर मे ऐसी चीजे नही बना करती, इसलिए यहा खूब खिलाओ।" इसके लिए नौकरानिया कुरबुराती। उन्होने अपने वश को चलाने के लिए जिसे गोद लिया था, उसकी मा भी यह पसन्द नही करती, लेकिन मा अपनी आदत को नही छोडती। रथ पर बैठकर कही जाती, रथ के चक्को को सम्हालनेवाले साईस उनके साथ-साथ पैदल चलते। हमेशा रथ से उतरते समय वह साईसो को दो-दो रुपया दिये बिना नही रहती। मगलपुर से मखनपुर बुलाने के लिए सवारी आती। उस वक्त सवारो, साईसो और ऊट के भाडेवालो को छोटे-बडे का ख्याल न कर एक ही तरह की अच्छी रोटी बनवाकर देती। कहने पर कह देती—"रोटी मे क्या भेदभाव करना।" मगलवार को दूध जमाना वर्जित था। उस दिन बचे दूध को खीर बना या और तरह खर्च कर लेते। घर मे काफी दूध होता। इस बचे दूध को वह कभी साईसो को देती, कभी दारोगो को, कभी राजपूत-नौकरो को। इसी तरह बारी-बारी से भगियो तक को वह दूध मिलता। कोई बिना बेटेवाला आदमी मर जाता, तो वह विधवा के पास रुपये-कपडे भेजती। मा को पहले खोरिश मे पवानी गाव मिला था, जिसे पीछे उन्होने गाचरा से बदल लिया।

उन्हे खाना बनाना बहुत पसन्द था। बाबोसा को एक वक्त जरूर वह अपने यहा बनाकर खाना भेजती। विधवा होने से वह मास नही खाती थी। बाबोसा ने भी मास छोड दिया था और पीछे वह एक ही समय खाने लगे थे। उस वक्त तो वह अपनी अनुजबधू की रसोई का ही खाना खाते। बाबोसा के लिए बने खाने मे से कितना ही बच जाता, जिसे वह नौकरो मे बारी-बारी से बांट देती। मखनपुर के धन्ना दारोगा के दो नालायक शराबी लडके थे, जिनके कारण घर में बडी गरीबी थी। धन्ना मरा, तो फूटी-कोडी नही थी। उसकी लोगाई छूतक होने से दरबार मे नही आ सकती थी। उसने चाचलावत लाडीसा के पास किसी को भेजकर मिन्ती की—"बेटों का तो यो हाल, मे काई करू?"

लाडीसा ने तुरन्त सौ रुपये भेजकर काम चलाने के लिए कहा और पीछे धन्ना का भोज लड्डुओ से करवाया।

चाचलावतजी साहब (गौरी की मा) दिल की ही बडी दयावान् नही थी, बल्कि बडी बुद्धिमान् भी थी। पति के साथ सात ही वर्ष रह पाई थी, लेकिन दोनो मे असाधारण प्रेम था। पति उनकी बात सदा मानने के लिए तैयार रहते। सिलाई-गोटे आदि का काम वह जानती थी, और हर काम मे अपनी नई करामात दिखलाना उनका स्वभाव था। अतिथि-सत्कार उन्हे बहुत प्रिय था। जसपुर के मगलपुर-हाउस मे कोई मेहमान आकर ठहरता और अपना खाना खाता, तो उसके लिए वह दही, छाछ, साग-सब्जी या और कोई चीज भेजे बिना नही रहती। गौरी की मा की दयालुता का उदाहरण है—मा के ननिहाल के कोई छुटभैया जसपुर मे डिप्टी थे, काफी तनख्वाह मिलती थी। उन्होने वसूल-तहसील के लिए गाव इजारे मे लिये, फिर 'व्यापारे वसति लक्ष्मी' की बात सुनकर गल्ले की खरीद-फरोख्त मे हाथ लगाया। दोनो मे भारी घाटा हुआ। महाजनो ने सारी जायदाद कुडक करवा ली और उनके पास एक थाली भी नही बची। घर के पाच प्राणी और तीन नौकरानिया दाने-दाने को मुहताज हो गई। यह खबर गौरी की मा को लगी। उन्होने जसपुर मे एक मोदी को कहला दिया, कि "इन्हे जो खाने-पीने की चीज जरूरत हो, दे दिया करो।" कपडे वह स्वय मखनपुर से भेजती थी। चार-पाच साल तक वह इसी तरह सहायता करती रही। जब उनका लडका कमाने लगा, तो स्वय उन्होने भाजी का दिया खाने से इनकार कर दिया।

मखनपुर मे एक स्यामी (ब्राह्मण) रहता था, जिसकी उमर सौ वर्ष की थी। उसकी बुढिया भी अस्सी-नब्बे वर्ष की थी। दोनो के लडके-पडके नही थे, दो लडकिया थी, जिनमे से एक ससुराल रहती और दूसरी विधवा हो मा-बाप के पास। बुरे महूरत का दारुण दुष्परिणाम हो सकता था, जिसे उतारने (तारा फेरने) के लिए एक रात दूसरे के घर रहना आवश्यक था। गौरी को घोडे पर चढानेवाला गूजर, जिसे वह बाबा और उसकी बहू को मा कहा करती थी, उसकी बहू एक रात के लिए उसी बूढे के घर रही। अगले दिन आकर उसने गौरी की मा से कहा—"सौ वर्ष का गरीब बूढा है। सबेरे उसके घर मे खाने के लिए कुछ नही था। शाम को पाव भर आटा कही से मिला, जिसकी राबडी तीनो प्राणियो ने खाई। उनका कोई सहारा नही।" यह बात सुनकर मा का हृदय पिघल गया। उन्होने उसी दिन बूढे के घर खाने का सामान भेजा।

फिर बूढे-बुढिया के लिए हर महीने तीस सेर अनाज का बधान कर दिया और विधवा लडकी को अपने यहा नौकर रख लिया । तीन वर्ष बाद बूढा मर गया, उसके बाद बुढिया को उसकी जिन्दगी भर खाना देती रही । इसी तरह गनेश पुरोहित-ब्राह्मण बूढा निस्सन्तान अतएव निरवलम्ब था, उसको भी मा बराबर खाना-पीना देती। मा के मर जाने पर उसकी जठानी गौरी की याया गनेस का भरन-पोषण करने लगी ।

मामा—बीरन मामा गौरी पर और गौरी अपने मामा पर बहुत प्रेम करते थे, जिसका सबसे बडा कारण यही था, कि वह गौरी के मुक्त स्वभाव मे बाधक नही, बल्कि साधक बनते थे । नानी के भतीजे बलवन्तसिह से भी गौरी का उसी तरह का प्रेम था । जसपुर आने पर वह गौरी के ननिहाल की हवेली के पास ही मे ठहरते । ननिहाल के पर्दे के मारे गौरी का दम घुटता रहता। दोपहर या शाम को जैसे ही मौका लगता, आख बचाकर बलवन्त मामा गौरी को लेकर निकल पडते, और चमकद्वार, हलवाना, राजवास-बाग और गोकुलेशजी आदि के दर्शन करा और खूब घुमा-फिराकर लौटा लाते ।

अध्याय ९

सगाई

तेरह वर्ष की उमर मे गौरी की पढाई खतम हो गई। अब वह स्वयं जासूसी उपन्यास, चन्द्रकान्ता या दूसरी किताबे पुस्तकालयो से मगाकर या खरीदकर पढती। साथ ही सगीत, विशेषकर बाजे को सीखती, यह हम बतला आये है। चौदह वर्ष की उमर मे सन् १९२२ मे उसकी सगाई हुई, लेकिन ब्याह तीन वर्ष बाद हुआ। पीहर और सासरे के देशो मे बडा अन्तर था। सलमाडा और मगलपुर रेगिस्तान के भीतर थे, जहा चारो ओर बालू ही बालू दिखाई पडता, और वृक्षो मे बबूल और दूसरी कटीली झाडिया ही मिलती। पानी और वर्षा का भी वहा बडा अभाव था। लेकिन रेगिस्तान मे पैदा हुई लडकी के लिए यह जरूरी नही, कि वह रेगिस्तान ही मे ब्याही जाय। वैसे राजस्थान के राजघरानो मे तो पहले भी दूर-दूर शादी होती थी, और हाल मे तो उन्होने राजपूतो की बिरादरी को बहुत बढा दिया है। उडीसा मे मयूरभज के भज, पटियाला के मिख, बडौदाके गायकवाड भी अब उनके साथ रोटी-बेटी करने लगे है। ठाकुरो के ब्याह भी कभी-कभी दूर-दूर होते है, लेकिन वह अधिकतर अपने को मारवाड, मेवाड, मालवा, जसपुर और ब्रज तक सीमित रखते है। गौरी के लिए भी मालवा आदि मे वर ढूढने की बातचीत चलने लगी। एक मामा ने दक्षिण मे (इछरा) के एक राजकुमार से ब्याह करने का प्रस्ताव किया, लेकिन मा को पसन्द नही आया। फिर जनपुर के महाराज ऊधोसिह के साथ ब्याह का प्रस्ताव हुआ। मा ने कह दिया—"राजा बहुत शादिया कराते है, मेरी लडकी को दु ख होगा।" गौरी की अपनी जीजी बन्दनकुमारी के पति कितनी ही बार ससुराल मे आकर रहते थे, जहा उनका बहुत सम्मान होता था और वह अपने सास-ससुर तथा चचेरी सास गौरी की मा के जहा बडे भक्त थे, वहा अपने दोनो बेटो की तरह ही गौरी को तीसरा समझकर बहुत प्यार करते थे। उन्होने भी मालवा के कई ठेकाणो को बतलाते वर का प्रस्ताव किया, लेकिन अन्त मे हिम्मतसिह मामा का सुझाव पसन्द किया गया।

जनपुर राज्य मे खलपा एक बडा ठेकाणा है, जिसमे चौदह-पन्द्रह गाव तथा दो लाख सालाना की आमदनी थी। खलपा जनपुर से दक्षिण पचास मील पर पडता है। जनपुर-राजवश के सस्थापक जागा या जनसिंह जी पहलेपहल पडिहारो (गुर्जर-प्रतिहारो) से छीनकर खलपा मे ही गद्दी पर बैठे थे। खलपा से भिनभाल (श्रीभाल) चालीस मील ही दूर है, इसलिए यह कहने की अवश्यकता नही, कि प्रतापी गुर्जर-प्रतिहार-राजवश की मूलभूमि यही थी। शायद जागाजी के आने तक उसी वश का यहा राज था। पीछे जनपुर से चार मील पर अवस्थित मगोर को ले अन्त मे जनसिहजी ने अपने नाम से जनपुर बसाया, और वही इस वश की राजधानी बन गया। जनपुरवाले अपने को कन्नौज के अन्तिम राजवश गहडवाड के अन्तिम राजा जयचन्द की सन्तान बतलाते है। गहडवाडो ने अपने को राष्ट्रकूट कभी नही कहा। लेकिन यह तो ठीक है, कि कन्नौज मे वह गुर्जर-प्रतिहारो के राज्य के उत्तराधिकारी हुए और जनसिंहजी ने भी राजस्थान मे प्रतिहारो की भूमि छीनकर गहडवाडो का ही अनुसरण किया।

खलपा एक दूसरी ही तरह की भूमि है, जैसी भूमि की आशा राजस्थान मे नही हो सकती। यहा की भूमि काली और खेती के लिए बहुत उर्बर है। पानी का कोई अकाल नही, और वर्षा भी यहा ज्यादा होती है। शायद अधिक दक्षिण मे होने के कारण जनसिहजी ने खलपा छोड जनपुर को बसाना पसन्द किया। जनसिहजी के ही छोटे कुमारो मे किसी को खलपा की जागीर मिली। यह कस्बा पोसी रेल स्टेशन तथा मालर जकशन दोनो जगहो से दस मील पर है। पहियेवाली गाडियो के जाने का सुभीता पोसी से है। पूर्व मे भी दो स्टेशन चार-चार मील ही पर पडते है, लेकिन वहा से रास्ते का उतना सुभीता नही है। जनपुर से पोसी मोटर-लारी जाती है, और बरसात न होने पर पोसी से खलपा भी मोटर चली जाती है। रास्ते मे काफी जगल है। अपनी हरियावल और बहुधान्यता के कारण इस इलाके को छोटा मालवा कहते है। गर्मियो के दिन जनपुर-जैसे ही गर्म होते है, लेकिन राते ठण्डी होती है। जनपुर से अब तो मोटर से भी जा सकते है, लेकिन पहले रथो या दूसरी सवारियो से जाया करते थे। रास्ते मे कूसी, कछाणी, लामी, राठ की नदिया, गुलिया बहला (नाला) जैसे पाच नदी-नाले पार करने पडते है। पोसी के बाहर पोसी की नदी आती है। खलपा के पास नीरपा का बहला (नाला) मिलता है।

खलपा मे चारो तरफ कभी कच्चा नगर-प्राकार था, और चारो दिशाओ मे एक पक्का छोड अब भी तीन कच्चे दरवाजे मौजूद है—पोसी दरवाजा,

उत्तर दरवाजा, साखरी(पक्का)दरवाजा, गोला की ओर पश्चिम मे बोटी दरवाजा और पूर्व की ओर आरा दरवाजा औरा स्टेशन की ओर जानेवाला था। आडावला (अरवली) पहाड खलपा से पच्चीस-तीस मील पर है। खलपा मे प्राय एक मील घेरे का एक बडा तालाब है, जिसका एक घाट पक्का है। उसमे नाव चलती है, लेकिन पानी अप्रैल-मई मे सूख जाता है, उस वक्त पानी सुलभ करने के लिए तालाब मे चालीस-पचास कुए खुदे हुए है। उसकी मछली लोग मार लेते है। तालाब को मेवाड के पहाडो से पानी लाकर भरने का रास्ता बना हुआ है।

खलपा मे एक हजार के करीब घर होगे। कपडा, केराना, मिठाई, पसारी आदि की चालीस-पचास दूकानो का एक बाजार भी है। यहा पन्द्रह-बीस घर राजपूत है, साठ घर श्रीमाली-ब्राह्मण। वराहमिहिर की जन्मभूमि भिन्नमाल का ही दूसरा नाम श्रीमाल है। शायद श्रीमाली वराहमिहिर के ही वशज तथा शक ब्राह्मणो की सन्तान है। कुछ घर थानक ब्राह्मण के है। पुश्तैनी राजपरिचारक दारोगो के साठ घर है। बनियो मे जैन ज्यादा है, जिनके सौ घर होगे। तेली (घाची) भी बहुत है, जो किसानी का भी काम करते है। माली, शरगडे, साईस, सुनार, सुतार, खाती, नाई, धोबी, मनिहार, रगरेज, बागवान, कलाल, पासवान आदि के भी कितने ही घर है। कुछ जूता बनानेवाले भाबी (चमार) भी रहते है। ढोलियो के आठ-दस और कायस्थो के तीन-चार घर है। हर एक जाति के अलग-अलग मुहल्ले बसे हुए है। मुसलमानो मे कितने ही घर पठान, कसाई, पिदारे, छीपे और मनिहार है। ठाकुरानियो के पास गाव की स्त्रियो के आने मे कोई रोक-टोक नही है, पर्देवाली केवल रात मे आती है। पहिले खलपा से ठाकुरसाहब को चौदह-पन्द्रह गावो से बीस-पच्चीस हजार की आय होती। खलपा की जागीर की भूमि इतनी उर्बर रहने पर भी जमीन बहुत-सी परती पडी हुई है। आदमियो की अबादी घनी नही है। घास बहुत होती है, और चरने का सुभीता होने के कारण एक-एक घर मे पचास-पचास सौ-सौ गाय-भैसे रहती है। ऊट यहा बहुत कम देखने मे आते है। बरसात मे काली मिट्टी ऊटो के लिए काल भी तो है। भेड-बकरिया भी यहा बहुत है। जगलो मे शिकार करने के लिए सूअर और हरिन की इफरात है। एक-एक दिन मे दस-दस सूअरो का शिकार कर लेना साधारण-सी बात है। बघेरे कभी-कभी पहाड से भूल-भटककर चले आते है। खलपा के तालाबो मे जाडो मे पन-चिडिया बहुत आती है।

यहा सबसे ज्यादा जौ-गेहू होता है। चौमासे मे मक्की बहुत बोई जाती है। बाजरा और ज्वार उसकी अपेक्षा कम होते है। चावल यहा नही होता। काले-

सफेद तिल, ऊडद, मूग, मोठ बहुत होती है। तरकारियो मे गोभी, बैंगन, भिण्डी, तोरी, टिण्डे, टमाटर आदि होते है। फलो मे नारगी, अनार तो केवल ठाकुर साहब के दोनो बागो की चीजे है। वैसे आम, अमरूद, जामुन के फल बहुत होते है।

खलपा से मालवा सौ कोस माना जाता है। आबू यहा से दक्षिण चालीस मील पर है, लेकिन गर्मियो मे आबू मे जाकर रहने का रवाज नही है। जब गर्मी पडने लगती है, तो बाग़ मे किसी मोलसेरी के वृक्ष के चारो ओर टट्टी लगवा दी जाती है, जिस पर पानी सीचते रहते है, और भीतर बैठनेवालो को ठण्डी हवा लेने का आनन्द मिलता है। बागो को नष्ट करनेवाले बन्दर इधर नही है।

पश्चिमी दरवाजे से बाहर नदी किसी समय दूर थी, किन्तु वह काटते-काटते कस्बे के नजदीक आ गई है, तो भी वर्षा मे खलपा को उससे कोई नुकसान नही होता। हा, उस समय केवल औरा दरवाजा से ही लोग भीतर-बाहर आ-जा सकते है।

खलपा के कुछ गाव पोसी परगना मे और कुछ गोलाना मे पडते है। जनपुर राज्य मे पोसी, शोभन, जयसार और देशुरी हरे-भरे इलाके है। देशुरी के बारे मे तो कहावत मशहूर है—"अठीने जोधाणे, अठीने उदाणो। बीचे देशुरी री नाल।" (यही से जोधपुर को, यही से उदयपुर को, बीच मे देशुरी का मार्ग है।)

खलपा मे कई मन्दिर है। अन्त पुर से एक जैनियो का और एक श्रीकृष्णजी का मन्दिर दिखाई पडता है। गढ के भीतर मुरलीमनोहर का मन्दिर है। खलपा से पूर्व एक मील पर मालर जकशन के रास्ते पर विनारी मे माताजी का मन्दिर और एक छोटा-सा तालाब है। उत्तर मे भी इसी तरह एक मील पर एक मढिया है।

× × × ×

सलमाडा से खलपा की भूमि मे भारी अन्तर था, यह इस वर्णन से मालूम हो जायगा। खलपा के लडके का पता पा बाबोसा ने छुटभैयो को सगाई ठीक करने के लिए भेजा। खलपा के ठाकुर साहब बहुत सीधे-सादे और शराब में हर वक्त मस्त रहा करते थे। ठेकाने का सारा काम कामदार करते। जाने पर पच्चीस हजार रुपया टीका, चार घोडे और कितने ही सिरोपा देने पर ब्याह ठीक हुआ। वर ठीक करनेवाले लौटकर आये, तो मा की गोद आये ठाकुर बालसिह ने इतना रुपया देने मे अपने को असमर्थ कहा। बाबोसा ने कहा—

"अच्छा टीका का रुपया मै दूगा।" लेकिन गौरी की मा ने कहा—"ठेकाणे का ठाकुर तो हमने उसे बनाया है, इसलिए रुपया उसी को देना पडेगा।" पीछे मा ने आधा रुपया दिया, और आधा ठेकाणे से मिला। घोडो मे दो सोने के जेवरो से और दो चादी के जेवरो से सजाये गये। ससुर के लिए सिरोपा, सिरपेच, कण्ठा आदि तैयार किया गया। इसी तरह दूसरे सम्बन्धियो के लिए दो-ढाई सौ सिरोपा तैयार हुए।

सगाई ठीक हो जाने पर अब कन्या को देखने की रसम पूरी करनी थी। वर को तो लोग देखे हुए थे। लडकी भी वर को देख ले, इसके लिए फोटो भेजने का अब रवाज हो गया है। वैसे लडकी की सम्मति बिलकुल अनावश्यक समझी जाती है, तो भी सहेलियो द्वारा उसे वर का फोटो दिखलाया जाता है। मा-बाप यह जानना चाहते है, कि लडकी की क्या राय है। लडकी यदि न करे, तो समझा जाता है, कि उसे वर पसन्द है। लेकिन जैसा कि कहा, लडकी की इच्छा या अनिच्छा पर कोई बात निर्भर नही करती। चौदह वर्ष की लडकी साठ वर्ष के बूढे के गले बाध दी जा सकती है, और कई-कई रानियो के रहते भी नये ब्याह हो सकते है। लडकी के सामने सगाई की बात करने पर वह उठकर वहा से चली जाती है, तो भी वह यह तो जानती है, कि मेरा भाग्य किसी से बधनेवाला है। खलपा से चार आदमी और दो लौडिया लडकी को देखने आई। छ-सात वर्ष पहले गौरी ने जब अपनी जीजी के लिए यही रसम अदा करते देखा था, तो वह मचल पडी थी, और लोगो को बडी मुश्किल से मनाना पडा था, लेकिन आज उसे उसमे कोई खुशी नही हो रही थी, बल्कि भविष्य की आशकाओ के कारण दिल धडकता था। स्त्रियो ने लडकी को देखा। लडकी मे कोई दोष नही था। उन्होने पसन्द किया। फिर उन्हे अच्छे-अच्छे घाघरे-लुगडी के साथ इनाम दिया गया।

चौदह वर्ष की उमर ब्याह के लिए राजपूतो के इस वर्ग मे छोटी समझी जाती है, इसलिए ब्याह करने की जल्दी नही थी, उसके लिए और तीन साल की प्रतीक्षा करनी पडी। टीका हो जाने के बाद इन तीनो सालो को गौरी ने स्वय पढने-लिखने और सगीत-वाद्य सीखने मे बिताया। मास्टर साहब देश चले गये, इसलिए कामदार के एक लडके ने एकाध किताब अग्रेजी की पढाई। फिर हिन्दी-इगलिश-टीचर लेकर गौरी ने स्वय कुछ अग्रेजी सीखने की कोशिश की, लेकिन पढाई का सिलसिला वस्तुत. यही खतम हो गया। वह पुस्तकालयो से कहानियो-उपन्यासो की पुस्तके मगाकर पढा करती। 'सरस्वती' भी देखने को मिलती और

अजमेर से निकलनेवाला 'क्षात्र-धर्म' भी । गौरी का स्वभाव था, किसी किताब को हाथ मे लेकर उसे अधूरी नही छोडना । उसकी जीजी किताबो के पढने की बहुत शौकीन थी । बडी-बूढियो मे कथा-पुराण सुनने का रवाज था । सावन के महीने मे कनात लग जाती और पर्दे से बाहर बैठकर पण्डित अर्थ-सहित कोई कथा सुनाते। गौरी को उसके सुनने मे कोई रस नही आता था । सावन मे यह झूले का समय था, इसलिए वह आगन मे झूलने चली जाती । दिन-रात के चौबीस घण्टे होते है, आठ-दस घण्टे तो सोने-लेटने मे काटे जा सकते है, बाकी चौदह घण्टो का बिताना विशेषकर समझ-बूझ रखनेवाले व्यक्ति के लिए मुश्किल होता है । लेकिन जब उसकी दुनिया छोटी होती, तो वह अधिक विकलता अनुभव नही करता ।

× × × ×

झुमझुम सलमियो की पुरानी गद्दी थी । अब भी वहा गढ मे पाचो ठाकुरो की अपनो-अपनी गद्दिया मौजूद है । सलमिया सदा से बडे अभिमानी रहते आये, और अपनी आन पर कट जाना उनके किए कोई मुश्किल नही था । आज से पाच-छ पीढी पहले की बात है । एक सलमिया कुमारी बूदी के हाडा राजा को ब्याही गई । बरात आई, भावरे फिर गई । फिर सलमिया के दस्तूर के मुताबिक बहू रात भर के लिए जनवासे मे गई । उस समय न जाने क्या समझकर दुलहा-राजा ने अपनी नवपरिणीता से कहा—"जरा जूतो को उठा लाओ ।" सलमिया कुमारी को इसमे भारी अपमान की गन्ध मालूम हुई । वह अकडकर बोली—"जूता लाने के लिए मा-बाप ने मुझे लौडिया दी है ।" लेकिन हाडा-वर भी जिद्दी था । उसने अपना रोब दिखलाते हुए फिर-फिर जूता लाने का आग्रह किया । सोहाग-रात को ही दोनो मे झगडा हो गया । कायदे के मुताबिक बरात बिदा होते समय बहू भी बिदा हो गई । सलमिया रानी ने समझा, कि बूदी के भीतर जाने पर मुझे बहुत तग किया जायगा, इसलिए 'काकड सीमा' के ऊपर पहुचने पर उसने अपने डोले को वही रखवा दिया, और पीहर से आये नौकर-नौकरानियो ने कनाते तान दी । सलमिया रानी से लोगो ने बहुत अनुनय-विनय की, लेकिन उसने नगर के भीतर जाने से इनकार कर दिया, यही नही, बल्कि बूदी का अन्न भी खाना उसने हराम मान लिया । वही पर अपने लिए एक हवेली बनवा, वह जीवन भर पीहर से ही अपने खाने-पीने का सामान मगाती रही । सलमिया रानी इस प्रकार अपनी आन पर डटी हुई थी । वह जरा भी झुकने के लिए तैयार नही थी। अन्त मे बूदी-राजा को अकल आई । कितने ही वर्षो बाद एक दिन वह रानी की

हवेली मे मिलने की इच्छा से गये। रानी को जब इस बात की खबर लगी, तो उसने अपनी लौडियो को हुक्म दे दिया, कि दरवाजा न खोलना और यदि जबर्स्ती खुलवाये, तो.तलवार लेकर कट मरना। उसने अपनी लौडियो को ही ऐसा हुक्म नही दिया, बल्कि खुद भी तलवार लेकर दरवाजे के पास खडी हो गई। वही से उसने अपने पति के साथ जवाब-सवाल किया, और पति-देवता खाली हाथ उलटे पैर लौट गये। सलमिया रानी ने इस तरह अपनी आन पर सब कुछ सहा। किन्तु जब उसका पति मर गया, तो वह एक चिता पर उसके साथ सती हुई। बूदी के श्मशान मे दोनो के स्मारक के तौर पर दो छतरिया स्थापित हुई। कितने ही समय बाद सलमिया रानी का भाई बूदी जाते छतरी के पास से गुजरा, उस समय छतरी फटने लगी। भाई ने कहा—"बस बहिन, अब यही तक रहने दे।" कहते है, छतरी का फटना वही रुक गया और आज भी वह छतरी उसी तरह दिखलाई पडती है।

यह वास्तविक घटना से काव्यमय कल्पना अधिक मालूम होती है, लेकिन यह तो निश्चित है, कि अग्रेजो के हाथ मे राजस्थान के आने से पहले, अभी भी वहा के राजपूत और राजपूतनिया अपनी आन के लिए प्राणो पर खेल जाने के लिए तैयार थे।

सती-प्रथा को अग्रेजो ने १८३४ ई० के कानून द्वारा बन्द किया। उसके बाद धीरे-धीरे सारे भारत मे स्त्रियो को चिता पर जिन्दा जलाने की क्रूर प्रथा बन्द हो गई। लेकिन जान पडता है, राजस्थान मे इस प्रथा का जोर अग्रेजो के आने से पहले भी बहुत कम हो गया था, क्योकि वहा सती होने की कथाए बहुत कम सुनने मे आती है, और सतियो के स्मारक भी कम ही मिलते है। जसपुर के महराजा माखनसिंह महाराजा राखीसिंह के गोद आये थे। गोद आने से पहले उनका ब्याह हो चुका था, और पहिली रानी को जादवो के कुल की होने से 'जादौन' कहा जाता था। जादौन रानी को ब्याह के वक्त पीहर से एक हाथी मिला था। हाथी का अपने रानी के प्रति बहुत स्नेह था। जब जादौन रानी मरी, तो उनकी अर्थी सजाकर बहुत बाजे-गाजे के साथ श्मशान ले जाई गई। हाथी भी साथ मे था, और उसकी आखो से आसू जारी थे। राजस्थान की रानिया जीते-जी ही पर्दे मे जकडी नही रहती, बल्कि मरने पर भी कनात से घेरकर उनको जलाया जाता है। रानी की चिता को जब आग लगा दी गई, तो हाथी चिघ्घाडकर वही मर गया। जसपुर से आगोर के रास्ते पर, जहा जादौन रानी की छतरी बनी है,

वही उस स्वामिनी-भक्त हाथी की छतरी भी है, जिसके भीतर काले पत्थर का हाथी रक्खा है ।

सती की प्रथा कम भले ही रही हो, लेकिन राजस्थान मे उसका अभाव नही था। नरपुर के पास गौरी की परदादी की सास भीमसर मे सती हुई थी। श्मशान जाते समय सतिया हाथ मे महावर लगे हाथ की छाप गढ के फाटक की दीवार पर छोड जाती । ऐसे छाप अभी भी कितनी ही जगहो पर देखे जा सकते है। जिस घर मे सती पहले रहती, उसमे बराबर घी का दिया जलाया जाता ।

पर्दे के कारण रानिया कैसे आफत मे पड जाती है, इसका एक उदाहरण लीजिये । जसपुर-राज्य के सभी जागीरदारो की अपनी-अपनी कोठिया राजधानी मे बनी हुई है। पाच ही छ साल की बात है, एक बहुत बडे जागीरदार की मा और बीबी सिनेमा देखने जाना चाहती थी। सयोग से उस वक्त घर की मोटरे खराब हो गई थी, इसलिए जोडी तैयार की गई। दो जबर्दस्त घोडे जुते हुए थे। चारो ओर बन्द जोडी को पर्याप्त नही समझा गया, इसलिए ऊपर से लाल पर्दा डालकर रस्सी से उसे चारो ओर से कसकर बाध दिया गया । हवा के लिए चार अगुल की दो-एक पीतल की झझरिया मौजूद थी, इसलिए दम घुटने का सवाल नही था। सास, बहू, एक दस-बारह वर्ष की लडकी और दो और बच्चे सिनेमा देखकर रात को लौट रहे थे। नगर के फाटक के बाहर निकलते ही घोडे बिदक गये । डर लगा, न जाने कहा ले जाकर जोडी को चकनाचूर कर दे। कोचवान ने अकल नही खोई और उसने धीरे से बम को निकाल दिया। घोडे बम को लिये बेतहाशा भाग गये, लेकिन तब तक जोडी उलट चुकी थी। रानिया ऊपर-नीचे पडी थी, चिल्लाने की भी हिम्मत नही रखती थी। आदमियो मे दो ही साथ थे। बडी मुश्किल से उन्होने रस्सी काटकर पर्दे को हटाया और भीतर फसे हुए प्राणियो को कनात से घेर फाटक के पास के किसी कमरे मे पहुँचाया। दूसरी मोटर आई, फिर रात को रानिया अपनी हवेलियो मे पहुची। राजस्थानी रनिवासो के पर्दे की कल्पना भी दूसरी जगहो के लोगो के मन मे आनी मुश्किल है।

लोग खलपा टीका देकर लौट आये। लडकियो के जन्म मे जिस तरह खुशी नही मनाई जाती, उसी तरह टीका के समय भी होता है। लेकिन गौरी की जीजी और ब्राबोसा की बुआ इस बात को मानने के लिए तैयार नही थे। दादी ने बहुतेरा कहा—"तुम नया रवाज चला रहे हो ।" लेकिन उन्होने नही माना

महल मे खूब गाना-बजाना कराया। बाबोसा के शरीर-रक्षको मे एक कायमखानी (मुसलमान) राजपूत हाशिम खा बहुत समझदार और वफादार आदमी था। टीका ले जानेवालो मे वह भी था। गौरी की मा ने हाशिम खा से वर के वारे मे पुछवाया, तो उस स्वामिभक्त सेवक ने कहा—"और तो मब ठीक है, वर देखने-सुनने मे अच्छा है, लेकिन मुझे वह बुद्धि मे कमजोर-मा जचता है।" खलपा के ठाकुर साहब ने अपने लडके को कुछ समय घर पर शिक्षा देकर राजस्थान के और राजवशो तथा ठाकुरवशो का अनुकरण करते हुए उसे पढने के लिए अजमेर (म्योर कालेज मे) भेज दिया। ठाकुर श्रीमानसिह को पढना बदा नही था। तो भी वहा वह कुछ साल और रह जाते, तो थोडा-बहुत पढ जाते। जनपुर के महाराज के भाई प्रसादसिह पढे-लिखे तो नही थे, लेकिन बडे व्यवहारकुशल आदमी थे, अग्रेजो के प्रति अत्यन्त भक्त होने के कारण वह उनके कृपापात्र भी थे। उन्ही के कहने पर श्रीमान को अजमेर के राजकुमार-कालेज मे भेजा गया था। उनकी दो-तीन साल की पढाई वही खतम हो गई। श्रीमान अपने पिता के उम समय अकेले जीवित पुत्र थे। तीन बहिने थी, जो पीछे विधवा हो अपने-अपने ससुरालो मे रहती।

ससुराल में जमाई—जब तक जीजी का ब्याह नही हुआ था, तब तक गौरी की वन्दनकुमारी के साथ बडी ईर्ष्या रहा करती थी। वह अपनी बडी बहिन से झगड पडती, और बावोसा भी छोटी लडकी का ही पक्ष लेते। लेकिन ब्याह हो जाने के बाद दोनो का प्रेम बहुत प्रचण्ड हो गया। बहिन के अब दो लडके थे। वे दूसरी पलग पर सोते। और दोनो बहिन हमेशा एक चारपाई पर सोया करती। जीजी के पति जब-तब ससुराल आते, और उनकी वहा बडी खातिर होती। जमाई की आवभगत का ढग राजस्थान के सभी ठाकुरवशो और राजवशो मे एक-सा ही है। जमाई को बाग मे डेरा दिलाया जाता है। शाम के वक्त हर रोज सौ-दो सौ लौडिया और दूसरी स्त्रिया गीत गाती, बाजे और बैण्ड के साथ जमाई साहब के पास जाती। इस समय के गीत को जला (जलवा) कहते है। जलवा मुसलमान सुल्तानो और बादशाहो मे सोहागरात के गीतो को कहा जाता था। राजस्थान मे अत्यन्त जनप्रिय राग माड का ही इस जले मे भी प्रयोग होता है। जैसे—

"जला मारू, मे तो थारा डेरा निरखन आई हो। म्हारी जोडीरा जला।"

बाग मे पहुँचने पर जमाई की ओर से औरतो को शराब पिलाई जाती, और उन्हे सूखे सिगाडे तथा बताशे से अजली भर-भरके दिये जाते। थोडी देर मे जमाई

दरबारी कपडे पहिन लेता । कमर मे तलवार बाध घोडे या हाथी पर सवार हो जलूस के साथ गढ की ओर चलता । गढ मे पहुँचकर वह मरदाना दरबार की ओर न जा सीधे अन्त पुर मे जाता। वहा एक बडे कमरे मे दरी-जाजम बिछा होता, गद्दा-तकिया लगा रहता । जमाई वहा बैठ जाता । कमरे के एक बडे भाग को पर्दे से घेर रक्खा जाता, जिसके पीछे सास, साले की बहुए तथा दूसरी पर्दानशीनें बैठ जाती । राजस्थान का दामाद अपनी सास को कभी नही देख सकता, और न उसकी बोली को ही पहचान सकता । यदि कभी कोई खतरे का मौका पडे, तो निश्चय ही, उसके पास कोई उपाय नही, जिससे समझ पाये, कि वह उसकी अपनी बीबी की मा है ।

जमाई के आने से पहिले सहेलिया और भावजे बहू को खूब सजाकर लम्बा घूघट निकलवाकर तैयार रखती । बहू बार-बार इनकार करती, और नही चाहती, कि दूसरे के सामने अपने पति के पास जाय, लेकिन लौडिया जबर्दस्ती उसे पकडकर जमाई के सामने ला खडी करती । फिर जमाई से कहती—"हमारा बाईसा आया है, इसे ताजीम दो और हाथ पकडकर अपने पास बैठाओ ।" राजस्थान मे ताजीम देने का मतलब है, सम्मान के लिए उठ खडा होना । वर थोडी देर उठना नही चाहता, लेकिन बार-बार कहने पर खडा हो ताजीम दे हाथ पकड-कर अपनी बहू को बैठाता है । यह स्मरण रखना चाहिए, कि यह बात केवल तरुण जमाई की ही नही है, साठ साल का बूढा जमाई भी ससुराल जाने पर इस सारे अभिनय को करने के लिए बाध्य है । उसी तरह उसकी साठ वर्ष की बुढिया बहू महीनो इस तरह का अभिनय करती रहेगी । जमाई और बहू के बैठ जाने के बाद सामने चौकी रख दी जाती, जिसके ऊपर बोतल मे शराब और चुस्की या गिलास रख दिये जाते । चुस्की जान पडता है, सस्कृत चषक का ही बिगडा रूप है । यह सोने-चादी के टोटीदार छोटे-छोटे बर्तन होते है । लौडी फिर कहती है—"हमारी बाईसा को मनुआर दो।" उधर पर्दे के भीतर से कोई कहती—"बहुत दूर से चारणी-भाटनी आई है। वह भी मनुआर माग रही है ।" मनुवार का अर्थ है, सम्मानपूर्वक शराब की चुस्की या प्याले को अपने हाथ से प्रदान करना । जमाई को यह जानने मे दिक्कत नही होती, कि पर्दे के भीतर से मनुआर की माग कोई भाटनी या चारणी नही कर रही है, बल्कि स्वय उसकी सास या सरहज वहा बैठी माग कर रही है । जमाई लौडी के हाथ नकली भाटनियो और चारणियो के पास मनुआर की शराब भेजता है, और पाच-पाच रुपये नछरावल (न्योछावर) के भी । अन्दर शराब की चुस्किया खाली कर ली जाती है, और रुपयो मे उतने

ही या कुछ ज्यादा और मिलाकर जमाई-राजा के पास लौटा दिया जाता है। भाटनियो-चारणियो को मनुआर दे देने के बाद फिर लौडिया अपनी बाईसा के लिए मनुआर देने का आग्रह कर कहती हे कि अपने हाथ से पिलाओ। जमाई बहू के लम्बे घूघट मे हाथ डालकर चुस्की की टोटी से उमे शराब पिलाता है। फिर लौडिया बहू से जमाई-राजा को मनुआर देने का आग्रह करती है। बहू चुस्की नही उठाती, इस पर अपने हाथ से हाथ पकडकर चुस्की को किसी तरह जमाई के मुह मे लगवाती है। आजीवन ससुराल मे जमाई का यह अभिनय घोर पर्दे के भीतर वन्द अन्त पुरिकाओ के लिए एक अच्छा मनोविनोद का माधन है, इसमे सन्देह नही, लेकिन अब तो राजस्थान की राजकुमारिया मेमो का कान काटने लगी है। लम्बे केशो को कटवाकर चोटीकटी वन गई है। यह स्मरण रखना चाहिए, कि 'मोडी राड' (बालमुडी स्त्री) कहना राजस्थान मे पहले भारी गाली समझी जाती थी। अब तो ससुराल की मनुआरो की आवश्यकता भी नही ह। सगाई होते ही राजकुमारी अपने भावी पति के साथ घूमना, खेलना, खाना सब करती है।

हा, तो अन्त पुर मे आये जमाई की यह मनुआर आधी रात तक चलती रहती हे। पर्दे के पीछे से स्त्रिया कनात मे छेदकर अच्छी तरह देख नही सकती, लेकिन सुनने का उन्हे पूरा अधिकार है। शराब की चुस्कियो के साथ-साथ इस समय तरह-तरह की पहेलिया भी जमाई-राजा से पूछी जाती है। कोई कनात के भीतर से पूछती है—"खडबड खोपा दिराओ (दिलवाओ)"। खडबड खोपा ससुर के लिए पारिभाषिक शब्द है।

कोई कहती—"कागउडावनी बखशाओ।" कागउडावनी सास को कहते है। यदि समझदार जमाई हुआ, तो वह भी रस लेकर जवाब देते हुए कहता है—"कागउडावनी जो मै दे दू, तो मेरा लाड कौन करेगा ?" फिर कोई पूछती है—"केसरिया साडी और कुन्दन की टीकी दिराओ।" यह बहू का सकेत है। जमाई कहता है—"यदि उसे दे दू, तो मेरे यहा आने की क्या अवश्यकता थी!

इस प्रकार बारह-एक बजे रात तक मनुआर और पहेलिया चलती रहती है। यही खाने का थाल आ जाता है, और एक ही थाल मे दोनो भोजन करते है। जब जमाई का यह अभिनय बुढापे तक चल सकता है, तो वर-वधू के लडके क्या पोते भी हो सकते है। छोटे बच्चे होने पर वह भी मा-बाप या नानी के पास बैठे इस तमाशे को देखते रहते है। गौरी के बाबोसा का एक समय इसी तरह ससुराल मे स्वागत चल रहा था। बाबोसा ने ग्यारह-बारह वर्ष की गौरी को किसी

बहाने उसके ननिहाल मे भेज दिया । पीछे गौरी को मालूम हुआ, तो वह बहुत लडी––"मुझे तुमने नही देखने दिया । सुनते है, बडा-बडा तमाशा हुआ था।" इस अन्त पुर की महफिल के बाद वही किसी कमरे मे बहू और जमाई सोने चले जाते है। सबेरे उठकर जब जमाई वापस जाता है, तो मास और सरहजो को अपना मुजरा (प्रणाम) भेजता है, जिसके उपलक्ष मे अन्त पुरिकाए उसे पाच-पाच रुपया या मुहर भेजती है। जमाई-राजा चाहे महीने भर रहे, छ महीने या साल भर, रोज शाम को बाग मे बुलौवे के लिए गाती-बजाती स्त्रिया जायगी, रोज आधी रात तक अन्त पुर मे मनुआर चलेगी, और रोज बिदाई के समय उन्हे रुपये या मुहर मुजरे के जवाब मे मिलेगे। यह मनोरजक अभिनय शादी के दूसरे दिन से शुरू होता है, और जमाई के जीवन भर ससुराल मे चलता रहता है ।

× × × ×

गौरी रूढियो के विरुद्ध विद्रोह करने का भाव बचपन से ही रखती थी, लेकिन राजस्थान के अन्त पुर के रवाज इतने कडे थे, कि उनको हटाने का प्रयत्न पत्थर की दीवार से शिर टकराने से कम नही था। अभी वह समय नही आया था, जब कि राजकुमारिया बालकटी बनती, और मुह खोले जहा चाहे तहा घूम सकती। बाबोसा ने जोड मे एक अच्छी कोठी बनवाई थी, जिसके साथ बहुत काफी खेत और जमीन थी, जो दीवारो से घिरी थी। चौमासे के महीनो मे बाबोसा जोड चले जाते, और प्राय चार महीने वही रहते। गौरी स्वय ही उन्मुक्त वातावरण का आनन्द नही लेना चाहती थी, बल्कि अपनी मा और याया को भी उसमे सम्मिलित करना चाहती थी। ऊची चहारदीवारी से घिरा रहने के कारण कोठी के पीछे के बाग और खेतो मे ऐसे पुरुषो के आने की सम्भावना नही थी, जिनके सामने अन्त पुरिकाए मुह न खोल सकती हो । रात मे उधर जाना पसन्द नही किया जाता था, क्योकि वहा बहुत साप निकलते थे। खेत मे उस समय ककडी और मतीरे (तरबूज) मिलते, बाजरे के सिट्टो (बालो) का होला भूना जाता। वही एक छोटा-सा तालाब था, जिसमे खूब नहाते। रेत के टीले तो सलमाडा मे सभी जगह मिल सकते है। इस हाते मे भी कितने ही टीले थे, जिन पर गौरी और उसकी बहिन खूब खेलती-कूदती। जिस समय पानी से रेत भीगी होती, उस समय मन्दिर बनाती, और छोटे-छोटे लड्डू बनाकर उससे मन्दिर के ऊपर कलश लगाती। अकेले ही इन खेलो के खेलने की अवश्यकता नही थी। उसकी बूजी (मा), याया और जीजी भी खेल मे शामिल हो जाती। कभी गौरी को

पनिहारिन का ख्याल आता, तो वह कुए से पानी निकालने लगती, जिसमे मा और याया को भी शामिल कर लेती। लेकिन सौ-सौ हाथ की रस्सी लगनेवाले कुए से पानी निकालना उनके बस की बात नही थी। दो-चार हाथ मे ही मा और याया की सास फुलने लगती, और वह हाथ खीच लेती। लेकिन गौरी घडे मे पानी निकाले बिना नही रहती, बल्कि घडे को शिर पर रख घूघट निकाल पनिहारिन बनकर वह कोठी के भीतर तक जाती। खेत मे गवार या मोठ की फलिया लगी रहती। उन्हे भी अन्त पुरिकाए अपनी चुनरियो के छोर मे तोडती, कच्चे मतीरो को भी तरकारी के लिए तोड लेती, और सब मालन बनकर अपने-अपने पल्ले मे साग-सब्जी लिए लौटती। इस विशाल हाते के भीतर घूघट का कही पता नही था। पुरुष वहा वही होते, जिनके सामने अन्त पुरिकाओ को घूघट निकालने की आवश्यकता नही थी। हा, वहा जाने के लिए भी ठाकुर साहब की इजाजत लेनी जरूरी थी, और गौरी के कहने पर बाबोसा इनकार करना नही जानते थे।

जसपुर मे उतनी स्वतन्त्रता नही थी। राज्य के और ठेकानो के जागीरदारो की हवेलिया नगर के भीतर है, वहा सलमियो को बाहर अपनी हवेलिया बनाने की इजाजत दी गई। कहते है, जसपुरवाले सलमियो की आन और अकड से डरते रहते थे, इसलिए उन्हे चमक-दरवाजे से बाहर रहने के लिए कहा गया था। इस दरवाजे से बाहर जानेवाली एक सडक पर खलाणा, नरपुर और मगलपुर की हवेलिया (हौस) पास-पास मे थी, जिनमे नरपुर के दो और मगलपुर के दो हौस थे। इनके आगे-पीछे काफी जमीन थी, लेकिन पीछे की जमीन का कोई उपयोग नही लिया जाता था, यद्यपि वहा कुए बने हुए थे, जिनके सहारे बाग या साग-सब्जी की खेती अच्छी तरह की जा सकती थी। चमक-दरवाजे से ही अलग होनेवाली दूसरी सडक पर सिवपुर, बीमो, खोलरी, दासा, मसोर के सलमिया ठाकुरो की हवेलिया थी। इन हवेलियो मे कोई एकमजिला और कोई दोमजिला थी। खलाणावालो की कोठी तीनमजिला थी। आगे की ओर दूब और किसी-किसी ने फूल लगा रक्खे थे। पर्दे की ठाकुरानिया हवेली के सामने से मोटर पर कैसे चढ सकती थी? उनके लिए मोटर कोठी के पिछवाडे जाती, जहा सीढियो से उतरकर वह इनपर सवार हो जाती। जसपुर मे अपनी हवेलियो के पीछे दिन मे भी अन्त पुरिकाए घूम-फिर सकती थी। यद्यपि पास की दूसरी हवेलियो से पुरुष उन्हे देख सकते थे, लेकिन सलमिया तो सभी आपस मे भाई-बहिन होते है, इसलिए उसकी उतनी परवा नही की जाती थी। मगलपुर

की अपनी हवेली के पीछे भूरी-भूरी रेत थी, जो वर्षा मे जम जाती थी। गौरी को वहा बैठकर खाना खाना बहुत पसन्द था। वहा वह कितनी ही बार अपनी सहेलियो को लेकर गिल्ली-डण्डा भी खेलने जाती। एक बार तो गिल्ली लगने से उसके पर मे बहुत चोट आ गई थी।

जसपुर मे गौरी सलमियो के मुहल्ले की अपनी हवेली मे रहना ही ज्यादा पसन्द करती। उसके ननिहाल चाचला की हवेलिया शहर के भीतर थी, जहा भारी पर्दे के कारण दम घुटता था और खेलने के लिए वहा उतनी जगह भी नही थी। नगर मे अगर कोई चीज गौरी को खीचकर ले जाती थी, तो वह बीरन मामा और मासी का प्रेम था, नही तो वह उसे जबर्दस्त जेलखाना मानती थी।

गौरी अपने शहर के बाहरवाले घर से दो घोडो की बग्गी पर चढकर ननिहाल जाती। दो वर्दीधारी साईस पीछे, और एक वर्दीधारी कोचवान आगे बैठता। कोचवान के पास हाथ मे तलवार या बन्दूक लिये एक राजपूत बैठा रहता। बग्गी के पीछे चार सवार चलते। बग्गी के ऊपर रस्सी से कसकर बधा हुआ लाल पर्दा रहता, लेकिन गौरी को इस बग्गी की सवारी मे कभी वैसा तजर्बा नही हुआ, जैसा कि सिनेमा देखनेवाली ठाकुरानियो को एक रात हुआ था।

गौरी के बडे बाबोसा ठाकुर रूडसिह नरपुर गोद गये थे। उनकी गोद लेनेवाली मा मर गई थी। इस तरह के शोक के समय कोई गाना-बजाना नही हो सकता था, लेकिन बाजा बजाना तो गौरी के लिए मनबहलाव का एक बडा साधन था। वह उससे अपन को वचित नही रखना चाहती थी। मगलपुर के गढ मे चार गोल-गोल बुर्ज (मीनार) है, जिनमे तीन तीनमजिले है और एक पाच मजिल का। इन बुर्जो मे छोटी-छोटी गोल-गोल कोठरिया है। गौरी अपना हारमोनियम ले पच-मजिले मीनार की निचली कोठरी मे चली जाती और वहा कितनी ही देर तक बाजा बजाते गुननाती रहती।

अध्याय १०

ब्याह

गौरी बाबोसा की लाडली बेटी थी। बाबोसा की अपनी लडकी वन्दनीकुमारी का ब्याह हो चुका था। अब घर मे यही एक छोटी लडकी रह गई थी। अपना लडका तो कोई था नही, इसलिए बाबोसा और गौरी की मा अपनी लडकी के ब्याह मे सारा हौसला निकाल लेना चाहते थे। एक साल पहले ही से ब्याह की बडी तैयारी होने लगी। बारात मक्खनपुर आती, इसलिए वहा और भी ज्यादा तत्परता देखी जाती। कुम्हारो ने ब्याह के लिए तरह-तरह के बरतन बनाने शुरू किये। मजूर जानवरो के लिए घास जमा करने लगे। मोची जूते बना-बना घर भरने लगे। कितने ही सुनार गढ मे डेरा डाल वहा सोने, मोती और जडाऊ के जेवरो को बनाने लगे। चादी के बर्तनो और दूसरी चीजो के बनाने का काम ठठेरो ने लिया, जिनकी मदद के लिए सुनार (बढई) वहा मौजूद थे। पलग के पाये और मसहरी के डण्डे चादी की पत्तर लगाकर बनाये गये। एक बडा घडा (कलश) और नहाने का टब भी चादी का बना। तीन-चार सेर पानी अमाने लायक टोटीदार रामसागर (झारी), बडा थाल, कटोरिया, दो बडे कटोरे, चार प्लेटे, कई गिलास, पीकदानी, चिलमची, ढकनो सहित चार देगचिया, एक कडाही, चिमटा, चम्मच, कलछी, चाय का सेट, टिफिनकॅरियर—सभी ठोस चादी के बनाये गये। चौपड खेलने की गोटिया और दो सौ के करीब कौडिया, शतरज की मुहरे सभी चादी की बनी। शराब रखने की बोतल चादी की थी और दो चुस्कियो मे एक सोने की और दूसरी चादी की थी। चादी की मूठ का एक जोडा चवर, चादी का ही प्रसाधनबक्स था। कलम-दावात, कसलदान, सिदोरा, सुरमादानी, सलाई, चाकू सभी चादी के बनवाये गये। बाल झाडने के लिए सूअर के बालोवाला चादी की मूठो सहित ब्रुश तैयार किया गया। पलग ढाकने की चादर के कोनो पर लटकनेवाली झैरिया भी चादी की थी। इस प्रकार चादी का बहुत-से बर्तन-भाडा और दूसरे सामान ठठेरो ने बनाये ।

जेवर—दहेज मे गौरी को जितना आभूषण और दूसरी चीजे मिली, उतना

सभी लडकियो को मिलता है, यह नही समझना चाहिए । सोने के ठोस जेवरो मे सुनारो ने निम्न चीजे बनाई—हाथ के लिए एक जोडा बाजू, एक जोडा गोखरू (कगन), जोडा मासे, पौची, हाथ के गजडे और हाथ की आठो अगुलियो के लिए आठ अग्ठिया तथा करपृष्ठ को ढाकने के लिए हथफूल । गले के जेवरो मे--आड, हाम (हसली), चदरहार, नमवीरे-मढा काठला । शिर के लिए बिन्दी, माग पर लटकनेवाला झोटना पैरो के लिए दो सौ तोले सोने के आभूषण थे, जिनमे एडी से आठ अगुल ऊपर नक चढाव-उनार नौ जोड थे, जिनके नीचे पाजेब (रमझोड), फिर सारे पैर को ढाकनेवाला पगपान, अगुलियो के लिए गोलिये (छल्ले) कान की टोटी और साकली छोडकर बाकी जेवर जडाऊ या मोती के थे ।

जो जेवर सोने के थे, करीब-करीब वही सारे मोती के भी थे । केवल हथफूल और पगपान मे मोती नही थे । गले की मनलडी मोती की माला थी ।

जडाऊ—हीरा, पोखराज, पन्ना मानिक, लाल, नीलम आदि बहुमूल्य रत्नो से जडी गहने जडाऊ कहे जाते है, जो सबसे अधिक महगे होते है । पगपान और जोड छोडकर बाकी सभी आभूषणो का एक रूप जडाऊ भी था । जेवरो मे अधिकाश मगलपुर मे बने थे, मोतियो के जेवर बाबोसा ने दिये थे और जडाऊ मे आधे ननिहाल मे मिले और आधे मा ने बनवाये थे । इसी तरह सोने के भी बाटकर बनवाये गये थे । पहले ही इसका निश्चय कर लिया गया था, कि कौन-कौन-से जेवर ननिहाल से आयेगे, इसलिए एक ही तरह के दो-दो जेवर नही बने । जौहरियो के यहा से बहुत कम जेवर लिये गये, क्योकि लोगो की धारणा थी, कि अपने यहा सुनार बैठाकर जेवर बनाने मे द्रव्य ज्यादा शुद्ध होता है । अगूठियो मे हीरे, पन्ने या पोखराज जडे हुए थे । कानो की बालिया भी जडाऊ थी । कानो के पास से शिर के ऊपर तक लटकनेवाली मोतियो की लडिया थी । झोटने मोतियो के थे, जिनमे जडाऊ चाद था, जिससे तीन-तीन जडाऊ मछलिया लटकती थी । नाक की पाच-छ लौगे (काटे) भी जडाऊ थी । शिर मे जडाऊ चाद-सूरज, बाहो मे जडाऊ बाजू । हसली मे अगूठेभर का पोखराज जडा हुआ था । अँगूठियो मे हीरे के बडे टुकडे थे । गौरी के लिये सोना, मोती और जडाऊ जेवरो के तीन सेट बने थे । सबका दाम लाख से क्या कम रहा होगा ।

वर के लिए पचास हजार के मूल्य का पन्नो का एक कण्ठा था, जो पहले गौरी के पिताजी का था । सिरपेच मे जडाऊ हीरे आदि लगे हुए थे । एक अगूठी हीरे की थी । वर के कानो की लौगे भी हीरे की थी । पैरो और हाथो के कडे सोने के थे । वर को दी जानेवाली तलवार की मूठ सोने की तथा

रत्नजटित थी। ससुर के लिए सिरपेच कीमती तैयार किया गया था, और बारात मे आनेवाले बीस-पच्चीस बडे ठाकुरो, ताजीमी ठेकानेदारो के लिए भी मोती या मन्ने की कण्ठिया तैयार की गई। सबको एक-एक सिरोपा देना था, जिसमे जरी की पगडी शेरवानी के लिए बिना सिला किनखाब, एक-एक जरी का दुशाला, पायजामे के लिए सफेद कपडा तैयार रक्खा गया था।

यह निश्चित ही है, कि जिम तडक-भडक के साथ विवाह का स्वागत-सत्कार होनेवाला था, उसकी तैयारी करने के लिए काफी समय की अवश्यकता है। गौरी के ब्याह मे दो हाथी दिये जानेवाले थे, जिनमे से एक ननिहाल से आया था। बरातियो को अधिका" था, वह हाथी न लेकर उसकी जगह रुपया ले सकते थे। ननिहाल के हाथी को उन्होने नही लिया, और जिसको ले गये, उस पर चादी की अमारी थी, शिर से आधे सूड तक लटकती चादी की सीरी (जेवर) थी। इसी तरह पूछ की ओर लटकनेवाली पिछौन भी चादी की थी। कानो मे बडे-बडे चादी के बिजली बाले थे और कण्ठ मे घुघरूवाला चादी का कण्ठा। उसी तरह पैरो मे चादी का बाजना था। हाथी के ऊपर जरी का रेशमी झूल पडा हुआ था। आठ बडी जात के घोडे दिये गये थे, जिनमे दो के जेवर सोने के और दो के चादी के थे। चोबदारो को एक छडी सोने की और एक चादी की दी गई थी। सलमाडा मे कही-कही अच्छी जात के घोडे ठाकुर लोग स्वय पैदा करते है, जिन्हे ठेकानो के सवारो के लिए काम मे लाया जाता है। कितने ही अच्छे घोडे व्यापारी पश्चिम से लाते है। दहेज मे दो ऊट, सात भैसे और कई गाये दी गई थी। बैलो की जोडी के साथ एक रथ दिया गया था। बैलो के जेवर चादी के और झूल रेशमी थे। ब्याह के समय (१९२५ मे) अभी मोटरो का रवाज नही था, लेकिन छ-सात महीने ही बाद जब मुकलावा (गौना) हुआ, तब एक मोटर भी वर को चढने के लिए दी गई।

जैसे सुनार, ठठेरे और सुतार अपने काम मे लगे थे, वैसे ही दर्जी भी बैठे कपडा सी रहे थे। राज और मजूर मकानो की सफेदी और मरम्मत मे लगे थे। बाबोसा और गौरी की मा के प्रति प्रजा का इतना स्नेह था, कि लोग बडे चाव से आ-आकर शादी की तैयारी मे हाथ बटाते थे। बरात के खाने की चीजो को देने का काम मोदियो और हलवाइयो को सौपा गया था, इसलिए उन्हे केवल अन्दाजा बतला दिया गया था, जिसके अनुसार मोदियो ने घी, चीनी और दूसरी चीजे जमा करनी शुरू की। बरात मे चार-पाच मन पापड और बडी का खर्च

था, जिसे घर मे ही बनाना था । नायनो का काम था दाल धोना, और लौडियो का पीसना । नगर मे बनिया-महाजनो के यहा न्योता दे दिया गया था । सभी घरो से स्त्रिया अन्त पुर मे आकर पापड बेलती और बडी बनाती । सब काम गाने-बजाने के साथ होता इसलिए गढ मे बडी चहल-पहल थी ।

कन्या सोलह-सत्रह वर्ष की छोटी तो नही होती । वह सब जान रही थी, तो भी लाज के मारे छिपने की कोशिश करती । कन्या के मन मे कभी यह ख्याल आता, अब बाबोसा और मा-साया से मिलना सपना हो जायेगा, तो वह दु खी होती और कभी पति के पास जाने और एक नये नगर की रानी बनने का आनन्द भी होता । गौरी और लडकियो की तरह तेरह-चौदह साल की उमर तक अर्थात् सगाई से पहले नीचे सफेद रेशम या लट्ठे का गरारा और ऊपर कमीज पहनती । गरारा इतना चौडा पायजामा होता है, जो दूर से देखने मे घाघरा जैसा मालूम होता है । इसी को आजकल साडी के विरुद्ध पाकिस्तान की स्त्रियो ने राष्ट्रीय पोशाक बना लिया है—उन्हे साडी मे हिन्दूपन की बू आती है । गरारे और कमीज पर ओढनी लेने की अवश्यकता नही समझी जाती, इसलिए शिर नगा रहता । लेकिन गौरी को पनिहारिन का स्वाग करने का बहुत शौक था, जिसके लिए घूघट निकालना भी जरूरी था, इसलिए अभिनय के समय वह घाघरा-लुगडी भी इस्तेमाल करती । सगाई के बाद ही गरारा छोडने की अवस्था आ गई, और घाघरे के पहिनते ही अब शरम आने लगी । अब वह घाघरा, कमीज और चुनरी पहिनती । राजस्थान मे काचली विवाहिता स्त्रिया ही पहनती है । अब लडकपन के खेलो मे भी उसके अन्तर और चाल-व्यवहार मे गम्भीरता आ गई थी, जिसे देखकर बाबोसा कहते—"अब तो तू सयानी हो गई है ।" गौरी इस समय तन्वगी किन्तु चेहरा भरा हुआ था ।

राजकुमारियो और ठाकुर-कुमारियो को दहेज मे कुछ लडकिया भी मिलती है, जो दासता के युग मे खरीदकर दी जाती रही । अब वह अपने खवासो और लौडियो की लडकियो मे से लेकर दी जाती । वर के साथ आये हुए उधर के खवास तरुणो मे से ही चुनकर इन लडकियो को उसी समय ब्याह दिया जाता । कभी-कभी इन लडकियो के मा-बाप उनके भावी वर को देखकर पसन्द भी कर लेते, लेकिन अधिकतर इसका फैसला बरात के आने पर ही होता । गौरी को दी जानेवाली पाचो छोरियो मे से एक तो सिर्फ ढाई महीने की थी, दो पाच-छ वर्ष की थी और दो बारह-तेरह वर्ष की थी । बडी लडकिया सब जगह कहती फिरती, हमारा तो व्याह होनेवाला है हमारे वीद

(दुल्हा) आयेंगे। उनको इसके लिए बड़ी प्रसन्नता थी, लेकिन वैसी प्रसन्नता गौरी को नहीं थी।

अगहन (मार्गशीर्ष, १९०८ ई०) के महीने में ही गौरी का जन्म हुआ था, और १९७५ ई० के जाड़ों में उसी महीने के शुक्ल पक्ष में ब्याह हुआ। उस साल सर्दी बहुत ज्यादा थी। ब्याह में बीस दिन पहले कन्यापक्ष की ओर से लगन की चिट्ठी खलपा भेजी गई। लगन का दिन मंजूर कराकर लगन-पत्री ले जानेवाले आदमी लौट आये। फिर पन्द्रह दिन पहले शुभमुहूर्त देखकर 'ब्याह हाथ लिया' की रसम अदा की गई। कन्या को बैठाकर पुरोहित ने पूजा कराई, फिर हलदी में रंगे पीले चावल थाल में रखवाये। उसी दिन लौंडियों ने जाकर नगाड़े की पूजा की, नगाड़े बजानेवालों के सिर में तिलक लगा उन्हें नेग दिया। इसी तरह शहनाईवालों की भी भेंट-पूजा की गई। अब से शाम-सबेरे रोज गढ़ के फाटक पर बाजा बजने लगे। उसी दिन मृगधणा की पूजा की गई। बरात में लकड़ी का खर्च बहुत होने से कई गाड़ियां ईंधन लेना पड़ता है। इन ईंधन-लदी गाड़ियों को मृग-धणा कहते हैं। मृग-धणा पूजते वक्त बैलों और गाड़ीवान को भी टीका लगाया जाता है, भेंट दी जाती है।

'पीला चावल करने' के दिन से कन्या के बाल खोल दिये जाते हैं, वह तेल नहीं लगाती, न बाल संवारती है। उस साल सर्दी बहुत सख्त पड़ रही थी, इसलिए शायद धोने-नहाने की हिम्मत भी न पड़ती, लेकिन यहां तो वह जरूरी भी नहीं समझा जाता। 'पीला-चावल' के दिन पहनी घाघरा-लुगड़ी ब्याह के दिन तक चली जाती है सिर्फ रात को उसे बदल लेते हैं, दिन में फिर वही घाघरा-लुगड़ी शरीर पर आ जाती है। दूसरे दिन सबेरे दातवन करने के बाद उबटन करना शुरू हो जाता है। इसके लिए बादाम की पीठी पीसकर सखियों-सहेलियों को दे दिया जाता है। उबटना अधिकतर मुंह और हाथों पर किया जाता है। उस सर्दी में उबटना कराना बेकार समझ गौरी सखी-सहेलियों को कह देती—"मुझे तो सर्दी लग रही है, तुम हीं कर लो।" उस दिन से नाश्ते में पुष्टिकारक गोंद के लड्डू, बादाम का हलवा और दूसरी स्वादिष्ट चीजें इच्छानुसार दी जाती। चार लड़कियों को गौरी की तरह गोंद के लड्डू खाने को मिलते, लेकिन ढाई महीने की बच्ची उसे खा नहीं सकती थी, उसके लिये उसकी मां को दूध का दाम मिला था। हां, इतनी कृपा जरूर की गई थी, कि उसका ब्याह उसी समय नहीं कर दस वर्ष की हो जाने पर किया गया।

पाच लडकियो के अतिरिक्त बाबोसा ने एक घर-परिचारक भी गौरी के लिए दिया था ।

गीत के बारे मे तो पूछना ही नही । छ महीने पहले से ही बन्ने और कामन के गीत गाये जाने लगे । चाहे घर की मरम्मत का काम हो या बडी-पापड बनाने का, बिना गीत के कोई काम नही होता ।

यद्यपि गौरी की मा पहले ही से मखनपुर मे याया के साथ थी, लेकिन गौरी अपनी दादी के साथ मगलपुर से मखनपुर तब गई, जब कि शादी को एक महीना रह गया । जाडो का दिन था, इसलिए रेगिस्तान मे तपने-मरने का डर नही था । दोपहर को एक बजे खा-पीकर रथ मगलपुर से मखनपुर की ओर रवाना हुए । रवाना होने से पहले उसी दिन गौरी को ख्याल आया, कि बचपन मे छज्जो पर निर्भय घूमने और कूदने का मौका अब फिर नही मिलेगा, इसलिए वह एक बार फिर खेल खेलने लगी । दादी ने देख लिया और कहा—"तेरी शादी होनेवाली है, जान पडता है, अपनी टाग तुडवा के रहेगी ।" मगलपुर से प्रस्थान करने के एक दिन पहले गढ के दूसरे ठाकुरो ने गौरी का बनौरा (विवाह-भोज) किया । उस दिन गौरी बहुत गम्भीर हो गई थी, बूढे ठाकुर समझ गये—"अब बन्दरी आदमी बन गई है ।"

दादी के साथ गौरी पर्दे के भीतर एक रथ पर बैठी थी, और याया दूसरे रथ पर । एक-एक ऊटो पर दो-दो लौडिया बैठी—ऊटो की सख्या एक दर्जन से अधिक थी । ऊटो पर बैठते ही लौडियो ने ब्याह के गीत गाने शुरू कर दिये, और वह तीन घण्टे सारे रास्ते गाती रही । मखनपुर के पास पहुचने पर कन्या-दल का स्वागत बैण्डबाजे से किया गया । ढोलणिया गीत गाने लगी, नगाडा और शहनाई बजने लगी । एक सजी-धजी लौडी शिर पर चादी के कलश लिये खडी थी । कलश मे गुलदस्ते की तरह पत्तियो सहित छोटी-छोटी नीम की शाखाए सजाई गई थी, जिसके ऊपर चादी का लोटा था । सलमाडा मे आम के अभाव के कारण उसकी जगह नीम की पत्तिया काम मे लाई जाती है । इसी जगह स्वागत करने के लिए आरते के थाल मे कुमकुम, पानी का लोटा, दूब और चावल रखकर लाया गया । पुरोतानी ने पर्दे के भीतर लडकी को कुमकुम का तिलक लगा चावल साट दिया । कलश मे पाच-पच्चीस, एक सौ पच्चीस, जो भी रुपये पडे, वह लौडियो के होते है । ब्याह के वक्त लौडियो के लिए हजार-दो हजार रुपये जमा हो जाना मामूली बात

हैं। आरते के थाल मे पडे रुपये पुरोहित के होते है। ढोलणियो और बाजेवालो को भी अलग-अलग इनाम दिये जाते हैं।

महल मे नायन थोडा-सा दूध मिलाकर पानी लिये बैठी थी। इसी पानी से कन्या और साथ की दूसरी औरतो के पैर पखार उसने इनाम पाया।

मखनपुर मे आने के पन्द्रह दिन बाद 'ब्याह हाथ लेना' और 'पीला चावल करना' की रसम अदा हुई। सलमियो मे तेल उसी दिन चढाया जाता है, जिस दिन बरात आती है। किसी समय एक लडकी की बरात नही आई, और उसे तेल चढाया जा चुका था, इसलिए लडकी को आजन्म कुवारी रह जाना पडा। इसीलिए सलमियो मे रवाज पड गया, कि बरात जब तक न आ जाये, तब तक लडकी को तेल न चढाया जाय।

लडकी की ओर के सगे-सम्बन्धी ब्याह से आठ-दस दिन पहले ही आने लगे। कसौरा की बुआ, जोला की बुआ, महुगवाली बुआ, हर एक चालीस-चालीस पचास-पचास नौकर-चाकरो के साथ आईं। बिलवाले जीजा वन्दनीकुमारी के साथ नौकरो-चाकरो को लिये आये। ब्याह के तीन दिन रह गये थे, तब सारे रिश्तेदार जमा हो चुके। हरएक के साथ ऊट, घोडे, रथ और बहुत-से आदमी थे। जानवरो के वास्ते इसीलिए घास की पहले ही से तैयारी की गई थी। सम्बन्धी पुरुषो को धर्मशालाओ, बागो और मखनपुर के सेठो की हवेलियो मे डेरा दिया गया। खाने-पीने की सारी चीजे देने के लिए मोदियो को चिट्ठी मिली हुई थी, कसाई मास देते थे। रसोइये साथ थे, जो अपने मालिको के लिए खाना बनाते। स्त्रिया अन्त पुर मे रहती, उनका खाना-पीना घर की स्त्रियो के साथ होता। सभी सगे-सम्बन्धी अपने नौकरो-चाकरो के साथ ढाई हजार से कम नही थे।

ब्याह के जब तीन दिन रह गये, तो बडा विनायक बनाने के लिए गाते-बजाते लौडिया कुम्हार के घर मिट्टी लेने गईं। मिट्टी लाकर तिबारे (शाल) मे रख दी गई और पुरोतानी ने उससे विनायक (गणेश) की मूर्ति बना दी, जो मूर्ति की जगह लोदा-सी मालूम होती थी। ब्याह मे गणेशजी की पूजा सबसे प्रधान होती है, इसलिए कुम्हार के घर से लाई मिट्टी के विनायक पर ही सन्तोष न कर उसी दिन कारीगर आकर शाल की दीवार पर 'माया' बना देता है। माया का अर्थ है बीच मे गणेशजी और अलग-बगल मे चवर डुलाती रिद्धि-सिद्धि। गणेशजी के सामने एक चौकी पर थाल मे लड्डू और पास मे ही चूहे का भी चित्र बनाना आवश्यक

समझा जाता है। उस दिन नौ-दस मन लापसी और घूगरी बनाई जाती है। लापसी के लिए गेहू का दलिया घी मे भूनकर लाल करके उसमे गरम पानी डाल दिया जाता है। गुड डालना होता है, तो उसे पानी मे घोलकर, नही तो ऐसे ही चीनी डाल दी जाती है, हलवे की तरह चासनी नही बनाई जाती। बिना नमक का उबाला गेहू-चना घूगरी कहा जाता है, जिसे चीनी डालकर या फीका ही खाया जाता है। लापसी और घूगरी सारे गाव मे बाटी जाती है, इसीलिए इतना अधिक बनाया जाता है।

रातीजगा—ब्याह की पहलेवाली सारी रात स्त्रिया गीत गाती जागती रहती है। गणेशजी के पास निवारे की दीवार मे लडकी के हाथ मे महावर लगाकर छाप लगवा दी जाती है। उस दिन लडकी को सात ऐसी स्त्रियो के साथ सोना होता है, जिनका अपने पति के साथ बहुत प्रेम होता है। दूसरी स्त्रिया तो रसम पूरी करके चली गई लेकिन जीजी वन्दनीकुमारी सारी रात अपनी बहिन के साथ सोई। रातीजगा के गीत दस बजे रात मे शुरू हुए, तो सुबह चार बजे ही जाकर खतम हुए। अगले दिन सवेरे की विधि थी कुरडीपूजा। 'कुरडी' गाव के कूडे-करकट फेकने की जगह (घूरे) को कहते है। कूडा-करकट रखने की जगह की पूजा न जाने किस ख्याल से आरम्भ हुई। थाल मे कुमकुम, नीले सूत की लच्छी को लिये लडकी अपनी लौडियो और सहेलियो के साथ कुरडी-पूजा करने जाती है।

बरात—बरात को सुबह ही लडकी के गाव पहुचना चाहिए। खलपा से वर, उसके पिता, सम्बन्धी तथा तीन सौ के करीब आदमी स्पेशल ट्रेन से मालर जकशन से चढकर मखनपुर पहुचे। वर की जमात को जिस तरह बराती कहा जाता है, उसी तरह लडकी के ओर की जमात को माडेती कहते है। शायद उनका माड-भात का सम्बन्ध होने से यह नाम पडा। बरात को बधाई देने के लिए माडेती बडी सख्या मे स्टेशन गये। माडेती के यहा बधाई देने के लिए वर की ओर से नाई आया। उसे चावल, लापसी, घी-चीनी, साग-फुलके खिलाये गये। खा लेने पर एक स्त्री ने उसकी पीठ पर मुक्का मारा, और हलदी-लिभडे हाथ से पीठ पर छाप भी लगा दी। बधाई देने के लिए आये नाई को पाच-पच्चीस रुपये या मुहर इनाम दिये गये।

सौ-डेढ सौ माडेती बरातियो को लिवाने के लिए स्टेशन की ओर चले। बरात देखने के लिए सारी दुनिया उमड पडी। मखनपुर नगर से स्टेशन एक मील पर है। तीन सौ की बरात दूर से आई थी, और सो भी रेल से, इसलिए अपने साथ हाथी-घोडा, रथ लाना उसके लिए मुश्किल था। बैण्डबाजा और नाचने के

लिये रण्डिया साथ आई थी, बाकी सारा इन्तजाम माडेतियो को करना पडा—सत्रह हाथी, बहुत-से घोडे, ऊट, पलटन, बाजे आदि इधर ही से किये गये थे। खूब अच्छे कपडे-लत्ते पहने हाथियो, घोडो पर चढे बराती माडेनियो के सामने गये। बरातियो ने सबसे ऊचे हाथी पर वर को चढाया था। उसके साथ केवल दो चवर डुलानेवाले थे, ससुर अलग हाथी पर थे। बूढो के लिए बैलोवाले तागे थे। कितने ही लोग घोडो पर और कितने ही ऊटो पर सवार थे। नौकर-चाकर पैदल चल रहे थे। दोनो ओर के आदमियो के साथ अपार जनता शामिल हो गई थी, जिससे स्टेशन से मखनपुर तक के एक मील के रास्ते पर एक भारी जलूस फैला दिखाई पड रहा था। सबसे पहले ऊट थे, जिन पर खाली फैर करने के लिए लम्बी नलियोवाली पुराने ढग की जूजर्वी (बन्दूके) थी। उसके बाद ऊट पर नगाडा था। फिर निशान का हाथी, जिसके ऊपर एक बडा झण्डा लिये आदमी बैठा था। उसके पीछे नगाडेवाला घोडा था। फिर घोडे पर निशान और चादी-सोने की छडी लिये हुए पाच-छ चोबदार चल रहे थे। बैण्ड, मश्कीबाजा, शहनाई आदि बज रही थी। साथ मे रण्डिया चल रही थी। जलूस जहा-तहा थोडी देर के लिए ठहर जाता और वहा उतरकर रण्डिया कुछ नाच-गाना करती। पैदल या दूसरे लोग चल रहे थे। पचास-साठ झण्डी लगे भालावाले सवार भी थे। बाबोसा हाथी-पर चल रहे थे। बरात नगर के भीतर घुस उसकी सडको पर चलने लगी। यह बतला चुके है, कि गौरी की मा अपने दयालु और परोपकारी स्वभाव के कारण अपनी प्रजा मे बहुत प्रिय थी। पुत्र न होने के कारण उसने बालसिह को गोद लिया था, लेकिन सभी जानते थे, कि ठाकुरानी की यही एक कन्या है। शहरवालो को किसी को कहने की भी अवश्यकता नही थी, पास से बरात के गुजरते ही स्त्रिया गाने लगी—

काकड आया राइवर, थरहर काप्या राज।
पूछो सिरदार बन्नीणे, कामण कुण कर्‌या छा राज।

माडेती गढ मे आ गये। बाबोसा ने अपना डेरा तम्बुओ मे रक्खा था। वरात के खाने का इन्तजाम जनवासे मे हुआ था। ग्यारह बजे के करीब बरात जनवासे पहुची।

उधर बरात के स्वागत और जलूस का काम चल रहा था, इधर अन्त पुर मे स्त्रिया गाने-बजाने के साथ उसी दिन सबेरे झिलमिल की आरती तैयार कर रही थी। हल्दी मिलाकर गूधे आटे को सीको पर चिपकाकर उनसे पिजडे की तरह

का एक छोटा-सा ढाचा तैयार किया जाता हैं, जिसके भीतर आटे का ही दीवा रहता हैं । झिलमिल करने के लिए उसमे जहा-तहा गोटा-पट्टा और किरणे लगा दी जाती है । जिस वक्त बरात नगर मे आई, उस वक्त अन्त पुर के किसी झरोखे से भावज और सहेलियो ने गौरी को ले जाकर बरात को दिखलाया, लेकिन वह कहा देखना चाहती थी? इस समय रसम के तौर पर बाजरे के दाने के बराबर अमल (अफीम) को एक घूट शराब मे मिलाकर वधू को पिला दिया जाता है, और उसके बाद उसे खासने-खखारने के लिए कहा जाता है ।

वर की उमर कन्या से एक साल बडी अर्थात् अठारह साल की थी । वह न दुबला था न मोटा । लोग उसके रूप की तारीफ कर रहे थे, और वह दुलहन के कान तक भी पहुचे बिना नही रह सकती थी ।

चाकपूजा—तीन बजे अन्त पुर की लौडिया गाती-बजाती कुम्हार के घर चाक पूजने गईं, जहा चार-पाच ने खूब नाचा भी । कुम्हार के घर से इसी समय विवाह-मण्डप के लिए आठ बडे-बडे घडे (बडवेवडा) लाये गये । चार सजी-धजी सुन्दरियो ने दो-दो घडे उठाये । हर एक घडे पर एक कुल्हड और एक ढक्कन थे । ऊपर-नीचे दो घडो को शिर पर रखकर लौडिया एक पाती से चल रही थी, आगे-आगे बॅण्ड बज रहा था । वे घडे को लिये तिबारे मे माया (गणेशजी) के पास आईं । उधर आगन मे बीस हाथ का शमी का एक सूखा स्तम्भ (माडा) गाड दिया गया था । स्तम्भ के निचले भाग मे खोदकर दीया रखने की जगह बनी थी । इसी खम्भे (माडे) के चारो तरफ चार खम्भो के ऊपर कपडे का शामियाना ताना गया—यह विवाह-मण्डप था । चारो खम्भो के पास कुल्हडो और ढक्कनो से ढके दो-दो घडे रख दिये गये, फिर वहा कन्या को ले जाकर माडे की पूजा करवाई गई । बेचारी गौरी को दोपहर बाद पूजा करने के अनन्तर खाना मिल जाना चाहिए था, लेकिन काम की भीड और उत्साह मे सब स्त्रिया इतनी भूल गईं, कि किसी को यही ख्याल नही आया, कि सबेरे से भूखी दुल्हन-रानी को कुछ खाने के लिए दे दे । चौबीस घण्टे का अखण्ड निराहार व्रत रह जाना पडता, लेकिन आठ बजे रात जाते-जाते भूख का सहना दुल्हन के लिए असम्भव हो गया । वह रोने लगी, फिर लोगो को मालूम हुआ, और जल्दी-जल्दी उसे कुछ खिलाया गया ।

चाक पूजने के बाद एक रसम थी भातियो के डेरे मे भात लेने जाना । भातिये ननिहालवालो को कहा जाता है, जिनका लडकी के ब्याह मे बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान होता है । अपनी सामर्थ्य के अनुसार वह भी उतने ही उत्साह के साथ खर्च-बर्च करते हैं, जितने लड़की के मा-बाप । गौरी के भातिये बहुत सज-धजके हाथी

घोडो के साथ आये थे। मखनपुर आते जैसे ही सीमा के भीतर का पहला दरख्त आया, उन्होने एक थान कपडा उसके ऊपर फेंक दिया। इसी तरह आगे चलते जो भी दरख्त आया, उस पर एक-एक थान फेंकते आगे बढे। वे अपने साथ हजार-डेढ हजार थाल लाये थे, जिनमे से किसी मे जेवर रक्खे थे, किसी मे कपडे, किसी मे मिठाइया और किसी मे फल-मेवा और दूसरी चीजें। रास्ते मे थान उडाते इसी तरह वह गढ के पास पहुचे। थान मलमल की चुनरिया थी, जो डेढ सौ के करीब वृक्षो पर ओढाई गई। गढ के फाटक पर भी एक चुनरी ओढाई गई और जनानी ड्योढी पर भी एक। पहले एक साफा जमाई को दिया गया, फिर भाई ने बहिन को (दुल्हन की मा को) चुनरी ओढाई। बहिन ने भाई के माथे मे तिलक लगा चावल की जगह सच्चे मोती चिपकाये। एक छोटे चादी के लोटे मे चीनी घोलकर उसमे भाई का मुह लगवाया, फिर बहिन-भाई गले मिले, और इस प्रकार भातई का दस्तूर पूरा हुआ।

चार बजे शाम को लडकी को 'माया' के पास की कोठरी मे लाकर चौकी पर बैठा दिया गया। तेल-हल्दी लगाने की विधि पूरी की गई। यह कह चुके है, कि सल्मियो मे किसी दुर्घटना के कारण हल्दी-तेल बरात के आ जाने पर ही लगाया जाता है। सात सुहागनो ने तेल-हल्दी चढाई। गौरी के लिए ये सातो थी—कसौरा-वाली बुवा-रानी, जोलावाली बुवा, जीजी वन्दनीकुमारी, याया, भावज (बालसिह की बहू), मगलपुर के दादा होरीसिह (पिता के चचा) की जीजी, और एक पुरोतानी (ब्राह्मणी)। एक-एक सुहागन आगे आई, और उसने एक हाथ मे चूडी और दूसरे हाथ मे दूध ले हाथो की कैंची बना जुडे हाथो से पहले कन्या के दोनो अगूठो को हल्दी-मिले तिल के तेल से छुआ। फिर दोनो घुटनो, कन्धो और अन्त मे ललाट को, इस प्रकार चार जगह तेल चढा उसी क्रम से ललाट, कन्धो, घुटनो और पैर के अगूठो को तेल चढाया। भावज ने तेल चढाते वक्त मजाक करते हुए ननद के गाल मे भी हल्दी-तेल लगा दिया। लडकी को चौकी पर कुर्सी की तरह पैर नीचे रखकर बैठाया गया था, इसलिए चाहे कितनी देर भी बैठना हो, उसे तकलीफ नही हो सकती थी। फिर बहू-सहित बालसिहजी ने आमने-सामने बैठकर पानी डाल-डालके मेहदी की पत्तिया सील पर पीसी, जिसे 'रग बाटना' कहते है। मेहदी बाटते वक्त बाकी स्त्रिया बैठी गीत गाती रही। शादी-ब्याह या कोई भी धार्मिक अनुष्ठान कोठे पर करना अच्छा नही समझा जाता, उसे नीचे के आगन और तिबारे मे ही किया जाता है। बहू के हाथ मे इस पिसी हुई मेहदी को देकर आगे की रसम अदा होनेवाली थी।

तेल चढाने के बाद बहू के नहलाने की विधि हुई। जाडो मे तो अवश्य ही चौदह-पन्द्रह दिन तक कन्या मुश्किल से किसी दिन नहाती है, साथ ही रोज उसके शरीर मे उबटना होता रहता है, इसलिए यह स्नान सफाई की दृष्टि से भी अधिक महत्त्व रखता है। बाप-मा (बाबोसा और याया) गठबन्धन करके दही-मिली मुल्तानी मिट्टी को पहले कन्या को लगाते हैं। बाबोसा पानी डाल रहे थे, और याया मुल्तानी मिट्टी लगा रही थी, यही झोल घालना' है। शिर के बालो मे इस प्रकार दही-मिली मुल्तानी मिट्टी लगाई गई, उधर स्त्रिया गाना गाने लगी। विधि करके बाबोसा और याया के चले जाने पर बारिन ने बालो मे खूब मसल-मसलके दही-मिट्टी लगाई, उबटना किया, फिर सुगन्धित साबुन को लगाकर गरम पानी से नहलाया। अब तक चिराग जलने का समय हो गया था।

लडकी को एक चादर पहना दी गई। स्नान के बाद अब उसे वर के भेजे कपडो को पहनना था। सलमा-सितारा, किनखाब-जरी और गोटे लगे नौ सेट कपडे (बरी) आये थे। हर सेट मे घाघरा-लुगडी, कुर्ती, काचली, हाथी-दात के लाल रगे चूडे थे। चूडे करीब-करीब सारे हाथ को ढाकने भर के थे। केहुनी से ऊपर वाले इक्कीस चूडे कन्धे के पास तक पहुचते थे, कलाई मे भी पाच-पाच चूडे थे। इनके अतिरिक्त जडाऊ नथ और जडाऊ टेवटा ये दोनो जेवर भी थे, जिन्हे सौभाग्य का विशेष चिह्न माना जाता है। इनके साथ बताशे, पान-इतर भी आये थे। हा, नहला लेने के बाद चादर मे लिपटी भाजी को मामा चौकी से उतारने आया, और यह रसम बीरन मामा ने अपनी प्यारी भाजी को गोदी मे ले उतारकर पूरी की। जिस दिन गौरी की शादी थी, उसी दिन बीरन की अपनी सगी बहिन की लडकी का भी ब्याह था, उनके सामने प्रश्न था, दोनो मे किसकी शादी मे शामिल हो। बीरन मामा का गौरी के साथ इतना स्नेह था, कि उन्होने बिना किसी हिचकिचाहट से मखनपुर आना ही पसन्द किया। माया के पास ले जाकर कन्या को कपडा और चूडे बहनें, बुवा और भाभी सुहागिनो ने पहनाये। वधू के बाल उसी तरह खुले और गीले थे। जाडो का समय था और उस साल असाधारण सर्दी पड रही थी, इसलिए जिस हलके कपडे मे कन्या को रक्खा गया था, उससे सर्दी के मारे उसे बडी तकलीफ हो रही थी, दात कटकटा रहे थे। माड-सहित पकाये चावल के पाच लड्डू दे कन्या को माया (देवता) के पास बैठा दिया गया।

× × × ×

इधर अन्त पुर मे कन्या से उपरोक्त विधिया पूरी कराई जा रही थी, उधर

जनवासे से पाच बजे बरात ब्याहने के लिए गढ की ओर रवाना हुई। भारी जलूस था, वाजे बज रहे थे, बन्दूके छूट रही थी, बीच-बीच मे ठहरकर नाच-गाने भी हो रहे थे, इसलिए बरात की प्रगति बहुत धीरे-धीरे हो रही थी। सुबह और शाम को बरात के स्वागत के उपलक्ष मे गढ से तोपे छोडी गई। गढ के पास आ जाने पर बरात की अगवानी के लिए घराती सरदार पैदल ही पहुचे। बरात के सरदार-जी (दुल्हा छोडकर सभी) उतरकर पैदल हो गये। गढ के फाटक के पास पहुचने पर ग्यारह तोपो की सलामी दी गई। यहा समधी-समधी मिले, और सिरोपा तथा निछरावल दी गई। बीद (वर) का हाथी फाटक पर आया। वर ने फाटक पर बधे तोरन को बेत से छूकर तोडने की रसम अदा की। जनानी ड्योढी पर आकर वह हाथी से उतर गया। ड्योढी मे दरवाजे के पास चौकी बिछा, गद्दी लगा दी गई थी। वर ने उस पर भी खडा होकर तलवार से तोरन को छूकर तोडने की रसम अदा की। ड्योढी मे कनात लग गई थी, जिसमे अन्त पुरिकाओ पर किसी की नजर न पड सके। फिर सास चादी के थाल मे झिलमिल आरती जगाये आई। उसके साथ दूसरी सात लाडियो के हाथ मे दीयो के सात थाल थे। सास को भी जमाई के सामने घूघट करना जरूरी था। घूघट के भीतर से देखकर सास ने दुल्हे के माथे मे तिलक लगा सच्ची मोतिया चिपका दी। मजाक करनेवाली स्त्रिया उस वक्त दुल्हे को छेड भी रही थी। कोई उसकी शेरवानी को खीचती, कोई डिबिया मे कुछ रखकर उसके कान के पास खनखनाती। आरती की थाल मे इक्कीस अशर्फिया डाली गई।

दुलहा चौकी पर खडा था। कपडे मे लिपटी कन्या स्त्रियो के बीच मे छिपी थी, जहा से बिना अपने को दिखाये या मुह खोले उसने भात के पाचो लड्डुओ को दुलहे के ऊपर फेका। विश्वास किया जाता है, कि यदि लड्डू छाती मे लगे, तो दोनो का प्रेम बहुत घनिष्ठ होगा, यदि शिर पर तो पति आजीवन पत्नी को अपने शिर पर रखेगा, यदि शिर के ऊपर से निकल जाय, तो उसका अर्थ है वह सदा शिर के ऊपर चढी रहेगी। फिर वर-वधू को भीतर ले जाकर उससे माया की पूजा पीहर के पण्डित ने कराई, जिसके सामने घूघट-पर्दे की जरूरत नही।

मा-बाप ने आकर वर और कन्या के शिर पर सेहरा बाधा। सलमाडा मे जिसे सेहरा कहते है, उसे ही मारवाड मे मोर-मोरी कहा जाता है। मोर वर के साफे के ऊपर बाधा जाता है और मोरी लडकी के घूघट के ऊपर। उस समय वर की पोशाक थी—रेशमी चूडीदार पायजामा, किनखाब की शेरवानी, जरी का कमरबन्द, जरी के कमरपेटे से लटकती तलवार, गले मे मोतियो और पन्नो का

कण्ठा, कानो मे हीरे की लौगे, पगडी के ऊपर कलगीतुर्रा तथा रत्नजटित सिरपेच। एक पैर मे सोने का लगर (कडा) और दूसरा पैर खाली था, दोनो मे सलमे-सितारे का जूता था। शायद हिन्दुस्तान मे कही पर भी जूता पहने देवता की पूजा करने का रवाज नही है, लेकिन राजस्थान मे वर और कन्या दोनो के जूते देवता के पूजने या किसी धार्मिक विधि के समय नही उतरते। सेहरा लगा देने के बाद दोनो का गठबन्धन करा उन्हे चवरी (विवाह-मण्डप) मे ले गये। गद्दीदार चौकी पर दाहिनी ओर कन्या को बैठाया गया और उसी तरह की दूसरी चौकी पर बाई ओर वर को। दोनो पालथी मारकर बैठे। कन्या के मुह पर बहुत लम्बा घूघट था। आस-पास क्या हो रहा है, उसे जानने के लिए वह केवल अपने कानो से सहायता ले सकती थी।

रात के नौ बज चुके थे, जब कि विवाह का हवन शुरू हुआ। पूरे छ घण्टे तक विवाह-विधि होती रही। बावोसा और याया गठबन्धन करके कन्यादान करने के लिए आये। विवाह-पद्धति मे दी हुई सप्तपदी आदि की शर्ते तथा विधिया पूरी की गई। तीन भावरो मे लडकी आगे-आगे थी, दोनो के चारो हाथ जुडे हुए थे, लडकी के हाथो मे वही मेहदी रक्खी थी, जिसे भाई और भाभी ने अपने हाथो पीसा था। औरते गीत गा रही थी। मण्डप मे पुरुष भी थे। ठाकुरानिया पास के कमरो मे पर्दे के अन्दर बैठी थी। सर्दी गजब की थी, और कन्या के शरीर पर वही कपडे थे, जिन्हे गर्मियो मे पहना जाता है, इसलिए उसकी बहुत बुरी हालत थी। उसने पर्दे के भीतर ही भीतर पास की किसी औरत के ओढने को पकडा, फिर अपनी दशा को कान मे फुसफुसाकर बताया, तब एक शाल लाकर उसे ओढा दिया गया।

विवाहिता होने की प्रतीक नथ लडकी के नाक मे डाल दी गई, जिससे उसकी नाक दुखने लगी। घूघट का एक फायदा जरूर उसे हुआ, कि उसने नथ को निकाल कर हाथ मे ले लिया। भावरे और हथलेवा (पाणिग्रहण) हो जाने के बाद लोगो ने जेवर और दूसरी भेटे दी। फिर वर-वधू मण्डप से माया के पास तिबारे मे ले जाये गये, जहा दोनो ने जूता पहने ही देवता को धोक (प्रणाम) दिया। अब तक याया, मा और कुछ दूसरी स्त्रिया कन्यादान देने के लिए उपवास रक्खे हुई थी। अब लडकी का मुह देखकर उनके मुह को आहार मिला। इस उपवास मे गर्मियो के दिन होने पर शरबत पीने को मिल जाता, लेकिन जाडो में वह भी नही मिलता, भूख से कितनो की अतडिया ऐठ रही थी, इसे कहने की अवश्यकता नही।

अब वर के साथ लडकी के जाने का समय आ गया। मा याया और दादी गले मिलकर अपनी बेटी को बिदाई देने लगी। गोरी चुपचाप सिसकती रही, लाज के मारे वह और लडकियों की तरह खुलकर नही रो सकी। वर और कन्या को ले जाकर रथ मे बेठा रथ के ऊपर चादनी (पर्दा) डालकर कस दिया गया। औरते जला (जलवा) गा रही थी और बैण्ड मे भी जला के गीत ही बजाये जा रहे थे। फिर तोपे चली, जब कि तीन बजे रात को वर-वधू जनवासे के लिए बिदा हुए। वहा पहुचने के बाद सबसे पहले वर-वधू के खाने का इन्तजाम किया गया। शराब और मास तो परम आवश्यक चीजे थी। खाने के बाद दो-चार सहेलिया रह गई। सुसर (वर-पिता) ने नारियल, मेवा, अशर्फी आदि को लाकर बहू के पल्ले (खोल) को भरा। फिर वर ने स्वय घूघट हटाकर बहू का मुह देखा और भी कितने ही जेवर दिये। रात के चार बजे तक खान-पान चलता रहा।

× × × ×

गोरी के विवाह मे सभी विवाहो की तरह कुछ अप्रिय घटनाए भी घटी। बालसिह गौरी के पिता ठाकुर बलवन्तसिह की गद्दी पर गोद आये थे, इस प्रकार वह गौरी के भाई थे। उनका स्वभाव उतना बुरा नही था, जितना नासमझी के कारण कभी-कभी वह कर बैठते थे। इसी कारण न उनकी अपनी गोद देनेवाली मा से पटी, न बाबोसा-जैसे दयामूर्ति से। यदि उनको समझ होती, व्यवहार-कुशल होते, तो ठाकुर रूडसिह और बाबोसा भी अपनी गद्दियो को आबाद रखने के लिए किसी और को गोद न ले बालसिहजी के लडके को ही लेते। उन्होने कितने ही सम्बन्धियो को निमन्त्रण नही दिया था, लेकिन वह बिन बुलाये आये, क्योकि बलवन्तसिह की एकमात्र सतान के ब्याह मे अनुपस्थित रहने के लिए वह तैयार न थे। ठाकुर रूडसिह से अनबन कुछ दूर तक बढ गई। पहले तो बालसिह ने नरपुर के ठाकुर साहब को निमन्त्रण नही भेजा, लेकिन रूडसिह ने कहा—"मै अपनी बेटी के ब्याह मे जरूर जाऊगा, मुझे निमन्त्रण की अवश्यकता नही।" जब यह खबर बालसिह को मिली, तो उन्होने कहा—"देखू तो कैसे रूडसिह मेरे मखन-पुर मे आते है?" उन्होने अपने सिपाहियो को हुक्म दिया—"तलवार-बन्दूक लेकर जाओ और जैसे भी हो, उन्हे आने मत दो।" नौकरो ने इस बेवकूफी भरे हुक्म को मानने से इनकार करते कहा—"बलवन्तसिह के बडे भाई को रोकने की हमारे मे हिम्मत नही।" मखनपुर मे बहुत-से कुए सेठो के बनवाये है। बलवन्तसिह ने सेठो को हुक्म दिया—"अपने कुओ से उनके घोडो और आदमियो को पानी मत लेने दो।"

सेठो ने भी इस अनुचित हुक्म को मानने से इनकार कर दिया। इतने पर भी बालसिह का होश ठिकाने नही आया, और रूडसिह के डेरा डाल देने पर उन्होने अपने नौकरो से कहा—"जाकर उनके तम्बू की मेखे उखाडकर फेक दो ।" राजपूतो की मूछ का सवाल था, मेखो का उखाडना बिना खून-खराबी के कहा सम्भव था, इसलिए नौकरो ने साफ कह दिया—"आपका आपसी झगडा है। हम ईसरसिह (बाबोसा) और रूडसिह (बडे बाबोसा) के तम्बुओ की मेखे नही उखाड सकते।" भातवाले रिश्तेदारो ने आकर बालसिह को बहुत समझाया, तब वह किसी तरह चुप हुए। इसी झगडे के कारण जनवासे मे लिवानेवाले आदमियो के जाने मे देर हो गई, और विवाह के दूसरे दिन जहा सबेरे ही वधू को लौट जाना चाहिए था, वहा वह खूब दिन चढ जाने के बाद नौ बजे लौटी। थोडी देर तक अन्त पुरिकाओ के पास बैठाकर उसे अलग कमरे मे भेज दिया गया।

सजनगोठ—सजनगोठ स्वजनगोष्ठी का ही अपभ्रश है। इस गोष्ठी मे बराती और घराती (मडैती) दोनो शामिल हुए। महफिल जमी, रण्डियो का नाच-गाना शुरू हुआ, जिसके लिए मरदाने के बाहर वाले आगन मे बडा शामियाना गडा था,' जिसमे झाड लटके थे, नीचे अच्छा फर्श बिछा था। हाथी और दूसरी सवारियो पर सवार हो बराती जलूस बाधकर गढ मे पहुचे। फर्श की एक तरफ लम्बी गद्दी बिछी हुई थी, जिस पर मसनद के सहारे सभी सरदार बैठ गये, अब रात के नौ बजे थे, महफिल दो बजे रात तक रही। घराती और बराती दोनो तरफ से रण्डिया बुलाई गई थी, जिन्होने महफिल मे अपने गीत-नृत्य का कौशल दिखलाया। बडे ठेकानो मे रण्डियो को खाने के लिए चिट्ठी और मासिक तनख्वाहे मिलती है। कितनी ही देर तक इधर नाच-गाना चलता रहा, उधर पान और भोजन की तैयारी हो रही थी। पास मे एक तरफ पेन्टरी लग गई थी, जिसमे खान और पान की चीजे रक्खी थी। खानसामा और दारोगा सफेद पायजामा, ऊनी शेरवानी, चुनरिया (रग-बिरगे) साफे, कमरे मे कमरपेटा बाधे सेवा के लिए हाथ बाधे खडे थे। सरदारो के सामने सिगरेट के डब्बे रक्खे हुए थे—महफिल मे हुक्के पीनेवाले अब बहुत कम ही रह गये थे। फिर ह्विस्की की बोतले, सोडा की बोतले पीने के प्यालो के साथ सरदारो के सामने रख दी गईं। गिलासो मे शराब डाल वह दुलहा और आपस मे भी एक दूसरे को मनुआर देने लगे। निछरावलें भी प्रदान की गईं। दुलहा के ऊपर एक सौ एक, एक्कावन या पच्चीस

रुपये निछरावल के दिये, दूरवाले रिश्तेदारो ने दो, पाच, दस निछरावल मे दिये। घराती-बराती भी एक दूसरे के लिए निछरावल देते रहे। निछरावल मे जो रुपये मिले, उनमे से आधे नौकरो के हुए और आधे रण्डियो के। सरदार आपस मे शराब पीते हसी-मजाक कर रहे थे। रण्डियो से इस समय गन्दी गालिया गवाई जा रही थी। दुलहे को जनवासे से लाते-ले जाते समय भी गालियो के गाने का रवाज था। इस समय तक खुली गन्दी गालियो के गाने का रवाज इस वर्ग मे बन्द हो गया था, इसलिए अप्रत्यक्ष रूप से ही स्त्रिया या रण्डिया गाली गाती थी।

महफिल जमे काफी समय हो गया। शराबो के दौर से भी अब छुट्टी मिल चुकी। इसी समय बडे-बडे थालो मे भरे नाना प्रकार के भोजन लाकर सामने रक्खे जाने लगे। राजपूतो मे खाने मे छूतछात का रवाज उठ जाना शायद मुगल-काल की देन है। सरदारो के पास ही उसी फर्श पर दूसरी पक्ति कायमखानी और दूसरे मुसलमान भद्रपुरुषो की भी लगी हुई थी। वह जिस तरह पान मे शरीक थे, उसी तरह खाने को भी खा रहे थे। मीठी चीजो मे हलवा, कलाकन्द, लड्डू, अमर्ती, गुलाबजामुन जैसी मिठाइया, जर्दा (मीठा केसरिया भात), पिस्ता-बादाम और केसर की पत्तिया पडे चीनी-घास द्वारा जमाये दूध के सिकोरे थे। फुल्के, बटिये, सेव, चने की तली दाल और आठ-दस प्रकार की साग-भाजिया सामने रक्खी हुई थी। मास कई प्रकार के थे। कोरमा, कबाब, शामी कबाब, सीख-कबाब, कोफ्ता, कीमा, आग पर भुने सूले, कलेजी आदि कई तरह के मास थे। विवाह के लिए बहुत-से खस्सी (बकरे) पालकर पहले ही से रक्खे हुए थे। सलमाडा के इस इलाके मे शिकार का उतना सुभीता नही था, हा, मुर्गी का मास ओर अण्डे का हलवा जरूर बना था। सलमिया अपने दयालु फकीर के कारण झटका नही, हलाल मास ही खाते है, इसलिए साथ बैठकर खानेवाले मुसलमानो के लिए कोई अडचन नही थी। दो बजे तक खाना और विनोद चलता रहा। शराब के मारे कितने आदमी हाल-बेहाल हो गये थे। खाना आरम्भ करने से पहले ही लौडिया गीत गाती वर को भीतर बुलाने आई थी। वर को दुलहन, छोटी साली और बच्चो के साथ खाने के लिए बैठा दिया गया। ढोलणे, लौडिया, चारणे, भाटने गीत गा रही थी। उधर पर्दे मे भी कन्या की सम्बन्धिनी स्त्रिया बैठी हुई थी, जिनका खाना पहले या पीछे हो गया था। वर-वधू को थोडी शराब दी गई। गाना-बजाना हो रहा था, 'जमाई' के गीत गाये जा रहे थे। 'कामण' इस समय नही गाई जाती। बाहर सजनगोठ दो बजे के करीब समाप्त हुई और लोग

अपने-अपने डेरो मे चले गये, लेकिन भीतर वर-वधू को आधी रात तक छुट्टी मिल गई। फिर दोनो सोने के लिए अपने कमरे मे चले गये।

× × × ×

ब्याह का तीसरा दिन—सजनगोठ छोडकर बाकी समय बरात के खान-पीने का प्रबन्ध जनवासे ही मे होता है, जिसके लिय माड की ओर से रसोइये तैयार रहते है। सरदार स्वतन्त्र राजा ठहरे, अगर वह अपने नौकरो के दु ख-सुख का ख्याल करे, तो उनकी प्रभुता ही क्या ? रसोइये और सब चीजे बनाकर रख लेते, फिर आधा आटा गूधकर अगीठी मे कोयला जलाये एक-एक सरदार के कमरे के पास बैठकर इन्तजार करते रहते। फुलके को तवे पर से सीधे सरदार की थाल मे पहुँचना चाहिए था। शराब के प्याले पर प्याले चल रहे है, हसी-मजाक के फौवारे छूट रहे है। रात के एक या दो बजे ठाकुर साहब का हुक्म हुआ—"खाना लाओ।" इसी समय और चीजो को रसोई से गर्मागर्म थालो मे रखकर सरदार के सामने लाया जाता, और दौड-दौडकर तवे, से उतरते फुलके थाल मे रक्खे जाते। बेचारे रसोइयो को बहुत रात जाने बाद कमर सीधी करने के लिए छुट्टी मिलती। तीन सौ बरातियो मे से हर एक के लिए एक शीशा, एक कघी, एक तेल की शीशी, साबुन की टिकिया दी गई थी। बडे सरदारो को एक-एक बडा तौलिया भी माड की ओर से दिया गया था। बडे सरदार अब स्वदेशी पान को भूल चुके थे, वह गुड तथा झरबेरी की छाल से निकाली कडी किन्तु स्वादिष्ठ शराब 'आशा' को बहुत कम ही पसन्द करते। अब राजस्थान के ठाकुरो और राजाओ को ह्विस्की, स्काच, ह्वाइटहार्स, शम्पेन, शरी मुह लगी हुई थी, और इन कीमती शराबो को कई हजार की खरीदकर पहले ही से तैयार रक्खा गया था। आम तौर से बरात तीन दिन रह चौथे दिन बिदा हो जाती है। इन सभी दिनो मे नाच-गाने की महफिल कभी जनवासे मे और कभी गढ मे होती रही, खान-पान की भी वैसी चहल-पहल रही। लेकिन, गौरी की बरात को सात दिन रक्खा गया—तीन दिन बालसिह की ओर से, एक दिन बडे बाबोसा रूडसिह की ओर से और तीन दिन बाबोसा ईसरसिह की ओर से।

भाते और बडभाते का कन्या के ब्याह मे बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान होता है, इसके बारे मे हम कह आये है। मा के पीहर (ननिहाल) के सम्बन्धी भाते कहे जाते है। गौरी के ब्याह मे उसकी नानी और दादी के पीहर के ही नही, बल्कि परनानी के पीहर के सम्बन्धी भी—जिन्हे बडभाते कहते है—आये थे। मगल-

पुरवाले घराती (सम्बन्धी) तीन दिन रहकर चले गये । जब गढ से बरात विदा होने लगी, उस समय गौरी अपनी मा, ताया और दादी के साथ बाबोसा के डेरे पर चली गई। बाबोसा अपने प्रिय अनुज बलवन्तसिंह के मरने के समय से इतने दुःखी हो गये थे, कि वह प्राय गढ मे न रहकर तम्बुओ मे रहते। अब अगले चार दिन भी बरात की महफिल उसी तरह गरम रही, तीसरे ही दिन एक और बडी रसम अदा की गई। गढ के दरीखाने मे एक चबूतरे पर दहेज का सारा सामान सजा दिया गया। सबको चिट्ठे मे पहले ही दर्ज कर लिया गया था, इसे कहने की अवश्यकता नही। थाली मे सभी जेवर सजाये हुए थे, सभी चादी-सोने के बर्तन रक्खे हुए थे। एक चादी के पायो का और दूसरा लकडी के पायो का दो पलग रक्खे थे। एक पलग पर मखमल के और दूसरे पर रेशम के गद्दे-रजाई बिछे हुए थे। घराती, बराती तथा नगर के सेठ-साहूकार देखने के लिए निमन्त्रित हुए थे । इसी समय भाई और दूसरे लोग अपनी शक्ति और श्रद्धा के अनुसार सलमा-गोटावाले घाघरा-लुगडी के साथ इक्कावन या सौ या पाच सौ रुपये लाकर वहा रख रहे थे। सेठ-साहूकार भी घाघरा-लुगडी और रुपये-जेवर के रूप मे अपनी भेट दे रहे थे। कसौरावाली बुआ को कसौरा के राजा साहब ने वन्दनीकुमारी के ब्याह मे नही भेजा था, लेकिन गौरी के ब्याह मे उन्हे आने की छुट्टी दी थी । बुआ ने अपनी भतीजी के लिए तीस के करीब तरह-तरह के कीमती घाघरे, मोतियो का सतलडा हार, जडाऊ कगन, जडाऊ काठला आदि पाच प्रकार के जेवर प्रदान किये। जोलावाली बुआ ने बालो मे लटकाने के लिए मोती के झोटने और जीजी वन्दनी-कुमारी ने गले मे पहनने के लिए रत्नजटित टूसी दी थी। जब यह सब देहज का सामान साथ जाने लगा, तो बालसिंह ने भाइयो और महाजनो के दिए जेवरो के बक्स को हडप लिया, लेकिन यह बात बरात के खलपा लोट जाने पर मालूम हुई।

जिस वक्त जेवरो की प्रदर्शनी हो रही थी, उसी समय अन्त पुर मे भी बिदाई की रसम अदा हो रही थी। आगन मे बिस्तरे के साथ लकडी की पलग बिछा उस पर दुलहा-दुलहन को बैठाया गया था । विवाह मे दी गई पाचो लडकिया नीम की झारे (डालिया) लिये घूघट काढे खडी थी। ढाई महीनेवाली छोरी एक लौडी की गोद मे बैठी उसी रसम को अदा कर रही थी। सभी छोरियो की तरह वह भी लुगडी ओढे, घूघट काढे और उस समय न जाने क्यो कुछ-कुछ हस रही थी। मा-बाप, भाई-भौजाई गठबन्धन किये पलग के चारो ओर परिक्रमा दे रहे थे । जमाई ने सास-ससुर का पल्ला पकडा । इस समय उसे हक था कि

हाथी, घोडा (और पीछे मोटर) माग सकता था। दूसरी स्त्रिया भी रुपया, अशर्फी और नारियल दे रही थी। बधी डोर (तणी) खुलवाने का यही समय था। इस समय भी वर माग सकता था। बिदाई देते सब कन्या से गले मिलने लगे, उसके हाथ मे रुपये और मुहर देने लगे। कन्या को जनवासे नही, बल्कि अपना पीहर छोडकर ससुराल जाना था, जहा से फिर आना उसके या उसके मा-बाप के बस की बात नही थी। इस समय हृदय का फटने लगना और आसुओ का अनवरत बहना स्वाभाविक है। गौरी सिसक रही थी, उसकी हिचकी बध गई थी, आसुओ से कपडे भीग रहे थे, लेकिन लज्जा के मारे वह दूसरी बिदा होनेवाली लडकियो की तरह फूट-फूटकर नही रो रही थी। सलमाडा के ठाकुरो मे विलाप करके रोने का रवाज नही है, यद्यपि दूसरी जगह कन्याए विलाप करके रोती है। बिदाई का करुण दृश्य सचमुच इतना मर्मान्तक होता है, कि कभी-कभी दुलहे की आखो मे भी आसू आये बिना नही रहता। दुलहा एक तरफ मुह करके खडा रहता है और गठबन्धन मे बधी दुलहन पीठ पीछे सबमे भेंट-मिलन करती है। जीजी भी आसू बहा रही थी और याया भी। मा के बारे मे तो कहना ही क्या? गठबन्धन खोल दिया गया, फिर दोनो मरदाने में आये। दूलहन ने बाप के पैर छुये। बाबोसा ने दीनता को छिपाने के लिए अपनी अन्धी आखो पर धूप का चश्मा लगा लिया था। वह उसी के भीतर खूब रोये। कामदार, सेठ-महाजन सब कन्या और वर को नजर देने आये। नजर मे दो-ढाई हजार रुपये पडे थे। चारो ओर अखण्ड करुण रस का शासन था। बिदाई का मिलन ही नही, बल्कि बैण्ड भी करुणापूर्ण 'ओलो' गीत को बजा रहा था, लौडिया भी 'ओलो' गा रही थी। सारा मखनपुर रो रहा था।

गौरी के ब्याह में तीन लाख रुपये खर्च आये, जिनमे एक लाख खाने-पीने मे खर्च हुए और दो लाख का दहेज। मखनपुर ठेकाने ने एक लाख खर्च किया, मा ने एक लाख और बाबोसा ने एक लाख।

ठाकुरो और राजाओ की बरात मे दान-दक्षिणा पाने की इच्छा से बहुत-से लोग जमा हो जाते है। गौरी के ब्याह मे वहा ऐसे पाच हजार ढोली-ढोलिणें और हजार-डेढ हजार चारण-भाट जमा हो गये थे। जितने दिन वे वहा रहे, उनको भोजन दिया गया। बरातियो की ओर से उनमे सात हजार रुपया बाटा गया। कन्या-पक्षवालो ने इससे अलग उन्हे बिदाई दी। वरपक्ष से दिये पैस को 'त्याग' कहा जाता है। रुपयो के अतिरिक्त विशेष व्यक्तियो को नीचे ताबे,

ऊपर मोने लगे हाथो के कडे, सिरोपाव, दुशाले, घाघरा-लुगर्डा, घोडे और ऊट भी दिये गये ।

उसके पिना और मा के मम्बन्ध के कारण गौरी के प्रति मब लोगो का भारी स्नेह था। गौरी भी इमे जाननी थी। जब कसौरावाली रानीबुआ हल्दी-तेल चढाने लगी थी, तो उसने अपनी जीजी के माथ मधुर व्यग्य करते हुए कहा था—"देख जीजा, कसौरावाली बुआ ने तुझे तेल नही चढाया था।"

× × × ×

मातवे दिन शुभ मुहूर्त मे जलूस के साथ बरात बिदा हो स्टेशन गई, जहा बरात लेकर आई जनपुर रेलवे की स्पेशल ट्रेन खडी थी । दुलहन रथ मे बैठी हुई थी, आसपास चवर डुलाते पुरुप चल रहे थे। रात को स्पेशल के भीतर ही सोना पडा ।

अगले दिन स्पेशल मबेरे ही चली । अगला स्टेशन नरपुर बडे बावोमा रुद्रसिह की राजधानी थी। वहा पर उनकी ओर से नाश्ते का इन्तिजाम किया गया था। सरदारो को नाश्ते की चीजे ट्रेन मे उनके बैठने के स्थान मे पहुँचाई गई और दूसरो को मिठाइया कागज के थैलो मे देकर चाय के प्याले थमाये गये। चाय के बाद स्पेशल वहा से चली और ग्यारह बजे रात को अजमेर पहुँची। अगले दिन आधी रात को मालर जक्शन आया, लेकिन खलपा से औरा का स्टेशन नजदीक पडता था, इसलिए स्पेशल आगे बढकर अगले दिन आठ बजे मबेरे वहा पहुँची । दुलहन के साथ मैके से मगलपुर और नरपुर के पचीम आदमी थे, जिनमे कई कामदार (अफमर), पाच छोरिया (डावडिया), एक धाय और तीन दूसरी औरते थी ।

औरा स्टेशन पर बरात के लिए सवारिया आई हुई थी । जिनमे एक रथ, एक मोटर, पच्चीस-तीस घोडे, चार-पाच ऊट और बीस के करीब बैलो के तागे थे। बैलो के तागे को मालर के इस दक्षिणी प्रदेश गोलान मे रेखला कहते है। सलमाडा मे रेखला पुराने ढग की उन छोटी-छोटी तोपो को कहते है, जिनकी नली मोटी तथा डेढ-दो हाथ से अधिक बडी नही होती । खलपा के आदमियो ने कहा—"छोरियो को भेजो, उन्हे रेखलो मे बैठा दे।" दुलहन को ख्याल आया—"कही रेखलो मे बैठाकर उन्हे तोपदम तो नही कर दिया जायेगा", इसलिए

ननिहालवाले आदमी तखतसिंह से कहा—"मामा, रेखलो मे न बैठाये, इनके घाघरे जल जायेगे।" फिर लोगो ने बतलाया, कि रेखला यहा बैल के तागो को कहा जाता है।

दुलहन डब्बे मे गुमसुम बैठी थी। पाचो छोरिया वगल मे नौकरो के खाने मे बैठी थी। खलपा से बरात के साथ गई आठ लौडिया भी पासवाले डब्बे मे थी। जो चार लौडिया दुलहन के साथ फर्स्ट क्लास के कम्पार्टमेण्ट मे थी, उनमे एक खलपा की भी थी, इसलिए दुलहन को घूघट निकालकर बैठना आवश्यक था। दुलहन के रथ को लाकर डब्बे के पास खडा कर दिया गया। डब्बे से रथ तक कनात लगा दी गई। बरात जब चलने के लिए तैयार हो गई, तो दुलहन को सूचना दी गई और वह जाकर रथ मे बैठ गई। रोने-धोने का काम मखनपुर से फुसावा स्टेशन तक खतम हो चुका था, अब भी मन उदास था, किन्तु आखो में आसू नही आ रहे थे।

स्टेशन से दस बजे दिन को प्रस्थान करना पडा। खलपा छ मील था। रास्ते मे शूहाला और राखीपुरा के गाव आये, जो दोनो ही खलपा ठेकाणे के थे। फिर बिजनी आई, जहा से खलपा एक मील रह गया। दुलहन को गोधूली से पहले घर मे नही ले जाते, इसलिए दुलहन के दल को बिजनी मे तम्बू लगा विश्राम करने के लिए रख दिया गया। रास्ते मे चारो ओर काली मिट्टी की समतल-सी जमीन थी। सडक बुरी नही थी, इसलिए दचका नही लगा। दुलहन के साथ रथ में जीजी वन्दनीकुमारी की छोरी सूवटी भी बैठी थी, जो करीब-करीब समवयस्का थी, और जीजी के कारण गौरी का उसके साथ विशेष स्नेह भी था। फुसफुसाकर बात करना अन्त पुरिकाओ के स्वभाव मे होता है। कठोर पर्दे के साथ भाषा की यह कला भी उन्हे आ जाती है, जिसमे बोलने मे जीभ का उतना उपयोग नही किया जाता, जितना सास का।

पतली छोटी-सी जाली से दुलहन बाहर की दुनिया को देखती चल रही थी। यह रेगिस्तान की नही, बल्कि हरियाली की भूमि थी, जहा वृक्ष-वनस्पति की बहुतायत थी। लेकिन दुलहन को तो अपना मगलपुर याद आ रहा था। उसे उस रेगिस्तानी भूमि की स्मृति बहुत प्यारी लग रही थी। वह सोच रही थी—आबाद रहे सरमाडा, यदि यहा वृक्ष और जगल है, तो हमारे यहा भी तो जगह-जगह शमी के दरख्त दिखाई पडते है।

ससुर बहुत सीधे-साधे तथा नौकरो के हाथ मे खेलनेवाले पचास वर्ष के जीव थे। उन्हे शराब पीने से ही फुर्सत नही मिलती थी, इसलिए घर या ठेकाणे मे

किसी भी व्यवस्था का कायम करना उनकी शक्ति से बाहर की बात थी, जिसकी बानगी दुलहन को अपनी लौडियो के साथ तम्बू के भीतर जाते ही मिली। देखा, तम्बू गन्दा है, उसमे कई फटे पेवद लगे है। नीली सफेद पट्टी की दरी भी बहुत गन्दी है। उसी पर मामूली गद्दे पर मसनद रखी हुई थी। लौडियो को लिये दुलहन वहा जाकर बैठी। उनके बीच मे गौरी के गूजर बाबा की विधवा लडकी किस्तूरी भी थी, जिसकी उमर चालीस साल के करीब थी और जिसकी सूझ पर दुलहन को बहुत विश्वास था। दुलहन ने तम्बू की ओर निहारकर किस्तूरी से कहा—"मुझे तो यहा के ढग अच्छे नही दिखते।"

"यह कैसे कहती है ? आपको अभी क्या दिखा ?"

"देख लो, इसी तम्बू और दरी को, इसी से यहा के ढग का पता लग जाता है।"

किस्तूरी ने हसकर कहा—'अभी ऐसी बात किसी से न कहना।"

खलपा की लौडिया इसी समय तम्बू के भीतर आ गई। बात वही समाप्त हो गई और दुलहन ने उनके सामने घूघट निकाल लिया। दुलहा-राजा भी आ गये और दोनो के लिए भोजन का थाल आया। दिन के दो बज रहे थे, दिन होने से शराब नही थी। सकोच के मारे थोटा ही खाया गया। थोडी देर आराम करने के लिए मिला। ससुर को दो साल पहले लकवा मार गया था। लेकिन अब चल-फिर सकते थे। वह इन्तिजाम करने पहले ही खलपा के गढ मे चले गये थे, जिसके बारे मे एक लौडी ने कहा—"मेल की तैयारी करवाने पदार्या है अन्नदाता।" (अन्नदाता महल की तैयारी करने गया है) इन शब्दो को सुनकर बहू का मुरझाया दिल खिल उठा। उसने समझा, फटे तम्बू को देखकर मैंने जो अन्दाजा लगाया था, वह गलत था। अन्नदाता (ससुर) अच्छे महल का इन्तिजाम करने गया है।

चार बजे फिर प्रस्थान हुआ। वह रथ मे थी, और दुलहा घोडे के ऊपर। सूवा लौडी साथ मे बैठी थी। मालर जक्शन से ही जनपुर से आया बैण्ड लौटा दिया गया था। यहा अब ढोल, ताशे (झीझा) तथा नरसिहा बज रहे थे। खलपा फाटक के बाहर रथ खडा कर दिया गया। पास के तालाब के किनारे बहुत-से बडे-बडे वटवृक्ष तथा एक बगीची भी थी। बगीची मे एक शिवालय था। बहू ने आशा की थी, कि यहा स्वागत के लिए बैडबाजा आयेगा। उसने ढोल, ताशे और नरसिहा को चमारो का बाजा समझकर उसे अपने स्वागत का अग नही समझा था। उसे विश्वास था, कि नगर के भीतर बैड के साथ ही ले जायगे।

अभी वह इसी उधेडबुन मे थी, कि ससुराल की एक लौडी ने आकर कहा—"हमारे यहा पैरो मे सोना ही सोना पहनकर बहू फाटक के भीतर नही घुसती, इसलिए एक पैर मे चादी पहन लेना चाहिए।" बहू ने फुसफुसाकर कहलवाया—"मेरे पास चादी का जेवर नही है।" फिर लौडी दौडकर गढ मे गई और वहा से चादी का कडा लाई। बहू ने सोचा—"इस झारखण्ड मे पैरो मे सोना पहननेवाली कोई बहू नही आई होगी, इसलिए यह रसम अदा की जा रही है।" उसकी चिन्ता बढ गई। लेकिन, बात ऐसी नही थी। पैरो मे सोना पहननेवाली बहू भी खलपा मे आई थी। बहू ने एक पैर मे चादी का कडा भी डाल लिया।

रथ नगरद्वार के भीतर प्रविष्ट हुआ। ढोल-ताशे आगे-आगे बजते जा रहे थे। बैण्ड की आशा अब भी खतम नही हुई थी, इसी समय रथ जनानी ड्योढी पर जाकर खडा हो गया। किसी ने धीरे से कहा—"उतरिये।" चादनी हटा दी गई, घूघट के भीतर से देखा, यह तो अन्त पुर की ड्योढी है। वहा सास खडी थी, एक छोटी और एक बडी दो ननदे, और कितनी ही ठाकुरानिया भी सोना, मोती, रतन के आभूषणो और सलमा-सितारे की घाघरा-लुगडियो मे जगमग-जगमग करती बहू का स्वागत करने के लिए तैयार थी। सास के मुह पर घूघट नही था, दोनो ननदे भी खुले मुह थी। सास अपनी मर गई थी, और ससुर की यह दूसरी बीबी अट्ठाइस साल के करीब की थी। कपडो और चेहरे की रेखाओ को देखकर दुलहन ने समझ लिया, कि यही सासरानी होगी। पहले सास ने आगे बढकर नेत्रा (मथानी की रस्सी) से बहू को नापा। औरते और ढोलणिया गीत गा रही थी, जिनके बीच सासू ने सहारा दे बहू को उतारा। खलपा के गढ मे बीच मे बडा हाता है, जिसकी दोनो तरफ जनाने और मरदाने महल बने है। दोनो के निवासियो के पहुँचने मे सुभीते का ख्याल करके वही मुरलीमनोहर का छोटा-सा मन्दिर है। छोटी-सी छतरी और छोटी-सी कोठरीवाला यह मन्दिर न खलपा के ठाकुर साहब की शान के अनुकूल था, न मुरलीमनोहर के ही। वहा पाती से कासे की छोटी-बडी सात थालिया रक्खी थी। थालियो मे एक-एक रोटी के ऊपर चावल-चीनी-घी पडा था। दुलहे ने अपनी तलवार से थालियो को एक के बाद एक रास्ते से दाहिने बाये खिसका दिया। जिस समय दुलहा इस प्रकार थालियो को सरका रहा था, उसी समय एक ठाकुरानी दुलहन का हाथ पकडकर बिना भी शब्द किये थालियो को एक के ऊपर एक लगवा रही थी। फिर सातों थालिया उसी तरह पाती से रख दी गई, और फिर वही क्रिया सात बार दोहराई

गई। वर-वधू ने मुरलीमनोहर के सामने जाकर धोक (प्रणाम) किया।

जिस दिन दुलहन खलपा पहुँची, उसी दिन रात को रातीजगा हुआ—रात भर गाना-बजाना चलता रहा। बारह बजे रात को दुलहन को बुलाकर लकड़ी के पटले पर गेहूँ की कुरी पर रख तेल डाले कासे के दीये को जला दिया गया, फिर माया के पास हाथ मे मेहदी लगा दीवार पर दुलहन से छापा करवाया गया। यह कहने की अवश्यकता नही, कि सलमाडा की तरह गुजरात के पासवाले इस गोल्वान इलाके मे भी पूजा करते समय वर-वधू को जूता उतारने की जरूरत नही थी।

दुलहा-दुलहन अब जनानी ड्योढी के भीतर घुसे। तिवारी मे एक मामूली दरी बिछी हुई थी, न वहा गद्दा था, न कोई और राजसी ठाट का फर्श। सलमाडा की बेटी को इसे देखकर आश्चर्य हुआ। उसे क्या पता था, कि मालव के इस दक्षिणी भाग (गोल्वान) मे अभी संस्कृति इतनी विकसित नही हुई है और मालव के सभी ठेकाने सलमाडा या जयपुर के अन्य ठेकानो का मुकाबला नही कर सकते। वह अपने घूघट की ओट मे जब-तब इन चीजो को देखकर अपने विचारो मे मग्न हो जाती। उसके मन मे तरह-तरह की आशकाए प्रकट होने लगती। घूघट मे लिपटी होने से उसके चेहरे के भावो को कोई देख नही सकता था। हाथो मे कन्धे के पास तक भरे हाथी-दात के लाल चूडे बाह को छील चुके थे, जहा-तहा से खून बहने लगा था। गर्दन मे पडा टेवटा गर्दन की बुरी हालत किये हुए था। रेल मे तो चूडो और टेवटे को निकालकर रख लिया था, लेकिन रथ पर सवार होते ही फिर उन्हे शरीर मे कसना पडा। बुरी हालत थी। इसी समय देवता रूप में खेखारा की ठाकुरानी प्रकट हुई। वे ससुर के हाथ मे राखी बाधकर धर्म-बहिन बनी थी, इसलिए उस घर मे उनका मान भी अधिक था। उन्होने अधिकारपूर्वक स्त्रियो से कहा—"बीनणी (दुलहन) थकी-मादी है, अभी छोडो, इसे ऊपर जाकर कपडे बदलने और आराम करने दो।" खेखारा की ठाकरानी सचमुच ही दुलहन को कोई बडी कृपामयी देवी-सी जान पडी।

दुलहन को उसके कमरे की ओर ले जा रहे थे। वह सोच रही थी—ससुर साहब महल का इन्तिजाम करने आये थे, इसलिए महल का कोई बहुत अच्छा कमरा उसके लिए सजाया गया होगा। लेकिन, वहा कमरे की जगह बीच की तिवारी के दोनो छोरो पर दो छोटी-छोटी कोठरिया थी। एक कोठरी मे खिडकी भी नही थी, और दूसरे मे वह बहुत छोटी-सी थी। तिबारी की एक अलग खुली हुई थी, और दूसरी अलग मे लगी झिझरी से मुरलीमनोहर की झाकी की जा

सकती थी । खिडकीवाली कोठरी मे नीचे खादी का जाजम बिछा था । मन् १९२५ मे गाधीजी के प्रताप से खादी की महिमा जरूर बढ गई थी, लेकिन राजस्थान के परम अग्रेजभक्त ठाकुरो और राजाओ के यहा गाधी की आवाज कभी नही पहुॅच पाई । इसी छोटी-सी कोठरी मे नेवार से वुना एक लकडी का पलग रक्खा था, जिसके ऊपर तकिया, गद्दा, चादर, रजाई मभी सूती थे । पलग के पास मसनद के साथ जमीन पर एक कालीन बिछा हुआ था । कालीन और पलग के बीच से रास्ता था । कोठरी मे एक आला था, जिसमे मिट्टी के तेलवाला टेबुललैम्प रक्खा था । पलग के पेर की ओर लोहे की चिमची (घडोची) पर पानी भरा मिट्टी की घडा रक्खा था, उसी पर ढक्कन के ऊपर एक शीशे का गिलास तथा पास मे पीतल की गडवी थो । किस्तूरी दुलहन के साथ इसी कोठरी मे आई । छोरिया बिना खिडकीवाली दूसरी कोठरी मे जा बैठी थी । एक छोरी रास्ते मे ही गुम हो गई, बडा हल्ला मचा । छोरी की सास कह रही थी—"हाय, मेरी बीनणी गुम हो गई ।" जब छोरिया ढाई वर्ष से पाच महीने के भीतर की ही अविक थी, तो कोई दूसरे के हाथ लग जाय, इसमे आश्चर्य क्या ? अपनी कोठरी को देखकर दुलहन ने किस्तूरी को कहा—"लो यह तुम्हारा डेरा है ।" उसको विश्वास था, कि उसका कमरा महल मे कही और जगह होगा । किस्तूरी पहले ही से आकर देखभाल चुकी थी, उसने समझाकर कहा—"मेरा नही, आपका ही कमरा है, अन्दर आ जाइये ।"

कोठरी के ऊपर मेहराबदार छतरी-जैसी छोटी छत थी । दुलहन बोल उठी—"मैं तो जीती ही छतरी के नीचे नही बैठती" और तुरन्त बाहर निकल आई । राजस्थान मे मरी राजा-रानियो या ठाकुर-ठाकुरानियो के स्मृति-चिन्ह को छतरी कहते है । किस्तूरी ने नई बहू को समझाते हुए बहुत नरमी से कहा—"बाहर जाने से काम नही चलेगा, अब तो यही घर है, यही रहना पडेगा, भीतर आ जाइये ।"

बहू की आखो मे आसू आ गये । वस्तुत वह जिस सास्कृतिक वातावरण और साज-सामान के साथ रहने की अभ्यस्त थी, उसकी तुलना मे खलपा का रहन-सहन बहुत निम्न कोटि की थी । उसका लडकी के मन पर क्या असर होगा, इसकी ओर मा-बाप का ख्याल नही गया था । उन्होने बस यही देखा, कि खलपा हमसे भी बडी आमदनी का ठेकाना है ।

खैर, दुलहन ने आसू पोछकर अपने कपडे और जेवर उतारकर नये कपडे पहन लिये । अभी तूफान दबा नही था, इसी समय ससुराल की एक लौडी कटोरी में दूध लेकर आई । दूध मे काले तिल पडे हुए थे, जो दुलहन को देखने मे जूए-से

मालूम होते थे। उसे वैसे भी दूध पीना पसन्द नही था, और यहा जूओ-जैसे काले तिलो को देखकर तो उसे उबकाई आने लगी। लौडी ने बहुतेरा समझाया—'हमारे यहा काले तिलो सहित दूध पीना सुगन माना जाता हैं, न पीने पर अन्नदाता (ससुर) हेला (नाराजी) करेंगे।'' दुलहन के मन पर फटे तम्बू के समय से ही एक पर एक धक्के लग रहे थे। वह दृढ मनोबल की लडकी थी इसलिए उसने ससुर के नाराज होने की परवाह न कर दूध नही पिया।

अभी वह कपडे बदलकर आराम करने की सोच रही थी कि इसी समय बुलौवा आया—"कपडे-जेवर पहन लीजिये, नीचे बुलाया है।" बहू को बहुत बुरा लगा, और एक बार मन मे आया, कि इनकार कर दे, किन्तु बुद्धि ने समझाया—ऐसा करने की गुजाइश नही है।

× × × ×

सोहागथाल—सलमाडा मे सोहागथाल प्रातकाल किया जाता है, लेकिन खलपा मे उसे सायकाल करने का रवाज है। सोहागथाल वस्तुत पराये गोत्र से आई लडकी को अपने गोत्र मे मिलाने की रसम है। एक ही बडे थाल मे खाने की चीजे रक्खी जाती है, जिसमे से निकालकर सास, ससुर, ननदे, दुलहा और कुछ अपने कुल की दूसरी महिलाए तथा पुरुष सभी खाते है। वहा सब मिलाकर दस-बारह आदमी रहे होगे। काले तिल-मिली घी-चीनी सहित लापसी रक्खी हुई थी, जिसमे से एक-एक ग्रास (कवा) निकालकर हर एक व्यक्ति दुलहन के घूघट में हाथ डाल उसके मुह मे दे रहा था। लोग समझते थे, दुलहन खा रही होगी, लेकिन घूघट के भीतर उसके हाथ मे रूमाल थी, मुह मे डाले छोटे-छोटे कवा को वह जमा करती जा रही थी। इस तरह खा लेने के बाद फिर बहू ने अपने हाथ को बाहर कर उसमे थोडी-थोडी लापसी निकालकर लोगो की ओर बढा दिया, कुल की नर-नारिया मुह बढाकर उसके हाथ से ग्रास ले रही थी। इस प्रकार सोहागथाल की रसम पूरी हुई और बहू को फिर ऊपर जाने की छुट्टी मिल गई। ऊपर चौकी लगा, दस्तरखान फैला दिया गया था, जिसके ऊपर बत्तक के आकार की टोटी वाली चादी की शराब की बोतल रक्खी थी। यहा बहू के अतिरिक्त उसका पति और दो ननदे भी थी। अपने घर मे ब्याह होने के कारण बडी ननद खलपा नही आई थी। पहले शराब की मनुआर दी गई, लेकिन बहू ने उसे जीभ मे भी लगने नही दिया। सुबह को खाना खाया था, उसके बाद बस गन्ध लेना जैसा ही हुआ था। खाने मे जगली सूअर, हरिन और

बकरे के कई तरह के मास थे, साथ मे पुलाव, कई प्रकार की सब्जिया और मीठी लापसी भी थी। भोजन की मधुर गन्ध बडी अच्छी मालूम हो रही थी, लेकिन खाने मे रास्ता दिखलाना ननदो का काम था, जो बहू के सामने शरम करती चिडियो की तरह जरा-जरा चुग रही थी, ऐसी स्थिति मे दुलहन कैसे पेट भर खा सकती थी। वह भूखी ही रह गई। सबने हाथ धो लिया।

ननदे चली गई। अब सोने से पहले बडी-बूढियो के पैर दबाने की रसम अदा करनी थी। दुलहन ने जाकर पहले सासू के पैर दबाये, फिर पद मे बडी दूसरी स्त्रियो के भी पैर दबाये, जिनमे ससुर की धर्म-बहिन भी थी। लोगो ने जल्दी ही छुट्टी दे दी। अभी तक धैर्य न धर केवल धर्म-बहिन ने मुह खोलकर दुलहन का मुह देखा था, और उसके चिबुक पर हाथ रखकर लाड भी किया था। बाकियो को मालूम नही था, कि बहू सुन्दरी है या कुरूपा, गोरी है या काली।

दुलहन अपनी कोठरी मे लौट आई। भूख के मारे पेट मे चूहे कूद रहे थे। उसने किस्तूरी से कहा—"मुझे तो बहुत भूख लगी है।"

किस्तूरी ने अफसोस करते हुए कहा—"हमने भी तो रोटी खा ली, यदि जानती, तो रख छोडती।"

अब चारा क्या था? भूखी ही सो जाना पडा, और थोडी देर मे नीद ने आकर क्षुधा की पीडा को शान्त करने मे सहायता दी।

और जगहो पर जनाने और मरदाने महलो मे बहुत अन्तर नही होता, किन्तु खलपा मे दोनो दुनिया के दो छोर पर थे। तरुण पति वहा अपनी पत्नी के घर मे ऐसे समय ही आता-जाता, जब कि बडे-बूढो की नजर न पडे। दुलहा पहले ही चला जा चुका था, जब कि सुबह पाच बजे किस्तूरी ने दरवाजा खटखटाकर कहा—"पगे लागने चलिये।"

बहू चूडा खोलकर सोई थी। रवाज के मुताबिक साल भर तक चूडे को नही हटाया जाता। जल्दी-जल्दी मे बिना चूडो के ही बहू सास के पास चली गई। बिना चूडे की देखकर सास और लौडियो ने कडी आलोचना की। खैर, सासू और दूसरी बडी-बूढियो के ठिठुरती-ठिठुरती पगे लगी। उनके पास पैरो से जूते निकाल-कर ही कमरे के भीतर जाया जा सकता था, इसलिए जाडो की सर्दी के कारण उस समय पैर बहुत ठिठुर रहे थे। अभी अधेरा ही था, जब कि पगे लागकर वह फिर अपनी कोठरी मे आ गई, लेकिन सोने के लिए इतना समय कौन देता? साढे छ बजे फिर बहू के पास लौडी आई—"चलो हाथ-मुह धुलाने।" आखे मलती बहू उठ खडी हुई। घूघट का एक फायदा तो था, कि कोई देख नही सकता

था, बहू ने अपना हाथ-मुह धोया है या नही । जाकर झारी ले सासू और दूसरी बडी-बूढियो के हाथ धुलवाये, दातौन करवाई, फिर लोट आई । अपने मुह-हाथ धोने और शौच मे निवृत्त होने के समय देखा, कि लम्बी छत और फिर गढ के कोट पर आधा फर्लांग जाने के बाद सडास मिलता है । खलपा के ठाकुर सच-मुच ही कितने पिछडे थे, वह अपने पर्दानशीनो के आराम का कोई ख्याल नही करते थे ।

हाथ-मुह धो बहू ने आशा की, कि अब जलपान आयेगा । अपने साथ आई खाने की चीजे नीचे कही पडी थी, उन्हे खोलने का हक सासू का था । सास भूल गई, कि बहू को कुछ खिलाना भी चाहिए । किस्तूरी ने खलपा की लौडियो से पूछा—"क्या यहा बहू को कुछ नाश्ता देने का रवाज नही है ।" पता लगा, रवाज तो है, लेकिन मायभा सास को इनकी क्या सबरि ? अनटिया ऐठ रही थी, लेकिन मिट्टी के घडे से पानी लेकर हलक तर करने के सिवा वहा कोई चारा नही था । दस बजे नीचे जाने का बुलावा आया फिर कपडे-जेवर पहनकर विशेष तोर से पगे लागणी करने जाना था । वह किसी को एक मुहर रखकर पगे लगी किसी को पाच रुपये या और कुछ । पगे लागने के बाद वैसी ही भूखी वही बैठ गई । चेहरे का रग आधा तो फक जरूर हो गया होगा, क्योकि अडतालीस घण्टे मे भोजन की ऐसी ही व्यवस्था चल रही थी । सासू ने घूघट खोलकर मुह देखा और मुह दिखाई मे एक सोने का हलका-सा काठला दिया, ननद ने कानो के लिए छ जडाऊ बालिया देकर मुह देखा, इसी तरह ओरो ने भी मुह दिखाई मे जेवर-रुपये दिये । ठाकुरानियो की पगे लागणी हो जाने के बाद दुलहन ने अब नोकरानियो को पगे लागने की रसम अदा की । एक-एक नौकरानी को अलग-अलग पगे लागने मे बहुत समय लगता, इसलिए उनके लिए पचास रुपये रखकर दोनो हाथो को जोड नौकरानियो की ओर चारो ओर मुह घुमा हाथ जोड यह रसम बडी जल्दी पूरी हो गई । गौरी को नाटको के खेल का अभ्यास यहा बडे काम आया । लौडियो को भी इस समय ठाकुरानिया हाथ जोडती है, और वह भी हाथ जोडकर जवाब देती है । लौडियो के बाद फिर उसी तरह इकट्ठा ही रुपया रखकर दुलहन ने ढोलणियो के भी पगे लग लिये ।

इसी समय ससुरजी पैर लगवाने भीतर आये । दुलहन ने पैर छू उसे जोर से पकड लिया और घूघट निकाले उसी तरह बैठी रही । ससुर ने पूछा—"क्या लेगी ?" उन्होने समझा, जेवर मागेगी, पैसा या और कोई ऐसी चीज मागेगी ।

बहू ने अपनी लौडी के कान मे फुसफुसाकर कहा—"मुझे जेवर-कपडो की

जरूरत नही,वह मेरे पास बहुत है, मुझे तो रहने के लिए एक अच्छा कमरा दे दे।" सुनकर ससुर हस पडे, फिर उन्होने कहा—"मै डोढी के ऊपर का बडा दालान बहू को दूगा, अभी दामाद उसमे ठहरे हुए है, उनके जाते ही बहू को उसमे रहने का इन्तिजाम कर दिया जायगा।" फिर सास-ससुर बहू को तोसाखाने के भीतर ले गये। रसम के अनुसार बहू का हाथ रुपये-भरे थैले मे डलवाकर कहा गया—"मुट्ठी भर लो। बहू ने सोचा, मुट्ठी मे तो बीस-पचीस रुपये से भी कम आयेगे, इसलिए जमीन पर हाथ से सरका दिया, गिनने पर दो सौ दस रुपये थे। ससुर ने हसकर कहा—"बहू तो बडी चालाक निकली।" फिर घी और गुड से भरे कनस्तरो मे बहू का हाथ डलवाया गया।

दस्तूर के पूरा कर लेने के बाद बहू को छुट्टी मिल गई, फिर थाल मे खाना आया, और साथ खानेवाली ननदो ने अपने पुराने पाठ को दोहराया, जिससे फिर स्वादिष्ट भोजनो का थाल सामने रहने पर भी बहू भूखी ही रह गई। लेकिन किस्तूरी सजग थी। उसने अपने थाल मे से खाने की कितने ही चीजे रख छोडी थी। इधर किवाड बन्द करके बहू ने लौडी के थाल मे रक्खे खाने को चुपचाप गले से नीचे उतारना शुरू किया, और उधर सामने की कोठरी मे छोरिया अपना दूसरा ही अभिनय कर रही थी। उन्हे रग-बिरगे घाघरे-लुगडी मिले थे, जेवर भी पहने हुई थी। वह अपने जेवरो को देखकर कभी खुश होती, और कभी बदरियो की तरह सजी-धजी शीशे मे अपना मुह देखती। सबसे छोटी छोरी किसी की गोद मे पडी सो रही थी। कोठरी का दरवाजा बन्द करके जिस तरह बहू खाना खा रही थी, यदि उसी समय ननदो मे से एक आ जाती, तो बडी भद्द होती। किस्तूरी की कृपा से आज तीसरे दिन पेट भरकर भोजन मिला था। वह ठण्डे फुलके और साधारण सी तरकारी स्वाद मे अमृत को मात कर रही थी। पन्द्रह मिनट ही अभी बीते होगे, कि फिर नीचे से दुलहन के लिए बुलौवा आ गया—"गाव की औरते मुह देखने आई है, नीचे चलिये।" मन मे बहुत बुरा लगा, लेकिन जाने के सिवा कोई चारा नही था। नीचे जाने पर फिर मुह-दिखाई शुरू हुई। ठाकुरानिया घूघट को अलग-अलग उठाकर बहू का मुह देखती। गाव की औरतो के लिए ननद ने घूघट उठाया था। दूसरी बहू होती, तो आखे मीच लेती, लेकिन गौरी ने तो पर्दे की उतनी कडी पाबन्दी कभी नही की थी, इसलिए उसने मन मे कहा—"मै भी तो उन्हे देखू", और वह उनकी तरफ देख रही थी। बहू के चाद से मुखडे की स्त्रिया तारीफ कर रही थी, यदि बहू कुरूपा होती, तो वह अपने फैसले को नीरव रहकर देती। सास को डर लग गया, जब

देखा कि गाव की स्त्रिया खूब नजर गडा-गडाकर बहू को देख रही है। उन्होंने अपनी एक छोरी (लौडी) को फुसफुसाकर हुकुम दिया—"नून-मिर्च कर लो, नही तो नजर लगे बिना नही रहेगी।" एक छोरी ने सात लाल मिर्चे, सात नमक की डलिया और कुछ राई मुट्ठी मे ले सिर से पैर तक घुमाकर उसे जलती अगीठी मे डाल दिया। इससे पहले सासू ने नगर के देखनेवालियो को आदेश दे रक्खा था, कि देखकर मुह की ओर जरा थू-थू कर देना। सचमुच ही किसी भी सुन्दर चीज के लिए नजर लग जाना बडे खतरे की चीज है, इसलिए बहू के सौन्दर्य की रक्षा करने का इन्तिजाम करना सास ने अपना कर्तव्य समझा था। मुहदिखाई के बाद दुलहन को ऊपर भेज दिया गया।

खलपा आये दूसरे दिन सवेरे आठ बजे अब लठियो की कुलदेवी नागणेच्या की पूजा करने जाना पडा। कुलदेवी की छोटी-सी सोने की मूर्ति साया (रिद्धि-सिद्धि सहित गणेशचित्र) के पास एक पेटी मे रक्खी हुई थी। कुलदेवी की पूजा से पहले मुरलीमनोहर के मन्दिर मे जाकर राधा-कृष्ण को प्रणाम करना पडा। साया के पास ही जल भरकर एक परात रक्खी हुई थी। जल का रग बदलने के लिए थोडा-सा दूध और दही भी उसमे मिला हुआ था। यही काकर-डोरडे (विवाह-कगन) खोलने की रसम अदा हुई। दुलहा एक हाथ मे दुलहन के डोरडे को खोल रहा था, और दुलहन दोनो हाथो मे दुलहा के डोरडे को खोल रही थी। स्त्रिया गीत गा रही थी, जिसमे दोनो मे से किसी के न खोल सकने पर उसके हार की घोषणा भी हो रही थी। इस प्रकार सात बार डोरडे को खोला और बाधा गया। परात के पानी मे दोनो डोरडो और एक जडाऊ अगूठी को डाल दिया गया। दुलहा दाहिना हाथ डालकर अगूठी को पानी मे ढूढने लगा (डोरडा खोलते वक्त उसने बाये हाथ को इस्तेमाल किया था) और दुलहन दोनो हाथो से अगूठी ढूढने लगी। किसी एक के हाथ मे आ जाने पर फिर दोनो मे छीनाझपटी होने लगती। सात बार इस तरह ढूढ-ढूढकर निकाली गई अगूठी अन्त मे दुलहन के हाथ मे पहना दी गई।

खलपा पहुँचने के दूसरे दिन परात मे अगूठी डालकर उक्त प्रकार जुआ खेलने की रसम अदा हुई। इसके बाद जातादेणी' अर्थात् ग्राम-देवताओ और कुलदेवताओ की पूजा हुई। इन देवी-देवताओ मे कितने ही नगर के भीतर थे और कितने ही नगर से एकाध मील दूर। उनकी पूजा के लिए और चीजो के साथ शराब की बोतले भी रख ली गई थी। भैरूजी और माताजी को बकरे की बलि और शराब की धार दी गई। दुलहन रथ मे बैठी थी और ढोलणिया तथा

लौडिया पीछे-पीछे गीत गाती चली आ रही थी, आगे-आगे ढोल-तासा-नरसिहा बज रहे थे । वर घोडे पर चल रहा था। दुलहन को हर देवता के पास उतरने की जरूरत नही थी, इसलिए पैरो को चलने की तकलीफ होने का उतना सवाल नही था, जितना कि पर्दे की कठोरता का। कितनी ही जगह गठबन्धन पचरगे गोले के लम्बे सूत का होने से वर मन्दिर के पास जाकर पूजा कर आता और गठबन्धन के कारण दुलहन भी उसमे शामिल समझी जाती। दोपहर तक जातादेणी खतम हो गई और दुलह न फिर लौट आई।

'जातादेणी' से लौटकर दुलहन को थोडी देर सास-ननद के पास बैठना पडा, फिर उसे छुट्टी मिल गई । ब्याह के भावरो के समय जो कपडे-जेवर पहने गये थे, उसे हर पूजा और दस्तूर के समय पहनना पडता था, और उनमे कितनी ही बडी सासत देनेवाली चीजे थी ।

दहेज—– दहेज मे जहा तरह-तरह के कपडे-जेवर और दूसरी चीजे दी गई थी, वहा उसमे बहुत भारी सख्या मे बर्तन-भाडे भी थे, जिनमे कितने ही चादी के थे, लेकिन रोज-बरोज के काम के पीतल, कासे, जर्मन-सिल्वर, मुरादाबादी बर्तन ही ज्यादा थे। पच्चीस तो पीतल के बडे-बडे थाल थे, जिनके साथ सौ कटोरिया, पचास बडे कटोरे भी थे । बडे-बडे पीतल के टोकने (चरू) और चार छोटी-छोटी टोकनिया (चरी), लोहे का चूल्हा, अगीठी, पीतल की छलनी, सूप, कितने ही भगोने, देगचिया, कढाव, कढाइया, चिमटे, कलछी मा ने दिये थे।

तीसरे दिन दोपहर के वक्त दहेज की चीजो का प्रदर्शन किया गया। बीच में छोटी-छोटी तिबारियो के अन्तर से पास-पास अन्त पुर मे तीन चौक थे। दहेज की चीजो से तीनो चौक भरे हुए थे। गाव के बहुत-से लोग-लोगाइया देखने आये। लोगाइया दहेज की चीजो की जगमग-जगमग करती मोतियो और हीरो को देखकर एकाएक कह उठती—"हरे-रे-रे-रे बापजी इॅण दायजारो कई देखणो ? या तो हात (सात) पीढी मे एडो दायजो नी देखियो।" खलपा के सेठ-महाजनो ने दहेज की चीजो की कीमत लगाई । शराबी सीधे-सादे ससुर कामदारो के हाथ मे खेलते थे, वह उन्हे खूब लूटना जानते थे । उन्होने ससुर का कान भरा—"जेवरो की चाभी अपने पास रखिये।" मगलपुर के कामदार को ससुर ने कहलवाया, कि "जेवरो को तोसाखाने मे रखकर चाभी हमारे पास भेज दो।" कामदारो के मन मे सन्देह हो गया, उन्होने बडी नरमी से कहा—"हाथी, घोडे, उनके बहुत से जेवर, सिरोपा और दूसरी चीजे आपको दी गई है, वह आपकी । ये जेवर-कपडे तो हमारी बाईजी को इस्तेमाल करने के लिए दिये गये है, इस-

लिए इनको उन्ही के पास रहना चाहिए।" उन्होने जेवरो के बक्सो को दुलहन के पास भिजवा दिया, और कपडो को तोसाखाने मे रखवा उसकी चाभी भी उनके पास भेज दी।

दुलह्न के पहुचने के पन्द्रह दिन बाद तक ननद और ननदोई खलपा मे रहे। ननदोई वैसे अच्छे समझदार आदमी थे। कवला राजा के छोटे भाई थे, लेकिन रियासतो मे शराब और विलासिता बिल्कुल साधारण सी-बात है, जिनसे मुक्त आदमी मुश्किल से मिलते है। कुमार साहब ससुराल मे भी बारह बजे रात तक अपने यहा रण्डियो का नाच कराते रहते। उनकी स्वेच्छाचारिता से कितनी दूसरी स्त्रिया आशकित रहती। उनके बिदा होने के दूसरे दिन समुर ने वह कमरा बहू को दे दिया।

अन्त पुर का इसे सबसे अच्छा कमरा कह सकते है। था वह पुराने फैशन का, किन्तु रहनेवालो के आराम का कुछ ख्याल करके बनाया गया था, इसमे सन्देह नही। उसके साथ सडास (पाखाना) भी था, एक कोठरी भी थी, जिसे बहू ने स्नान-गृह मे परिणत कर दिया। कमरा करीब बीस हाथ लम्बा और पन्द्रह हाथ चौडा था। बीच मे मेहराबदार पत्थर के खम्भो की पाती कमरे को दो भागो में विभक्त करती थी। पीछे बहू ने खम्भो के ऊपर पर्दा डाल एक कमरे को दो कमरो के रूप मे परिवर्त्तित कर दिया। छत पत्थर की पट्टियो की थी। कमरे के एक बाजू में प्राय तीस हाथ लम्बी, बारह हाथ चौडी खुली छत थी, जिसके तीन ओर छोटी-छोटी दीवारे और गढ के दरवाजे की ओर बडी दीवार खिची थी। पहले जो कोठरिया और तिबारी मिली थी, वह अब भी दुलहन के हाथ मे थी। उनमें जाने के लिए कमरे के एक ओर के दरवाजे से दो सीढिया उतर छोटी-सी छत पार करनी पडती थी। दोनो कोठरियो मे अच्छी कोठरी को गौरी ने किस्तूरी को दे दिया, और दूसरी कोठरी मे छोरियो को रख दिया। कमरे के दो तरफ दो दरवाजे थे। उनके अतिरिक्त भी दरवाजो के बराबर से ही दो तरफ मे तीन-तीन खिडकिया थी, जिनसे एक ओर मुरलीमनोहर के मन्दिर को देखा जा सकता था। दूसरी तीन खिडकिया गढ के दीवार की तरफ थीं। कमरे की छत के ऊपर जाने के लिए पक्की सीढी बनी हुई थी।

स्नानवाली कोठरी मे ही दीवार मे अलमारी लगी थी, जिसमे बहू ने अपने जेवरो और कपडो के बक्सो को रख दिया। कमरे मे कुछ खुले आले भी थे। फर्श-पर सफेद-लाल धारीवाली दरिया बिछी थीं, जिनके ऊपर जाजम नही था। एक पुराने ढग का काम किया हुआ लकडी का सोफा और दो गद्दीदार कुर्सियो के

अतिरिक्त मसहरी सहित एक काठ का पलग वहा बिछा हुआ था। एक गोल और एक चौकोर दो मेजे भी थी, जिनमे एक पर बहू ने अपने ग्रामोफोन को सजा दिया और दूसरे के ऊपर पुरुष-प्रमाण दो दर्पणो मे से एक को रख दिया। कमरे के सजाने के लिए बहू के पास बहुत-सी चीजें थी। अगले कुछ दिनो मे लगकर उसने अपनी लौडियो की मदद से कमरे को खूब सजा दिया। लाल मखमल पर सलमा-सितारे के कामवाली गद्दी-तकिया (मसनद) भी एक ओर लग गई। सोलह और बारह बत्तियोवाले दो सुन्दर झाड छत से टाग दिये गये और उपयुक्त स्थान पर आठ मोमबत्ती की हडिया भी लटका दी गई। छत और दीवारो पर हलका नीला रग किया हुआ था, जो इस सजावट मे बुरा नही लगता था। साथ लाये कपडे से खिड-कियो और दरवाजो पर पर्दे बनाकर लगा दिये गये। चार गुल्दस्ते भी फूलो के साथ जहा-तहा रख दिये गये। दरियो के ऊपर सफेद चादर बिछ गई। पलग के ऊपर रेशमी और दूसरी अच्छी चादरे, तकिये, रजाई आदि रख दिये गये। पीहर से हाथ की गेसबत्तिया आई थी, जो रोशनी का काम देने लगी। बहू के कमरा सजाने की खबर भला गढ मे फैले बिना कैसे रहती ? सबसे पहले अन्त पुरिकाओ का ध्यान उधर आकृष्ट हुआ। सास बेचारी बडे सीधे-सादे स्वभाव की थी, सच्चे अर्थो मे भोली-भाली थी, सौतेली होने पर भी उसमे ईर्ष्या या छल-कपट नही था। सजे कमरे को देखकर वह बोल उठी—"थाणा बाप तौ इत्ती चीजा दीदी, जण हजा (सजा) लियो। म्हाणो बाप तो काई नी दीदो, काण हू हजाती।" वह सम-झती थी, कि बहू को मायके से बहुत-सी चीजे मिल गई है, इसलिए उसने अपने कमरे को सजा लिया। उन्हे यह मालूम नही था, कि घी, बूरा, आटा दे देने पर भी बन्दर माल-पूडा नही बनायेगा, वह उसमे सिर्फ लोट-पोट करेगा। जनाने के बाद खबर मरदाने मे पहुची। ससुर आये देखने, और देखकर उन्होने बहू की बडी तारीफ की। बचपन से ही गौरी को चीजो के सजाने का शौक था, इसलिए उसकी परिमार्जित रुचि का चमत्कार वहा देखा जा रहा था। ठाकुर साहब के बाद उनके कामदार (अफसर) और दूसरे भी देखने आये, उनके लिये कितनी ही बार बहू को अपना कमरा छोड पहलेवाली कोठरी मे चला जाना पडता।

× × × ×

सीधी-सादी सास के लिए किसी पर रोब-दाब रखना असम्भव बात थी। एक तरह खलपा का सारा परिवार ही भोले-भालो का था। सौतेली सास की अपनी कोई औलाद उस समय तक नही थी, एक लडका बहू के ब्याह लाने के ग्या-

रह महीना बाद पैदा हुआ। मृत सौत की लडकिया उनकी नाक मे दम किये रहती। बेचारी को यह जानकर सन्तोष था, कि पराये घर की है, चली जायेगी तो मै चैन की सास ले सकूगी। लेकिन उनको यह डर बराबर बना रहता, कि कही नई बहू भी बेटियो-जैसी न आ जाये। बहू उन्हे बहुत अच्छी मिली थी। वह बहुत समझदार थी, साथ ही सासू के भोलेपन को जानकर उनकी नाराजगी और कडवे वचन को मन मे नही लाती थी। कुछ कहती, तो जवाब नही देती। कभी वह गुस्से मे कह देती--"इनके बाप की तो खोज (जड) खतम हो गई है, इसलिए दहेज दे दिया।" कभी कुछ और अपमानजनक बाते भी बोल देती। बहू चुप रह जाती। रोज मुह-हाथ धुलाने, पगे लागी करने और पैर दबाने के लिए जाती। दो-चार दिन सास का मुह सूजा रहता या कुछ बडबडा देती। फिर बहू के चुप रहने का प्रभाव पडता और खुल उठती--"बीनणी, मै थाने जिण दिन कियो मन्ने हिकाय (सिखाय) दीदी। था भला माबापारी बेटी हो, जेणउ था जवाप नी दीदो।" बेचारी अकल के साथ कान की भी कच्ची थी और अन्त पुर मे आग लगानेवालो की कमी नही थी। बहू से प्रसन्न होकर कभी बोल उठती--"था माणे चोखा आया, चचलावतशा भले बेटी जणी।"

राजस्थान की हजारो अन्त पुरिकाओ की तरह सासू भी पति की उपेक्षा की मारी थी। पति बराबर शराब मे चूर रहते, दो जनपुरी रण्डिया उनके दरबार मे नौकर थी, और रखेलियो के बारे मे कहना ही नही। फिर ठाकुर साहब को क्या पडी थी, कि अपनी ठाकुरानी की ओर ध्यान देते? सुना है, चीन के सम्राटो के अन्त पुरो मे दर्जनो रानिया और सैकडो नही, हजारो अन्त पुरिकाए रहती थी। रानियो के साथ न्याय भी किया जाता, तो भी उनके पास सम्राट् के आने की बारी साल मे दो-चार ही बार आती। देश-विदेश से सौगात मे आई सुन्दरियो को तो पहले ही दिन सम्राट् अच्छी तरह देख पाते थे, उसके बाद जब अन्त पुर मे एक बार उन्हे भेज दिया गया, तो उनको याद रखना भी सम्राट् के लिए असम्भव था। रानियो और अन्त पुर की सुन्दरियो के चित्र सम्राट् के पास रक्खे जाते, और उस दिन वह जिसको पन्सद करते, उसके महल मे जाते। दरबारी चित्रकार की बडी बन आती थी। वह किसी के चित्र को बिगाडके बना देता और किसी को और भी अधिक सुन्दर चित्रित कर देता। इसके लिए चित्रकार को रानिया बडी-बडी रिश्वते देती थी। राजस्थान के अन्त पुरो मे भी कुछ ऐसा ही रवाज था। चित्र तो पेश नही किये जाते थे, किन्तु किसी खास महल मे भेजने की प्रेरणा देना मुहलगे मुसाहिबो के हाथ मे था। इसके लिए वह

बाकायदा रिश्वत लेते थे। सासू हर आठवे-पन्द्रहवे दिन बीस-पच्चीस रुपये किसी मुसाहिब को इसके लिए देती। बहू के सामने अपने दु खो का रोना रोते कहती—"थारा होरा (ससुर, सौरा) मन्ने कइ हुक (सुख) दीदो ?"

यही नही कि पति-पत्नी के सम्बन्ध मे मधुरता पैदा करने के लिए रिश्वत दी जाती, बल्कि कोई चीज लेनी हो, तो उसमे भी मुसाहेब मोल-भाव करते थे। नत्थू खा ससुर का मुहलगा आदमी था। एक बार उसने नई बहू के पास सन्देश भिजवाया—"मै आपके लिए सबसे अधिक हाथ-खर्च ठाकुर साहब से दिलवा दूगा, यदि सौ रुपये और एक घाघरा-लुगडी दे दे।" बहू के लिए यह नया तजर्बा था। उसने अपने गुस्से को दबाकर कहलवा भेजा—"मैं इस घर मे आई हू, घाटा होगा तो घाटा भोगूगी, नफा होगा तो नफा, मुझे हाथ-खर्च की जरूरत नही। अपने घर के काम के लिए मै रिश्वत नही देना चाहती।" सासू ने जब यह बात सुनी, तो बोल उठी—"थे तो बीनणी, हुँसियार हो, म्हाणा कनेऊँ तो आठवे-दसवे दिन पचीह-बीह ले लेवै, थारा होराने माए मेलवा रा।" सचमुच ही अपनी बीनणी की यह हुशियारी उन्हे बडी चमत्कार-पूर्ण मालूम हुई। खलपा के महल मे आते ही बहुत जल्दी बहू का रोब-दाब जम गया। इसका कारण यही था, कि वह साधारण अन्त पुरिकाओ जैसी दूसरो के हाथो मे खेलनेवाली नही थी। वह अपनी बुद्धि का पूरा उपयोग कर सकती थी, जो उसे/काफी परिमाण मे मिली भी थी। अगर वह आधे परिमाण मे उसके अर्धांग को भी मिली होती, तो क्या कहना ?

सासू बेचारी एक दिन बैठी नायन का इन्तजार कर रही थी। कह रही थी—"कैसे करू, नायन नही आई, नाखुन कटवाना था।" बीनणी ने झट कह दिया—"कैंची मगवा दे, मै काट देती हू।" नायन तो कभी-कभी कच्चा नख भी काट देती होगी, और बीनणी ने बडी सफाई के साथ नाखून काट दिये। इसके बाद तो सासू ने यह सेवा अपनी बहू को दे दी। नायन और लौडिया बाल गूथते वक्त ठीक से न कर बाल को ऊपर-नीचे खिसका देती थी। बीनणी ने एक दिन देखा, तो उसे पसन्द नही आया, और उसने अपने हाथो से सासू के बालो को गूथ दिया। इसके बाद यह भी सेवा सासू ने बीनणी के जिम्मे कर दी। सासू का समय कैसे कटता, यदि हसी-दिल्लगी न होती। गौरी के साथ आई लौडी सूवटी बडी हसमुख थी। सासू उसके साथ बराबर हसती रहती। बीनणी का स्वभाव बराबर हसते रहने का नही था, जब वह हसने लगती, तो साँसू तुरन्त कहती—"आज तो बीनणी भी हसी।" शाम के वक्त चिराग जलते समय दीपक के प्रकाश मे सुन्दर मुख देखना शुभ शकुन माना जाता है। चिराग जलते ही सासू बीनणी के चेहरे से घूघट हटा-

कर कहती—"आओ, लाओ मूडो (मुह) दिखाओ, रोशनी आई, थानो मूडो मने चोखो होवे।"

अगहन मे बहू ससुराल आई थी। दो महीने बाद फागुन आ गया। फागुन के महीने मे पति-पत्नी के सोने के कमरे मे ताला लगाने का रवाज राजस्थान के अन्त पुरो मे ही नही दूसरे घरो मे भी है, जो एक अच्छा-खासा मनोरजन का माधन है। ससुर शराब पीते-पीते एक बार लकवा के शिकार हो चुके थे। अब फिर उन्होने अति करनी शुरू की थी, जिसके कारण लकवे का दौरा दुबारा हो गया और वह चल-फिर नही सकते थे। रात के वक्त सासू दो घण्टे के लिए अपने पति से मिलने जाती। डाक्टर ने सख्त मनाही कर दी थी, कि ठाकुर साहब को एक बूद भी शराब न दी जाय, लेकिन सासू अपने पति की निर्बलता को जानती थी। वह अपने साथ छिपाकर शराब की बोतल जरूर ले जाती। किवाड के छेदो से दूमरी स्त्रिया देखती, सासू अपने हाथ से प्याले मे शराब भरकर पति को पिला रही है। वह स्वय भी रोज शराब पीती थी। जब बहू पैर दबाने जाती, तो देखती, पास मे चौकी पर बोतल और गिलास रक्खा हुआ है। बहुत प्रसन्न होकर कभी-कभी वह कह उठती—"बीनणी, लो दारू पीओ।" बीनणी जवाब देती—"मै तो नई पीऊ हुकम।" फिर सासू कहती—"थोडी-घणी तो लोईच।" और फिर बहू कहती—"आप अपने हाथ से बिगाड रही है, मै फिर शराब पीना सीख जाऊगी।" सासू की फिलासफी थी—"कुछ नही, सीख जाओ तो क्या ? खलपा जैसा धनी ठेकाणा है, फिर पैसे की क्या कमी ?"

× × × ×

एक दिन सास-ससुर अपने कमरे मे थे। इस समय की ताक मे पहले ही से बहू और दूसरी स्त्रिया थी। पहले ही इन्तजाम कर लिया गया था, कि कही और रास्ते से निकल न जाय। रात के दो बजे सास के कमरे मे होते समय ताला लगा दिया गया—वैसे रवाज तो है, सुबह चार-पाच बजे का, ढोलणियो और डावडियो (लौडियो) का गाना सूचित करता, कि दोनो अब जेलखाने के बन्दी है। बहू ने ताला लगाते ही ढोलणियो और डावडियो को वहा बैठा दिया था। वह शृगार-रस की अश्लील गालिया गाने लगी। जब तक ससुर कह न दे कि हम गोठ (बडा भोज) देगे, तब तक ताला नही खुल सकता था। इधर शयनागार के दर-वाजे के बाहर ढोलणिया और डावडिया गीत गा रही थी और उधर नीचे ढोली

नगाडे पीट रहे थे, अर्थात् सारे शहर को बतलाया जा रहा था, कि इस वक्त ठाकुर और ठाकुरानी के ऊपर ताला लग गया है। ससुर ने बाग मे गोठ देने का वचन दिया। दो-तीन दिन बाद वहा बडा भोज हुआ, जिसमे ढाई-तीन सौ आदमी शामिल हुए। मासाहारियो के लिए कई तरह के मास, पुलाव और शराब तैयार थी, घासाहारियो के लिए खीर, मालपूआ तथा और मधुर भोजन बने थे। मालर के इस कोने मे यह एक दूसरी ही धरती है, यह इसी से मालूम होगा कि वहा के कुओ मे आठ-दस हाथ से अधिक लम्बी रस्सी नही लगती। वर्षा मे तो पानी और भी नजदीक आ जाता है और तीन-चार हाथ की रस्सी से काम चल जाता है। बाग के कुए मे अरठ (रहट) चल रहा था, जिसके ऊपर घडलियो की माला घूमती पानी को ऊपर ला रही थी। कुए से पानी एक हौज मे भरा जाता था, जहा लोग डोलचियो मे रगवाला पानी तैयार कर रहे थे। गोठ के साथ फागुन की गेर (फाग) खेलना कैसे छोडा जा सकता था ? ससुर ने बहू को भी गेर खेलने के लिए बुलाया। वह कुर्सी पर बैठा दिये गये थे। बहू ने पानी मे थोडा केसर मिलाकर उनके पैरो पर डाल गेर खेलने की रसम अदा की। लौडिया दो-तीन घण्टे गेर खेलती रही। दोपहर और शाम को भी बाग मे ही भोजन हुआ, और रात को सब लोग गढ मे लौटे।

फागुन की अमावस्या के बाद की पचमी को खलपा मे 'ऊटापाचम' कहते है। उस दिन से बाकायदा गेर (फाग) खेली जाने लगती है। गढ के विशाल हाते मे एक लकडी गाड दी जाती है, जिसके ऊपर ढोल टाग देते है, और वही पास में नगाडे रक्खे रहते है। आठ बजे से गेर शुरू होती। उससे पहले ही ठाकुर और उनके कुमार तथा कामदार चूडीदार पायजामा, शेरवानी और शिर पर रग-विरगे साफे बाधकर गेर खेलने के लिए तैयार हो जाते। अखाडे मे अपने हाथो मे दो-दो डण्डिया लेकर सब पहुचते। ढोल और नगाडे बजने लगते, और ताल पर डण्डी का नाच शुरू होता। सामन्तवर्ग के पुरुषो का इस तरह लोकनृत्य मे शामिल होना बतलाता है, कि गोलान मे कृत्रिम सभ्यता का पूर्णतया प्रवेश अभी नही हो पाया था। डाडियो का नाच गोलान से आगे सौराष्ट्र मे भी देखा जाता है। बीच-बीच मे ढोलियो और नाचनेवालो को शराब भी मिलती, और दर्जनो आदमी ताल पर नाच करते रहते। वैसे कुछ इस तरह के नाच सलमाडा मे भी होते है, लेकिन वहा वह इतने ताल के साथ नही होते, जिससे उतने आकर्षक नही होते, वह गोलान के सामने सचमुच गवारू-से मालूम होते। इसकी कमी को वहा स्त्री का स्वाग भरकर लोग पूरा करना चाहते। सलमाडा से अधिक अच्छा तो गेर-

रमना (फाग खेलना) मालर (जनपुर) मे होता। बहू, सास और दूसरी अन्त-पुरिकाए अपने कमरो मे बैठी खिडकी से इस नाच को अच्छी तरह देख सकती थी, क्योकि क्रीडागन रनिवास के पास ही मे था। गेर रमने के समय बहुत चहल-पहल रहती थी।

होली के दिन आधी रात के बाद तक गेर हुई। जिस वक्त पुरुष नीचे गेर खेलते, उस समय स्त्रिया या तो बैठी-बैठी उसे देखा करती या उसके बाद या उसी समय बहुत अश्लील गानो के रूप मे फाग गाती। होली के दिन स्त्रियो और पुरुषो दोनो को अश्लील गालिया गाने के लिए छूट थी। होली जल जाने के अगले दिन नगरवासी और गाववासी 'रामासामा' करने के लिए ठाकुर साहब के दरबार मे आते। हर एक जाति की अलग-अलग मण्डली होती, जो अपने साथ बजाने के लिए चग लिये आती। जो शराब पीते, उन्हे ठाकुर साहब की ओर से शराब दी जाती, जो नही पीते, उन्हे गुड या मिठाई मिलती। उस दिन अगर किसी के घर मे साल भर का लडका होता, तो उसका ढाढ करते--बच्चे को चौकी पर बैठा चार बास के टुकडो को आडे-बेडे छत की तरह बना कुछ गाते हुए इस छत पर चोट लगाते, इसी को 'ढाढ करना' कहते है। इसके लिए पकवान भी बनाया जाता और गाना-बजाना भी होता।

होली के बाद की पचमी को 'गेर-पाचम' कहते। इस दिन गावो मे बडा उत्सव मनाया जाता। एक-एक बिरादरी के स्त्री-पुरुष अपने-अपने टोले-मुहल्लो मे इकट्ठा होकर रग के पानी की गेर खेलते। पुरुषो के हाथो मे अबीर के पानी की डोलचिया होती, जिसे वह स्त्रियो पर फेकना चाहते और स्त्रियो के हाथ मे डण्डे और कपडो के बने कोडे होते। जब पुरुष डोलची का पानी फेकने के लिए नजदीक आते, तो स्त्रिया कोडो और डण्डो से उनकी खबर लेती। इस तरह की होली ब्रज मे भी होती है, यह हमे मालूम है। गोलान मे यह होली 'गेर-पाचम' से दो दिन आगे 'सील-सातम' तक चलती रहती है। होली के दूसरे दिन भी यह गेर खेली जाती है, किन्तु वह उतनी जबर्दस्त नही होती, जैसी कि इन तीन दिनो मे। गेर खेलने का रवाज जनपुर मे भी है, जिसमे महाराजा और महारानिया भी शामिल होती है। वहा भी पुरुषो के हाथ मे डोलचिया और स्त्रियो के हाथ मे कपडे के कोडे होते है।

होली के उत्सव को सम्मिलित (पचायती) मनाने का भी गोलान मे रवाज है। एक जाति के लोग आपस मे विशेष चन्दा करते है, जिससे शराब-मास या खीर-मालपूआ की तैयारी होती है, फिर सब फाग खेलते तथा भोज करते है।

गोलान मे तेलियो को घाची कहा जाता है। खलपा मे वह तेल पेलने का भी काम करते है, और खेती का भी। घाची और घाचिने गेर-पाचम को गेर खेलने गढ मे आती । गढ मे बडे-बडे कढावो मे अबीर का पानी भर दिया जाता, फिर वही डोलची से रग फेकना और डण्डो से खबर लेनें का विनोद चलता। उन्हे पीने के लिए शराब दी जाती, और बिदाई के समय हर एक आदमी को गढ से गुड भी मिलता।

गौरी को पीहर से आये तीन महीने से ऊपर हो रहे थे। गनगोर के उपलक्ष मे मगलपुर से सिजारा लेकर, कुछ ठाकुर और कामदार आये । जसपुर मे घेवर भेजने का बडा रवाज है। साथ मे दो मन घेवर भी मगलपुर से आया, और मोतीचूर के लड्डू बहुत-से यही बनवा लिये गये। ससुर और दामाद के लिए सिरोपाव, लहरिया साफा थे और सास तथा ननद के लिए घाघरे-लुगडी। ठाकुर के छुटभैयो के लिए भी सिरोपाव और घाघरा-लुगडी आई थी। बहू के पीहर से क्या-क्या चीजे आई है, इसे नागरिको को भी दिखलाना था, इसलिए सभी चीजो को थालो मे सजा लौडियो के शिर पर रख गाते-बजाते सारे नगर मे जलूस निकला। पीछे मिठाइया भी गाव मे बाटी गईं।

जोलावाली बुआ की लडकी की शादी सिही के राजा से होनेवाली थी। जोलावाली बुआ के पिता को कोई पुत्र नही था, इसलिए गौरी के पिता बलवन्तसिहजी गोद गये थे। बुआ का अपनी भतीजी पर बडा प्रेम था। बाबोसा भात लेकर आनेवाले थे। बुआ ने जब भतीजी को लडकी के विवाह मे बुलाया, तो वह कैसे इनकार कर सकती थी ? शादी अजमेर से होनेवाली थी, इसलिए गौरी को ससुराल से बिदा हो अजमेर जाना पडा।

अध्याय ११

मुकलावा (गौना)

जोलावाली बुआ की लडकी सजनकुमारी--जिसे लोग अक्सर बापूलाल कहकर प्यार से पुकारते थे--गौरी से तीन महीने बडी थी, लेकिन गौरी भी उसे जीजा न कहकर बापूलाल के नाम से पुकारती थी । दोनो मे पहले ही से परिचय ओर प्रेम था । खलपा के दो आदमियो के साथ गौरी अजमेर के लिए रथ मे बैठ स्टेशन की ओर रवाना हुई । वही गीत, ढोल-तासे गाव के बाहर तक पहुचाने आये । औरा मै फर्स्ट क्लास का डिब्बा रिजर्व था । वहा ११ बजे ट्रेन मिली और शाम को पाच बजे अजमेर पहुची । जोला के ठाकुरो का अजमेर मे अपना मकान करमगज मे था । उनकी जागीर और ब्रिटिश-भारत के अन्तर्गत अजमेर के जिले की सीमा मिलती थी । बल्कि केलरी गाव का आधा अग्रेजी मे था और आधा जागीर मे । जोलावाले जानावत थे । लडकी का ब्याह सिही के राजा से हो रहा था, यह कह आये है । शायद बरात के आराम के ख्याल से जोला छोड अजमेर मे ब्याह करने का निश्चय किया गया था । लडकी सत्रह-अठारह साल को थी, और घर पर रहकर उतनी ही पढी-लिखी थी, जितना कि गौरी । नरपुर मे अपनी नानी के पास वह अक्सर रहा करती थी, बुआ भी अपनी मा के पास जब-तब जाती रहती ।

गौरी ब्याह के आठ दिन पहले अजमेर पहुची थी । अगले दिन से ही ब्याह का विधि-विधान शुरू हो गया । शादी से एक दिन पहले बाबोसा आ गये, और शादी के दिन उन्होने भात पहिराया । बाबोसा के साथ ब्याह के बाद गौरी भी मगलपुर चली गई । शादी-ब्याह के रीति-रवाजो मे कुछ बातो मे भेद रहने पर भी राजस्थान के ठाकुरो और राजाओ मे वह एक-जैसे है । उन्हे फिर यहा दोहराने की अवश्यकता नही । अन्तर इतना ही था, कि यहा ठाकुर-कुमारी का ठाकुर-कुमार से नही, बल्कि राजा से ब्याह हो रहा था ।

अजमेर मे रहते ही गौरी की चिट्ठी और आदमी से कुछ खलपा की अप्रियकर खबरे मिली थी । राजशाही का ही छोटा रूप है ठाकुरशाही । राजाओ और ठाकुरो

के हाल तक चले आये रीति-रवाज वही थे, जो भारतवर्ष मे दो-ढाई हजार वर्ष पहले भी मौजूद थे, विशेषकर स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध के । व्यवस्था ऐसी जबर्दस्त, वातावरण इतना विषैला, कि असाधारण आदमी ही उससे ऊपर उठ सकता है । भीतर से बाहर तक बहुत निचले दर्जे के खुशामदी स्त्री-पुरुषो का घेरा रहता है । पराये की कमाई की लाख-लाख की राशि वहा मुफ्त मे आती है, जिसमे आग लगाते रहना राजाओ और ठाकुरो का काम है । इस राशि मे से जैसे हो तैसे लूटने के लिए चारो ओर गिद्ध और गिद्धनिया जमा हो जाती है । उनमे आपस मे इस बात की प्रतिद्वन्द्विता चलती है, कि कैसे अन्नदाता ठाकुर और अन्नदाता ठाकुरानी को झूठी-सच्ची सुनाकर अपना उल्लू सीधा किया जाये । इतना ही नही ठाकुरो राजाओ और उनके पुत्रो को हर तरह से चरित्रभ्रष्ट करना वह अपने लिए लाभ की बात समझते है । राजस्थान के राजपूतो मे—विशेषकर पैसेवालो मे—शराब पानी से अधिक महत्त्व नही रखती, और स्त्री-पुरुष दोनो बेरोक-टोक उसे पीते है । स्त्री के सम्बन्ध मे राम नही दशरथ उनके आदर्श है । कई स्त्रियो को ब्याहना और उनसे भी अधिक को पातर या लौडी बनाके रखना उनके लिए बिल्कुल सनातन धर्म है । दूसरी गाव या नगर की सुन्दरियोको बिगाडना या कुछ समय के लिए रख लेना भी वहा बिल्कुल बुरा नही समझा जाता ।

बुरी खबर पाने के बाद गौरी अपने बाबोसा के पास मगलपुर गई थी । वहा जाने पर भी पन्द्रह दिन तक कोई चिट्ठी नही आई, तो उसकी चिन्ता और बढ गई । मा ने खलपा आदमी भेजा । उसने जाकर देखा, बात ठीक थी, ठाकुर-कुमार रासलीला मे लगे हुए थे । यद्यपि अपने बाप की तरह वह न जनपुर से रण्डिया बुलवाते, न स्त्रियो को ही उनके पास गढ मे पहुचाया जाता, लेकिन बात खुली-सी थी । मगलपुर के आदमी को पता लगने मे देर नही हुई । उसने ससुर के द्वारा अकुश लगवाने की कोशिश की, लेकिन ससुर ने साफ कह दिया—"यह कोई नई बात नही है । सरदारो के लडके तो ऐसा किया ही करते है । शिकार के लिए जाकर भी शादी कर लाते है ।" ठाकुर को क्या दोष दिया जाय और क्या उनके लडके को, जब कि कुए मे ही भाग पड गई हो । राजस्थान के सारे सामन्तवर्ग मे ऐसे ही आचारशास्त्र को माना जाता हो, तो किसी नवतरुण के लिए कैसे खैरियत मनाई जा सकती है—

यौवन धन-सम्पति प्रभुत्वमविवेकिता ।
एकैकमप्यनर्थाय किमु यत्र चतुष्टयम् ।।

अभी चौथी चीज (प्रभुत्व) के आने मे कुछ देर थी, क्योकि पिता जिन्दा थे, लेकिन वह अब मृत्यु की प्रतीक्षा मे ही मानो शय्यागायी हो गये थे।

आदमी ने मगलपुर मे जाकर सारी बात बतलाई। बाबोसा ने सोचा—"शायद पत्नी के पास रहने से ठाकुर-कुमार रास्ते पर आ जाये। पास मे प्रिया स्त्री के न रहने से भी लोग पथभ्रष्ट हो जाते है।" उन्होने यही अच्छा समझा, कि लडकी का मुकलावा (गौना) जल्दी कर दिया जाय। आदमी भेजकर इन्होंने कुवरसाहब को ससुराल मे बुलवाया। वह वहा पन्द्रह दिन रहे। यद्यपि बुद्धि मे तेज नही थे, किन्तु साधारणतया अच्छे तरुण मालूम होते थे। बहुत पीछे जाकर उन्हे बाप की तरह अधिक शराब पीने की आदत हुई, जिसे प्रौढावस्था का दुर्व्यसन कह सकते है। वह दृढ मनोबल के नही थे, फिर ऐसा आदमी दरबार के वातावरण मे कैसे अपने पैर को जमाकर मजबूती से खडा रह सकता था। पत्नी ने पति से पूछा, पहले उन्होने झूठी बात बनानी चाही, किन्तु पीछे स्वीकार करते हुए कहा—"अब ऐसा नही होगा।"

मुकलावे मे भी पीहर से कितने ही जेवर मिले। चादी-पीतल के बहुत-से बर्तन दिये गये, जो अबकी बार दो-दो की जगह एक-एक थे। अबकी सास-ससुर दामाद के साथ अपनी लडकी को भेजते समय दिल मे उतना उत्साह नही रखते थे। उनके मन मे तरह-तरह की आशकाए उठती रहती थी। ऐसी आशकाओ के दर्जनो उदाहरण उन्होने अपनी आखो देखे थे। अन्त पुर की बहुत कम ही ऐसी नारिया होगी, जो कि आजीवन चिन्ता की भट्टी मे न सुलगती हो। सौ मे दस से ज्यादा ऐसी सौभाग्यशालिनी नही थी, जिनका जीवन दु ख-चिन्ता-विमुक्त बीता हो। यदि गौरी साधारण बुद्धि की लडकी होती, तो अपने आसपास की हर एक चीज को विधि का विधान मानकर चुपचाप स्वीकार करने के लिए तैयार हो अपने जीवन को किसी न किसी तरह कम चिन्ता के साथ बिता सकती थी, लेकिन मुश्किल यह था, कि गौरी उनमे से नही थी। वह समझदार थी। बचपन से ही अपने व्यक्तित्व को स्वतन्त्र रखने और समझने का स्वभाव उसको हो गया था। वह किसी चीज को बाप-दादो के समय से आई समझकर आख मूदकर मानने के लिए तैयार नही थी। ऐसी स्त्री के लिए राजस्थान का अन्त पुर घोर नरक के सिवा और कुछ नही हो सकता।

× × × ×

जून १९२६ मे गौरी फिर खलपा पहुच गई। कुमार को वह बहुत दोषी ठहरा नही सकती। उनका अपनी पत्नी के साथ फिर पहले ही जैसा बर्ताव और प्रेम था।

शराब या स्त्री दोनो हथियारो को इस्तेमाल करके अपने प्रभुओ और प्रभु-पुत्रो को बिगाडने की ताक मे दरबारी रहते ही है। शादी से पहले ही खुशामदियो ने कुमार को स्त्रियो के फन्दे मे फसाने मे सफलता पाई थी। पिता भी इस बारे मे निरकुश थे, इसलिए वह बेटे को किस मुह से समझा सकते थे ? बाप यदा-कदा रण्डियो को बुलाते, बेटा तो उतना भी नही कर रहा था। बेचारी सास ने भी सारी बाते खोलकर बतलाई, अन्त पुर की और स्त्रियो से भी सारी बाते मालूम हो गई।

कुमार ने कहा—"अब ऐसा कुछ नही होगा।" लेकिन, ऐसा कुछ न होने देने के लिए जिस प्रखर बुद्धि और दृढ मनोबल की आवश्यकता है, उसका उनमे सर्वथा अभाव था। जैसा कि पहले कहा, शराब पीने का उनको व्यसन नही था, और न वह गढ मे रामलीला करने के पक्षपाती थे, जिसमे पिता का रहना भी बाधक था। कोई ऐसा काम न था, न शौक, जिसके द्वारा वह अपना दिल-बहलाव कर सकते। पढाई पहले ही छुडा दी गई थी, और स्वत पढने का उनको कोई शौक नही था। शरीर से स्वस्थ और शिकारके शौकीन थे—सूअर का शिकार उन्हे बहुत पसन्द था। जाडो मे दोपहर को ही आठ-दस घोडो और कुछ ऊटो के साथ वह सात-आठ कोश दूर के उन जगलो मे चले जाते, जहा जगली सूअर रहा करते। खबर पहले ही आ जाती, कि अमुक स्थान पर सूअरो का झुण्ड है। आदमी और बडे-बडे सफेद सिन्धी कुत्ते सूअरो के घेरने का काम करते। घिरे हुए सूअरो को पास का सवार भाले का शिकार करना चाहता। कितनी ही बार सूअर घोडो को उछाल देते, कभी-कभी घोडो का घायल भी कर देते, घोडा मुह के बल गिरता, तो सवार भी जमीन पर आ पडता। बडी-बडी खागोवाला नर-सूअर पेट फाडने के लिए हमला करना चाहता, लेकिन सूअर का शिकार ऐसा-वैसा आदमी करने थोडे ही जाता है। सवार झट खडा होकर सूअर पर भाला चलाता, दूसरे सवार भी मदद के लिए आ जाते, और सूअर का काम तमाम कर देते। घिर जाने पर सूअर फिर पीछे हटना नही चाहता, वह सामने आकर गुर्राते हुए प्रहार करना चाहता है। कुमार को कभी सूअर के प्रहार से घायल होने का मौका नही मिला, किन्तु उनके एक-दो साथियो को चोट लगी थी। उनके लिए दस-दस, बारह-बारह सूअरो का एक-एक दिन मे शिकार कर लेना मुश्किल बात नही थी। कभी-कभी सूअर का मास नमक-मसाला लगाकर वही आग पर शूल (सीख) मे गूथकर पकाया जाता, और कभी-कभी उसे निर्धूम आग मे भुना जाता। शिकारी के यह प्रिय भोजन है। शिकार से कभी-कभी कुमार साहब नौ-दस बजे रात को लौटते। पास के गावो मे विस्नोई किसान रहते थे, वह इनके पास भी कभी-कभी खाना खा लेते।

घुडसवारी और शिकार के अतिरिक्त कुमार टेनिस भी खेला करते, शतरंज भी खेल लेते, किन्तु गीत और नृत्य मे उनकी विशेष रुचि नही थी। गर्मियो मे दोपहर को सो जाते। सक्षेप मे मनबहलाव के उनके पास यही साधन थे। जब तक पिता थे, तब तक जल्दी मुह-हाथ धोकर उनके पास पहुचते। जब स्वय ठाकुर हो गये, तो सात-आठ बजे तक उनकी नीद नही खुलती। फिर मुह-हाथ धो कुछ नाश्ता कर बाहर चले जाते और लोगो से बातचीत करते। इसी समय कभी-कभी अदालत मे बैठकर मुकदमा भी देखते और खाने के लिए ग्यारह-बारह बजे अन्त -पुर मे आ जाते। शादी के तेरह मास बाद ही कुमार के पिता मर गये, और फिर वह अपने ठेकाने के परम स्वतत्र ठाकुर बन गये।

अध्याय १२

ससुर की मृत्यु

ससुर पहले ही से खाट पकडे हुए थे। लकवा के कारण वह उठ-बैठ नही सकते थे। जो कोई काम होता, चारपाई पर पडे-पडे करते। वह अपने दरबारी खुशामदियो के हाथ मे खिलौना से अधिक कुछ नही थे। मुसाहिब जैसा उन्हे सिखला देते, बस उसी को ठीक समझने लगते। मुकलावे के बाद खलपा मे आने पर बहू को उनके वास्तविक रूप का अधिक परिचय मिलने लगा। बहू ने ससुर की कृपा से एक अच्छा कमरा पाया था, जिसे उसने खूब सजा लिया था। दरबारी चाहते थे, कि बहू भी अपनी सास की तरह उनकी भेट-पूजा किया करे। यदि वह ऐसा कर सकती—और ऐसा करना सामन्ती धर्म के बिल्कुल अनुकूल था—तो शायद उसे उतनी कठिनाइयो मे नही पडना पडता। किसी दरबारी ने ठाकुर साहब से कहा—"हमारे यहा सात पीढी से कोई ठाकुरानी या कुवरानी मरदाने किले मे नही रही। इस कमरे मे बहू को रखना ठीक नही है।" ससुर के मन मे बात बैठ गई, उन्होने तुरन्त हुकुम भेजा—"बीनणी को कहो, कि कमरा खाली करके दूसरी कोठरी मे चली जाय।" ससुर का हुकुम पाते ही कमरे को बन्द कर बीनणी उसी पुरानी कोठरी मे चली जाती। शाम तक कोई समझा देता, या न समझाने पर भी आख बचाकर पति-पत्नी फिर रात के लिए अपने कमरे मे आ जाते। कमरे की दरिया मैली हो गई थी, वर्षा के दिन थे। बहू ने अपनी लौडियो को कहा, कि छत की मोरियो को रोक लो और उसी पानी मे दरियो को धो लो। मोरियो को रोकने से छत पर काफी पानी जमा हो गया। दरिया उसी मे धो ली गई। वर्षा बन्द हो गई। मोरियो को खोलने पर नीचे जोर से धार गिरने लगी। किसी ने ठाकुर साहब से जाकर कहा—"इस तरह छत पर पानी रोकने से महल गिरे बिना नही रहेगा।" ठाकुर ने कहा—"ठीक कह रहे हो, यह महल गिराने के लिए थोडी ही बने है! जाकर बीनणी से कहो, कि अब उस कमरे मे न रहा करे।" फिर बीनणी कमरा बन्द कर पहलेवाली कोठरी मे चली गई। शाम को फिर लौट आने की इजाजत मिल गई। सावन का महीना था। झूला झूलने का

गौरी को बहुत शौक था। कसौरा की बुआ हर साल उसके पास झूला डालने के लिये पचरगी रस्सा भेजा करती थी, अबके उन्होने उसे खलपा भेजा था। गौरी ने अपने कमरे की छत से एक झाड हटा ली, और वही झूला डाल दिया। किसी ने जाकर ससुर से कहा—"महलो मे कुवरानी ने हिडोला बाध लिया है इससे तो कडी टूटकर गिर जायगी, मकान नष्ट हो जायगा।" ठाकुर साहब ने तुरन्त कहा—"महल गिराने के लिए थोडे ही बने है, जाकर कह दो, बीनणी कमरे से दूसरी कोठरी मे चली जाय।" फर्माबर्दार बीनणी ससुर का हुकुम पाते ही दूसरी कोठरी मे चली गई, लेकिन शाम को फिर उसे अपने कमरे मे आने की इजाजत मिल गई।

मुकलावे मे आने के बाद दो महीने तक ही गौरी भली-चगी रही, यद्यपि मानसिक चिन्ताओ ने इस समय भी उसके हृदय को जर्जर कर रक्खा था, ऊपर से ससुर का यह लक्षण था। वह ससुर को जब-तब देखने जाया करती। एक दिन उसने आकर अपनी सहचरी किस्तूरी से कहा भी—"बूढा अब मरने ही वाला है।" इस पर किस्तूरी ने कहा—"तुम्हारा बचपन अभी गया नही है।" दो महीना बीतते-बीतते गौरी को बीमारी ने आ घेरा। जब-तब खून की कै होने लगी। दवा से कोई फायदा नही हो रहा था। पीहर के आये कामदार (अफसर) ने ठाकुर साहब से कहा—"कुवरानीसा को दवा के लिए या तो मगलपुर भेज दीजिये, या जनपुर मे अच्छे डाक्टर से इलाज करवाया जाय।" ठाकुर ने सलाह मानकर बहू को जनपुर भेजने का निश्चय किया, लेकिन पति को साथ भेजना पसन्द नही किया, क्योकि मुसाहिबो ने कान मे जड दिया—"अभी से यदि कुवर साहब और कुवरानी साहिबा एक दूसरे से इतना मिलकर रहेगे, तो फिर आपके हुकुम मे नही रहेगे, इसलिए कुमार को बहू को साथ जनपुर नही भेजा जाय।" पच्चीस-तीस आदमियो की जमात—एक कामदार, आठ-दस धाबाई, खानसामा, पाचो छोरिया, किस्तूरी, बुआ के यहा से आई लौडी रामी—सभी जनपुर साथ गई। वहा गौरी सागर के पास खलपा की अपनी हवेली थी। खलपा मे नवीनता का प्रवेश बहुत पीछे से हुआ, इसीलिए वहा के महलो और मकानो के बनाने मे आराम का बिल्कुल ख्याल नही रक्खा गया था। यहा हवेली मे ऊपर केवल एक कमरा था, जो अनेक खिडकियोवाली दालान-जैसा था। पास मे ही पाखाना था, इसलिए कोई उतनी तकलीफ की बात नही थी। अबकी बार जनपुर जाना था, इसलिए पोसी और मालर जक्शन के बीचवाले स्टेशन पर गाड़ी पकडी गई। जनपुर पहुचते-पहुचते रात के नौ बज गये थे। हवेली और ठेकाने के कारबार को देखने-

वाला वकील रहता था। जनपुर मे आकर गौरी को बहुत अच्छा लगा, निर्बुद्धि ससुर के दिन भर मे चार तरह के हुकुमो से अब वह मुक्त थी। अगले दिन ही महिला-डाक्टर आकर कुवरानी को देख दवा देने लगी, लेकिन जो फायदा हुआ, उसका अधिक श्रेय दवा की अपेक्षा यहा का अपेक्षाकृत मुक्त वातावरण था।

कुमार साहब को पत्नी के साथ जाने से रोक दिया गया था, लेकिन वह छिपकर एक दिन अपनी मोटर मे जनपुर चले आये। हवेली के एक भाग मे सपरिवार परागमल वकील रहता था, जो जादूघर मे रखने लायक आदमी था। बात-बात मे सिर पीटना उसकी आदत थी। कुवरानी अपने कमरे मे हारमोनियम बजा रही थी। उनकी नजर नीचे की ओर गई, देखा वकील अपना मत्था कूट रहा है। पता लगा—"कुवरानी का बाजा बजाना उसकी समझ मे घर घालने का पहला कदम था।" कुवरानी ने जवाब दे दिया—"सिर कूटने दो, हमे इसकी परवाह नही।" लडकपन से ही गौरी को ऐसे लोगो के चिढाने की आदन थी, इसलिए वह वकील को सिर कूटने का अधिक से अधिक मौका देती। हारमोनियम की आवाज पर जिस दिन वकील ने सिर कूटा था, उसी दिन शाम को खलपा से कुवरसाहब आ, अपनी पत्नी के पास जाने लगे। पराग जनानी ड्योढी पर बैठ गया और कहने लगा—"मै तो अन्दर जाने नही दूगा, कुवरानी साहिबा का इलाज हो रहा है, उनके पास जाने देना उनके स्वास्थ्य के लिए खराब होगा।" थोडी देर के लिए कुवर साहब रुक गये, लेकिन ऊपर जाने की एक दूसरी भी सीढी थी, इसलिए वह उधर से ऊपर चले गये। परागमल बडबडाता सिर कूटता रह गया। परागमल साठ वर्ष की उमर को पहुच रहा था। इस आयु ने भी उसके चिडचिडे-पन को बढा दिया था। शायद वह मिडल तक भी नही पढा था, लेकिन रियासतो मे उस समय ऐसे वकील दुर्लभ नही थे।

× × × ×

चार-पाच दिन बाद खलपा से खबर आई, कि सासू को देवर जनमा है। फिर खबर आई, ठाकुरसाहब (बापजीसा या ससुर) को अबके जीभ पर लकवा मार गया—डाक्टर मना ही करते रह गये, लेकिन ठाकुर शराब छोडने के लिए तैयार नही थे, और ठाकुरानी उनके पास शराब पहुचाने से बाज नही आती थी।

कुवर साहब ने सोचा, रेल से उतरने-चढने की जगह यहा से सीधे मोटर पर खलपा चले चले। परागमल फिर सिर कूटने लगा—"बाप रे बाप, जनानी सवारी है। मोटर का क्या ठिकाना, कही रास्ते मे बिगड जाय, फिर कहा ठौर-ठिकाना लगेगा।" कुवर साहब को अपना विचार बदलना पडा और उन्होने नौकरो से

कह दिया—"रेल से पोसी चले जाओ, वहा मैं मोटर लेकर पहुचा रहूगा।" पोसी मे कोई परागमल-जैसा सिर कूटनेवाला नही था, इसलिए कुवरसाहब अपनी पत्नी को मोटर पर बैठाये तीन बजे खलपा पहुच गये। गौरी अब अपने ससुर को अन्तिम बार देखने आई थी। उसके प्रिय बाबोसा रूडसिह के मरने और बीमार होने की खबर आई थी, लेकिन वह खुद बीमार होने के कारण वहा नही जा सकी।

खलपा पहुचकर पति-पत्नी सीधे अपने कमरे मे जा सो गये। गौरी सबेरे सास को देखने आई और छोटे देवर के हाथ मे एक अशर्फी देकर मिली। सास वैसे काली नही थी, लेकिन उनका विश्वास था, कि उबटना करने से रग और गोरा होता है, इसलिए वह अपनी बहू को भी उपदेश दिया करती थी—"उबटना कर लिया करो, इसमे रग निखर आता है।' प्रसूति-गृह मे रहते भी वह रोज उबटना करवाती, लेकिन नहाती कभी नही। प्रसूति-घर ऐसी कोठरी को चुना जाता, जिसमे कोई खिडकी न हो, दरवाजे पर भी मोटा पर्दा लगा दिया जाता, जिसमे हवा और रोशनी का प्रवेश न हो। दिन के समय भी वहा तेल का दीया जलता रहता, नही तो कोई चीज दीख न पडती। बीनणी ने अपने देवर को मा का दूध पीते देखा। जब उबटन लगाकर नहाने की जरूरत नही समझी जाती, तो दूध पीते बच्चे के मुह मे भी उबटन लग जाय, तो क्या आश्चर्य? सासू मेसाल के झाला ठाकुरो के वश की थी, इसलिए बच्चे की सुरक्षा के लिए अपने मायके के टोटके को कराये बिना कैसे रह सकती थी? बच्चा पैदा होने पर एक बकरे को सात बार घुमाकर लडके के ऊपर वारा गया। प्रसूति-गृह नीचे था। छत के ऊपर शुभ कृत्यो का होना बुरा समझा जाता है, इसलिए सासू नीचे उतर आई थी। बच्चा पैदा होने की जगह फर्श तुडवाकर गड्ढा बना वही जीते-जी बकरे को दफना ऊपर से गरमागरम लापसी डालकर चूने-सीमेट से फर्श को बन्द कर दिया गया। बकरा बेचारा- घुट-घुटकर मर गया, लेकिन बच्चे के दीर्घायु होने के लिए उसकी बडी अवश्यकता थी।

आठवे दिन मा और बच्चे को प्रसूति-गृह से बाहर निकालने का महूरत आया। आज सूर्य की पूजा, और उससे पहले मा और बच्चे को नहलाया जाना जरूरी था। कुवर साहब ने अपनी पत्नी से जोर देकर कहा—"तुम नीचे मत जाना।" भला बहू ऐसी गुस्ताखी कैसे कर सकती, वैसा करने का फल होता, सासू से बराबर के लिए बैर मोल लेना। उसने पति को समझाया—"न जाने पर बूजीसा को बुरा लगेगा। गाव-नगर की लुगाइया सारी आयेगी, और मै नही जाऊगी, तो क्या कहेगी?" लेकिन कुवर साहब जिद्द पर थे—"मेरा यह हुकुम है, यदि मेरी

बात नही मानोगी, तो मै फिर अन्दर नही आऊगा।" गौरी वस्तुत अन्त पुर के लिए नही पैदा हुई थी। वह आख मूदकर किसी भी बुद्धिहीन हुकुम को मानने के लिए तैयार नही थी। उसने कह दिया—"नही आना, अगर आपकी यही मर्जी है।" वह नीचे पहुची। देखा, उसे मना करनेवाले कुवर साहब स्वय मा-बच्चे की छोडी हुई चारपाई पर बैठे है। पुत्र के दीर्घायु होने के लिए यह भी आवश्यक था, कि प्रसूति-गृह की चारपाई को खाली नही रखा जाय, इसलिए कुवर साहब को ले जाकर वहा बैठा दिया गया था। आगन मे चौकी बिछा दी गई। मा जेवर तथा पीली घाघरी-लुगडी पहिनकर अपने नवजात बच्चे को गोद मे लिये लम्बा घूघट काढे चौकी पर बैठी, यदि पिता उठने लायक होते, तो गठबन्धन करके उसी चौकी पर बैठते। बहू ने सास के आगे पाच रुपये रखकर पगे लागने की रसम अदा की। आगन मे स्त्रिया जच्चा गा रही थी।

अब सास और बहू हर रोज बीमार ठाकुर साहब को देखने जाया करती। जीभ मे लकवा मार गया था, इसलिए वह बोल नही सकते थे। पहले से शरीर भी उनका दुबला हो गया था। बच्चा जब पन्द्रह दिन का हो गया, तो सास ऊपर कमरे मे आ गई। पुष्टई के लिए सोठ-अजवाइन मिला पकवान खाती। बतीसे की खीची शराब भी पुष्टिकारक होती है, सुनकर उसे भी पीती। मास तो तरह-तरह का बनता ही था।

× × × ×

गौरी ने देखा, ससुर की हालत दिन पर दिन गिरती जा रही है। वह थोडी-सी खिचडी या दूध मुश्किल से खा लेते थे। उनकी सफेद बडी-बडी मूछे अब भी पहले-जैसी थी, किन्तु आखे फटी-फटी सी दिखाई पडती थी। पोसी या जनपुर से डाक्टर आकर देख जाते, लेकिन दवा एक वैद्य की हो रही थी। जिस दिन ससुर को मरना था, उस दिन दस बजे सास-बहू उन्हे देखने गईं। सास ने जोतिसी ब्राह्मण से पूछा—"चन्द्रमा कैसे है ?" बेचारी को इतना ही मालूम था, कि चन्द्रमा के बुरे होने से अनिष्ट होता है। जोतिसी ने कहा—"आज की रात अगर निकल गई, तो फिर कोई खतरा नही।" सास जिस वक्त जोतिसी से पूछ रही थी, उसी समय बहू घोडे के बालोवाले चवर से ससुर के ऊपर की मक्खिया उडा रही थी। ससुर बहू की ओर न जाने क्या-क्या सोचते देख रहे थे, जीभ उनके बस मे नही थी, इसलिए कुछ कह नही सकते थे। शायद सोचते थे—"मुझे ऐसी भलेमानुस बहू मिली, लेकिन मैने उसकी कदर नही की।" या सोचते होगे—"ऐसी लायक बहू मेरे आवारा-से बेटे के मत्थे पडी, न जाने वह इसके साथ क्या बर्ताव करेगा।"

बहू अपने घूघट की ओट से ससुर की फटी-फटी आखो को देख रही थी। उसे विश्वास हो चला था, कि अब वह बचने की नही।

दोपहर का खाना खा लिया गया। मखनपुर से मा ने कनस्तर भरके तला हुआ बकरे का मास भेजा था। तला माप महीने भर तक नही बिगडता, उसे सिर्फ गरम करके खाने की अवश्यकता होती ह। आज ही कनस्तर खाली हुआ था। पूस महीने की सर्दी थी, मकरसक्रान्ति आने मे तीन दिन रह गये थे। बच्चा एक मास का हो गया था। बहू बूजीसा (सासू) के पास गई। सक्रान्ति के दिन ब्राह्मणियो को दान देने के लिए वह दर्जिन से धर्म की चोलिया सिलवा रही थी। सासू को कुछ दस्त लग रहे थे। उन्होने कहा—"बीनणी, तुम यहा जरा बैठो, मै टट्टी हो आऊ।" इसी समय रामी ने आकर गौरी से कहा—"ठाकुर साहब को तो गीता सुनाने लगे है। गीता सुनाने का मतलब ही था, अब यम के दूत सामने आ पहुँचे है। सास के आने की प्रतीक्षा किये बिना बहू सीधे अपने कमरे मे चली आई। उसे प्यास लगी हुई थी, उसने रामी को गिलास मे पानी भरके लाने के लिए कहा। शाम का छ बजे का समय था, सर्दी तेज थी, एक सिगडी जल रही थी, जिसके चारो ओर बैठी छोरिया आग ताप रही थी। गौरी भी सिगडी के पास पानी पीने के लिए खडी हो गई। गिलास साफ कर अभी पानी भर रही थी, कि मरदाने से पुरुषो के रोने की आवाज आई। ऐसे समय मालर मे धाड मारकर रोना पुरुष भी करते थे। रोने का कोलाहल सुनकर सिगडी तापती छोरिया रोने और उठकर उसके चारो ओर दौडने लगी। किस्तूरी ने किसी तरह समझा-बुझाकर छोरियो को बैठाया। कुवरसाहब को भी जब यह खबर लगी, तो वह भी अपने कमरे मे इधर से उधर दौडने लगे। बहू नीचे जाने लगी। किस्तूरी ने कहा—"सादे ढग की ओढनी ओढ ले।" एक बार तो बहू पहली ओढनी फेककर नगे सिर ही चल पडी, वह इतनी बेसुध हो गई थी। फिर ख्याल दिलाने पर ओढनी ओढ लिया। उधर पति के मरने पर अब सास को छ महीने के लिए एक कोने मे कैद होने का समय आ गया था, लेकिन सास कह रही थी—"मै तो तब बैठूगी, जब तोसाखाने की चावी मेरे हाथ मे आ जाय।" बेचारी विधवा सोच रही थी, चाहे उपेक्षिता ही सही, किन्तु पति के रहने पर पैसे-कौडी की तो तकलीफ नही रहती थी। अब सौत का लडका न जाने कैसा बर्ताव करे। "इस समय जब कि ठाकुरसाहब अभी-अभी मरे है, इस तरह चाबी के लिए आग्रह करना ठीक नही है"—इस तरह समझा-बुझाकर लोगो ने उन्हे छ महीने के लिए एक अधेरी कोठरी मे रख दिया। दरवाजे पर पर्दा अगले

दिन सबेरे डाला गया। ठाकुरानी जानती थी, कि छ महीने तक कोठरी की चौकठ से भी कदम बाहर नही निकालना जिन्दा मौत है। उनको मालूम नही, कि उनके साथ समय ने बहुत दया की है। अगर यह घटना सौ-डेढ-सौ वर्ष पहले घटी होती, तो लोग उन्हे छ महीने के लिए कोठरी मे नही बन्द करते, बल्कि अगले ही दिन चिता पर रखकर जला आते।

भीतर-बाहर सब जगह रोना-धोना शुरू था, किले मे ही नही, सारे नगर मे भी। जिन्होने आटा गूध लिया था, उसे न पका कुत्तो को दे दिया। चूल्हे की आग बुझा दी गई, सभी जगह शोक छा गया। गढ मे जनाने और मरदाने आगनो मे लकडी जला दी गई। गौरी देख रही थी––जलती आग के किनारे बैठी स्त्रिया जोर-जोर से रो रही है। ठाकुर साहब के अपने कुल की तथा रिश्ते मे चाची लगनेवाली विलाप करने मे सबसे आगे थी। छाती कूटने या बाल नोचने का रवाज नही था, केवल विलाप और आसू बहाना शोक प्रकट करने के लिए पर्याप्त समझा जाता था। हर एक नर-नारी मृत ठाकुर के प्रति अपनी भक्ति और प्रेम दिखलाने के लिए रोदन और विलाप मे होड लगाये हुए था। गौरी को जोर से रोने की आदत नही थी। घूघट के भीतर वह कितने आसू बहा रही है, इसका किसको पता था। रामी ने गिलास माजने मे देर कर दी, नही तो उसका कण्ठ तो तर हो जाता। इस वक्त उसका गला सूखा हुआ था, उसमे काटा सा चुभ रहा था। । रामी ने इलायची देकर प्यास का इलाज करने की कोशिश की। आगन मे रोना-चिल्लाना मचा हुआ था। एकान्त कोठरी में बैठी सासू भी रोदन कर रही थी। ऐसे समय मे नवविधवा का हाथ स्त्रिया पकड रखती है, और ध्यान रखती है, कि कही स्त्री शोकावेग मे सिर न फोड ले। रात भर इसी तरह रोना-धोना चलता रहा। रामी और किस्तूरी बहू को घेरकर बैठ गई, और वह इसी तरह बैठी-बैठी सो गई।

सबेरे ससुर के शव को बैकुण्ठी मे बैठा दिया गया था। मरने के तुरन्त ही बाद उन्हे बीरासन कर दिया गया था––बाया घुटना जमीन पर था और दाहिना खडा। बाया हाथ बाये घुटने पर था, दाये हाथ मे तलवार थी, सिर पर पाग और शरीर पर शेरवानी थी। आखो को मुदवाया नही था, इसलिए वह पथराई-सी दीख पडती थी। गले मे मोतियो की माला और कानो मे मोतियो की बालिया थी। सबेरे बहू को धोक (प्रणाम) दिलवाने के लिए ससुर के पास ले जाया गया। बहू सिर नवाते वक्त वहा जा बेहोश हो गई, और लौडिया वहा से उठाकर किसी तरह उसे जनानी ड्योढी मे लाई, तब उसे होश आया। सास की चूडिया

निकालकर बैकुण्ठी पर रख दी गई थी, लेकिन उन्हे धोक देने के लिए वहा नही ले जाया गया।

अर्थी (बैकुण्ठी) को लोगो ने अपने कन्धे पर उठाया। साथ मे वाजा वज रहा था। ठाकुरसाहब के घोडे कोतल चल रहे थे, बेटे के ससुराल से मिले हाथी पर बैठ रुपये, अठन्निया, चवन्निया लुटाई जा रही थी। तालाब के पास ले जाकर वहा खलपा के ठाकुर को बैठा दिया गया। पुराने ठाकुर आग मे भस्मावशेष होने को तैयार थे, और पुत्र मुखाग्नि दे जागाजी की पुरानी गद्दी पर नया ठाकुर बनकर बैठने के लिए तैयार था।

जिस समय बैकुण्ठी दरवाजे से बाहर जा रही थी, उसी समय नायने पानी ला रही थी। मरने का सूतक घर भर को लगता है, इसलिए जलशुद्धि की आवश्यकता थी। उनकी कोठरी मे सासू को पहले नहलाया गया, फिर बहू ने उसी चौकी पर नहाया, जिस पर सासू ने नहाया था। इस प्रकार बारी-बारी कुल की स्त्रियो ने वही स्नान किया। लौडिया रोती-रोती तालाब मे नहाने के लिए गई, और उसी तरह रोती हुई लौटी।

सासू बहुत सीधी-सादी निश्छल स्त्री थी। बहू से वह प्रसन्न थी, और उसके सामने खुलकर अपने दिल की बात कहने से बाज नही आती थी। दूसरे दिन जब बहू मिलने आई, तो सास ने कह दिया—"मैने क्या सुख देखा था, जो रोऊ।" सचमुच ही जीवनभर उपेक्षिता रहनेवाली अन्त पुरिकाए कैसे हृदय से पति-भक्ति कर सकती है? ताली की तरह भक्ति भी एक हाथ से नही बजती, सामन्त अपनी पत्नियो से चाहते है, कि वह सीता-सावित्री की तरह उनकी पूजा करे, लेकिन वह अपने दिल को नही टटोलते, अपने गरेबान मे मुह डालकर नही देखते। वह नित्य नई-नई स्त्री चाहते है, दर्जन-आधी-दर्जन सौतो को ले आकर भी सन्तुष्ट न हो अपने हरमो को सुन्दरियो से भरना चाहते है। उनमे कुछ तो शायद एक ही रात उनके कामुकता-पूर्ण प्रेम को पाने मे सफल होती है। इतने से भी सन्तोष न करके उनके चर गाव-नगर की तरुणियो को ढूढते फिरते है। वहा की शायद ही किसी स्त्री की इज्जत बिगडे बिना रहती। यह सब देखते हुए अन्त-पुर मे कैसे कोई पतिव्रता रह सकती है। इसी डर से तो अन्त पुरो को जबर्दस्त कैदखाना का रूप दे रक्खा गया है, वहा बच्चे के रूप मे भी पुरुषो का प्रवेश निषिद्ध है। बाहर भेजने मे उससे भी कडा इन्तजाम किया जाता है, जितना कि फासी की सजा पाये कैदी का। सचमुच तलवार के हाथो जिन्हे सयम का पाठ सिखलाया जाता हो, वह मन से कैसे अपने असयमी पति मे अनुरक्त

रह सकती है ? मालिक जानमाल का मालिक है। जान से भी वह मार सकता है, कौन उसके खिलाफ न्यायालय तक खबर पहुचाने के लिए तैयार होगा ? पत्नी अपने पनि के हाथ से उठाकर दिये पर ही जीवन-यापन कर सकती है। पति यदि पत्नी को भूखा नही मारता, तो इसे उसकी उदारता समझनी चाहिए। मरने से जीना अच्छा है, तभी तो प्राणिमात्र को अपना जी वनप्रिय। लेकिन बहुत-सी अन्त - पुरिकाए जीवन से मरने को अधिक पसन्द करती है, और वह सती-प्रथा की बाते हसरत भरे दिल से सुनती। जीते चिता पर बैठकर जलने मे तकलीफ जरूर होती, लेकिन वह पाव-आध घण्टे का जलना था, यहा तो सारे जीवन भर जलते, अपमान सहते दिन और घडिया काटनी है। सस्कृत के पुराने काव्यो से प्राचीन काल के अन्त पुरो के जीवन का हमे पता लगता है। उस समय भी रानियो की स्थिति बहुत बेहतर नही थी। वे परम भट्टारक को खुश रखने के लिए स्वय कोई नई तरुणी को सौगात के तौर पर अपने पति के पास पेश करती। आज तक के अन्त पुरो में पातरे बनाकर सुन्दरियो को अपने पास रख रानिया यदि राजासाहब के मन को अपनी तरफ खीचना चाहती है, तो इसमे वह कोई नई बात नही कर रही है। वह अन्त पुर मे अगर जन्मी है, तो लडकपन से ही चारो ओर अपने आसपास यही सब देखती रही है। यदि कोई सौभाग्यशालिनी अन्त पुर से बाहर पैदा हुई, और वह अन्त पुर मे पीछे प्रविष्ट हुई, तो वह भी समझ लेती है, कि उसकी भलाई इसी मे है. कि अन्नदाता की हर एक इच्छा मे सहायक होना ही हमारे लिए कल्याणकर है, इसीलिए वह पत्नी का रूप छोड कुटनी बनती है। यह दोष सामाजिक है, इसलिए व्यक्ति पर हम उसी के अनुसार उसका भार डाल सकते है।

ठेकाने के ठाकुरो या राजाओ की मृत्यु पर शोक-प्रदर्शन बहुत व्यापक रूप से किया जाता है। ससुर के मरने पर बहू के पैर के सोने के आभूषण हटाकर उनकी जगह चादी के पहना दिये गये। हरा, नीला, काशनी रग को पक्का कहा जाता है। शोककाल मे पक्के रग का कपडा नही पहना जा सकता। सोहागिन सफेद रग के कपडे को नही पहन सकती। पीला, लाल आदि कच्चे रग का कपडा पहनना उसके लिए निषिद्ध है। गले मे टेवा, नाक और कान मे लवग सोहागिन के लिए पहनना अत्यावश्यक है, इसलिए उसे बहू भी पहने रही। अपनी मालकिन के लिए जैसा परिधान विहित या निषिद्ध है, वही उनकी छोरियो और डावडियो के लिए भी है। सास की डावडियो के हाथ बिल्कुल छूछे (डूडे) हो गये थे, वह विधवा थी—मानो उनका ब्याह मृत सरदार से ही हुआ था।

शोक मनाने के लिए हित-सम्बन्धी आने लगे। नये ठाकुर सफेद धोती, सफेद कुर्ता, मलमल का साफा लगाये थे। जूते की जगह अब वह खडाऊँ पहनते थे। विवाह मे पहने जानेवाले बिनोटे जूते ही और वह भी विवाह के समय ही देवपूजा के समय पहने जा सकते है, वाकी समय आम हिन्दुओ की प्रथा के अनुसार उन्हे भी नगे पैर ही देवता के स्थान मे जाना पडता है। सभी नौकरो को शोक-प्रदर्शन के लिए सफेद साफे ठेकाने से मिले थे, सफेद धोती-कुर्ता वह अपने घर का पहनते थे।

श्मशान से दाह-कर्म और स्नान करके लौटे, भाई-बन्द अपने नये ठाकुर के साथ आगन मे आये। एक बार फिर वहा रोना-कादना शरू हो गया। बाहर शृगार-चौक मे लम्बा चौकोर चबूतरा था, जिस पर जागा ने अपने भुजबल से पहले गोलान पर अधिकार करके राज्याभिषेक पाया था। उसी चबूतरे के ऊपर उसी के नाप की दरी बिछ गई, सफेद गादी और मसनद लग गई। गादी पर मसनद के सहारे नये ठाकुर आसीन हुए, उनकी दोनो तरफ मुसाहिब अपने-अपने पद के अनुसार बैठे। सामने गोल लकडी की कटोरी (कसरिया) मे सूखा अमल (अफीम) और डिब्बे मे सुघनी रक्खी हुई थी, हुक्का भी तैयार था। लोग इच्छानुसार अमल खाते, सुघनी सूघते या हुक्का पीते थे। बारह दिन तक—जब तक कि छूतक रहा—यह मनुआर होती रही। आम तौर से दाग देनेवाले को यहा अछूत नही समझा जाता। वह सबको छू सकता है, और उसे दूसरे भी छूते है। हा, ब्राह्मण उसके हाथ का छुआ नही खाते और न वह देवता के स्थान मे जाकर पूजा कर सकता है। रोज श्मशान मे क्रिया करने जाना पडता, वहा जमीन पर पानी का एक घडा रक्खा रहता। पीपल के पेड मे घट टागने का रवाज गोलान मे नही है। पूजा करते समय एक आदमी आग तथा दूसरा घी का लोटा और दूसरी चीजे लेकर साथजाता। बारह दिन तक दाग देनेवाले को ही 'जमीन पर नही सोना पडा, बल्कि अन्त पुर मे सभी जमीन पर सोते रहे। लौडिया और नौकरानिया पक्के फर्श पर लेटती, सास अपनी कोठरी मे स्थडिलशायिनी थी ही, और बहू कोठरी के बाहर वही जमीन पर सोती। पूस-माघ का महीना था, जाडा खूब पड रहा था, इसलिये आगन मे कभी-कभी आग भी जला ली जाती।

श्मशान-यात्रा के सारे दिन बहू नीचे से ऊपर नही आ सकी। अगले दिन चिराग बल जाने के बाद उसे ऊपर जाने की छुट्टी मिली। कामदारो के यहा से खानें के लिए दाल-रोटी बनकर आई। लेकिन वस्तुत वह खाने के लिए नही थी। बहू ने दाल मे उगली डालकर मुह लगा थाल से पोछ दिया, और रोटी मे ग्रास

तोडकर वही रख दिया, बस खाने की रसम अदा हो गई। दूसरे दिन भी खाना नही मिला। बेचारी पाच से बारह वर्ष की छोरिया भूख के मारे तडफडा रही थी। खट्टी कढी पडी थी, जिसे उन्हे दिया गया। छोरिया कह रही थी–"कठो (कैसे) मर ग्यो बापजीमा, भूखा मर ग्या मे तो।" किस्तूरी को भूख की बात कहने पर उसने कहा––"कढी तो पडी है।" बहूरानी ने कहा––"वही ला, पानी तो पीऊ।" बाहरी स्त्रियो के आने पर घूघट लगाना जरूरी था, उधर बहू का दर्द के मारे सिर फटा जा रहा था। बहू को मालूम था, कि सासू की भी हालत भूख के मारे बुरी होगी, इसलिए उनकी छोरियो से कह दिया, कि बूजीसा दूध पीनेवाले बच्चे की मा है, उनको भूखे रखना अच्छा नही है। इस पर उन्हे सोठ के लड्डू और दूसरी तैयार चीजे खाने को मिली। सासू ने रोम-रोम से धन्यवाद देते हुए कहा–"थाणो भलो वहिजो बीनणी (तुम्हारा भला हो बहू)।"

बारह दिन तक रोना-कादना रहा, यद्यपि वह पहले दो दिनो की तरह लगातार नही होता था। जब भी कोई स्त्रियो का झुण्ड पुछार करने के लिए आता, तो अन्त पुर मे कोलाहल मच जाता। खैरियत यही थी, कि चिराग जलने के बाद उसे बन्द कर दिया जाता। फिर छमासी श्राद्ध हो जाने के समय तक रोज सबेरे उठकर एक बार अवश्य रोदन-क्रन्दन होता, और विशेष व्यक्तियो के आने पर तो वह साल भर तक करना पडता।

× × × ×

अभी तक घर का चूल्हा जला नही था। तीसरे दिन मरदाने रसोडे मे रोटी और सब्जी-दाल बनी। अन्त पुर मे एक ब्राह्मण को जिमाना पडता, जिसके लिए बीनणी स्वय अपने हाथ से चार प्रकार की सब्जिया, एक मीठा पकवान और रोटी बनाती––ससुर के अन्तिम दिनो मे भी बीनणी अपने हाथ से खिचडी पकाकर भेजती थी। ब्राह्मण के लिए भोजन बनाते समय बहू सास के लिए चार फुलके बना देना नही भूलती। बहू दयावती न होती, तो बेचारी नवविधवा को नमक पडी खट्टी राबडी ही मिलती। बीनणी शाल ओढ लेती, और कटोरदान मे फुलके और दूसरी चीजे डालकर सास के पास पहुचाकर ही सन्तुष्ट नही होती, बल्कि वही दरवाजे पर पहरेदार बनकर बैठ जाती। सास का स्वभाव विचित्र था––बहुत सीधी-सादी, लेकिन अपने या अपने बच्चे के सिवाय किसी के दु ख को दु ख नही समझती थी। उनका नौजवान भतीजा मर गया, जिसकी मृत्यु की खबर सुनकर दूसरो के भी आसू बरबस निकल आये, लेकिन सास की आखो मे आसू कहा? हा, यदि कभी स्वय बीमार होती, या बच्चा बीमार पडता, तो

देवताओ की मिन्नत मागती फिरती, उन पर प्रसाद चढाती। गरीब-दुखियो को देखकर द्रवित क्या होती, वह तो उल्टे उन्हे डाटने-फटकारने के लिए तैयार हो जाती। सास की एक छोरी अस्सी वर्ष की बुढिया थी, जिसकी बहू उसे बासी-कुसी ठण्डी रोटया देती थी। बेचारी के दात भी नही थे, इधर गढ मे सौ-डेढ-सौ गाये और चालीस-पचास भैसे थी। गोलान की गाये दोनो वक्त मिलाकर चार-पाच और भैसे सात-आठ सेर दूध दे दिया करती है—भैसे हरियाने-जैसी नही थी, कि एक भैस से तपाया सेर पक्का घी रोज निकल आता। घर मे रोज एक कनस्तर घी होता था। छाछ की वहा क्या कमी थी? बेचारी बुढिया छाछ मागने आती, तो सास अपनी छोरियो को हुकुम देती—"केसरियाजी को छाछ मत डालो।" सास के सीधे-सादे स्वभाव को देखकर बीनणी को बहुत दिनो तक उनके सामने अपने मुह को बन्द रखने की अवश्यकता नही पडी। वह बुढिया को छाछ दिलवा देती, तो सास कहती—"बीनणी को दया घणी आवै।" और तो और, वह अपने घडे से किसी को पानी भी नही देती थी। भला ऐसी स्त्री के हितमित्र कै हो सकते थे? उनकी अपनी छोरिया भी मालकिन के साथ मेल नही रखती थी। आगे की बात है—एक बार बीनणी अपने पति के साथ जनपुर से मोटर मे खलपा आई। रास्ता दो घण्टे का था, किन्तु गाडी बीच मे पक्चर हो गई, इसलिए दस बजे चलकर दो बजे पहुचना पडा। बहू ने अपने पति से कहा—"आज तो हम बूजीसा के यहा का खाना खायेगे।" मुहलगी होने से उसे विश्वास था, कि बूजीसा टालमटोल नही करेगी, लेकिन उसका पति बहू से कही अधिक अपनी सौतेली-मा को जानता था। उसने ताना मारते हुए कहा—"हा, बूजीसा अभी गरमागरम खाना भेज देगी, फिर खा लेना।" "मै जाती हू कहने।" वह सीधे सास के पगे लगने गई। फिर कहा—"आज तो आपके यहा ही खाना खायेगे, बनवा दो।" सास ने कहा—"म्हारे कन कठो आवे खाणा। म्हारे तो म्हारे लायक आवे। थाने खवाई दू, तो म्हारे कीकर हजे?"

"हुकम, एक दिन मे क्या बिगडता है।" बहू कितना ही कहती रही, लेकिन सास नही पसीजी। वैसे जहा तक अपने खाने-पीने का सम्बन्ध था, वह सूमडी नही थी। अपने लिए अच्छा खाना बनवाती, चाहे पास मे कोई बच्चा ही क्यो न बैठा हो, लेकिन उसको भी एक ग्रास देना नही जानती। उस दिन बीनणी को अपनी रसोई मे खाना बनवाना पडा, फिर पति ने व्यग्य करते हुए कहा—"आ गया न गरमागरम बूजीसा का खाना?"

"मुझे तो ऐसा ही विश्वास था।"

तीसरे दिन शाम को कामदारो के यहा से खाना बनकर भीतर आया था। दूसरो के लिए दो-तीन मन की चावल-मूग की खिचडी बाहर बनी। बीनणी की छोरियो के लिए वह खिचडी रात के ग्यारह बजे भीतर भेजी गई। छोरिया बेचारी मन मारे खट्टी कढी पीकर बैठी थी। खिचडी आते ही जगाने पर वह उस पर टूट पडी। बीनणी की एक स्पेनियल कुतिया रूबी थी। उसके गले मे चादी के घूघरू बधे हुए थे। ससुर के मरने के दिन भी दूसरे दिनो की तरह वह अपने घूघरू बजाती फिरी। शोक मे रूबी का घुघरू बजाना अच्छा नही था, इसलिए बीनणी ने बहुत समझाते पीठ सहलाते हुए कहा—"रूबी, यहा बैठी रहना, बापजी मर गये, अब घूघरू नही बजाना।" सचमुच ही क्या रूबी ने समझ लिया ? वह फिर घूघरू बजाती नीचे गई।

दाह-कर्म के अगले दिन से भिनसार को ही चार बजे व्यासिन (ब्राह्मणी) आकर लोगो को जगाती—"उठो पल्लारो (रोने का) बगत वहि ग्यो (हो गया)।" उसी समय उठकर औरते रोना-धोना शुरू करती, लेकिन वह दस-पाच मिनट मे खतम हो जाता। उसके बाद बहू हाथ-मुह धोने ऊपर चली जाती, जहा ब्राह्मण के लिए रसोई बनाना पडता। रोने-धोने मे बीनणी भी जाकर बैठती, लेकिन उसके मुह से न बकार निकलती और न आखो से आसू। खैर, आखो के आसू को छिपाने के लिए घूघट का वरदान मिला था, लेकिन मुह से जरा भी न चिल्लाना अच्छा नही कहा जा सकता था। वैसे बीनणी को अपने ससुर के मरने का बहुत शोक हुआ था, इसका प्रमाण उसने उसी दिन बेहोश होकर दे दिया था, जिस दिन कि वह ससुर के शव को अन्तिम बार पगे लगने गई थी। रामी ने अपनी समवयस्का मालकिन से अधिक बुद्धिमानी दिखलाते हुए कहा—"बना, तुम भी कुछ तो किया करो, शब्द नही निकलेगा, तो लोग क्या कहेगे ?" "आज शब्द निकालूगी।" कहकर बहू ने जवाब दिया। उस दिन जब पुछार करनेवाली कुछ स्त्रिया आईं, तो बहू ने रोदन-स्वर निकाला, लेकिन उसी समय उसे अपने इस अभिनय पर हसी आ गई। व्यासिन ने समझा, बहू का रोना रुक नही रहा है, वह प्रथा के अनुसार रोकने के लिए आई—"खमा करो बापजी।" व्यासिन की बात सुनकर हसी और भी बढ गई। वह छ-सात बार आकर उसी तरह चुप कराने का प्रयत्न करती, लेकिन हसी रुकती ही नही थी, घूघट के भीतर हसना हो रहा है या रोना, इसका किसी को पता नही था। पीछे किस्तूरी ने अपने मालकिन से कहा—"आज तो बना, बहुत रोईं।"

"मेरा तो हसना रुक नही रहा था, घूघट ने आज लाज रख ली।"

बीनणी बचपन मे चाहे कितना ही सफल अभिनय करती हो, किन्तु यहा वह उसमे असफल रही। बडी-बडी छोरिया (लौडिया) और दूसरी स्त्रिया जब घूघट निकालकर रोदन-क्रन्दन करती, तो बीनणी की भी पाचो छोरिया घूघट निकालकर बैठ जाती—यह मालूम ही है, कि सबसे बडी दो छोरिया बारह-तेरह वर्ष की थी, दो पाच-छ की और एक बारह महीने से कुछ ही अधिक की। बीनणी को जो पीहर से घर मिला था, उसका घरवाली भी दस-बारह वर्ष की ही थी। छोरिया सबके साथ घूघट निकालकर बैठ तो जाती, लेकिन बेचारियो पै रोया नही जाता। एक दिन मालकिन ने अपनी छोरियो सेकहा—"तुम चुपचाप न बैठा करो, जैसे दूसरी रोती है, वैसे तुम भी रोया करो।" उस दिन सचमुच ही यह छोटी-छोटी छोरिया रोने-धोने मे सबसे आगे बढ गई। यद्यपि घूघट खोलकर देखा जाता, तो वहा आसू का कही पता नही लगता। वह रोती ही जा रही थी। स्त्रिया बहुतेरी समझाती,, रुकने के लिए कहती, किन्तु वह नही मान रही थी। बहुत जोर देने पर उन्होने कहा—"म्हारी बाईसा कहे, जद ठहरा म्हे तो (हमारी बाई साहब कहे तब हम रुकेगी)।" व्यासिन ने आकर बाईसा से कहा—"आप ही सिम्हालो, वे नही रुकने की।" बाईसा ने जाकर कहा, तो वह चुप हो गई। छोरियो का अभिनय बहुत सफल रहा।

ससुर के मरने के चार-पाच दिन बाद कुवारी ननद ननिहाल से और व्याही अपने ससुराल से आ गई। उस दिन बहू को भी सचमुच बहुत रोना आया, आखो से बहुत आसू निकले।

जब तक बारह दिन पूरे नही हुए, दोपहर को ऊपर खाना खाकर नीचे जो जाती, तो बहू को चिराग जलने के बाद ही लौटने की छुट्टी मिलती। पुछार करने के लिए आसपास के ठेकाणो की ठाकुरानिया भी रथो पर चढ-चढकर आई। शोक के समय मोटर मे बैठना निषिद्ध था, अथवा यह कहिये, कि रथ मे बैठना ही विहित था। चाहे सर्दी से सर्दी क्यो न हो, लेकिन गोलान की तरफ अपने साथ बिस्तरा लाने का रवाज नही है। बिस्तरो का इन्तजाम पहले से करके रखना पडता। अधिक की जरूरत होती, तो गाव के घरो से रालिया (गुदरिया) मगा लेते। आई हुई स्त्रिया चारपाई पर सो सकती थी, उनके लिए भूमि पर सोना जरूरी नही था। उनमे से कोई सुबह आकर शाम को चली जाती, और कोई दो-तीन दिन रह भी जाती। अन्त पुर का रसोडा अभी जला नही था, इसलिए बाहर के रसोडे से खाना थालो मे भरकर डेरे-डेरे भेजा जाता। बडी-

बूढी ठाकुरानियो का पैर दबाने के लिए बहू को जाना पडता । सभी बहू के शील-सौन्दर्य से प्रसन्न होकर प्यार करती, और पास बैठाती । बडी-बूढियो से बोलना मना था, इसलिए वह प्रौढाओ के ही सामने मुह खोल सकती थी ।.

जिस समय बूढे ठाकुरसाहब को जीभ मे लकवा मार गया, उस समय वकील परागमल और कामदारो ने देखा, कि कामो से नाराज होकर कही हमे नये ठाकुर निकाल न दे, इसलिए उन्होने बूढे ठाकुर से एक वसीयत लिखवाई । बूढे ठाकुर हाथ से लिख नही सकते थे, इसलिए कागज पर उनके अगूठे का निशान करवा लिया, और साथ ही उनके बेटे से भी उसी कागज पर दस्तखत करा लिया । तरुण ने उसी दिन जाकर अपनी बहू से इस बात को बतलाया । बहू उनसे कही अधिक चतुर थी । उसने पूछा—"कागज मे क्या लिखा है ?" कुवरसाहब ने बिना पढे ही कागज पर दस्तखत कर दिया था, इसलिए बहू ने उन्हे भेजकर कागज को भीतर मगवा लिया । पढा, तो मालूम हुआ, कि अब तक ठेकाने को नोच-खसोटकर खानेवाले कामदारो ने यह लिखवा लिया है, कि दस साल तक नये ठाकुर उन्हे उनके पद से नही निकालेगे । ससुर एक लाख सोलह हजार का कर्ज छोडकर मरे थे ।

बारह दिन पूरे हुए । मृतक-भोज का दिन आया । कामदार कह रहे थे, कि श्राद्ध-भोज को छ महीने बाद के लिए रख छोडा जाय, तब तक हाथ मे रुपये आ जायेगे, लेकिन भावी ठाकुरानी ने कहा—"इस वक्त श्राद्ध के लिए लोग आ रहे है, ऐसा करने पर वह हमे क्या कहेगे ? बेटा बडा सयाना है, कोई नाबालिग नही है, कि बहाना करके छुट्टी मिल जायेगी ।" बहू के जोर देने पर श्राद्ध करना पडा । कुछ पैसा कर्ज लिया गया, कुछ तोसाखाने से जेवर बेचे गये । क्रिया-कर्म हुआ, बारहो गाव जीम गये ।

बारहवे दिन दोपहर को सासू को विधवा के पूरे कपडे दिये गये । अभी तक सोहाग के चिन्ह उनके शरीर से उतार लिये गये थे । विधवा का बाना पहनाते समय सोहागिन ठाकुरानियो और कुवरानियो को बाहर भेज दिया गया । रसम के अनुसार सासू के पीहर से विधवा की पोशाक—छीट का काला घाघरा, लम्बी आस्तीनवाली कुर्ती, मलमल की काचली, काली ही ओढनी आई । उनकी डावडियो को भी लम्बी आस्तीन की ककरेजी काचली, ककरेजी लुगडी मिली थी । गोया रावण के लका से काली पोशाकवाली कोई पलटन आ गई थी । छोटी-छोटी छोरिया इस काली पलटन को देखकर डर जाती थी । रोते-पीटते सबने कपडा पहना, और पहले के कपडे दूसरो को दे दिये ।

तेरहवा दिन सोग भगाने का था। सलमाडा मे बेटे के ससुरालवाले लोग सोग भगाने की रसम अदा करते है, खल्पा मे यह काम जमाई करता है। मगलपुर-वाले भी आये थे, लेकिन कण्ठा के कुवर साहब जमाई ने ही इस रसम को अदा किया। उसी शृगार-चौक पर बिछी गद्दी पर कुवर साहब को बैठा दिया गया, ब्राह्मण ने उनके शिर पर सफेद पाग बाध तिलक लगा दी, ढोलबाजे बजे और इस प्रकार नये ठाकुर के गद्दी पर बैठने की घोषणा हो गई। नये ठाकुर अन्दर मा के पास चरण छूकर पैर लगने गये। मा ने पच्चीस नही,पाच देकर बेटे का सम्मान किया। गद्दी पर बैठने मे पटरानी या पट-ठाकुरानी का कोई रवाज नही है, इसलिये अधिकार मे बहू का हाथ नही होता। इसी दिन मास और दारू सामने लाकर रखा गया——मास-दारू का परित्याग सोग का चिन्ह है। ननदो ने अपनी भावज नई ठाकुरानी को बहुत जोर दिया, कि आज तो खूब दारू पीना ही होगा। उन्होने चुस्की मे दारू भरकर पिला भी दिया। पीने के बाद नशा होने लगा। गोरी यद्यपि अपनी मा और बावोसा से बहुत दूर थी, लेकिन उसको डर था, कि कही किस्तूरी लिख न दे। नशे मे मालूम हो रहा था, आखे बाहर निकली जा रही है। राभी से कहने पर उसने घूघट हटा देखकर कहा——"कही आखे नही निकल रही है, सो जाओ।" बहूरानी सो गई। उनकी नीद सवेरे ही जाकर खुली। बारह दिन तक सोग मनाते हुए सासू का पग भी नही लगा जाता, तेरहवे दिन से बहू फिर अब रोज सासू के पग लगने लगी।

नये ठाकुर के गद्दी पर बैठने पर अवस्था काफी बदली देखी। वैसे पहले भी बहू का रोब अन्त पुर पर था, लेकिन सास-ससुर के मुहलगी छोरिया (लौडिया) जो पहले अपनी शान मे रहती थी, और बहू की परवाह नही करती थी, अब वे चापलूसी करती पीछे-पीछे फिरने लगी। उनके इस ढग को देखकर नई ठाकुरानी को बडी हसी आती। यद्यपि तेरहवे दिन सोग भगा दिया गया था, लेकिन उसके अगले ही दिन से छमासी श्राद्ध तक के लिए फिर मास-दारू बन्द हो गया। चादी के पैर के आभूषण और पक्के रग के कपडे ही पूरे छ मास तक पहनने पडे।

छमासी श्राद्ध के लिए पीहर से पाच सौ रुपये और दामाद के लिए सिरोपाव, बेटी के लिए भी काचली-कुर्ती, घाघरा-लुगडी आये।

अध्याय १३

परम स्वतन्त्र न सिर पर कोई

पिता-ठाकुर के मरने के बाद अब उन्नीस वर्ष के नये ठाकुर परम स्वतन्त्र थे। ससुर के मरने के दो-एक महीने बाद ही गौरी ने मगलपुर से कामदार बुला लिये, जिन्होने ठेकाणे का हिसाब-किताब देखना शुरू किया। भनक तो पहले ही लग गई थी, कि वकील और कामदार सदा शराब मे डूबे और रगरेलिया खेलते बुद्धि से वचित बूढे ठाकुर को आख मूदकर लूट रहे है। बहीखाता देखने पर पता लगने लगा कि कर्ज के कागज महाजनो को लिखकर दे दिये गये, लेकिन कितना ही रुपया बही मे जमा नही हुआ। पूछने पर कामदार कहते—"हमे क्या मालूम, ठाकुरसाहब ने ऊपर से ऊपर ही किसी को बकस दिया होगा।" कर्ज मे महाजनो को जो गाव लिख दिये गये थे, उनके लिए शर्त थी, कि दस वर्ष के भीतर यदि कर्ज देकर न छुडाये गये, तो वह महाजनो के हो जायेगे। ठाकुर साहब बिना देखे, बिना पढे ही जो भी कागज आता, उस पर दस्तखत कर देते।

छमासी श्राद्ध हो जाने के बाद ठाकुरानी (गौरी) अपने बाबोसा रूडसिंह की मृत्यु की पुछार करने नरपुर जाकर एक सप्ताह रही, फिर मगलपुर चली गई। लेकिन ठेकाणे की हालत देखकर वह दो दिन से अधिक वहा न ठहर खलपा चली आई। अब कोई रोक-टोक करनेवाला नही था, इसलिए नये ठाकुर अपनी ठाकुरानी के साथ मोटर द्वारा जनपुर जाने के लिए स्वतन्त्र थे। वहा मामोसा (हिम्मतसिह) भी हिसाब-किताब देखने तथा नये ठाकुर को कायदा-दस्तूर सिखलाने मे सहायता करते। सबसे पहला प्रहार परागमल के ऊपर हुआ, वह सबसे बडा खाऊमल भी था। वैसे औरो ने भी खूब रुपये बनाये थे। परागमल को हटाकर एक योग्य व्यक्ति, शिवलालजी (बी० ए०, एल० एल० बी०) को वकील बनाया गया। उनके नीचे काम करने के लिए एक नया कामदार नियुक्त हुआ। हिसाब-किताब देखने पर अब कर्ज बेबाक करने का इन्तजाम करना था। खलपा मे अधिकतर जमीन बटाई पर थी। १९२७-२८ मे अनाज का भाव सस्ता था, इसलिए आमदनी चालीस-पचास हजार से अधिक नही थी। सबसे बडे महाजन

पोसी के माखनचन्द थे, उन्ही से चालीस हजार और लेकर छिटपुट कर्ज को बेबाक कर दिया गया। सूद पहले दो सैकडा मासिक था, महाजन जानते थे, कि झगडा या मुकदमा करने से फायदा न होगा, इसलिए वह नौ सैकडा सालाना पर राजी हो गये। उनके कर्ज की किस्त कर दी गई। जनपुर-दरबार के मलाना रुपये कितने ही सालो से नही गये थे, जिसके कारण ठेकाणे पर तीस हजार रुपये चढे हुए थे। बजट बनाया गया, जिसमे पन्द्रह हजार ठेकाणे का खर्च रक्खा गया। दस हजार राज को और दस हजार माखनचन्द को किस्त करके हर साल देने का निश्चय हुआ। ठाकुर साहब के लिए तीन सौ रुपया मासिक हाथ-खर्च मिला, जिसमे से ही उन्हे अपने चार-पाच खास नौकरो को भी वेतन देना था। बहू के हाथ-खर्च के लिए ससुर ठाकुर पहले ही चौदह कुए और उनके खेत दे गये थे, जिनसे उन्हे दो-ढाई हजार रुपया मिल जाता था, लेकिन बहू को इन रुपयो की परवाह नही थी, उसे मगलपुर से काफी रुपया मिलता रहता था।

साल भर मे सभी बेईमान कामदार निकाल दिये गये। शिवलाल वकील सबसे बडे अधिकारी नियुक्त हुए। ठाकुर साहब को मजिस्ट्रेट का अधिकार था। वह छ महीने की जेल और पाच सौ रुपया जुर्माना कर सकते थे। जेलखाना देकर कैदी को जनपुर भेजा जाता। अदालत के पेशकार लालनाथ बनाये गये। सबसे बडे कामदार रगराज लोना नियुक्त हुए।

नये ठाकुर साहब मे भी कितनी ही पैतृक निर्बलताए मौजूद थी। इतनी समझ नही रखते थे, कि दरबारियो और चापलूसो की बात के ऊपर उठ सके। शराब वह नही पीते थे, लेकिन उसके सग का दूसरा व्यसन उनमे भरपूर था। फजूलखर्च भी ज्यादा थे, यद्यपि कितने ही साल तक—जब तक कि ठाकुरानी का जोर चलता रहा—वह कर्ज नही चढाते रहे। दूकान पर जाकर या बाजार से आने पर नौकरो से पूछते—"तुम्हे कौन-सा कपडा चाहिए।" फिर कोई क्यो कम दाम का पकडा पसन्द करने लगा। उनके लिए अन्धा-धुन्ध कपडा खरीदकर ले आते। यदि फजूलखर्ची के लिए कादमार रोकता, तो कहते—"इसे हटाओ।" वह काम कहा तक सीखते, न काम खुद करते और न दूसरो को करने देते। कितने ही दूसरे समवयस्क ठाकुर इसी समय बापो के मरने से स्वतन्त्र हो गये थे, जिनकी जनपुर चण्डाल-चौकडी बन गई थी। कमान, झलमल, बलारा, किमोरा जैसे ठेकाणो के ऐसे ही तरुण ठाकुर अपनी मोटरो मे ह्विस्की की बोतले और रण्डियो को बैठाये सैर-सपाटे करते फिरते। कभी-कभी आधी रात को आकर वह खलपा के ठाकुर को ले जाते, फिर तीन-चार बजे वह घर लौटते।

अब वह स्त्रियो के पीछे भी पागल होने लगे। लेकिन अभी इनकी आखो मे इतना शील था, कि सब काम अपनी पत्नी से छिपाकर करते थे। जब ठाकुरानी जनपुर मे होती, तो वह खलपा चले जाते, और खलपा होती, तो जनपुर। एक दिन दो बजे ठाकुरानी अपने मामाजी के पास गई थी। ठाकुरसाहब ने कह दिया था, कि छ बजे गाडी भेज दूगा। छ बज गया, लेकिन गाडी नही आई। मामी ने खाने के लिए कहा, तो इनकार तो नही किया, लेकिन सोच रही थी, कि घर लौटना है। सात बजे एक नौकर ने आकर छोरी से कहा—"तीन बजे ही ठाकुर साहब यहा से रवाना हो गये। उनके साथ ड्राइवर मजीद और शिकारी बन्दूक के सिवा और कोई नही है।" ठाकुरानी घर लौटी। उसको बडी चिन्ता हुई, न जाने कहा पति देवता गये होगे, कोई खतरा तो उनके सिर पर नही आया। उसी रात खलपा आदमी भेजा, दूसरे दिन आदमी ने आकर खबर दी और तीसरे दिन ठाकुरसाहब खुद चले आये।

अब यह रोज का काम हो गया, पाच-चार दिन भी आखो को गीला किये बिना ठाकुरानी को नही रहना पडता।

जिस दिन वह अपना मनमाना काम करने जाते, उस दिन पहले ही से चिडचिडे हो जाते, जिसमे पत्नी कुछ समझाने-बुझाने की हिम्मत न करे। उनके इर्द-गिर्द के दो बदमाश मुसाहिब निकाले जाते, तो न जाने कहा से चार पैदा कर लेते। मुसाहिबो के रग-ढग ही से मालूम होता, कि आज ठाकुरसाहब कही रण्डी के साथ जानेवाले है। नौकरो और दूसरो पर उनका अन्धाधुन्ध खर्च भी वैसे ही चलता रहा। जब बिल आता, और उनसे कहा जाता, तो कह देते—"अबकी बिल चुका दो, फिर इतना खर्च नही करेगे।" उनका सबसे अधिक खर्च रण्डियो पर था, यद्यपि नाच-गाने से उनको कोई प्रेम नही था। पैसे के लिए वह जब अपनी बहू से कहते, तो वह इनकार नही कर सकती थी। यदि अपने पैसो को ठाकुरानी ने इस तरह बरबाद करने के लिए न दिया होता, तो पन्द्रह वर्ष बाद उनके पास डेढ-दो लाख रुपये जमा हो गये होते, लेकिन वह पति से अधिक अपने पैसो को नही समझती थी। हा, ठाकुर इतने पतित नही थे, कि ठाकुरानी के जेवरो को बेचकर मोज उडाते। उन्होने सिर्फ एक बार मोटर खरीदने के लिए सौ तोला जेवर लिया था। ठाकुरानी के नाम से वह जौहरियो या बाजारो की जो चीजे खरीदते, वह उनकी रण्डियो के पास जाता। साखर्ची और फजूलखर्ची दोनो उनमे थी। एक बार ठाकुरानी मौजूद नही थी, बजाज तरह-तरह के कपडे उठवाये कोठी पर पहुचा, और ठाकुरसाहब ने पन्द्रह सौ रुपये के कपडे खरीद लिये।

वह कपडे इस तरह के थे, जिनकी न साडी बन सकती थी, न लुगडी ।

एक बार जसपुर मे किसी बारात के सिलसिले मे गये थे। वहा कोई रण्डी नाचने आई थी। बस फिर क्या था। उसे बुलाना शुरू कर दिया। मोटर भेजकर उसे मगवाते, और शिकार का बहाना करके उसे साथ लेकर चले जाते। एक बार रण्डी को पहुचाने अजमेर गये, तो वहा आठ सौ रुपये की साडिया खरीदकर उसे दे दी। यह भी कहना पडेगा, कि गरीबो के लिए भी उनमे दया थी, और सामने आ जाने पर उन्हे भी कुछ दिये बिना नही रहते। हा, अच्छे आदमियो की सगत उन्हे पसन्द नही थी, और बुरो से वह बहुत खुश थे।

पहले पहल ठाकुरानी को उनके शिकार के लिए जाने पर बहुत डर लगा रहता—कही सूअर पेट न फाड दे। खलपा से रण्डी ले जाने मोटर-ड्राइवर आया। उससे ठाकुरानी ने ठाकुर साहब का कुशल-मगल पूछा। ड्राइवर पीहर का था। उसने सब बात बतला दी। उसी दिन जनपुर के महाराज उसी तरफ रास्ते मे मछली का शिकार करने गये थे। वह खलपा की मोटर देख लेगे, तो बुरा होगा, यह समझकर ठाकुरानी ने खाली ही मोटर लौटा ले जाने के लिए कहा। मोटर रात के दस बजे खलपा पहुची। ठाकुर साहब बडी बेकरारी से खिडकी की ओर देख रहे थे। खाली मोटर देखकर गुस्से से पागल हो गये, और न ओढना लिया, न ओवरकोट, स्लीपिग सूट को ही पहने मोटर पर बैठ उन्होने ड्राइवर से कहा—"चलो अजमेर।" पोसी मे पानी पीने के बहाने पीहरवाले ड्राइवर ने उतरकर ठाकुरानी को तार दे दिया—"अजमेर की तरफ जा रहे है।" दो दिन अजमेर में रहे, फिर तीसरे दिन ड्राइवर का तार मिला—"खलपा वापस जा रहे हैं।" ठाकुरानी अपने भाग्य पर रोती, लेकिन ऐसे भागोवाली वह अकेली नही थी। राजस्थान के अन्त पुरो की यह आम बात थी। कभी वह दो-दो दिन खाना छोड देती, कभी घण्टो आसू बहाती रहती, कभी भगवान् को मनाती, कि ठाकुरसाहब को सुबुद्धि दे। लेकिन, ठाकुरसाहब ढग वही रहा। जब खर्च-बर्च के लिए दबाव डालती, या बहुत समझाने-बुझाने की कोशिश करती, तो ठाकुरसाहब बोल उठते—"मै साधु होकर निकल जाऊगा।" ठाकुरानी को ख्याल आता, फिर मुझे दुनिया क्या कहेगी, वह चुप हो जाती।

ठाकुरसाहब मे अभी इतनी शक्ति नही थी, कि अपने अनचित कामो के लिए भी जिद्द करते, इसलिए समझाने पर दब जाते। लेकिन, कहा तक हर वक्त आदमी सामने रहेगा। जब ठाकुरानी कुछ दिनो के लिए मगलपुर जाती, तो किये-कराये पर पानी फिर जाता। पीहर का राजपूत काम सम्हालने के लिए बुलाया गया

था। वह अच्छी तरह काम कर रहा था और ठाकुरानी का अनहित देख नही सकता था। एक बार ठाकुर साहब ने जनपुर से रण्डी बुलवाई। आदमी ने रोक लगाना चाहा, इस पर ठाकुर साहब ने नाराज होकर हुकुम दिया—"बारह घण्टे के अन्दर खलपा छोडकर चले जाओ।" ठाकुरानी लौटकर आई, और उक्त फौजदार के अभाव मे काम को चौपट देखा। ठाकुर साहब ने कहा—"उसी को बुला लो।" खर्च अन्धाधुन्ध तो था, लेकिन अभी कर्ज बढाने की बात नही हुई थी। अपने तीन सौ रुपये मासिक हाथ खर्च को वह मनमाने खर्च मे लगा देते, साथ ही पत्नी से भी पैसे ले जाते। पति के कपडे तथा नौकरो की तनख्वाह का व्यय भी ठाकुरानी को अपने पास से पूरा करना पडता।

× × × ×

राजस्थान के ठेकाणे के ठाकुर साधारण तालुकदार या जमीदार नही थे, यह तो इसी से मालूम होगा, कि उनके पास अपनी पुलिस होती थी। खलपा मे पुलिस के सोलह सिपाही और एक अफसर था। बूढे ठाकुर न उनको वर्दी देते, न उन्हे कवायद-परेड सिखलाने का कोई प्रबन्ध करते। नई ठाकुरानी ने इसे पसन्द नही किया। उन्होने जनपुर से एक पुलिस इन्स्पेक्टर बुलवा सिपाहियो को कवायद-परेड और अफसर को कामकाज सिखलवाया। ठेकाणे के पुलिस के लिए वर्दी बनवा दी, और अब वह भिखमगो की जगह सचमुच पुलिस जैसे दिखलाई पडते।

धरमादे मे भी खलपा मे औकात से ज्यादा दो हजार नकद और बहुत सी जमीन दी हुई थी। उसमे भी नई ठाकुरानी ने सात-आठ सौ रुपये वार्षिक की बचत करवाई। ठाकुर अपने गाव या जमीन मे से बखसीस कर सकते थे, जिसे पानेवाले की सात पीढी भोग सकती थी, और फिर चाहने पर उसे लौटाया जा सकता था। अगर किसी ठेकाणे पर महाराजा नाराज हो जाते, तो उन्हे ठेकाणे को खालसा करके जब्त करने का अधिकार था।

जहा ठाकुरानी ने कर्ज और प्रबन्ध मे सुधार किया, वहा आराम से रहने के लिए पुराने ढग के मकानो मे भी कुछ सुधार करने की अवश्यकता समझी। कर्ज का बोझ भारी था, और नए मकान बनवाना बुद्धि की बात नही थी, इसलिए पुराने मकानो मे ही कुछ परिबर्तन-परिवर्द्धन करके उन्हे आधुनिक ढग का बनवा दिया। खलपा के अपने पुराने कमरे के ऊपर ठाकुरानी ने अपने हाथ-खर्च के रुपये से एक हवादार कमरा बनवाया, जिसके सामने टीन का बराडा लगवा दिया।

चौमासे मे यहा रहना अधिक सुखद था। पहले कमरे के भी दरवाजो मे शीशे लगवा खिडकिया काचवाली कर दी। नये कमरे की बगल मे पाखाने के लिए कोठरी बनवा दी। मरदाने मे भी इसी तरह दो नये कमरे, टट्टी और गुसलखाने लगवा दिये। जनपुर की हवेली मे भी कमरो की कमी नही थी, छत-दीवारे भी मजबूत थी। हा, रोशनी-हवा का कोई इन्तिजाम नही था, और वह बेढगे तौर से बने थे। पुराने कमरो मे परिवर्तन करके दरवाजो और खिडकियो मे शीशे लगवा शयनकक्ष और ड्राइगरूम के तीन कमरे तैयार हो गये। स्नान-गृह को भी तोडकर नया-सा कर दिया गया। ऊपर के कमरे की बगल मे एक बगला खडा कर दिया गया, जिसमे एक कमरा और स्नानगृह था। यहा मकान मे बिजली थी, किन्तु नल दूर रहने से नही आ सका था। ऊपर के कमरे के पास ही एक रसोईघर और एक भण्डार का कमरा भी बनवा दिया। सारे मकान की ठीक से मरम्मत करवा दी। नीचे के तल्ले मे भी एक रसोईघर और एक भण्डारघर बनवा दिया। परागमल का परिवार जिन कमरो मे रहता था, अब उनकी काया-पलट हो गई थी। बाहर की घोडसार बदलकर नौकरो के लिए कमरा तैयार हो गया। वही रसोईघर भी बन गया। बग्घीखाने की मरम्मत करके उसे मोटर-गाराज का रूप दे दिया गया।

खलपा की हवेली जनपुर शहर के बहुत मौके के स्थान पर है। घण्टाघर और गिर्दीकोट बाजार उसके पास है, जमीन काफी है, छोटे-बडे तीन आगन है। सडक के पास भीतर-बाहर छ सात कमरे किराये पर चढते है। बडे आगन मे चार-पाच नीम के वृक्ष है। यदि कोशिश की जाती, तो आगनो को फुलवारी और बगीचे के रूप मे परिणत किया जा सकता था। बडे आगन मे सात खण्ड की पक्की बावडी है, लेकिन उसका पानी हमेशा गन्दा और सडा रहता। पम्प से सारे पानी को निकलवाकर कीचड यदि साफ करा दी जाती, तो पानी उतना गन्दा नही रहता, लेकिन किसको फिकर थी ? नई ठाकुरानी भी उसमे कुछ करने मे असमर्थ थी ? क्योकि वह बावडी नाजिर (हिजडा) जी के साझे मे थी, यदि खर्च मे नही, तो कम से कम सफाई करने देने मे उनकी सहमति आवश्यक थी। बावडी मे कभी-कभी डूबकर भी लोग मरे थे और सौ-दो सौ वर्षो के अपने जीवन मे उसने न जाने और भी कितनी चीजे अपनी आखो देखी होगी, जिनसे हवेली के इतिहास पर कुछ प्रकाश पड सकता था। अब तो बावडी सिर्फ वायु को अपनी दुर्गन्ध से दूषित करने भर का काम कर रही थी। पीने का पानी गौरीसागर से आता और नहाने-धोने का भी वही से मशकवाला ले आता। हवेली मे यहा और खलपा

दोनो जगहो पर मकानो मे नये सिरे से पर्दे, फर्नीचर और सजावट की गई ।

नई ठाकुरानी बहुत हाथ-पैर मारती, कि ठेकाणे मे व्यवस्था कायम हो जाय, लेकिन ठाकुर साहब के कारण वह बनती-बिगडती रहती । खलपा जैसे चापलूस आदमी कही नही देखे गये, शायद यह कहना अत्युक्ति होगी। हा, ठाकुरानी कह सकती थी, कि सलमाडा से यहा के लोग ज्यादा खुशामदी थे । कामदार के लोग पैर दबाते, यह उतनी बात नही थी। वह जानते थे कि किस्तूरी और दूसरी लौडिया ठाकुरानी की कृपापात्र है, लोग उन्हे 'बेहणजी' कहते नही थकते, उनके बच्चो को उठाये फिरते । मगलपुर के हर एक आदमी की बडी खुशामद करते । ठाकुरानी को इस बात का पता लगे बिना नही रहता, वह इसे पसन्द नही करती थी, और उन्हे बुलाकर कहती—"तुम क्यो इतनी खुशामद करते हो । जो कुछ बात हो, आकर सीधे मुझसे कहो । इस तरह खुशामद करके हमारे नौकरो को मत बिगाडो ।" लेकिन वहा तो बहुत पुराने समय से आदत बिगडी हुई थी। नत्थू खा और दूसरे मुहलगे मुसाहिब एक-एक सीढी चढने का एक-एक रुपया धरवाकर बूढे ठाकुर साहब के पास किसी को अर्ज करने के लिए जाने देते। एक दारोगा (खवास) ने दूसरे दारोगा की स्त्री घर मे डाल ली थी । मेसाल, मालर और गोलान के लिए यह बिल्कुल मामूली सी बात थी। लेकिन जान पडता है, दारोगा ने मुसाहिबो की भेट-पूजा अच्छी तरह नहीं की, इसलिए जब मामला बूढे ठाकुर के पास गया, तो दारोगा को गाव से निकल जाने का हुकुम हुआ। पीछे जातिवाले उसे लेने को राजी हो गये, अब ठेकाणे को राजी करना था । एक दिन छत्ता दारोगा ने आकर एक लौडी से कहलवाया—"अन्नदाता के लिए यह तीन सौ रुपये भेट करता हू, मुझे गाव मे आने की इजाजत दिलवा दो ।" नौकरानी ने जाकर यह बात ठाकुरानी से कही । ठाकुरनी ने रुपये को लौटा देने के लिए कहते हुए छत्ता से कहलवाया—"हम पूछ-ताछकर जैसा उचित होगा, वैसा करेगे, लेकिन रुपये लेकर न्याय की जगह अन्याय या अन्याय की जगह न्याय करना हम ही करने लगेगे, तो न्याय की क्या आशा हो सकती है ?" पीछे पूछ-ताछ करने पर मालूम हुआ, कि उसका अपराध कोई ऐसा सगीन नही है । उसे गाव मे रहने की इजाजत मिल गई ।

ठाकुरानी होने पर भी खलपा के लोग उन्हे कवराणीसा ही बराबर कहते रहे। सभी लोग उनसे बहुत खुश थे, लेकिन पहले के लूट-मार करनेवाले सिर पीटकर कहते—"हमारा तो खोटा दिन आ गया ।" दूसरे उत्तर मे कहते—"चोर चोरी करे था, धनी जग गया, इसमे कौन-सी बात ।"

कवराणीसा का ढग-दस्तूर ऐसा था, कि बिना कडाई दिखलाये भी नौकर अनुशासन को मानने लगते थे। त्योहार के दिनो मे आदमीजनो को लापसी और फुलके बाटे जाते—हर एक आदमी को चार फुलके और पाव भर लापसी दी जाती। सासू बाटने का काम करवाती, तो मछुवाटोली-सी लग जाती, और बहुत हल्ला होता। सासू बेचारी हल्ले-गुल्ले को दबा नही सकती थी। कवराणी जब आकर सासू के पास बैठ जाती, तो हल्ला-गुल्ला बिलकुल खतम हो जाता। फिर वह कहती—"बीनणी से तो डरपनी आवै। माणा कणे योहीज लडती राडा।" जब कवराणीसा ठाकुरानी बन गई, तब भी यह काम वह सासू से ही करवाती, ताकि सासू को मालूम हो, कि उनका अधिकार अब भी पहले जैसा ही है।

पति के मरने पर सासू साल भर कालकोठरी मे बैठी रही, फिर वह उन्हीं काले कपडो मे दो महीने के लिए पीहर चली गई। लौटने पर अब कवराणी को मुह धुलाने के लिए सासूजी के पास सबेरे हाजिरी देने की जरूरत नही थी, लेकिन नौ बजे वह पगे लागने जरूर जाती। सासू विचित्र औरत थी। बाहर नहाने के लिए बैठ जाती। मालूम होता, उनके अपने हाथ-पैर है ही नही, मानो मूर्ति बैठी है। लौडिया उनको अपने हाथो से नहलाती। ऐसे समय पहुच जाने पर कवराणीसा अपने हाथ से पानी डालती। सासू का अपनी छोरियो पर ही नही, बल्कि सभी नौकरानियो पर भी शासन करने का पूरा अधिकार था। पहले तो ससुर के मुहलगी डावडिया सासू को तृणवत् समझती थी, लेकिन अब नई ठाकुरानी का रुख देखकर वह भी सासू से अदब करती। सासू खुश होकर कहती—"म्हारे तुहमत कोई नि, डावडिया थारे होरा कने (ससुर के पास), दूतिया खावती (चुगली करती) मने रुवान-रुवानने छोडती।"

सास एक बार पीहर चली गई थी, इसी समय गनगोर आई। उस समय दरोगन, धोबिन, नायन, रगरेज जैसी कमीन स्त्रियो को एक-एक काचली बाटी जानी थी। सास साठ काचलियो मे सबको भुक्ता देती, लेकिन अबकी कवराणीसा बाटने बैठी और जो भी स्त्री आई, उसे उन्होने एक काचली दे दी। इस प्रकार दो सौ काचलिया बाट दी। काचलियो की वहा कमी नही थी, पाच हजार काचलिया हर वक्त जमा रहती थी। लापसी और फुलके तो आधो तक ही पहुच सके, और फिर दुबारा बनवाकर बाटना पडा। दूसरे साल जब फिर वही त्योहार आया, तो सासू मौजूद थी। जिसको पिछले साल काचली मिली थी, वह फिर मागने आई, तब सासू को बहू की साखर्ची का पता लगा। उनके कहने पर बहू

ने कहा—"अब आपकी मर्जी है, जैसा चाहे वैसा करे।" सास ने साठ काचलियो मे ही भुगता दिया।

× × × ×

खलपा मे जब किसी सेठ-महाजन के यहा ब्याह होता, तो बहुत सी लापसी, दुकडियो मे भरकर घी, बडे-पापड के लोयो के साथ गढ मे भेज देते। दुकडिया बडी-बडी परातो को कहते है, जिनमे दो कडे लगे रहते है। नई ठाकुरानी इन सब चीजो को अपने सास के पास भेज देती। सासू बहुत खुश होती, क्योकि अब वह ठाकुर-माता भर रह गई थी,लेकिन नई ठाकुरानी अपनी सासू का आदर बढाना चाहती थी। महाजनो के यहा से आई हुई चीजो को फिर कमीनो मे बाटने के लिए दरबान जाकर गावो मे आवाज देता—"तेवार है, गढ मे आइजो, हैड रावणो सब लोग।" मगलपुर से भी मा प्राय बहुत सी चीजे भेजा करती। ठाकुरानी उसे भी अपने सास के पास भेज देती। गौरी को कढी बहुत पसन्द थी। मा अपने यहा से कढी बनवाकर खलपा भेजती। रेल के स्टेशन से पाच मील ही जाना था, इसलिए कढी के पहुचने मे देर नही होती। सासू इस आदर से बहुत खुश होती, लेकिन कभी-कभी खीज भी जाती—"आप तो महारानी साहब बनकर ऊपर बैठ जावै और मै बाटती फिरू।" जब बहू कहती—"हम तो बडा समझकर आपके पास भेजते है" तो सासू कह बैठती—"हू माथा फोड कठा तक (कहा तक) करू, म्हारे को कचरो होई जावे।" कचरा साफ करने के लिए बहू अपनी छोरियो को भेज देती। अधिकतर वह अपनी बहू की उदारता पर प्रसन्न ही रहती। बूजीसा अब विधवा थी, इसलिए शराब-मास उनके लिए निषिद्ध था, और उनका निरामिष भोजन अलग रसोई मे बना करता। कभी-कभी बहुत खुश होती, तो वह गिनकर पाच-सात पकौडिया भेज देती।

सासू के एक लडकी हुई थी, जो पहले ही मर गई थी, अब एक लडका था। उनकी छोरिया उन्हे सिखलाती—"बापजी, कोई जन्तर-मन्तर करवा दो, जिसमे कवराणी को बच्चा न हो, फिर राजपाट तुम्हारे पुत्र को ही मिलेगा।" सासू को यह बात बडी पसन्द आई और वह बराबर जन्तर-मन्तर करवाया करती। एक बार बडे तडके ही उनकी छोरी ने टोना-जादूवाला कच्चा सूत बीनणी के दरवाजे मे बाध दिया। यह सूत सात कच्चे तारों से बाटकर बना था और उसमे सात ही गाठे लगी थी। बीनणी की लौडी ने जब आकर कहा, तो बीनणी ने जाकर अपने हाथ से उस धागे को नोचकर फेक दिया। लौडिया कहती ही रह गई—"बापजी ऐसा न करो।" लेकिन बीनणी

को ऐसे कामण (जादू-टोने) मे विश्वास नही था। वह कह देती—"सासू के पास पैसे फालतू है, तो उन्हे कामण कराने दो, मुझे डर नही।" फिर जब कभी कवराणीसा का शिर भी दुखने लगता, तो नौकरानिया कहती—"बूजीसा ने कामण करवा दिया, इसीलिए सिर दुखै।"

उग्रपुर मे ब्याही छोटी ननद अपने पीहर आई थी। लौडियो ने ननद को सिखलाना शुरू किया—"आपकी भाभी तो कुछ ख्याल नही करती, लेकिन सासू हाथ धोकर उनके पीछे पडी है, बराबर कामण कराती रहती है।" ननद को अपनी सौतेली मा का यह आचरण बहुत बुरा लगा। सौतेली मा की छोरी रोडकी पहले तो बूढे ठाकुर के समय मे उनकी मुहलगी होने के कारण सौतेली मा को नाको चने चबवाती थी, अब वह उनकी मुहलगी हो गई थी, और कामण कराने-धराने मे उसी का बहुत हाथ था। ननद ने रोडकी का डचोढी के भीतर आना बन्द करा दिया। कवराणीसा को मालूम नही था। जब वह अपने सासू के पगे लागने गई, तो वह जोर-जोर से रो रही थी। पूछने पर मालूम हुआ, सासू के ख्याल मे रोडकी की डचोढी कवराणीसा ने बन्द करवाई है। जब कवराणीसा ने इसके बारे मे अपने को निर्दोष कहा, तो सासू झट—"हमारे सामने भोली बनी हो?" कहकर डचोढी से बाहर की ओर जाने के लिए दौड पडी। उनका ख्याल था, मै जनानी-मरदानी डचोढियो से भागकर बाहर चली जाऊगी, तो ठाकुरो की शान चली जायगी। खैर, कवराणीसा पैर पकड कर उन्हेलिवा लाई। रोडकी को भी उसी समय भीतर बुलवा लिया, तब जाके सासू शान्त हुई। रोडकी को कुजी मिल गई। एक दिन वह खाना बनाने के लिए नही आई। बूजीसा बिना खाये ही रह गई। कवराणीसा ने जब अपनी लौडी से कारण पूछा, तो उसने बताया—"रोडियाजी नही आया, इसीलिए नाराज हो गई है।" कवराणीसा तुरन्त अपने सासू के पास गई। वह अपने छोटे से लडके को लिये दरवाजा बन्द करके लेटी हुई थी। बहुत खटखटाया, लेकिन जवाब नही मिला। "किवाड खुलाओ, हुकम" कहने पर जवाब दिया—"मू तो नी खोलू (मै तो नही खोलू)।" बहू भी वही जाडे-पाले मे दरवाजे के पास बैठ गई, और कहा—"मै भी नही जाऊगी।" खैर, सासू ने दरवाजा खोल दिया। बहू थाल मे भोजन लेकर आई थी, लेकिन अब सासू ने कहा—"मू तो नी खाऊ।" समझा-बुझाकर किसी तरह खिलाया।

उग्रपुरवाली ननद को अपनी भाभी ठाकुरानी का सास के सामने इतना दबना पसन्द नही आया। उसने अपने भाई को कहा—"वह तो कामण करती

फिरती है, और भाभीसा खुशामद करती उसके सिर को आसमान पर चढाये हुए है।" ठाकुर साहब के मन मे बात आ गई और उन्होने मुह सुजा लिया। मुह सुजा लेना उनके लिए मामूली बात थी। बहुत पूछने पर कहा—"कुछ नही है।"

"कुछ तो है ही।"

"हम क्या है, तुम्हारे लिए तो जो कुछ है माजी साहब है।"

"माजी साहब मेरे और आपके सबके है। मै माजी साहब को अच्छी तरह जानती हू, लेकिन जो उनका मन न रखू, तो लोग क्या कहेगे ? यही न कहेगे, कि यह ऐसे घर की आई, कि सास-ननद का मन भी नही रखती। कहेगे, वह सौतेली सास है, इसलिए उसका अपमान करती रहती है। वह तो जो है सो है ही, क्या हमे भी उनके बराबर होना चाहिए ?"

ठाकुरसाहब को अपनी पत्नी की बात युक्तियुक्त मालूम हुई, और वह शान्त हो गये।

एक बार सासू अपने लिए भुजिया (पकौडी) बनवा रही थी। चूल्हे मे से फुलझडी की तरह चिनगारिया उड रही थी। बहू टेनिस की गेदो को अपने कमरे के भीतर थापी से मार-मारकर यो ही खेल रही थी। एक बार गेदा उछला, तो वह जाकर तस्वीर मे मढे काच मे लग गया, और वह टूट गया। किसी ने टूटे शीशे को देख लिया। रात को अन्त पुर मे कानोकान खबर उड गई—"माजी साहब ने कामण कराया, जिससे बीनणी के कमरे मे काच तिडक गया।" यह खबर बहू से पहले सास के पास पहुची। सास नाराज होकर अनसन-पाट्टी लेके बैठ गईं। बहू को मालूम हुआ, तो उसने जाकर समझाया—"मै तो यह बात भी नही जानती थी, गेद तो मेरे हाथ से जाकर शीशे मे लगा था। सब झूठी तोहमत लगाती है, मै नही मानती।"

सासू प्रसन्न होकर बोली—"था झूट नी बोलो। था हदाई हाच बोलो। थाणी ननदा हदाईज योइज माथाफोड कींदा।" सास को अपने बहू के सच बोलने पर पूरा विश्वास था।

एक बार फिर सास टोटके-टोने के फेर मे पडी। खाने की चीज मे डालने के लिए कागज की पुडी (पुडिया) मे कोई चीज देकर नौकरानी को रसोईघर मे भेजा। दहेज मे बीनणी को मिला बारह-तेरह वर्ष का लडका रसोईये के पास था, खाना बनाना सीखने के लिए बीनणी ने उसे खानसामे के पास रख छोडा था। लडके ने आकर अपनी मालकिन के पास कह दिया। बीनणी कामण को तो नही मानती थी, लेकिन क्या जाने जहर न हो, जिससे बिना मौत मरना पडे, इसलिए

उसने अपनी एक लौडी को रसोईघर की ओर भेजा और स्वय खिडकी से देखा, कि सासूजी की लौडी के हाथ मे कोई चीज है। छीना-झपटी मे पुडिया फट गई, और उसमे से सोडा जैसी सफेद चीज जमीन पर गिरकर बिखर गई। उस चूरन को लाकर लौडी ने अपनी मालकिन को दिया। मालकिन ने इसका किसी से जिक्र भी नही किया, हा, उन्होने अपने खानसामा गोदू को कह दिया, कि खाना बनाते अधिक होशियार रहा करे।

गौरी को ऐसी स्थिति से इस समय गुजरना पड रहा था, जिससे राजस्थान की सैकडो अन्त पुरिकाओ को पीढियो से गुजरना पडा था। हा, यह भेद अवश्य था कि उनमे से अधिकाश इसे अपना भाग्य समझकर उसके सामने सिर नवाने के लिए तैयार थी।

सास के स्वभाव की झलक पहले हम दिखला चुके है। बुद्धि मे बहुत पिछडी होने के साथ-साथ स्वार्थ की मात्रा उनमे बहुत ज्यादा थी। यद्यपि अपने पति के पास उनका उतना मान नही था, लेकिन तो भी सौतेले बेटे और दोनो बेटियो को भरसक दु ख देने की कोशिश करती थी, जिसके कारण वह पहले ही से उनके विरोधी हो गये थे। बच्चा होने के बरस दिन बाद ही उनके पति मर गये, लेकिन लडकेवाली होते ही उन पर यह सनक सवार हो गई, कि कैसे मेरा लडका ठाकुर की गद्दी पर बैठे। अपने पति को बस मे करने के लिए उन्होने बहुतेरे मारन-मोहन-उच्चाटन करवाये, किन्तु उसका कोई फल नही हुआ। बहू इसका बहुत ध्यान रखती थी, कि सासू को यह ख्याल न होने पाये, कि मै सौतेली सास हू। लेकिन फिर भी कुत्ते की पूछ टेढी ही रहा करती है। जब नई ठाकुरानी ने मकानो मे हेर-फेर किया और कुछ नये कमरे बनवाये, तो वह व्यग्य करती बहू से कहती—"के तो गीतणा, के तो हीतणा (या तो गीतो से नाम फैलता है, या भीतो से)।" बहू के सामने तो इतना व्यग्य करके रह जाती, लेकिन दूसरो के सामने कहती—"म्हारे लालूज बैठई (इन इमारतो मे तो मेरा बेटा ही बैठेगा)।" शायद उनको विश्वास था, कि वह मन्तर-तन्तर से सौतेले बेटे का चिराग गुल कराने मे सफल होगी। आगे सौतेले बेटे को दो ब्याह कराने के बाद भी कोई सन्तान नही हुई, किंतु सास का मन्तर तो चलता नही दिखाई पडा। अब तो ठेकाणे और जागीरे ही खतम हो रही है, फिर लालू किस गद्दी पर बैठेगा। बहू सब देखती सुनती रहती, और सासू की बेवकूफियो पर सिर्फ हस देती।

कामण करके भेजी पुडिया जब पकडी गई, और उनकी डावडी की ड्योढी

बन्द हो गई, तो सासू को डर लगने लगा और उन्होने फिर कामण करने को एक तरह से बन्द कर दिया। उनका मन कभी ज्वार पर रहता और कभी भाटे पर। नाखुश होनी तो टेढी-मेढी बाते करती, और खुश होती तो मीठी-मीठी। बहू के भाग्य पर ईर्ष्या करते हुए कहती—"तुम्हारा तो हुकम चल रहा है, मेरे को तुम्हारा ससुर कभी पूछता भी नही था।"

बहू के अन्त स्थल मे कितनी आग सुलग रही है, इसका उनको क्या पता था ?

अध्याय १४

मौज और महफिलें

ब्याह के बाद गौरी को एक भी महीना ऐसा याद नही, जब कि वह खलपा मे सुख से रही हो । पति के आचरण के कारण उसके हृदय मे हमेशा चिन्ता की आग सुलगती रहती । उसकी दो सगी ननदे थी, मन बहलाने के लिए बारी-बारी से उनमे से किसी एक को वह बुला लिया करती । बडी ननद उतनी खराब नही थी। वह भी बेचारी किस्मत की मारी थी । उसका पति कण्ठा राजा का भाई खूबसूरत था, समझदार था, लेकिन साथ ही भारी शराबी और लम्पट भी था । जब उसके सामने शिकायत की जाती, तो कहता--"मेरे लायक बहू नही मिली, यदि वह वैसी होती, तो मै कभी बाहर नजर भी न डालता ।" ननद कहती--"मुझे कोई सुख नही ।" पति की शिकायत भी करती, लेकिन साथ ही कहती--"मर्द तो ऐसे हुआ ही करते है, कैसे भी हो, अपने को तो उनका मन रखना ही पडता है ।" ननद बेचारी शिक्षा से वचित थी, और जो बाते आखो से देखती, या कानो से सुनती, उससे उसको विश्वास था, कि स्त्रिया तो सदा से पुरुषो के हाथ की खिलवाड रहती आई है ।

गौरी भी उसी समाज मे पैदा हुई, उसकी शिक्षा बहुत नही हुई थी, और न उसे देशान्तर मे जाकर दुनिया देखने-भालने का मौका मिला था । लेकिन, वह जन्मजात स्वतन्त्र प्रकृति की स्त्री थी । बचपन से ही पुरानी रूढियो को बिना ननु-नच किये वह मानने के लिए तैयार नही थी । अपनी परिमित शक्ति के अनु-सार गुप्त या प्रकट उन रूढियो को तोडने के लिए तैयार रहती । उसे यदि स्त्री-स्वातन्त्र्य की बाते पसन्द थी, तो यह किसी बाहरी प्रेरणा के कारण नही था । हा, धार्मिक कथाओ और जीवनियो ने उसे जासूसी उपन्यासो तक पहुचाया, फिर साधारण उपन्यासो से होते सामाजिक प्रगति की समर्थक जो भी पुस्तक मिलती, उसे वह पढ जाती । सामन्त-समाज मे स्त्री को इस प्रकार हाथ-पैर बाधकर मर्द-भेडिये के सामने पटक देना उसे नही पसन्द था । वह कभी एक तरफ तो मनुष्य-रूपी चतुष्पदो को वीभत्स महफिले लगाते, और स्त्री को चप रहकर सब कुछ

सहने के लिए बाध्य देखती, तो दूसरी ओर महाप्रभु अग्रेजो की स्त्रियो को पुरुष के समकक्ष हो स्वच्छन्द विहरते भी देखती। उसका मन कहता--"ऐसा क्यो ?" ब्याह के एक-दो साल बाद जब उसकी सारी आशाओ-अभिलाषाओ पर पानी फिर गया, तो मन और विद्रोही हो गया। स्त्री की दीनहीन स्थिति पर वह घण्टो सोचा करती। एकाध पुस्तको मे स्त्री के पक्ष का समर्थन देखकर वह ऐसी पुस्तको को ढूढ-ढूढकर पढने लगी। अग्रेजी मे उसकी गति नही थी, नही तो शायद उसे और भी विशाल जगत् के जानने का मौका मिलता। तो भी १९२७ के बाद से वह ऐसी पुस्तको को ढूढ-ढूढकर पढने लगी, जिनमे स्त्रियो के अधिकारो का समर्थन पाया जाता था। ब्याह के तीन-चार वर्ष बीतते-बीतते उसके विचार बिल्कुल स्पष्ट हो गये। अपने मन की पीडा कहिये, या पथ-प्रदर्शन पाने की इच्छा, उसे आत्मतोष केवल पुस्तको मे मिलता था। उसके वर्ग की स्त्रिया तो मानती--"पति को हक है, वह अपनी स्त्री को मार भी सकता है।" राजमाता-जैसी विलायत हो आई अग्रेजी बोलने-चालनेवाली स्त्रिया भी वही कहती, जो कि उनकी अनपढ बहने मानती थी। भला उनके सामने अपने मन के भावो को खोलने की हिम्मत गौरी को कैसे होती ?

छोटी ननद अधिक खोटी थी। उसका पति भलेमानुस था, इसलिए कह सकते है, कि वह अन्य अन्त पुरिकाओ की अपेक्षा अधिक सौभाग्यवती थी। जब वह खलपा आती, तो बेचारी भाभी उसके लिए अपने हाथ से अच्छी-अच्छी खाने पीने की चीजे तैयार करती। वह नही चाहती थी, कि मेरी ननद समझे, उसकी मा नही है। लेकिन वहा इसका कोई ख्याल नही था। वह बराबर भाई के पास चुगली लगाती, कभी सास के साथ झगडा बढवाने की कोशिश करती। उसका पति बहुत पूजा-पाठ मे रहता। उसने अपनी स्त्री को भी एक पीतल के वशीधर को दे दिया था, और पत्नी भी अपने पति की तरह भक्ति मे लीन दिखलाने की कोशिश करती।

× × × ×

अन्त पुरिकाओ की कठोर चादनी, जबर्दस्त कैदखाने की जिन्दगी के भीतर क्या हो रहा है, इसे देखकर गौरी को कही से आशा की किरण नही आती दिखलाई पडती थी। झलमल मे उसकी मासी लाजकुवर ब्याही थी। उसका पति एक नम्बर का शराबी और व्यभिचारी था, लेकिन पत्नी को वह कठोर से कठोर पर्दे मे रखता था। मोटर मे काले शीशे लगे हुए थे, कोई बाहर का आदमी भीतर बैठी ठाकुरानी को देख नही सकता था, लेकिन इस परभी जब पत्नी मोटर पर कही जाती,

तो मोटी चादनी लगवा देता । पत्नी इसे कोई असाधारण बात नही समझती । ठाकुर साहब अपने दुर्व्यसनो के कारण मौत के पास पहुचने लगे । डाक्टरो ने कहा, शराब और मास छोड दो, तभी जान बचेगी । ठाकुर ने जब शराब-मास छोड दिया, तो सोचा एक कदम और आगे क्यो न चले ? और नेपाल के उन्नीसवी सदी के आरम्भ के महाराजा रणबहादुर की तरह छोटे-मोटे निर्गुणानन्द बनने की सोची । उन्होने जनपुर से डेढ-दो मील पर अवस्थित अपने गढ के भीतर कुटिया बनवा, शराब-मास छोडकर दोनो हाथो मे माला ले शिर पर किसानो जैसा साफा ओर घुटनो तक की धोती पहन ली । लेकिन यह बिलैया-भक्ति ज्यादा दिनो तक नही चली । ठाकुरो की पान और गान की गोष्ठिया होती, उस समय सभी मदिरा और मदिरेक्षणा का आनन्द लेते, फिर झलमल के ठाकुर अपने को वचित कैसे रखते ? डेढ-दो वर्ष के बाद ही वह फिर अपने वर्ग की गोष्ठियो मे शामिल होने लगे, फिर जसी अपने गानो और नाचो से, और रामकवार अपने सुन्दर मुह मे उनका आराधन करने लगी । महफिलो के लिए जनपुर मे सबसे अधिक सुभीता था । वहा समवयस्क तरुण ठाकुरो की चण्डाल-चौकडी आसानी से जमा हो सकती थी, और महफिल बारी-बारी से कभी किसी के यहा कभी किसी के यहा जमती । सबेरे ही ठाकुर साहब हुकुम देते--"आज गाना और खाना है, बडे-बडे सरदार आ रहे है, छोटे बापजी (महाराज) ऊधोसिह के अनुज अमितसिह भी आनेवाले है ।" छोटे बापजी महाबिगडे सामन्तो मे से थे । भला जब सरदारो की महफिल हो, तो पहले ही से खाने-पीने की तैयारी क्यो न हो ? सबेरे ही से तरह-तरह के खाने बनने लगते । ह्विस्की की बोतले कम न हो जाय, इसके लिए पेन्ट्री मे उन्हे पहले ही से भर दिया जाता ।

× × × ×

खलपा की हवेली मे आज महफिल हो रही थी । अन्त पुरिकाओ को भी कौतूहल होता ही है । वह यह तो जानती ही थी, कि उसमे रण्डिया नाचती है, शराब की बोतले ढलती है, लेकिन आदमी को सुनने मात्र से सन्तोष नही होता, वह आखो से देखना भी चाहता, चाहे वह दृश्य कितना ही अप्रिय और वीभत्स क्यो न हो । हवेली मे एक ऐसा कमरा था, जिससे हाल मे होती महफिल को देखा जा सकता था, यदि वार्निश किये हुए शीशे की बाधा हटाई जा सके । यह मुश्किल नही था, नाखून से कुरेदकर जरा-से शीशे को साफ कर लिया जा सकता था । वैसे होता, तो शायद गौरी अपने को समझा भी लेती, लेकिन ऐसे समय कई और अन्त पुरिकाए भी भोज के लिए निमन्त्रित थी । तरुण सामन्तिनिया यह

देखने के लिए उत्सुक रहती, कि हमारे लायक पति महफिलो मे क्या करते ह। उनकी उत्सुकता के बढाने के लिए भुक्तभोगिनिया अपनी आपबीनियो से प्रेरणा देने के लिए भी तैयार थी, इसलिए वार्निश किये हुए शीशो मे कई जगह नाखुन से छोटे-छोटे प्रकाश-छिद्र बनाये गये और ठाकुराणिया हाल की ओर देखने लगी। कुर्सिया पडी थी, जिन पर सरदार जमकर बैठे थे, प्याले और सिगरेट की डिबिया पास रखी हुई थी। बैरे दौड-दौडकर बोतले ला रहे थे, और सोडे के साथ शराब ढाल-ढालकर सामने रख रहे थे। नाच शुरू हो गया। रगीले सरदारो को इश्किया गजलो के सिवा दूसरे गीत क्यो पसन्द आने लगे? जसी अपने मधुर कण्ठ से कामोत्तेजक गीतो को गा रही थी, अपने नृत्य और भाव-भगी से तरुण सामन्तो के मन को उत्तेजित कर रही थी, लेकिन वह सुन्दर नही थी, उमर भी उसकी चालीस वर्ष की हो चुकी थी। लेकिन, उसका हाथ बटाने के लिए रामकवार जैसी दूसरी सुन्दर बारवधुए वहा मौजूद थी। वह आगे बढकर आदाब बजाती, शराब के प्याले को हाथ मे लेकर मनुवार देती, और फिर अपने ही हाथ से प्याले को ठाकुर के मुह मे लगा देती। आम तौर से यह रहस्यमय महफिले एक उमर के तरुणो की होती, लेकिन सालगिरह या और किसी उत्सव के समय महफिलो मे सभी उमर के सरदार शामिल होते। उस समय थोडा सयम रखने की अवश्यकता पडती। बडे सरदारो के आने पर ठेकाणे के वकील साहब और दूसरे बडे कारपरदाज भी पेन्टरी के दरवाजे के बाहर कुर्सी डालकर बैठ जाते, और इस बात का ध्यान रखते, कि इन्तिजाम मे कोई त्रुटि न होने पाये। बडे-बूढे सरदार आधी रात से पहले ही खा-पी और नाचने-गाने का आनन्द ले चले जाते। जिसके साथ प्रबन्ध के लए वहा बैठे वकील साहब जैसे अफसर भी अपने घरो का रास्ता लेते। अब सारी रात तरुण-सामन्तो की होती। शराब और गाने के बाद खाने का समय आता। उस समय चन्द्रमुखी रण्डिया अपने हाथ से ग्रास उठाकर सरदारो के मुह मे देती। कभी रामकवारी एक सरदार की कुर्सी के बाजू पर बैठ, उनसे मीठी-मीठी बाते करती, शराब की घूट पिलाती, या मुह मे मास का स्वादिष्ठ ग्रास डालती फिर वह दूसरे सरदार के पास जाकर वही अभिनय करती। बोतलो की बोतले उडाई जाती, लेकिन सरदार इतने अभ्यस्त थे, कि कभी उन्हे गिरते-पडते नही देखा जाता। हाल से उठकर कभी कोई सरदार एकान्त कमरे मे चला जाता, तो दूसरे मजाक करते उसके पीछे जा दरवाजे का शीशा तोड डालते। सबेरे के वक्त आम तौर से शीशे टूटे मिलते, फर्श गन्दे हो गये रहते। शीशे के पीछे से झाकती अन्त पुरिकाए इस वीभत्स दृश्य को देखकर एक दूसरे से कहती—

"एणारा लक्खण तो देखो, भूड इनारा माजना मे (इनकी हालत तो देखो, धूल है इनकी इज्जत पर) ।" कभी एक भौजाई अपनी ननद को कहती--"आपणा आपा कई एडी बी नई ह (हमारी तो इन रण्डियो जैसी भी कदर नही है) ।"

बहुत पीछे की बात है । अब ठाकुरानियो मे कोई-कोई इन अत्याचारो को मौन रहकर देखने-सुनने के लिए तैयार नही थी । एक तरुण ठाकुरानी ने दुराचार के लिए अपने पति को फटकारा । इस पर उसने उसे पीट दिया । तरुण ठाकुरानी ने फिर भी मुह को रोका नही, ओर कितनी ही बार पिटती रही । ऐसी ठाकुरानिया सबसे पहले चाहती है, कि राजस्थान की जागीरदारी-प्रथा जडमूल से नष्ट हो जाये, ताकि वहा के सभी मानव-पशु जमीन पर आ जाये । उक्त तरुण ठाकुरानी ने अपनी ममेरी-बहिन से कहा था--"जीजा, कभी सुन लेना, एक दिन आवेगा, कि मै इसे इतनी बुरी तरह से पीटूगी, कि यह भी याद करेगा ।" हा, इस तरह के भाव पिछले आधे दर्जन वर्षो से ही आने लगे है । उसी तरुण ठाकुरानी की मा ऐसी अवस्था मे कहती--"पति के साथ पत्नी की क्यो लडाई हो ? एक हाथ से ताली थोडे ही बजती है । यदि पत्नी चुपचाप रहे, तो सब ठीक हो जायेगा ।" कैसी गाधीजी की सत्याग्रही-शिक्षा सैकडो पीढियो से इन अन्त पुरिकाओ को मिलती आ रही है ।

× × × ×

अन्त पुरिकाए घुल-घुलकर सदियो नही सहस्राब्दियो से मरती आई है । कमार के ठाकुर की एक पत्नी पहिले ही थी । वह फिर दूसरी सौत ब्याह लाये । यह कहने की अवश्यकता नही, कि सामन्त अपनी विवाहिता स्त्रियो पर ही सीमित कभी नही रहा करते । हा, ब्याहता स्त्रिया अपनी जात की होती है, और ठाकुर के उत्तराधिकारी इन्ही के लडके हो सकते है, इसलिए दूसरी कामिनियो से उनकी स्थिति कुछ बेहतर जरूर होती है । ठाकुरानी की सौन अधिक होशियार निकली । उसने ठाकुर को अपनी पहली सौत से मिलना-जुलना बन्द करा दिया । हाथ-खर्च जो सौत को मिलता था, उसे भी वह न देख सकी, कुछ दिनो बाद उसे भी बन्द करवा दिया । बडी सौत एक अच्छे बडे ठेकाणे की कन्या थी, ब्याह मे पीहर से बहुत-सा जेवर मिला था । यदि जेवर न होते, तो बेचारी को भूखो मरना पडता । ब्याह के समय उसे कई छोरिया मिली थी, लेकिन वह इतनी छोरियो को खिला कैसे सकती ? अन्त मे दो छोरिया ही उसके पास रह गई । ठाकुर ने सन्तान के लिए तीन शादिया की, लेकिन बच्चा किसी से नही हुआ । मझली ठाकु-

रानी की भी शायद छोटी सौत वही अवस्था करती, लेकिन वह पहले ही चल बसी। हाथ-खर्च बन्द हो जाने पर बडी ठाकुरानी ने जनपुर तक धावा मारा। वकीलो ने आशा दिलाई, कि दरबार आपके साथ इन्साफ करेगा, और ठाकुर साहब को खर्च के लिए पैसे देने पडगे। लेकिन ढाढस दिलाने का केवल यही परिणाम हुआ, कि उसके पास जेवर के रूप मे बचे सबल मे से भी कुछ वकीलो के पेट मे चला गया। एक ही नाव मे बैठे सामन्त एक दूसरे के खिलाफ क्यो सहायता देने लगे? अगर एक-दो परित्यक्ता ठाकुरानिया हाथ-खर्च पाने मे सफल हो गई, तो सबके ऊपर वही आफत आयेगी, सबका घर बिगडके रहेगा। दरबार से यही हुकुम हुआ—"जाओ अपने पीहर, या गाव मे जाकर बैठ जाओ। भली ठाकुरानिया यहा दौडी-दौडी नही फिरा करती।" बेचारी ठाकुरानी की कही सुनवाई नही हुई। पास के जेवर कितने दिनो तक साथ देते, अब भूखो मरने की नौबत आ रही थी, लेकिन इसी समय करुणामूर्ति मौत ने अपमानपूर्ण जीवनान्त से उसे बचा लिया।

जनपुर की आजकल की दादी राजमाता साधारण कुल की कन्या थी। उनके रानी बनने पर पीहरवालो का भी भाग्य जग गया। उन्होने अपने भाई और भतीजे की कई-कई शादिया कराई। उनका भतीजा करनसिह सुन्दर तरुण था। पर्दे की शादी मे रूप-कुरूप का पूरी तौर से पता नही लगता, इसलिए उसका ब्याह ऐसी लडकी से हुआ, जो सुन्दर नही थी। कृष्णकन्हैया ने पहली स्त्री को बहिन कहकर ठेकाणे मे भेज दिया। फिर दूसरी शादी की, उसकी सूरत उतनी बुरी नही थी, किन्तु बेचारी भोली-भाली थी। वह भी तरुण ठाकुर को पसन्द नही आई। रानी अपने भतीजे की तीसरी शादी करवाने पर उतारू हुई। रानी साहबा के अपने ससुरकुल के छुटभैयो मे—जिन्हे महाराज कहा जाता है—एक की लडकी से भतीजे की देखादेखी थी। लठियो की औरते भारियो से पर्दा नही करती, क्योकि भारी राजमाता के कुल के थे। लठिया भारियो को अपने से नीच समझते है, इसलिए महाराज अपनी लडकी को राजमाता के भतीजे को देने के लिए तैयार नही थे, किन्तु महारानी जोर दे रही थी, कौन इनकार करके उनके कोप का भाजन बनता? दोनो का ब्याह हो गया। लडकी के भाई तक भी ब्याह मे शामिल नही हुए—यह सोडा-लेमन दे माला पहना देना जैसा ब्याह था। इस ब्याह के हुए छ-सात वर्ष ही हुए है। बडी बीबी की ननद जनपुर के स्वर्गीय सरदार प्रसादसिह के नाती की बीबी थी, वह अपने भावज की हालत पर दया करके उसे अपने पास बुला लिया करती। कभी-कभी सीढियो पर उसकी अपने पति से मुलाकात हो जाती, तो वह बिना पीटे नही रहता। इस

झझट से बचने के लिए उसने अपनी बडी बीबी को गाव मे भेज दिया। फूफा महाराजा ने उसे दो गाव देकर जागीरदार बना दिया था। अब बडी बीबी का काम था, नौकरानी की तरह मर-मरकर काम करना। मझली बीबी को इतनी सासत सहने की जरूरत नही पडी, क्योकि सौन के आते ही वह पागल हो गई, और थोडे दिनो बाद मर गई। लोग सन्देह करते थे, कि उसे कुछ खिलाकर पागल कर दिया गया था।

महारानी के सगे भाई काहनसिह का भाग्य भी बहिन के भरोसे जग गया। बहिन की शादी से पहले ही काहनसिह की एक शादी हो चुकी थी। महारानी-ननद को वह सीधी-सादी भावज कैसे पसन्द आती ? उन्होने अपने भाई की दूसरी शादी करवाई। नई बीबी कडी थी, वह उसे अपने पति के सामने भी आने नही देती थी। बेचारी ननद महारानी के पास पडी रहती। उसे दस रुपये महीने हाथ-खर्च के और रोटी के टुकडे रसोई से मिल जाते। महारानी का ननिहाल भी चाचलावतो मे था, इसलिए वह गौरी को बाईसा कहा करती। उनकी देखादेखी दूसरी अन्त पुरिकाए भी उसी नाम से पुकारती, और चाल-व्यवहार, समझ-बूझ के कारण आदर भी करती। गौरी जब कभी चाचलावत राजमाता के पास मिलने जाती, तो अपने कमरे के बराडे मे परित्यक्ता भावज भी मिल जाती। वह बडे आग्रहपूर्वक गौरी को पकडकर अपने कमरे मे ले जाती—"आओ बाईसा, हमारा भी दुखडा सुन लो। अपना दु ख मै यातो तुमसे कहती हू, हिम्मतसिह की बहू से या बावडीवाली से, बस पेट की बात तुम तीनो से ही कहू, जिसमे यह बाहर न जावे।" गौरी उसके दुखडे को बडी सहानुभूति के साथ सुनती। आखिर वह भी कुछ सीमा तक भुक्तभोगिनी थी। इस सहानुभूति के लिए ठाकुरानी गौरी की बहुत खातिर करती—"पान लाती हू, थोडा जल पी लो।" कभी-कभी दोनो को बात करते देख सौत आ जाती, तो तीखी नजर डाले चली जाती, और पीछे पूछती—"मोटी क्या बात कर रही थी ?" गौरी बहाना बना देती—"अपनी दोहती (नतनी) की बात कर रही थी।"

नतनी की मा से भी बडी करुण कहानी थी—

काहनसिह की बडी बीबी की लडकी का व्याह दासा के ठाकुर कमलसिह से हुआ। सामन्तो के सभी दुर्गुण ठाकुर कमलसिह मे थे। महारानी को अपनी भतीजी के पति के यह लक्षण मालूम हुए, तो उन्होने बहुत फटकारा और कहा—"हम तुम्हारा ठेकाणा जब्त करा देगे, और तुमको कही का नही रहने देगे।" ठाकुर कमलसिह को यह बात बहुत बुरी लगी, और उसने अपनी स्त्री से कहा—"मै इस

जीने से मरना पसन्द करता हू, मै अपने को खतम कर देना चाहता हू ।" स्त्री दुराचारी पति के सहवास से भी अधिक भयकर अपने वैधव्य को समझती थी, इसलिए उसने कहा--"यदि मरना ही है, तो मुझे क्यो दु खसागर मे डुबोकर जाना चाहते हो ।" ठाकुर ने कहा --"अच्छा तो आ बैठ जा, पहले तुझे परलोक भेजकर मै भी आता हू ।" पिस्तौल लेकर ठाकुर ने अपनी स्त्री को पहले मार दिया, फिर अपनी आत्महत्या कर ली । दोनो की लाश एक साथ चिता पर जली । गौरी ने उसी की तरफ इशारा करके कहा था--"अपनी दोहती (नतनी) के लिए बेचारी रो रही थी ।" लेकिन छोटी सौत जानती थी । उसने जवाब दिया--"आप तो बात को टाल देती है, दूसरी तो मेरे पास दूतिया (चुगली) खाती है ।" दासावाले सलमिया थे, गौरी के ससुर की मा वही की थी, और उसकी बहिन वन्दनकुमारी का लडका भी वही ब्याहा गया था ।

वैसे सारे राजस्थान मे नाच और शराब की महफिले होती है, लेकिन जैसी हीन दर्जे की नगी महफिले जनपुर मे होती, वैसी गौरी ने न ननहाल मे देखी, न मायके मे ही । ठाकुरो मे एक से अधिक ब्याह बिल्कुल साधारण-सी बात थी। कभी-कभी ऐसा पति भी देखा जाता, जो अपनी सभी पत्नियो को एक नजर से देखता । कभी-कभी सौते भी आपस मे प्रेम करती देखी जाती । जनपुर से दो-तीन मील पश्चिम मे पुरी ठेकाणा है । वहा के ठाकुर की दो पत्निया थी । बडी से जीवित सन्तान न होने पर उन्होने दूसरी शादी की, जिससे दो लडके और एक लडकी हुई। छोटी ठाकुरानी हर तरह कोशिश करती, कि ठाकुर उसकी बात मे पडकर बडी बीबी को सतावे । वह कहती--"यदि यह यहा रहेगी, तो मै पुरी मे नही रहूगी, यह मेरे बच्चो को जादू-टोना करती है ।" ठाकुर डाटकर कहते---"मेरी तो वह पहली स्त्री है, अगर तुम अलग रहना चाहो, तो सामान भेज देता हू, अपनी अलग रसोई कर लो, कभी-कभी तुम्हारे यहा आकर भी खा लूगा ।" पति को एकान्त मे पाकर दोनो एक दूसरे की शिकायत करती, लेकिन वह उनकी बातो मे नही पडता ।

यही बात आपा के साठसाला ठाकुर की थी । उनकी भी दो बीबिया थी, और दोनो को वह एक नजर से देखते थे । यहा तक कि जिस तरह का कपडा एक के लिए बनवाते, वैसा ही दूसरे के लिए भी बनवा देते । दोनो सौतो मे भी बहुत प्रेम था । दोनो अपने पति के साथ इकट्ठा बैठकर खाती । यह सौहार्द इतना बढा हुआ था, कि दोनो पत्नियो ने अपने अलग-अलग शयनकक्ष नही रखे थे । दोनो मे इतना प्रेम था, कि यदि उनमे से कोई एक अपने पीहर जाती, तो दूसरे का भी उसके साथ जाना अनिवार्य था ।

ऐमी ही आदर्श सौते भूपसिह मामा की दोनो बीबिया थी। यदि उनमे कोई बीमार पड जाती, तो दूसरी रातो बैठकर सेवा करती। सन्तान दोनो की नही हुई थी। जसपुर मे उस साल प्लेग आया था, लोग नगर को छोडकर बाहर चले गये थे। गौरी के मामा के कुल के लोग भी कलाता बाग मे जाकर पडे थे। दोनो सौते गौरी की नानी के साथ चौपड खेलती। बडी सौत के पासे ज्यादा आते, जिससे उसकी गोटिया गल जाती, छोटी सौत मजाक करते हुई कहती--"देख काकीमा, हमारी सौत तो लेती ही जावे, बर्जू हू, कि कम पासे डाल, लेकिन नही मानती।" दूसरी सौत इसे सुनकर हस देती। बचपन मे गौरी अपनी मासी के साथ भूपसिह मामा की दोनो बहुओ की नकल उतारा करती, उनका मधुर सम्बन्ध उसे पसन्द आया था, लेकिन आगे चलकर उसकी भी सौत आई, लेकिन भूपसिह की बीबियो जैसी नही, बल्कि ऐसी जिसने उसके जीवन को बहुत कडवा बना दिया।

नरपुर के तीसरे ठेकाणे के स्वामी ठाकुर काहनसिह बडे शरावी और भारी लम्पट थे और स्वभाव मे भी विचित्र। सलमाडा मे सापो की बहुतायत है। काहनसिह को सापो के पालने का बडा शौक था। वह पूगी (बीन) बजाता सापो को नचाता। उसके पास पाच-सात जीवित साप बराबर रहा करते। उसकी दो ठाकुरानिया और दो पासबाने थी। ठाकुरानिया अगर कुछ झगडा करती, तो वह ले जाकर एक साप उनके गले मे डाल देता। बेचारी डर के मारे चुप हो जाती। अपनी दोनो बीबियो को झगडे से बाज रखने के लिए काहनसिह के पास साप बहुत बडे हथियार थे। रात को वह नगर मे निकलता, तो किसी के घर मे घुस जाता। जूते खाते रहना उसके लिए मामूली-सी बात थी। स्त्रिया रात के वक्त शौच के लिए बाहर जाती। उस समय यदि कोई झूठी भी खबर दे देता, कि काहनसिंह आ गया है, तो चारो ओर भगदड मच जाती। काहनसिह के कुल की एक लडकी ससुराल से घर आई थी। उसने उसे दावत दी, बहुत-सी लौडिया भी आईं। ऐसे समय वह लौडियो को छेडने से बाज नही आ सकता था। उसने नौक-रानी से कहा---"मगलपुर की छोरियो से कहो, कि डोढी पर कोई सन्देश लेके आया है।" अन्त पुरिकाए ताड गई। उन्होने एक साठ वर्ष की बुड्ढी लौडी को डोढी मे भेजा। काहनसिह सीढी के कोने मे अधेरे छिपा खडा था। उसने जब बूढी छोरी को पास से जाते देखा, तो हसते हुए बोल उठा--"यह राड तो मेरी भी दादी निकली।"

काहनसिह को अपने ही खूब शराब पीकर मस्त होने मे आनन्द नही आता था, बल्कि अपने हाथी को भी शराब पिलाकर मस्त करके उस पर बैठकर घूमने मे आनन्द आता। वह गोरा छरहरा आदमी था। उसकी मूछे और आखे भी भूरी थी। वह बाल बडे-बडे रखता, और आखो मे सुरमा लगाये बिना नही रहता। नगे हाथी पर सूड की ओर मे चढकर पूछ की ओर उतरना और पूछ की ओर से चढकर सूड की ओर उतरना उसे भला लगता था। कभी-कभी वह अच्छा गुलाबी रेशमी कपडा पहिनकर सपेरा जैसा बन जाता, और फिर पूगी बजाते सापो को नचाता। जब वह शराब पिलाकर मस्त किये हुए हाथी पर बाहर निकला होता, तो रूडसिह बाबोसा बहुत डरते—"क्या जाने अपने मस्त हाथी को हमारे हाथी से लाकर न भिडा दे, और हमे बेमौत ही मरना पडे।" काहनसिह की रुचि भी विचित्र थी। उसकी दोनो पासबानो (रखेली पत्नियो) मे सीतिया की बहू सुन्दर नही थी। उसके बडे-बडे दात थे, बोलते समय ओठो पर थूक लिपट जाता था। दातो को सुन्दर बनाने के लिए उसने सोने की चोपे मढ रक्खी थी। ठाकुर निस्सन्तान मर गया और उसका ठेकाणा रूडसिह बाबोसा के ठेकाणे मे मिल गया। बडी ठाकुरानी पति के मरने के थोडे ही दिनो बाद मर गई। चार-पाच वर्ष बाद छोटी भी मर गई। पासबाने अब भी मौजूद है। सीतिया की बहू को जब पूछा जाता—"तू क्या सोचकर पासबान बनने गई?" तो वह जवाब देती—"मेरा करम फूट गया, मुझे लालच हो आया, कि पासबान बनकर ठाकुरानियो की तरह मै भी पैरो मे सोने का जेवर पहनूगी, उनके पास ठाकुरानी जैसी बनकर बैठूगी।"

सभी अन्त पुरो मे एक ही तरह की हवा, एक ही तरह की आह और कराह है। सभी अन्त पुरिकाओ का एक ही सा दम घुटना, अमानुषिक, अप्राकृतिक अत्याचार और दुर्व्यवहारो का शिकार होना देखा जाता है, इसीलिए तो सदियो तक वह चुपचाप सारे अत्याचारो को बर्दाश्त करती आ रही है, लेकिन जब मध्यान्ह का सूर्य आकाश मे चमक रहा हो, तो अन्त पुरिकाए कितने दिनो तक असूर्यम्पश्या बनी रहेगी?

अध्याय १५

भक्ति का नशा

गौरी के ब्याह के बाद के दो-तीन साल बडे कष्ट के गुजरे । एक तरफ ठाकुर साहब की पुरानी आदतो के कारण वह सुलगती रहती । ठेकाणे के प्रबन्ध मे कुछ थोडा ठीक-ठाक करती तो, इसी समय ठाकुर साहब उस पर लीपापोती कर देते । बीमारी से तबाह हो रही थी, इसी बीच ससुर मर गये । उसके बाद फिर उसने पहले जैसा जोर किया । अब शारीरिक और मानसिक दोनो प्रकार की पीडाओ के कारण गौरी की दशा बहुत बुरी हो गई थी, इसे कहने की जरूरत नही । किसी के सामने दु ख कहकर अपना दिल हलका करने का उसे कोई अवसर नही था । एक तो ऐसी सहृदया स्त्री वहा थी नही, दूसरे इसे वह अपने आत्म-सम्मान के खिलाफ समझती । वह सोचा करती, सोचते-सोचते कभी सारी रात बीत जाती । एक क्षण कोई उपाय सूझता, और दूसरे क्षण बुद्धि उसे बेकार बतला देती । निराशा के उस निविड तिमिर मे कही पथ का पता नही था । मा बडी सहृदया थी, और वह अपनी बेटी को जब-तब बुला लिया करती, लेकिन मा स्वय दुखिया थी । उसके सामने अपना दु ख कहकर उसे और दु खी बनाना गौरी को अभीष्ट नही था । दूसरे स्रोतो से यदि कभी उन्हे भनक लग जाती, और वह पूछ बैठती, तो बेटी टालमटोल कर देती । वह बाबोसा से भी नही कहती, यद्यपि वैसा हितैषी और सहृदय पुरुष मिलना मुश्किल था । जब दिल का भार बहुत बढ जाता, और एकान्त मिलता, तो गौरी किवाड भेड चारपाई पर पडकर खूब रोती । कभी किवाड लगाने का अवसर न मिलने पर चादर ओढकर आखो से सावन-भादो बहाती । कोई मिलनेवाली आकर जब दरवाजा खटखटाती, तो वह पहले जाकर मुह धोती, फिर बहुत प्रयत्न करके मुह पर हसी लाने की कोशिश करती । धीरे-धीरे इस कला का उसे काफी अभ्यास हो गया था, फिर आगन्तुका के पास इस तरह बाते करती, मानो चेहरे पर सदा प्रसन्नता बनी हुई थी । उस जनसकुल अन्त पुर मे वह परम एकान्तिनी थी, यह एकात जीवन को और भी असह्य कर देता था ।

मानसिक ओर शारीरिक पीडाए उसे ऐसी अवस्था मे पहुचा रही थी, जहा डर था, वह पागल न हो जाये। अभी बुद्धि थोडा-बहुत काम करती थी, इसलिए सबेरे ही चेतने का उसे ख्याल आया। गर्मियो का दिन था। गोलान की गर्मिया मालर जैसी कडी तो नही होती, लेकिन तो भी गर्मिया ही थी। मालर की अपेक्षा यहा वृक्ष अधिक थे, किन्तु जब हृदय शून्य हो, तो वह भूभाग भी सूना-सूना-सा मालूम क्यो न होता ? सोचते-सोचते गौरी को ख्याल आया—शायद भगवान् मेरी सहायता करे। मगलपुर के करोडपति सेठ देवीदास सराफ आर्यसमाजी थे। वह बाबोसा के पास अक्सर बैठकर धर्म-चर्चा किया करते। गौरी के शिक्षक मास्टर कृष्णदास भी आर्यसमाजी थे, इसलिए उनकी बातो को बचपन से ही सुनने के कारण मीरा या और स्वर्गीय भक्तिनो के पथ पर एकान्त रूप से चलने मे उसके सामने मानसिक बाधाए थी। सभी अन्न पुरिकाए और परिचारिकाए जादू टोने को खूब मानती, भूत-प्रेत से बहुत डरती, लेकिन गौरी का उस पर विश्वास नही था। तो भी उस अथाह चिन्ता-सागर मे डूबते समय तृण का सहारा भी समझ मे बडा मालूम होता था। बचपन की सुनी आर्यसमाजी बातो के कारण मन्दिर मे उसका विश्वास नही था, और न वह मूर्ति रख सकती थी। मगलपुर मे उसे किसी पण्डित ने गायत्री-मन्त्र दे दिया था, गायत्री-मन्त्र की महिमा वह आर्यसमाजियो के मुह से भी सुन चुकी थी, इसलिए उसने सोचा, शायद गायत्री-जप से ही मेरा निस्तार हो। इसका यह अर्थ नही, कि भक्त प्रह्लाद या ध्रुव की मनोरजक कथाए उसे पसन्द नही थी। लेकिन यह निर्णय करना उसके लिए मुश्किल था, कि भगवान साकार है या निराकार। तो भी मीरा के गीतो ने गौरी के हृदय मे कृष्ण मे भक्ति पैदा कर दी थी। शायद १९२८ या १९२९ का साल था, जब कि गर्मियो मे भक्ति का भूत गौरी के शिर पर सवार हुआ। वह सबेरे पाच बजे ही उठ जाती, और नहा-धोकर कालीन की आसनी पर आलथी-पालथी मारकर बैठ जाती, कभी-कभी पीछे से दोनो हाथो को ला, पैर के अगूठे को पकडकर बद्ध पद्मासन बैठती। पहले उसके मुह से निकलता—"ओ नमो नारायणाय, भगवते वासुदेवाय" फिर गुनगुनाती—

शान्ताकार भुजगशयन पद्मनाभ सुरेश,
विश्वाधार गगनसदृश मेघवर्ण शुभागम् ।
लक्ष्मीकान्त कमलनयन योगिभिर्ध्यानिगम्य,
वन्दे विष्णु भवभयहर सर्वलोकैकनाथम् ॥

उसके बाद फिर समझने मे कुछ सुगम से श्लोक पढती—

त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविड त्वमेव,
त्वमेव सर्व मम देवदेव ।।

इसके बाद अपनी अगुलियो पर ही वह एक सौ आठ बार गायत्री का जप करती——

ओ तत् सवितुर्वरेण्य, भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो न प्रचोदयात् ।

गौरी अपने जान बडे गद्‌गद् हृदय से भगवान् की भक्ति कर रही थी, लेकिन 'त्वमेव माता' वाले श्लोक को छोडकर जो प्रार्थना के वाक्य उसके मुह से निकलते थे, उनका वह अर्थ भी नही जानती थी । दस-पन्द्रह मिनट ही मे यह पूजा समाप्त हो जाती । उसे इतनी जल्दी समाप्त नही होना चाहिए, यही ख्याल कर उसने फिर अर्थसहित गीता के एक अध्याय का पाठ भी शुरू कर दिया । अब भी वह पर्याप्त मालूम होता था । इसी वक्त उसे अपने बचपन की याद आई । उसकी जीजी वन्दनकुमारी के पति धर्मभीरु पुरुष थे । वह रोज सन्ध्या-हवन किया करते । ससुराल मे आने पर भी उनका यह नित्य-नियम जारी रहता । गौरी अपने बहनोई की लाडली थी । वह भी उनके पास नहा-धोके बैठ जाती । सुनते-सुनते कितने ही गलत-सलत मन्त्र भी उसे याद हो गये थे । कुछ को उसने जीजा से पूछकर याद कर लिया था । अब उसने भी सन्ध्या के साथ हवन करने का निश्चय कर लिया । उसने चादी का एक छोटा सा हवनकुण्ड बनवाया, चादी ही का चमसा, चीमटा तथा पच-पात्र भी बनवा लिये । होम के लिए आम और चन्दन की लकडी मगवा लेती । लकडियो को छोटा करने के लिए पास मे बसला भी रख लिया । चन्दन की लकडी सुगन्धित सामग्री का काम देती, इसलिए हवन-सामग्री की जरूरत नही थी, वह सिर्फ घी की आहुतिया देती, कभी-कभी पचमेवा भी आग मे डाल देती । हवन वह गायत्री-जप के बाद किया करती थी । एक छोरी को सबेरे ही नहाकर बावडी या तालाब से शुद्ध जल लाने के लिए भेजती, और उधर हवन की सुगन्ध छत या घर से फैलती । अन्त पुर के सभी लोगो को मालूम हो गया था, कि ठाकुरानी भक्तिन हो गई है । सासू का जादू-मन्तर पर विश्वास अधिक था, लेकिन पूजा-पाठ उनकी शक्ति से बाहर की चीज थी । हाँ, बहू का नया ढग देखकर व्यग्य करती हुई वह कभी-कभी बोल उठती——"बीनणी पूजा भी करै ।" हवन-सन्ध्या का यह ढग सात-आठ वर्ष तक रहा ।

यदि पुराने विचारोवाली होती, तो इसमे शक नही, सगुन उपासना के बहुत

से तरीको को अपना सकती थी, लेकिन बुद्धिवादिनी और बचपन के ससर्गो के कारण उसके लिए वैसा करना मुश्किल था। एक साल पुष्कर मे उसने कार्तिक-वास भी किया। वहा के विशाल तालाब मे वह नहा जरूर लेती थी, किन्तु देव-मन्दिरो मे पूजा करने की जगह सन्ध्या-हवन और गीता-पाठ द्वारा ही अपनी भक्ति भगवान् के सामने दिखलाती। तुलसी-रामायण को उसने आदि से अन्त तक पढा था, लेकिन पीछे तो वह बालकाण्ड से अयोध्याकाण्ड तक ही रह जाती, और उसे भी भक्ति के लिए नही, बल्कि मनोरजक कथा के तौर पर पढती। हा, इस भक्ति-काल मे वह स्वय हारमोनियम बजाकर अपनी लौडियो से सूर और मीरा के गीत गवाकर सुनती। सुखसागर और प्रेमसागर का भी उसने पारायण किया। यह कह चुके है, कि भगवान् सगुण है या निर्गुण, इसके बारे मे कोई फैसला देना गौरी की शक्ति के बाहर की बात थी। बचपन की सुनी-सुनाई आर्यसमाजियो की तर्क-सम्मत बाते उसे बतलाती, कि भगवान् निराकार है, लेकिन फिर दूसरे यह भी बतलाते, कि निराकार भगवान् को ध्यान मे लाने के लिए मूर्ति की अवश्यकता होती है। इसके लिए वह कृष्ण का चित्र रखना पर्याप्त समझती थी। कभी-कभी उसका मन कह उठता—"जो कही भगवान् दर्शन देते।"

भक्ति का वेग इन सात-आठ सालो मे भी बराबर एक-सा नही रहता था। सन्ध्या-हवन, गायत्री-जप, गीता-पाठ करने पर भी मन नही लगता था। पीछे तो यह सब क्रियाए यन्त्रवत् होने लगी थी। साधु-सन्तो मे भी मन्दिरो और देवताओ की तरह ही उसकी विशेष आस्था नही थी। भक्ति करनेवाले सगे-सम्बन्धियो से वह पूछती—"भगवान् का दर्शन कैसे हो? भगवान् कहा है?" जवाब मिलता "अपने अन्दर देखो।"

× × × ×

उसके जीजा बलमू (मालवा) के कवरसाहब बडे धार्मिक विचारो के आदमी थे, वह वृन्दावन गये हुए थे। वहा उन्हे एक भगवान् का भगत मिल गया। लोग कहते थे—"वह पहुचे हुए सिद्ध है, भगवान् का उनको दर्शन हुआ है।" इन सबसे बढकर श्रद्धा पैदा करने की बात यह मालूम हुई, कि वह लखनऊ के कायस्थ-भक्त साथ ही एम० ए० पास भी ह। जीजा की उनके प्रति बडी भक्ति हो गई थी। उनके आग्रह पर आकर भक्तराज राजस्थान के अन्त पुरो मे भी भक्ति की गगा बहाने लगे। जब वह आते, तो पर्दा लग जाता। अन्त पुरिकाए पर्दे के पीछे बैठ जाती। भक्तराज का सबसे ज्यादा जोर था, कि भगवान् पति-भक्ति

द्वारा मिल जाते है, जैसे कि वह सावित्री को मिले थे। सोहागिनो को वह कहते—"पति की मूर्ति का ध्यान करो।" वह आख मूदकर अपनी श्रोतृमण्डली की अन्त पुरिकाओ से कहते—"आख मूदकर अपने पति का ध्यान करो। पहले दूसरी-दूसरी मूर्तिया ध्यान मे आयेगी, फिर धीरे-धीरे पति की मूर्ति स्पष्ट दिखाई देगी।" गौरी भी वहा बैठकर ध्यान करने की कोशिश करती। उसकी जीजी भी कभी-कभी ध्यान मे पति का दर्शन करती, लेकिन सबसे अधिक दर्शन जीजी की देवरानी को होता। गौरी को कोई दर्शन नही होता। लखनवी भक्तराज ने सख्त मनाही कर दी थी, कि सत्सग मे पासबान स्त्री न आने पाये। पासबान साधारण लौडियो मे से राजा या ठाकुर की कृपापात्र बनी हुई स्त्री होती है, उसके दिल मे भला पतिव्रत धर्म का बीज कैसे अकुरित हो सकता था, इसीलिए सत्सग मे उसकी उपस्थिति ध्यान मे बाधक हो सकती थी। भक्तराज अपने उपदेशो मे राम और कृष्ण की महिमा गाते, मीरा की अनन्य भक्ति की प्रशसा करते, सीता-पार्वती-अनुसूया की कथाए कहते यह हृदयस्थ करना चाहते, कि स्त्री के लिए पति ही एकमात्र देवता है। निश्चय ही ठाकुरो के सामने उनके उपदेश का ढग दूसरा होता होगा। वहा वह लिगभेद करके उसी उपदेश को दोहराते नही कह सकते थे, कि पुरुष के लिए पत्नी ही एकमात्र देवता है। ऐसा कहने पर शायद एक भी ठाकुर उनके सामने सिर झुकाने के लिए तैयार न होता। ध्यान धरने की बात करते समय वह बीच मे जमीन पर हाथ पटक-पटककर पूछते—"दर्शन हो रहा है, या नही ?" यदि "नही" की आवाज आती, तो कहते—"फिर आख बन्द करो।" फिर कोई कहती—"ध्यान तो आवे है, लेकिन कई मूर्तिया दिखलाई पडे।" भक्तराज कहते—"ध्यान धरो, अपने आप तुम्हारा शिर पति के चरणो मे झुक जायेगा।" सचमुच ही जीजी की देवरानी की तरह कुछ और भी स्त्रिया थी, ध्यान करते-करते जिनका स्वय शिर झुक जाता और वह ध्यानागत पति-मूर्ति को धोक करने लग जाती।

गौरी को दर्शन कभी नही हुआ। लेकिन, एक के दर्शन न कराने से भक्तराज की क्या क्षति हो सकती थी ? उन्हे लोग जसपुर भी ले गये, दासा भी ले गये। राजस्थान के और ठेकाणे और राजधानियो मे भी उनकी आवभगत होती थी। भक्तराज गर्व से पुरुषो को कहते—"हम तुम्हारी स्त्रियो को पतिभक्ति सिखला रहे है।" अभी भी शायद भक्तराज राजस्थान की अन्त पुरिकाओ को पति-भक्ति सिखलाने मे लीन है। दासा के ठाकुर ने जनपुर की राजमाता तक महात्मा के यश को फैलाया। स्वामीजी (भक्तराज) राजमाता द्वारा निमन्त्रित हो जनपुर मे उनके

भाई के यहा ठहरे। राजमाता रोज भक्तराज के दर्शन करने और उपदेश सुनने जाती, भक्तराज को भी महलो मे बुलाती। सचमुच ही राजमाता का शिर ध्यान मे उपस्थित हुए पति के सामने झुकने लगा था।

बहुत पीछे की बात है, जब गौरी नास्तिकता की तरफ बढ चुकी थी। स्वामीजी बहुत कोशिश करते, कि वह भी ध्यान मे आये पति के सामने शिर झुकाये। लेकिन ध्यान मे न पतिदेव आते थे, न शिर झुकता था, इसमे बेचारी गौरी का क्या दोष था? जीजी के लडके को कहते सुनकर स्वामीजी भी गौरी को मौसी कहकर पुकारते। एक बार उन्होने पूछा—"मौसीजी, पति से अलग रहकर सुखी हो या दुःखी?"

"मै तो सुखी हू, महाराज!"

"तेरी जबान से ऐसी बात कैसे निकलती है? तुझे तो रोना आना चाहिए।"

"मै अधीर होकर रोऊ भी, तो भी रोती के पास देवता नही आयेगा।"

स्वामीजी ने जमीन पर हाथ पटककर कहा—"बडी होशियार औरत है।"

स्वामी पैतालीस-पचास वर्ष का बहुत दुबले-पतले-से आदमी थे। धोती और खद्दर का कुर्ता पहनते थे। उनकी बडी-बडी मोछे थी, जो चेहरे के रोब मे वृद्धि तो नही करती थी। जान पडता है, उन्हे कुछ मेस्मेरिज्म के गुर मालूम थे, जिसके बल पर वह अन्त पुर की भोलीभाली स्त्रियो और कितने ही सीधे-सादे ठाकुरो को भी दर्शन कराने मे सफल होते थे। दासा के ठाकुर साहब ने अपने छोटे भाई को स्वामी के पास सत्सग और आचार सीखने के लिए भेजा था। कुवर साहब बडे बिगडे हुए आदमी थे। उनके साथ गौरी के पथ पर आरूढ उनकी पत्नी भी गई थी। दुश्चरित्र, दुष्ट पति के प्रति उसके मन मे जरा भी श्रद्धा नही थी। स्वामीजी जब सत्सग मे उस पर प्रभाव न डाल पाते, तो कठोर वचन से काम लेने लगते, जिसका जवाब वह भी उसी तरह टेढे शब्दो मे देती। स्वामी ने लडकी की शिकायत उसकी मौसी गौरी से करते हुए कहा—"वह अपने पति को कुछ नही मानती, ऐसा नही करना चाहिए।"

गौरी ने इस पर स्वामी के सामने दो टूक कह दिया—"आप एम० ए० पास है। मुझे आपसे कभी ऐसी उम्मीद नही थी। आप उसके पति को भली प्रकार जानते है, कि वह कितना आवारा है। पहले अपने सदुपदेश से उसे राम बनाइये, फिर उसकी पत्नी को सीता बनाने की आशा रखिए।"

गौरी के माकूल जवाबो को सुनकर स्वामी ने एक दिन तरुण कवर से कहा—

"परमराज, तेरी मौमी बडी समझदार है। मै कान पकडता हू, अब फिर इमे नही फटकारूगा ।"

आखिर जो लोग "दुनिया ठगिये मक्कर से, रोटी खाइये घी-शक्कर से" के महामन्त्र को माननेवाले है, वह लोगो को रिझाना भी अच्छी तरह जानते है। वह नही चाहते, कि बुद्धिवादी बिल्कुल ही उनके विरोधी बन जाय, इसलिए कभी किसी की बुद्धि की प्रशसा कर देना भी उनके हथकण्डो मे से एक है।

जनपुर की राजमाता ने स्वामीजी को बुलाया था। उनकी कृपा से उनके मृत पति के दर्शन द्वारा भगवान् का दर्शन भी हुआ। स्वामी अपने सत्सग मे आखे मीचकर बहुत गद्गद् स्वर मे गाता—"कित गये हो खेवनहार।" उस समय उसकी आखो से अविरल अश्रुधारा बहने लगती। अन्त पुरिकाए पर्दे के भीतर नही, बल्कि भक्तराज के सामने बैठी होती। इस करुण दृश्य को देखकर उनके ऊपर भी प्रभाव पडे बिना नही रहता। सत्सग बडे जोर का होता। भक्तराज जानते थे, कि भक्ति का आवेग एक-सा बराबर नही रहता, इसलिए उतार से पहले ही वहा से चल देना चाहते थे। राजमाता ने बहुत आग्रहपूर्वक कहा—"महाराज, दो-चार दिन और बिराजै।" भक्तराज विरक्त साध नही, बाल-बच्चेवाले थे, और सन्तानो के बारे मे भगवान् की उनके ऊपर बडी कृपा थी। चलते समय राजमाता ने दो हजार नगद और छ-सात सौ रुपये की एक साडी भक्तराज की पत्नी के लिए भेट की थी।

× × × ×

भक्ति के नशे के समय पूजा-पाठ गौरी की जारी थी। भगवद्-दर्शन की लालसा भी थी। वह 'कल्याण' भी मगाती थी, जिससे आधुनिक ध्रुवो और प्रह्लादो की बाते भी उसे मालूम होती थी, लेकिन भगवद्-दर्शन के लिए वह ऐसे लोगो के भुलावे मे अधिक नही पडती थी। उसके लिए वह किताबो के पन्ने उलटती। लेकिन, कही से भी कोई आशा की किरण आती नही दीख पडती, न मन मे शान्ति ही आती। पूजा-पाठ मे उसके बीस-पच्चीस मिनट से अधिक नही लगते, लेकिन वह पुस्तको के पढने मे अपना सारा समय लगाना चाहती। ठाकुर साहब जब घर मे होते, तो कभी बात करते, कभी शतरज खेलते। उनके अन्त पुर से बाहर जाते ही गौरी के हाथ मे पुस्तक आ जाती। भक्ति का भूत सवार होने पर भी बुद्धि-प्रधान होने से गौरी बहुत दूर तक नही जा सकती थी। अब भी वह कभी-कभी अपने पति के साथ शिकार मे जाती। मास को

उसने कभी नही छोडा। इस समय जिन धार्मिक पुस्तको को वह पढती थी, उनमें रामतीर्थ, विवेकानन्द के उपदेश और रामकृष्ण परमहस की जोवनी भी सम्मिलित थी। इन पुस्तको के हाथ मे आने पर रामायण और प्रेमसागर जैसी पुस्तके उसको फीकी लगने लगी। रामकृष्ण की जीवनी के पुराण जैसे गपोडो से विवेकानन्द के उपदेश उसे अच्छे लगते थे, और उससे भी स्वामी रामतीर्थ के प्रेम और भक्ति भरे उपदेश प्रिय मालूम होते। मीरा, प्रह्लाद और ध्रुव के सम्बन्ध की छोटी-छोटी पुस्तके उसके मन को बहुत दिनो तक अपनी तरफ नही खीच सकी। अपनी चिन्ताओ को भुलाने के लिए उसने उपन्यासो का पारायण भी शुरू कर दिया था। उसके प्रिय उपन्यासकार थे रवीन्द्रनाथ ठाकुर, प्रेमचन्द और शरत् चट्टोपाध्याय। 'सोहागरात' जैसी पुस्तके भी उसने पढी। पुस्तके कितनी ही खुद खरीदकर मगाती, और कुछ को पुस्तकालयो से लेती। सबेरे चाय के बाद आठ बजे पुस्तक हाथ मे लेती, यदि बहुत बडी नही हुई, तो ११ बजे तक एक उपन्यास खतम कर डालती। खाना खाने के बाद यदि अकेली रही, तो दूसरी किताब लेकर चार-पाच बजे तक पढती रहती। सर्दी के दिनो मे रात को भी पुस्तके पढा करती। ठाकुर साहब अपने रगीले जीवन मे रहते, इसलिए गौरी के लिए एकान्त समय दुर्लभ नही था। कभी-कभी तो वह रात को पढते-पढते पाच बजा देती—'दाखुदा' जैसी चार-पाच सौ पृष्ठो की पुस्तक को पूस के महीने मे एक रात मे करीब-करीब खतम कर दिया था—केवल पाच पृष्ठ रह गये थे कि आखे झपने लगी।

बेटी का चिन्तामय जीवन बाबोसा से छिपा नही था। वह कभी-कभी दामाद के साथ बेटी को मगलपुर बुला लेते। इस समय ठाकुर का ढंग थोडा-सा बदल जाता। गौरी कुछ निश्चिन्त सा जीवन बिताने लगती, लेकिन यह निश्चिन्तता वहा भी देर तक नही रह पाती। एक दिन ठाकुर ने अपनी ससुराल मे भी वहा की रण्डी रामकवार को बुलवाया। उनके प्रस्ताव पर रण्डी ने कहा—"अन्नदाता, मै तो माफी चाहती हू। जो सरदारो को पता लग गया, तो मेरी तनख्वाह बन्द हो जायेगी।" रामकवार ने इस बात को बाबोसा से भी जाकर कह दिया। बाबोसा ने अपने कर्मचारी हाशिम खा को भेजकर दामाद को समझाने की कोशिश की—"ऐसा करना ठीक नही है। लोग सुनेगे तो क्या कहेगे।" हाशिम खा ने बहुत नरमी और नम्रता के साथ बात कही थी। तो भी दामाद साहब रूठकर ससुराल से भागने के लिए तैयार हो गये। बाबोसा ने जाकर उन्हे बहुत कह-सुनकर मनाया। दामाद साहब रह तो गये, किन्तु हाशिम को वह क्षमा करने के लिए तैयार नही थे। पीहर मे गौरी को पर्दा करने की अवश्यकता नही थी, और वहा

लोगो के रहने के समय भी वह बाबोसा के पास चली जाया करती थी। पतिदेव ने हुकुम दिया—"तुम जब तक बाबोसा के पास मत जाया करो, तब तक कि हाशिम वहा से बाहर न चला जाये।" इस पर गौरी ने जवाब दिया—"सबके रहते मैं केवल हाशिम को बाहर जाने के लिए कैसे कह सकती हू ? ऐसा कहने पर लोग क्या कहेगे।" इस पर भी पतिदेव नाराज हो गये। नाराज होना-रूठना उनके लिए मामूली सी बात थी, ऐसा मौका बराबर ही निकल आता। वह चाहते थे, दिन मे भी पत्नी उनके साथ रहे, लेकिन अभी तो नया जामाना आया नही था, और मगलपुर तो और भी इस बात मे सनातनी था। जब पत्नी आने मे सकोच प्रकट करती, तो वह फिर गाल फुला बैठते।

दामाद का मन बहलाने के लए बाबोसा (१९३३ मे) पन्द्रह-बीस दिन तक अपने गावो मे साथ-साथ ले गये। दामाद साहब को लोगो ने नजरे दी, जिसमे तीन हजार रुपये मिले। राजपूतो और कायमखानी कामदारो ने दामाद को सिरोपाव भी दिये। सब मिलाकर ससुराल मे रहते समय गौरी को अपने पति से उतना परेशान नही होना पडता। लेकिन वह बराबर ससुराल मे तो रह नही सकते थे। खलपा आने पर फिर वही बात और ज्यादा जोर से दुहराई जाती। गौरी ने सोचा शायद रोक लगाने से जोर बढता है, इसलिए उसने रोक हटा दी। लेकिन उसका फल कोई अच्छा नही हुआ। वैसे तो पहले वह आख बचाकर रण्डियो और दूसरी औरतो को बुलाते थे, अब वह जनपुर मे रहते समय पत्नी के ऊपर रहते भी नीचे की मजिल मे उन्हे बुला लेते। व्याधि असाध्य थी, इसमें सन्देह नही।

गौरी कई सालो से बीमार चली आई थी,उसका स्वास्थ्य गिरता जा रहा था। आखिर सलाह हुई कि नसीराबाद के डाक्टर तारा के पास चिकित्सा करवाई जाय। इसके लिए १९३३ मे गौरी नसीराबाद जाकर डाकबगले मे ठहरी। मा, वकील शिवलाल और कुछ दूसरे नौकर-चाकर भी साथ थे। डाक्टर तारा के कहने पर आपरेशन कराया गया। पत्नी इस अवस्था मे थी, लेकिन पतिदेवता को इसकी कोई चिन्ता नही थी। उनकी महफिले गरम रहती थी—रण्डिया नाचती थी, शराबो की बोतले खनखनाती थी। आपरेशन का घाव भी भरा नही था, कि ठाकुर साहब एक दिन मोटर पर आये। वहा आकर देख-भाल क्या करते ? वह अजमेर से हजार-बारह सौ की चीजे अपनी प्रेमिकाओ को देने के

लिए खरीदकर लौट गये। मा को दामाद का यह स्वभाव बहुत दु खद मालूम होता था। बेचारी को उनकी महफिलो का कुछ पता नही था।

गौरी को अपना जीवन नीरस और दुर्भर मालूम होने लगा था। डाकबगले के भीतर ही आपरेशन का इन्तिजाम किया गया था। बेहोशी के लिए क्लोरोफार्म सूघते समय वह भगवान् से प्रार्थना भी कर रही थी—"हे भगवान्, मै ऐसी बेहोश हो जाऊ, कि फिर न उठू।" अपने दु खमय जीवन मे आत्महत्या का ख्याल गौरी को बराबर आता रहता, लेकिन उसे आत्महत्या का कोई सरल उपाय नही मालूम था। कभी सोचती—यदि आत्महत्या की कोशिश करू और सफल न होऊ, तो लोग हसेगे। हीरे की कनी चाटकर मरने की बात उसने सुनी थी, लेकिन हीरे को अपने जेवरो मे वह पहना करती थी, उसे विश्वास नही था, कि इस काच जैसी चीज को चाट लेने पर आदमी मर सकता है। उसने सोचा—"इसे पीसकर चूरा बना लू, फिर खा लेने पर शायद मौत आ जाय।" लेकिन इस पर भी उसे विश्वास नही होता। अफीम खाना राजस्थान मे आम बात है, और वह दुर्लभ भी नही है, लेकिन उसे भी वह पूरे विश्वास के साथ पी नही सकती थी। कुए मे डूबकर मरने का ख्याल इसलिए छोडना पडता था, कि वहा से मेरी लाश को न जाने कैसी सूरत मे निकालेगे। नदी मे डूबकर बह जाने को वह ज्यादा पसन्द करती थी, लेकिन एक बार ऋषिकेश मे जमादार ने कहा—"बहती हुई लाश आई है।" गौरी उसे देखने के लिए उतावली हो गई। जाकर देखा—लाश फूली हुई थी, चमडी गल गई थी, कई जगह से मच्छियो ने उसे खा भी लिया था। अपनी लाश की ऐसी दुर्गति कराना गौरी को पसन्द नही था। कभी-कभी वह पहाड से कूदने की भी सोचती। कभी मन मे आता—भागकर ऐसी जगह चली जाऊ, जहा किसी को खबर भी न लगे, लेकिन फिर मा-बाप के नाम का ख्याल आता। आत्महत्या का वह सबसे सरल तरीका चाहती थी, किन्तु किसी अमोघ औषधि का उसे पता नही था, न यही जानती थी, कि वह कैसे मिलेगी।

जीवन बडी बहुमूल्य चीज है, यह बात गौरी नही समझ सकती थी। वह तो किसी मूल्य पर भी इस जीवन से पिण्ड छुडाने के लिए तैयार थी। उसे यह पता नही था, कि जिस जीवन को वह तुच्छ समझती है, उससे दूसरो का उपकार हो सकता है। दुनिया मे बहुत से अभागे बच्चे-बच्चिया है, गौरी अपने जीवनरूपी जल से सीचकर उनको जीवनदान दे सकती है, गरीबो की सेवा कर सकती है, बीमारो की सुश्रूषा कर सकती है, या अपनी जैसी अभागी अन्त पुरिकाओ को दीर्घ कारा से मुक्त करने के लिए मैदान मे खडी होकर उनके अत्याचारी पुरुषो को

ललकार सकती है। वह आग की मशाल हाथ मे लेकर इन सडे-गले अन्त पुरो को जलाकर भस्म कर सकती है। जब आदमी को अपने प्राणो का मोह नही, तो वह क्या नही कर सकता ? जिस जीवन को वह तुच्छ समझ रही थी, उससे वह बारूद के चूर्ण का काम ले सकती थी। निराशा मे पडकर लाखो अन्त पुरिकाओ ने आज तक अपने प्राण छोडे, या अध पतन का रास्ता लिया। गौरी जैसी बुद्धि-वादिनी, उच्चाशया महिला के लिए यह दोनो ही रास्ते वाछनीय नही हो सकते थे। उसे तो दूसरो के लिए रास्ता दिखलाने की जरूरत थी। यह अवश्य है, कि राजस्थान भारत का सबसे पिछडा और गया-बीता भूभाग है। वह उसके रास्ते मे भयकर बाधा उपस्थित करता, लेकिन इससे क्या ? यदि तुम्हे अपने जीवन का उत्सर्ग करना ही है, तो किसी अच्छे उद्देश्य को अपने सामने रखकर उसे छोडो—सफलता मिले या न मिले, उसकी परवाह मत करो—"यत्ने कृते यदि न सिध्यति कोऽत्र दोष ।" राजस्थान की स्थिति भी अब वही नही है।

जब पूजा-पाठ और भक्तिभाव से मन को शान्ति और सन्तोष नही मिला, तो वह अपने आप धीरे-धीरे छूटने लगी। सन्ध्या-हवन भी छूट गया। गीता का पाठ भी बन्द हो गया। कही सुना या पढा था, कि अजपाजाप और षट्चक्र के ध्यान से मन को शान्ति मिलती है, भगवान् का दर्शन होता है। उस पर भी कुछ समय खर्च किया। शरीर के भीतर से भिन्न-भिन्न भागो मे अवस्थित चक्रो मे बतलाये हुए देवताओ का ध्यान किया, लेकिन कोई लाभ नही हुआ। श्रद्धालु कह सकते है, कि कोई ठीक गुरु नही मिला, लेकिन शायद दूसरो के लिए कुछ ठीक गुरु भी गौरी के लिए कच्चा ही उतरता, क्योकि वह श्रद्धाप्रधान नही, बल्कि बुद्धिप्रधान थी। जनपुर मे स्वामी महानन्द की बडी पूजा होती थी। वह स्त्रियो से पर्दा करता था। बाहर घूमते समय कोई स्त्री सामने न आ जाय, इसके लिए आखो मे पट्टी बाधकर चलता था। अन्त पुरो मे भी उसके उपदेश की बडी धूम थी। जब वह वहा पहुचता, तो तुरन्त आवाज दी जाती—"सभी एक कमरे मे हो जाओ, महाराज पधार रहे है।" महाराज के पधारते ही भेड-बकरियो की तरह अन्त पुरिकाए और परिचारिकाए एक कमरे मे बन्द कर दी जाती। किसी-किसी की इच्छा महाराज के दर्शनो की होती, तो वह उसी तरह दर्शन कर पाती, जैसे कभी अलाउद्दीन ने पद्मिनी का दर्शन पाया था—शीशे मे दर्शन करने के लिए अन्त पुरिकाए गौरी से भी कहती, किन्तु उसका जवाब था—"जब वह हमसे छिपना चाहता है, तो हम क्यो उसका दर्शन करने जाये।" राजमाता की बहिन कहती—"श्रद्धाभक्ति से महाराज के उपदेश

सुनो"। गौरी जवाब देती—"जब इस आदमी का मन इतना कमजोर है, कि वह अपनी आखो पर पैंट्टी लगाकर चलता है, तो इसके उपदेश से हमारा हृदय कैसे मजबूत हो सकता है ?" लेकिन यही समय था, जब कि राजस्थान मे महानन्द की ठाकुरो, राजाओ और अन्त पुरिकाओ पर भारी धाक थी। वह पहुचा हुआ सिद्ध था, साथ ही धर्म के उद्धार के लिए ठाकुरो और राजाओ के स्वार्थो का भारी रक्षक बना हुआ था। वह गाधी के जीवित रहने को देश और धर्म के लिए घातक समझता था। उसके भक्त महात्मा गाधी की हत्या पर अपने हृदयोल्लास को प्रकट किये बिना नही रहे। गोडसे भी वहा कितने ही समय तक रहा था। महात्मा की हत्या पर डरके मारे महानन्द और उसके बहुत से चेले ठाकुर कितने ही समय तक छिपते-फिरते रहे।

भक्ति के लिए प्राणो तक न्योछावर करने के लिए भी तैयार गौरी को इन सात-आठ वर्षो मे बहुत से कडवे मीठे तजर्बे करने पडे। अन्त मे श्रद्धा उसका साथ छोडने लगी। उसे इसमे भी भारी सन्देह मालूम होने लगा, कि ईश्वर नाम की कोई चीज दुनिया मे है भी। सोचने लगी, धर्म और भक्ति ढोग के सिवा और कोई चीज नही हो सकती। लेकिन यह सब विचार उसके अपने अशान्त हृदय को अवलम्ब कैसे दे सकते थे ? जीवन की समस्याए "तन्न, तन्न" कहकर हल तो नही की जा सकती।

अध्याय १६

निर्बुद्धियों की पौध

पितामहो से चली आती मानसिक वरासत या आनुवशिकता (बपौती) के लिए व्यक्ति को कैसे दोष दिया जाता है ? आनुवशिकता एकमात्र उसका कारण नही है, इसमे सन्देह नही, और आनुवशिकता मे एक बार बुराई अगर आ जाये, तो उसमे परिवर्तन नही हो सकता, यह भी ठीक नही, क्योकि एक ही पिता-माता की सन्तानो मे सन्तानोत्पत्ति हमारे यहा होता नही। तो भी यह तो कहना ही पडेगा, कि आम तौर से राजा और ठाकुर परिवारो मे जो हीन आनुवशिकता की प्रधानता देखने मे आती है, उसमे परिवर्तन हो जाता, यदि कुलीन लडकियो का ख्याल छोडकर साधारण किसान-पुत्रियो को अन्त पुरिका बनाते, लेकिन वहा तो आग्रह है—रानी या ठाकुरानी को अवश्य कुलीन होना चाहिए। पासबान के तौर पर दूसरी जात की साधारण स्त्री भी अन्त पुरिका बनाई जा सकती थी, किन्तु उसकी सन्तान को ठाकुर या राजा बनने का अधिकार नही था, इसलिए आनुवशिकता मे शुभ परिवर्तन लाया कैसे जा सकता है ?

खलपा मे सात पीढी से ऐसे ही लडके-लडकिया पैदा होते रहे, जिनको बौद्धिक-सम्पत्ति बहुत कम मिली थी। इसका अपवाद केवल तीन-चार पीढी पहले के ठाकुर सामसिंह ही थे। वह बडे योग्य थे। खलपा के ठाकुर-कुल मे जो भी कोई स्मरणीय चीज देखी जा सकती थी, वह ठाकुर सामसिह की बदौलत ही। अग्रेजो ने प्रसन्न होकर उन्हे रायबहादुर की पदवी, एक किरच और एक पिस्तौल भी प्रदान की थी। जब कोई वायसराय जनपुर आता, तो खलपा के ताजीमी सरदार उस किरच और पिस्तौल को लगाकर सलामी देने जाते, और उनको इस बात का बडा अभिमान था, कि उस किरच को देखते ही वायसराय अपनी टोपी उतारकर सलामी लेता। ऐसा होने पर वह अपने को धन्य-धन्य क्यो नही समझते। केवल पिता की ओर से ही अल्पबुद्धिता की वरासत नही मिलती थी, बल्कि जान पडता है, खलपा की ठाकुरानिया भी चुनकर कुछ इसी तरह की मत्थे मढी जाती थी। गौरी की अपनी सास उसके ब्याह से सात वर्ष पहले मर गई थी,

वह भी इसी तरह की भोली (बुद्धिहीना) थी। सौतेली-सास की बात बतला ही आये है। सुसर भी वैसे ही थे, और तीनो ननदो मे एक से एक बढ-चढकर बुद्धिहीनता की प्रतियोगिता करने के लिए तैयार थी——तीसरी ननद तो उन सबमे बाजी मार ले गई थी।

× × × ×

तीसरी ननद के जनमने के दो-तीन घण्टे बाद ही उसकी मा मर गई थी। तब तक खलपा के ठाकुर साहब ने दूसरा विवाह नही किया था। बच्ची को बारह-तेरह दिन किसी दूसरे का दूध पिलाकर खलपा मे न रख नानी के पास उग्रपुर के ठेकाणे देसार मे भेज दिया गया। गौरी की शादी के समय वह सात वर्ष की थी, और अधिकतर ननिहाल मे रहती थी। वह मालरी न बोल मेसाली भाषा बोलती थी। ननिहाल मे बिना मा या बाप की लडकियो का रहना राजस्थान मे साधारण सी बात है। नानी-नाना और मातुलकुल प्राय उनके साथ अच्छा बर्ताव करता है, शायद ही कोई मामी हो, जो भेदभाव रखती हो। अक्सर यही देखा जाता है, पुरुष, इसमे शक नही, सर्वतन्त्रस्वतन्त्र होने से स्त्रियो के जीवन को नरक बना देते है, लेकिन कभी-कभी इसका अपवाद भी मिलता है, जब कि स्त्री अपने सामन्त पति को रुला-रुला छोडती है।

ननद अब पन्द्रह साल की हो गई थी। उसके ब्याह की बातचीत चल रही थी। बीच-बीच मे वह कभी-कभी अपनी भाभी के पास थोडे दिनो के लिए आ जाती। भाभी को चिन्ता हुई——उसे पराये घर जाना है, इसलिए कुछ सीख-गुन लेना जरूरी है। ब्याह के दो वर्ष रह गये थे, उसी समय गौरी ने उसे ननिहाल से बुला लिया। उसे अक्षर भर पढाये गये थे। वह चिट्ठी भी नही लिख सकती। यह भी नही जानती थी, कि एकन्नी मे चार पैसे होते है। उसे अपने पास जनपुर में रख, पढाने के लिए एक मास्टरनी रख दी। वह कुछ भी नही पढ सकी। मास्टरनी से गौरी ने अलबत्ता उर्दू सीख लिया। लेकिन, ननद बेचारी क्या करे, उसको कोई चीज याद ही नही होती थी। जहा तक राजवशो और ठाकुरवशो का सम्बन्ध है, सलमाडा, बागर, जसपुर, मालर, मेसाल, मालवा और गुजरात एक ही प्रदेश है। उनमे आपस मे बराबर ब्याह-सबध होता आया है। ननद का ब्याह गुजरात के (घरहा) के राजा के परिवार मे होने की बातचीत हुई। ससुर जसपुर के महाराजा माखनसिह के साले थे और जसपुर मे उच्च-कर्मचारी रह चुके थे। उनके पास खूब पैसा था। लडके की मा ने कहा——"मै तो लडकी को देखकर

ब्याह करूगी ।" भाभी ने इसे स्वीकार कर लिया । वह अपनी ननद को लेकर अजमेर गई और उधर घरहा के मारूसिह झामा की ठाकुरानी भी लडकी देखने अजमेर पहुची । ननद के भाग्य का फैसला होनेवाला था, इसलिए भाभी को बडी चिन्ता थी । "एक तो करेला दूसरे नीम पर चढा" की कहावत थी—मेसाल राजस्थान मे सबसे पिछडा प्रदेश समझा जाता है, वहा के उच्चकुल चाल-बात मे बहुत ही उजड्ड और अक्खड माने जाते है । ननद वही पाल-पोसकर बडी हुई थी । उसे साडी भी पहननी नही आती थी, इसलिए भाभी ने यही उचित समझा कि जातीय (मारवाडी) पोशाक पहनाकर ले चले । देखने मे लडकी बुरी नही थी, और न उसका स्वास्थ्य ही खराब था । खूब समझा दिया, कि तुम वहा बोलना नही । बोलने पर पर्दाफाश हो जाता । खैर, घाघरा-चुनरी और अपने कीमती जेवरो को पहनाकर भाभी धडकते दिल से ननद को बैठक मे ले गई । चाय आई और तश्तरी मे मिठाई भी । सास ने तश्तरी की मिठाई पहले भाभी के सामने की, उसने एक ले ली, वहा उपस्थित दूसरी ठाकुरानी ने भी एक निकाल ली, मास्टरनी ने भी एक लिया । जब तश्तरी सत्रह वर्ष की ननद के सामने गई, तो उसने तश्तरी को ही पकड लिया । वह उसे छोडे ही नही । भावज का मुह फक हो गया । उन्हे मालरवालो की कहावत सच मालूम होने लगी—"गदहिया बनाना हो, तो लडकी को मेसाल भेज दो ।" भावज ने सम्हलकर ननद को कहा—"तुमे जो जरूरत हो, ले लो", यह कहकर उसकी प्लेट मे एक मिठाई रख दी । खैर, ननद ने प्लेट छोड दी । सास को कुछ खटका तो हुआ, लेकिन चेहरा-मुहरा अच्छा देखकर उन्होने समझ लिया, कि शायद लडकी अपरिचित के सामने घबरा गई । अभी तक लडकी ने एक बात भी मुह से नही निकाली थी । कही वह गूगी न हो, इसलिए उसने भाभी से कहा—"इसे बुलवाओ तो ।" भाभी ने डरते-डरते 'बाईसा' कहकर पुकारा । ननद ने उत्तर दिया—"कई भाभीसा (क्या है भाभीजी) ।" वह आगे नही बोली । जवाब बहुत माकूल था । सास ने अपनी भावी बहू को पसन्द कर लिया ।

फिर लेन-देन की बात शुरू हुई । यदि लडकी का बाप काफी रकम देने मे असमर्थ है, तो वह अपनी लडकी का ब्याह नही कर सकता । ससुर ने टीका की बातचीत होने पर कहा—"हम टीका नही लेगे, केवल वर के लिए हीरे का सिर-पेच, हीरे की अगूठी, मोती-माणिकका एक बढिया कण्ठा और सिरोपाव, तथा ससुर और उसके एकाध नजदीकी भाई-बन्दो को अच्छा सिरोपाव दे देने से काम चल-जायेगा ।" खलपा से दस-ग्यारह आदमी वह सभी चीजे लेकर जब टीका चढाने

गये, तब ससुर ने त्योरी बदल दी और कहा—"ऊपर से तेरह हजार रुपया और दो, तब हम तिलक लेगे।" वहा से इस बात का तार आया। ठेकाणा तो कर्जदार था, वहा कहा इतने रुपये रक्खे थे। खैर, वकील शिवलाल ने दस हजार रुपये अपने पास से और तीन हजार कर्ज लेकर भेजे, तब तिलक चढी। ब्याह से पन्द्रह-बीस दिन पहले वरपक्ष के आदमी आये, और उन्होने कहा, कि हम सब जेवर देखेगे और हर एक को तोल-तोलकर अन्दाज लगायेगे। जेवर इतना कहा रक्खा हुआ था? भावज ने अपना जेवर आदमियो को दिखला दिया और आदमियो ने उसे तौल भी लिया। वह खुश होकर चले गये। ब्याह की सब बात पक्की हो गई।

ननद बे-मा-बाप की लडकी थी। भावज को बडी फिकर थी, कि कोई ऐसी बात न हो, जिससे लोग समझे, कि बिना मा-बाप की लडकी के ब्याह मे भाई और भावज ने कुछ भी हौसला नही दिखलाया। ठाट-बाट से ब्याह करने का निश्चय कर लिया गया, चाहे उसके लिए ठेकाणे का कुछ भी क्यो न हो। ब्याह जनपुर मे होता तो बहुत सुभीता था, लेकिन खलपा मे ही करने का निश्चय करना पडा, और सब सामान जनपुर से मगाया गया। महीने भर पहले से ही लारिया सामान ढोती दिन मे चार-चार फेरा लगाने लगी। वही से तम्बू-शामियाने मगवाये गये और सभी तरह की खाने-पीने की चीजे भी आई। जेवर-कपडा छोड बीस हजार खर्च आया, जिसमे तीन हजार तो ह्विस्की पर खर्च हुए। वकील शिवलाल और कामदार मानूराम इन्तजाम पर लगे। कई नजदीकी सम्बन्धी भी हाथ बटाने आये, जिनमे रोमे के ठाकुर भी थे।

औरा गुजरात-अजमेर रेलवे लाइन के ऊपर है। बरात वहा समय पर पहुची और समय पर ही वह खलपा भी आ गई। बरात की शोभा के लिए जसी और रामकवार जनपुर से नाचने आई थी। महफिल लगी। जनपुर के कितने ही ताजीमी सरदार और दूसरे गण्यमान्य सज्जन महफिल मे बैठे हुए थे। भावज काम मे बडी व्यस्त थी, लेकिन इस वक्त सोचा, छत पर से चलकर जरा महफिल को देखे। वह ऊपर चली गई। इधर विवाह-मण्डप मे बीद और बीनणी बैठाये गये थे। तुम्हे ही कन्यादान देना है, यह बात गौरी से पहले नही कही गई थी। उसे क्या मालूम था, कि लोग चारो ओर उसे ढूढ रहे है। अन्त पुर का एक-एक कोना ढूढ लिया गया, लेकिन ठाकुरानी का कही पता नही था। उग्रपुरवाली ननद कहने लगी—"जेवर-कपडे पहने थी, कही भाग तो नही गई।" यह गौरी के ब्याह के दस वर्ष बाद (१९३५ ई०) की बात है। यद्यपि गौरी का जीवन जर्जर हो गया था, और वह जीवन से ऊब भी गई थी, लेकिन जेवर पहने भाग जाने का ख्याल वैसी ही स्त्री

कर सकती थी, जो कि भागवाले कुए मे पैदा हुई हो। सयोग से कोई छोरी भी शायद महफिल देखने के ख्याल से ही छत के ऊपर आई, और वहा उसने अपनी अन्नदाता को देख लिया। उससे सारी बात मालूम हो गई, और भावज ने दौडी-दौडी नीचे जा ननद का कन्यादान दिया। व्याह हो गया। बरात जनवासे चली गई। उसे तीन दिन तक रक्खा गया। रोमे के ठाकुर ने भी वाहवाही लेनी चाही। उन्होने कहा—"हम अपने यहा बरात के लिए चाय-पार्टी करेगे।" प्रबन्धक तो वह ही थे, और भण्डार मे चाय-पार्टी के लिए काफी से अधिक सामान बच रहा था। उन्होने कामदार को कहा—"जल्दी-जल्दी मे हम चीजे नही मगा सकेंगे, इसलिए लारी पर यही से सामान भेज दो।" सारा सामान खलपा से गया और रोमे के ठाकुर ने अच्छा परमुण्डे फलाहार कराया।

हा, बरात के बिदा होने से पहले वरपक्ष ने जब दहेज की चीजे देखी, तो उन्होने कुछ चीजो की कमी बतलाई—चादी का विशाल स्नानपात्र (जगाल, कुण्डी) नही था, चादी का एक घडा भी नही था। इसके बाद जडाऊ जेवरो की माग की। गौरी जानती थी, कि सूची मे लिखी एक-एक चीज को लिये बिना बराती जान नही छोडेगे, इसलिए उसने उग्रपुर से जडाऊ जेवर भी मगवा लिये थे। ठेकाणे के कर्ज के ख्याल से सोचा था, जितना ही कम खर्च हो उतना ही अच्छा। जडाऊ जेवरो का दाम भी नही दिया था, सोचा था, यदि नही देना पडा तो जौहरी जेवर लौटा लेगा। गुजराती ठाकुर भी कम चट नही थे। जब वह जेवरो को मागने लगे, तो खलपा के ठाकुर को "क्या करे" यह सूझ नही पड रहा था। वह अपनी ठाकुरानी के पास पहुचकर रोने लगे—"अब तो इज्जत गई, जेवर तो हमने मगाया नही।" ठाकुरानी ने कहा—"तुम उसके लिए कोई अदेसा न करो, सब चीजे सजोई रक्खी है।" उन्होने जेवर की पेटी निकालकर दे दी, तोसाखाने से चादी का जगाल और घडा भी निकालकर दे दिया। बरात दुलहन को लेकर खुशी-खुशी बिदा हुई।

बाईजी गुजरात मे अपने ससुराल गई, उनके लच्छन एक-एक करके खुलने लगे। सास छाती पीटकर कहने लगी—"मेरी लडकी के बराबर की ठाकुरानी ने मुझे ठग लिया, मेरे गले मे कण्ठी बाध दी। मै तो कभी ऐसी नही ठगी गई थी। सलमिया बडी चट होती है।" लेकिन अब तो कण्ठी गले वध गई थी। उलाहना देने पर भावज कह सकती थी—"मैने तो ननद को दिखला दिया था, और तश्तरी पकडते वक्त कुछ लच्छन भी प्रकट हो गये थे, तुमने तो रुपयो के लालच से सब कुछ किया।"

तीन-चार महीने ससुराल रहकर ननद अपने मायके आई । खलपा से जो लौडिया साथ आई थी, वह वहा की सारी बात कहती थी । ससुरालवाले बडे धनी थे । उनका महल धरहा के शिवपुर गाव मे था । महल के एक कमरे मे चादी का झूला पडा हुआ था, दूसरे मे सोने का । पति इगलैण्ड मे पढकर आया था, और उसे ऐसी बहू मिली थी । बहू टट्टी मे गई, तो वही ससुराल मे मिली हीरे की अगूठियो को निकालकर खेलने लगी और वही छोड भी आई । पीछे जमा-दारिन ने लाकर दे दिया । उसे किसी बात की सुधबुध नही थी, इसलिए सास बहू को जेवर पहनाने मे सकोच करने लगी । गौरी ब्याह से पहले अपनी ननद को कहती—"पढ लो, तुम्हारे ससुराल मे लोग पढे-लिखे है, बीद विलायत पढके आया है ।" उस समय ननद छोरियो से कहती—"भाभीसा पढने को कहती है, म्हारा तो बीद हमे पढायेगा, वह विल्लायत पढके आया है ।"

ननद आधी पागल तो पहिले ही से थी, इसलिए उसके बारे मे छोरियो ने जो-जो बाते बतलाई, उनके लिए आश्चर्य करने की जरूरत नही । दोपहर के समय जब भाभी किताब लेकर पढने बैठती, तो ननदरानी छोरियो के पास चली जाती और वहा उनके साथ मिलकर गेहू चुनती, या किसी छोरी के सिर से जुए निकालती । भावज शरम के मारे गडी जाती—"बाहर की कोई स्त्री आयेगी, तो ननद को देखकर यही कहेगी, कि बिना मा की लडकी है, इसलिए भावज उससे छोरियो की तरह काम लेती है ।" 'ननद को कितना ही समझाती, लेकिन उसको उसकी कोई पर्वाह नही थी । नहाने से ननद को सबसे अधिक चिढ थी, और जब तक भावज पास बैठ नही जाती, तब तक वह नहाती नही । भोली-भाली ननद की मेसाली भाषा को सुनकर अन्त पुरिकाए लोटपोट हो जाती । जब वह पूछती—"बाईसा, रसोई मे क्या-क्या बना है ?" तो ननद जवाब देती—"दार-झोर (दाल-गोश्त), कोरो-मूरो (कुम्हडा-मूली) ।" जब उनसे पूछते, कि तुम्हारे खाने के लिए क्या बनवाये; तो बडी प्रसन्नता के साथ कहती—"लोणरा चौका (नमकीन चावल)।" उसकी बाते हसानेवाली होती थी, और आधी-आधी रात तक उससे बात करते अन्त पुरिकाए आनन्द लेती रहती । वह कभी अपनी भाभी को आठ वर्ष का कहती और अपने को तीस वर्ष की और कभी कुछ और । काम सीखने का यह हाल था, कि सूई मे डोरा डालना भी उसके लिए असम्भव था । कोई खाना बनाना नही जानती । हा, नाच-गाना और छोरियो की तरह ही कर लेती और वह बुरा नही होता । इधर ससुराल मे तीन-चार महीने रहकर वहा के भी दो-एक नाच-गाने सीख आई थी । भाभी के कहने पर ननद तीन छोरियो को लेकर घूम-घूमकर गुजराती

नाच दिखलाती। मालरी-गुजराती मिला हुआ एक गाना भी गरबा की तरह चक्कर मे घूमते गाती——"मेतली तम केम आई, म्हारो री हजारी ढोलो।" ढोला-मारू की प्रेम-कथा राजस्थान मे इतनी प्रसिद्ध है, कि कृष्णकन्हैया की तरह ढोला भी पति का पर्याय माना जाता है। बारह-बारह बजे रात तक नाचते-हसते रहना उसके लिए मामूली बात थी। जब उससे सास के बारे मे भाभी पूछती, तो जवाब देती—— "सास तो राड खोट्टी है।" और अपने पराक्रम को बडे अभिमान से बखान करती——"एक बार सास दूध औटती मुझमे झगड रही थी, मै एक लकडी लेकर दौडी, तो वह चुप हो गई।" सचमुच ही लौडियो ने दौडकर पकड लिया, नही तो मालरी बहू गुजरातन सास का सिर फोडे बिना न रहती।

एक बार भाभी अपने ननिहाल जसपुर मे ननद को भी लेकर गई। वहा मामी—हिम्मतसिह की बहू ने ननद के ढग को देखकर अपनी भाजी से कहा—"हेवो बना, आपरा हेड्‌ हाऊ ने नणदा एडा क्यो है (हा जी बेटी, आपकी सब सास और ननदे ऐसी क्यो है)?" गौरी ने मामी से कहा——"यह बात तो आप मामोसा से पूछे। उन्होने ही तो मुझे उस कुल मे ले जाकर पटक दिया, उस समय तो आप सब हा-हा करते रहे, और अब मुझे अकेली को सब भुगतना पड रहा है।" गौरी के ब्याह कराने मे सबसे अधिक हाथ मामा हिम्मतसिह का था, यह पहले कह आये है। ननद को थोडी देर भी देखकर आदमी समझ जाता, कि वह कैसी है। वह हसती, तो हसती ही रह जाती। उसकी आखे भी देखने मे पागलो-जैसी मालूम होती।

दूसरी बार ससुराल जाने पर ननद को एक लडका हुआ, उसके बाद ससुर मर गया और घर के मालिक कुवरसाहब हुए। फिर एक और लडका हुआ, जिसके बाद सास भी मर गई। पति बुरा नही था। वह सब कुछ जानते हुए भी भाग्य पर सन्तोष करने के लिए तैयार था, और अपनी पत्नी को अच्छी तरह रखने की कोशिश करता। छ-सात वर्ष तक दूसरी शादी नही की, फिर उसने दूसरी शादी कर ली। इधर ननद के पीहर मे भी अब स्नेहमयी भाभी के ऊपर एक दूसरी ही तरह की सौत आ गई थी, जो अपनी ननद के साथ बडा बुरा बर्ताव करती थी। ननद अपने दोनो बेटो को गुजरात मे सौत के पास छोडकर पीहर मे ही अक्सर रहने लगी। और नई भाभी अपनी ननद को नौकरानियो की तरह ही रखती, उन्ही मे मिलकर वह काम करती, उन्ही का खाना उसे दिया जाता। ससुरालवाले पगली बहू को क्यो अपने पास बुलाने लगे? वह बेटो को भी उसके पास नही भेजते थे। नई भाभी बहुत दुख देती, तो ननद कहती——"हमे बडी भाभीसा के पास भेज दो, मै उनके

पास जाऊगी ।" १९५० मे ननद के पति के मरने का तार आया। उस समय क्वार के नौरते हो रहे थे। खबर होने पर त्योहार की चहल-पहल रोकनी पडती, इसलिए सौत भाभी ने तार को दबा दिया और नौरतो के बाद भी ननद को बिना बतलाये ही चुपचाप भाई-भावज ने ससुराल भेज दिया। बेचारी को मालूम नही था, कि वह अब विधवा है। उसके साथ सात लौडियो को भी विधवाओ के काले कपडो के साथ भेज दिया। अब खलपा के गढ मे दामाद के मरने का शोक मनाया जाने लगा। नवविधवा के "कोने मे बैठने" की विधि पूरी होने पर फिर ननद को खलपा बुला लिया गया। लेकिन भावज दूसरे की बला को अपने शिर लेने के लिए तैयार नही थी, और उसने ननद को बिना बुलाये ही ससुराल भेज दिया।

ननद की शादी मे कर्ज और बढ गया। शिवलालजी अपने दस हजार रुपयो का ब्याज नही लेते थे, लेकिन कर्ज तो अदा करना ही था। उधर ठाकुर साहब का भी खर्च अन्धाधुन्ध चल रहा था। न ठाकुरानी उनके ऊपर अकुश रखती, न कामदार कुछ समझा-बुझा सकते। अच्छे-अच्छे कामदार ठेकाणे की यह अवस्था देखकर वहा रहना नही चाहते थे। गौरी कभी जनपुर, और कभी अपने मायके जाकर दिल के दु ख को कम करना चाहती, किन्तु खलपा तो जाना ही पडता था। अब ठाकुर साहब रण्डी को लिये नीचे के कमरे मे पडे रहते, उनकी आख से लाज-शर्म धुल गई थी। ठाकुरानी को पहले उनके आचार बिगडने की चिन्ता थी, जब उसमे वह कुछ फेर-बदल नही कर सकी, तो कपाल ठोककर भवितव्यता के सामने शिर झुकाया। ठाकुर साहब की यह हरकत अब रोजमर्रा की साधारण सी बात होकर रह गई। वह जो अन्धाधुन्ध खर्च कर रहे थे, उससे ठेकाणे के डूब जाने का डर था। गौरी कभी-कभी सोचती—"क्या जाने दूसरा ब्याह हो जाने पर ठीक हो जाय।" इतना होने पर भी ठाकुर साहब ठाकुरानी के साथ अच्छी तरह हसते-बोलते, उनके पास आकर चाय-नाश्ता करते, खाना खाते। नीचे के कमरे मे ठाकुरानी की यदि कोई चीज छूट जाती, तो ठाकुर साहब उसे किसी को बखशीश दे डालते। वैसे वह इतने पतित नही थे, कि अपनी पत्नी का जेवर चुराकर खर्च कर डालते। यह कह चुके है, कि उनको गाना-नाचना देखने का शौक नही था, यद्यपि उनके पास जो जनपुर की रण्डिया आती थी, वह खूब गाना-नाचना जानती थी। कुछ सालो बाद तो उन्होने जनपुर की एक रण्डी को अपने पास रख लिया, जिसे अपने हाथ-

खर्च का तीन सौ रुपया महीने-महीने दे दिया करते। उनकी कामुकता को एक प्रकार का रोग ही कहा जा सकता है। कोई सुन्दरी हो या असुन्दरी, उनको इसकी पर्वाह नही थी, उन्हे तो नई-नई स्त्रिया चाहिये थी। वैसे चेहरा देखने से वह निर्बल-बुद्धि के नही मालूम होते थे, रोबदार भी थे, लेकिन जब बोलने लगते, तो बोलते ही चले जाते और उस समय उनकी बुद्धि का थाह लग जाता। सिर्फ एक मा के पैदा भाई और उसकी तीन बहिने तक ही नही, बल्कि सौतेली सास से जो कुवर साहब पैदा हुए थे, वह तो चेहरा देखने ही से मूर्खावतार मालूम होने लगते। जान पडता था, विधाता जब सारी दुनिया को बुद्धि बाट चुके थे, तब खलपा का ठाकुर-परिवार उनके पास पहुचा था, और शायद कानी अगुली मे जो थोडी-बहुत बुद्धि लिपटी रह गई थी, उसी को चीरकर उन्होने छिन्टा दे दिया। ससुर और सौतेली सास को अश्लील से अश्लील गानो के सुनने का बहुत शौक था। वह कह-कहकर ऐसे गानो को गवाते, और बहुत खुश होकर उसे सुनते थे। इसकी व्याख्या मनोविज्ञान ही कर सकता है। यौन-मनोविश्लेषण के लिए राजस्थान के सामन्त-कुलो मे बहुत सी सामग्री मिल सकती है, उसके लिए किसी हैवलाक एलिस की जरूरत है।

मालर के ठेकाणो मे ठाकुर को फौजदारी मुकदमो के देखने का भी अधिकार था, लेकिन कानून से कोरे ठाकुर और उनके कामदार कैसे ठीक इन्साफ कर सकते थे? जनपुर-दरबार ने ठेकाणो को हुकुम दिया—"मुकदमो के देखने के लिए या तो बी० ए०, एल्-एल्० बी० पढा आदमी रक्खो, नही तो राज्य अधिकार छीनकर अपनी तरफ से अफसर नियुक्त करेगा।" औरा के ठाकुर ने अपने यहा अफसर रख भी लिया था। रोमे ठाकुर को ख्याल आया, कि अकेले अफसर रखने मे खर्च बहुत आयेगा, अच्छा हो यदि रोमे और खलपा मिलकर एक आदमी को रक्खे। इसके पीछे उनके मन मे "परमुण्डे फलाहार" करने की इच्छा भी काम कर रही थी। रोमे के ठाकुर औरा से गये थे, इसलिए दोनो एक वश के थे। एक दिन जनपुर मे गौरी के पास दोनो ही ठाकुर जनपुर आये। औरा के ठाकुर देवर लगते थे, इसलिए उनके सामने कोई पर्दा नही था। उन्होने भाभी से कहा—"काकोसा (रोमे ठाकुर) आपसे बात करना चाहते है।" अभी तक ससुर के सामने बहू के जाने का रवाज नही था, इसलिए गौरी ने औरा के ठाकुर से कहा—"आप ही पूछ ले, वह क्या फरमाते है।" ठाकुर ने अपने चचा से पूछकर बतलाया—"रोमे और खलपा मिलकर एक फौजदारी दीवानी अफसर रक्खे, तो खर्च कम पडेगा।"

यही नही, बल्कि उन्होने एक आदमी भी इसके लिए ठीक कर लिया था, जिसको बहुत बडी तनख्वाह देने की अवश्यकता नही पडती। जब आदमी का नाम गोगा-सिह बतलाया गया, तो गौरी को और भी ज्यादा अरुचि हो गई। गोगासिह पहले उसके अपने पिता के यहा नौकर था। पिता के मरने पर वह किसी दूसरे ठेकाणे मे चला गया, और अपराध के लिए उसे जेल भी जाना पडा। जेल से छूटने पर उसे जसपुर राज्य से निष्कासित कर दिया गया था, वह वहा लौटकर नही जा सकता था। ऐसे आदमी को रोमे के ठाकुर साहब दोनो ठेकाणो का अफसर नियुक्त करना चाहते थे। दरबार ने कानूनदा अफसर नियुक्त करने के लिए कहा था, और रोमे ठाकुर साहब के उम्मीदवार को अच्छी तरह दस्तखत भी करने नही आता था।

ठाकुरानी ने यह भी कहा, कि अगर अफसर रखना ही होगा, तो खलपा अकेला एक अफसर रख सकता है, क्योकि वह बडा ठेकाणा है। फिर औरा के ठाकुर से उसने कहा—"आप चचा-भतीजा ही क्यो न सम्मिलित कामदार रख लेते।" साथ ही ठाकुरानी ने यह भी कहा—"मुझसे पूछने की अवश्यकता नही, खलपा ठाकुर साहब नाबालिग नही हैं, आप उनसे ही पूछ ले। मै सम्मिलित कामदार के पक्ष में नही हो सकती, क्योकि खलपा और रोमे के बीच मे चौबीस मील का अन्तर है, एक ही अफसर दोनो जगहो के मुकदमो को कैसे सम्हाल सकता है। आने-जाने मे उसके लिए मोटर और पेट्रोल का भी बहुत खर्च आयेगा। यदि आप दोनो सम्मिलित अफसर नही रख सकते तो खलपा के लिए तो और भी मुश्किल है। मालर की कहावत है 'शामिल मे तो होली होवै।' साझे मे सत्यानाश का ही काम किया जा सकता है।" औरा के ठाकुर ने कहा—"भाभीसा, आप बात ठीक कह रही है।" रोमे के ठाकुर ने जब यह उत्तर पाया, तो खडे होकर पैर पटकते हुए उन्होने ठाकुरानी को सुनाकर कहा—"मै जानता हू, सलमियो की लडकिया बडी जबर्दस्त होती है, लेकिन मै भी देखूगा।" रोमे के ठाकुर बडे पैमाने पर चाय-पार्टी को दोहरा नही सके, इसके लिए उनको गुस्सा होना ही चाहिए था। खलपा के ठाकुर ने भी अपनी पत्नी से राय ली, तो उन्होने कहा—"यदि ठेकाणे को डुबाना चाहते हो, तो साझे का अफसर रक्खो, नही तो सीधा जवाब दे दो। रोमे कोई जनपुर-दरबार नही है। वह हमारा क्या बिगाड सकते है?" ठाकुर ने भी जब यही जवाब दिया, तो रोमे के ठाकुर ने कहा—"तू तो औरत का मंजूर (गुलाम) है।"

ठाकुर साहब के स्वभाव मे भी समय के साथ भारी परिवर्तन होता गया।

पहले उनको खाने-पीने का कोई शौक नही था, ठण्डी रोटिया भी दी जाती, तो खा लेते, लेकिन जब लम्पटता की ओर पैर अधिक बढा, तो पहला परिवर्तन यह हुआ, कि किसी स्त्री के पास से लौटने के बाद वह खानो मे नुकनाचीनी करने लगते—'अमुक राड यह लाई है, मैं तो इसे नही खाऊगा।' 'फलानी राड इस मास मे चमचा हिला रही थी, मैं तो इसे नही खाऊगा'। कितने ही समय बाद दूसरा परिवर्तन यह हुआ, कि अब काम-तृप्ति के बाद लौटने पर वह बडे प्रसन्न दिखाई देते। उनको पैर दबवाने का भी मर्ज था। पैर दबाये बिना नीद ही नही आती थी, और फिर फरमाइश रात-रात भर पैर दबाने के लिए होती। बेचारी ठाकुरानी दो-तीन घण्टे तक तो पैर दबा लेती, लेकिन फिर नीद आने लगती, इस पर पलग के पास कुर्सी रखकर अपनी छोटी-छोटी छोरियो को बारी-बारी से पैर दबाने के लिए बैठा रखती। ठाकुर साहब चाहते, कि इस काम के लिए तरुणी छोरियों को भेजा जाय। जब छोटी छोरियो को नापसन्द करते, तो ठाकुरानी बूढिया लौडियो को भेज देती। ठाकुर झुझलाकर कहते—"तुम बडी रुस्तम हो।" अन्त पुर मे अपनी पत्नी की छोरियो पर हाथ न सफा कर सकने के लिए उनको क्रोध आता, लेकिन सौतेली मा की छोरिया बनी थी, उनमे से एक तो इतनी गन्दी थी, कि उसके शिर पर लाया पानी पीने का मन नही करता था, उसके बालो मे जुए भरे हुए थे, लेकिन, ठाकुर को इसकी पर्वाह नही थी, वह तो स्त्रियो के बारे मे समदर्शी थे। पुजारिन की सुन्दरी बहू भी उन्हे पसन्द थी, और कुरूपा से कुरूपा अन्त पुर की लौडी भी। गावो मे कोई भी जाति, कोई भी कुल की विवाहिता या अविवाहिता स्त्री हो, वह तो "प्रार्थयामि नवा नवा" का महामन्त्र जपते थे। उनकी ऐसी फरमाइशे सामान्य अन्त पुरिकाओ के लिए कोई असाधारण बात नही थी, लेकिन दुर्भाग्य से उन्हे ऐसी ठाकुरानी मिली थी, जो उनकी सभी तरह की इच्छाओ को मानने के लिए तैयार नही थी। वह उस पर गुस्सा होते, दात पीसते, लेकिन अन्त मे कुछ करने के लिए तैयार नही होते थे, क्योकि उसके लिए उनके पास हिम्मत और बुद्धि नही थी। हा, अपने नौकरो और कामदारो पर गुस्सा जरूर निकालना चाहते थे, और रज होते ही तुरन्त हुकुम दे देते—"बारह घण्टे के भीतर हमारे यहा से निकल जाओ।" फिर ठाकुरानी उन्हे ठण्डे दिल से सोचने के लिए कहती—"इस तरह नौकरो को रखना-निकालना अच्छा नही है। इससे ठेकाणा चौपट हो जायेगा, प्रबन्ध खराब हो जायेगा। यदि कोई कसूर करे, तो उसे सजा दीजिये, वह इस्तीफा दे तो उसे मजूर कर लीजिये।"

ठाकुर फिर ठण्डे पड जाते ।

× × × ×

अभी ठाकुर साहब ने दूसरी शादी नही की, इसी समय सासू बीमार पडी। आपरेशन करने की जरूरत थी, इसलिए उन्हे जनपुर ले जाया गया। आपरेशन साधारण था, लेकिन वहा कुछ दिनो तो अस्पताल मे रहना ही था। वह अपने भोलेपन का परिचय अस्पताल मे भी देते नरसो से पूछा करती—"तुम्हारा ब्याह हुआ है ?"

"हम शादी नही करते ।"

"तो थाने रोटिया कमाने कुण घालही (तो तुम्हे रोटिया कमाकर कौन देगा) ?"

"हम अपनी रोटी आप कमा रही है, आपको दीखता नही है ?"

"एडी कमाई ह् कि है थोडी होवै (ऐसी कमाई से कोई बरकत थोडी ही होती है) ।"

वहा कभी अतर लगा दिया करती, कभी अपने बिछौने पर फूल बिछवा लिया करती। नरसे उनके विचित्र स्वभाव को देखकर बहू से कहती—"ऐसी सास के पास रहना बडा मुश्किल है। आपको तकलीफ होती होगी ।"

बहू को एक सास से क्या शिकायत हो सकती, वहा तो सारा पारिवारिक जीवन ही दुस्सह था। सासू अपने जेवर और पैसे कलमदान (सन्दूकची) मे रखकर अपने साथ ले जानेवाली थी। जब अस्पताल जाने का समय आया, तो बहू ने कहा—"आप इन्हे कहा अस्पताल मे ले जायेगी ? कलमदान को तोसाखाने मे रख दे ।"

"थे राख लो तो (तुम रख लो तो) ?"

"वहा अस्पताल मे गुम हो जावे तब ?"

"वठे म्हारे कन्ने रहई (वहा हमारे पास रहेगा) ।" खैर, समझाने-बुझाने पर तोसाखाने मे रखने के लिए तैयार हो गईं। जानती थी, आपरेशन बेहोश करके होगा, इसका डर लग रहा था, लेकिन सबसे बडी चिन्ता उनको अपने जेवरो की थी। उन्होने बहू से कहा—"हमारा यह जेवर और जो जेवर पीहर मे पडा है, उसको भी तुम हमारे लालू को दे दोगी, इस की सौगन्द खाओ ।"

बहू ने मन मे हसते हुए कहा—"क्या आपका मेरे ऊपर विश्वास नही है ! मेरे पास अपना जेवर बहुत है, आपकी एक कील भी इधर-उधर नही जाने पायेगी ।"

—"नी ओ, यो तो थाणे माथे विसवास है, पण फेर बी थाणी म्हारी सौगन काड जाओ (नही. यो तो तुम्हारे ऊपर मेरा विश्वास है, तो भी मेरी सौगन्द खा जाओ) ।"

"मै झूठी नही हू । जो झूठी होती, तो सौगन्द खा लेती, लेकिन तो भी आपके विश्वास के लिए सौगन्द करती हू, कि लालजीसा (देवर) को सारा जेवर दे दूगी ।"

सौगन्द सुनकर सन्तोष की सास लेते हुए सासू ने कहा—"हमै मू मरू, तो होरी मरू (अब मै मरूगी तो अच्छी तरह मरूगी) ।"

आपरेशन अच्छी तरह हो गया, फिर एक दिन सासू को अपने जेवरो की चिन्ता हुई, क्या जाने सौगन्द खाकर भी बहू ने रख लिया हो। उन्होने कहा—"म्हारो कलमदान लेता आइजो ।"

बहू ने समझा, सन्दूकची को लाने की क्या जरूरत है, इसलिए उसने कहा—"चाबी दे दे, मैं निकालके लाती हू ।"

सासू ने तुरन्त कहा—"चाबी तो नी दू ।"

"इतनी सौगद करी, तो भी आपको विश्वास नही है ।"

लेकिन सासू इतनी जल्दी विश्वास करनेवाली नही थी । वह समझ रही थी, कि जब तक चाबी उनके पास है, तभी तक जेवर सुरक्षित है। उन्होने चाबी नही ही दी। बहू कलमदान ले आई, सासू ने उसमे पैसा या दूसरी चीजो की जितनी जरूरत थी, उतनी निकालकर ताला लगा दिया। बहू की ईमानदारी और उसकी सेवा पर सासू बहुत प्रसन्न थी, इसलिए पाच रुपये निकालकर बहू की ओर बढाते हुए उन्होने कहा—"थे म्हारी नौकरी हौ की दी । था दारू त घणा नी पीवा, पण आज ईणा रुपया री दारू मगाईने पीजो । (तुमने मेरी अच्छी तरह सेवा की। तुम बहुत दारू-शराब तो नही पीती, किन्तु आज इन रुपयो से दारू मगाकर पीना) ।"

बहू को मजाक की सूझी, उसने कहा—"चाकरी तो की, लेकिन उससे क्या, आप मेरी मा है, मेरा धर्म था सो किया। पाच रुपये की तो मै दारू नही पीती, यदि पिलाना हो तो, ह्विस्की ही मगवा दे ।"

"कई लागे विस्कीरो (ह्विस्की का क्या दाम लगता है) ?"

"बस यही पच्चीस-तीस रुपया ।"

"नी बा, एडी मैंगी तो नी मगाऊ ।"

"तो मै भी दारू नही पीऊगी" कहकर बहू ने रुपया नही लिया । इसे

कहने की अवश्यकता नही, कि पाच रुपयो के अपने पास से न जाने का सासू को बडा सन्तोष हुआ ।

जब सासू अपनी लौडियो-बादियो को किसी काम के लिए पैसा देती, तो उनके दस पग जाने पर फिर बुलाकर कहती—"मै इत्ताइज दीदा (मैने इतना ही दिया) ?" और उससे पैसा हाथ मे लेकर गिनती। वह फिर दस-पन्द्रह कदम जाती, और फिर उसे बुलाकर वैसे ही पूछकर पैसे गिनती । दो-दो तीन-तीन बार गिने बिना वह लौडियो को जाने नही देती । बाजार से सौदा मगाती, तो लानेवाले से पूछती—"काये थू बीच मे तो पैया नी राखिया ? हाच बोलजो, होगन काडी ने (क्यो तूने बीच मे तो नही पैसा रख लिया ? सच बोल, सौगन्द खाकर कह) ।" उससे सौगन्द कराती । डावडिया बेचारी बहू के पास आकर रोना रोती—"नी लाये तो मरै, लावे तो म्हाणो तेल पाडे (नही लावे तो मरे, और लावे तो हमे तग करती है) ।"

सास की बडी तोद निकली हुई थी । तोद निकलने लायक ही चीजे वह खूब डटकर खाया करती थी । एक दिन एक डावडी ने अपने अन्नदाता से कहा—"आपरेशन से आपका शरीर बहुत अच्छा हो गया है ।" सुनते ही वह उठकर बहू को एकान्त मे ले जाकर बोली—"बीनणी, हात लाल मिरच आउखी हात लूणरी काकरिया मगाईने म्हारे माथे बारी दो (बहू, सात साबित लाल मिर्च और सात नमक की डलिया मगाकर हमारे सिर पर वार दो) ।" अगर यह लूण-राई का टोटका नही किया जाता, तो निश्चय ही बुरी नजर लगी थी, इसलिए सासू दुबली होने लगती, और न जाने उनके ऊपर क्या-क्या आफत आती । बहू ने वह चीजे लाकर बारी, फिर ले जाकर चूल्हे मे डाला। अभी भी सास के मन को सन्तोष नही हुआ था। उन्होने आते ही बहू से पूछा—"चूल्हे मे डालने पर गन्ध आई कि नही ?" विश्वास किया जाता है—वस्तुत नजर लगी होने पर तो बारी हुई चीज को आग मे डालने से गन्ध नही उठती । बहू ने कह दिया—"नही बूजीसा, जरा भी गन्ध नही आई ।" इस पर सासू बोली—"देखा बहू, मैने लूण-राई करवा ली, नही तो यह राड मुझे खा ही जाती ।"

सास की लौडी चीज खरीदने गई । लौटकर मालकिन के सामने हिसाब देने लगी, तो दो पैसे कम हो गये । फिर क्या था, सास लडने लगी—"म्हारा दो पैसा ला, तू खाइगी (मेरा दो पैसा ला, तू खा गई है) ।"

लौडी ने झगडे की जगह यही अच्छा समझा, कि दो पैसा लौटा दे, लेकिन उसके पास छुट्टा पैसा नही था । वह बडी नम्रता से गिडगिडाकर कह रही थी—"बापजी,

म्हारे कन्न खुला पैया नी।" लेकिन सास इतनी देर तक प्रतीक्षा थोडे ही कर सकती थी। उनके दोनो पैसे इसी वक्त मिलने चाहिए। दो घण्टे लडती रही, इसी समय बहू आ गई, तो वह उससे उलाहना देती बोली—"देखो नी ओ बीनणी, आ राड रोडकी, म्हारा दो पैया खाइगी (देखो नही वहू, यह राड रोडकी हमारे दो पैसे खा गई)।" रोडकी बेचारी हाथ जोडकर बिनती करने लगी—"मैने पैसा नही खाया, छुट्टा पैसा नही है, पैसा होते ही मै दे दूगी।" बहू ने सोचा, जरा हिसाब करके देखे। हिसाब किया, तो पैसे ठीक खर्च हो गये थे, और एक पाई भी रोडकी के जिम्मे नही थी। बहू ने सास को समझा दिया। रोडकी की जान बची और उसने रोम-रोम से आशीर्वाद दिया।

एक-एक पैसे का हिसाब लेने मे यह नही समझना चाहिए, कि सास खाने-पीने मे कजूसी करती थी। उनकी साग-सब्जी मे जब तक दो अगुल घी ऊपर न तैरता हो, तब तक वह खाती ही नही थी। बहुत खा लेने पर कभी-कभी पेट-दर्द होना स्वाभाविक था, इस पर कह उठती—"रावला रो दोस होइ ग्यो" (रावल अर्थात् मृत-पति ने कुछ कर दिया है)। उनके विश्वास के मुताबिक और पूर्वजो की तरह मरकर उनके पति भी पितर (प्रेत) होकर कभी-कभी गढ के अन्त पुर मे फेरा देते रहते है। नजर लगती, तो लूण-राई कराती, लेकिन रावलो के दोष का निवारण इस प्रकर नही होता। घिडोची के पास चूने के बने नाडे (गडहे-से) होते है, जिसमे गेहू जौ बोकर पास की दीवार मे काजल से काला साप अकित कर दिया जाता। पितर यही रहते है। सासूजी रावलो का दोष हो जाने पर वहा पर नारियल और मिठाई चढाकर उनकी प्रसन्नता प्राप्त करके पेट-दर्द हटाती। पैसे-पैसे का हिसाब तो वह बहुत करती थी, लेकिन लोग भी खाना-खूब जानतेथे। अप्रैल-मई-जून के गर्मी के तीन महीने मे वह रोज बादाम और मिश्री की ठण्डाई पिया करती थी, और उस पर तीन सौ रुपया खर्च कर डालती, नौकरानिया तीन सौ का हिसाब बनाकर दे देती, चाहे सौ-डेढ-सौ ही खर्च हुआ हो। मालकिन तीन सौ रुपया दे देती। बूढी ठाकुरानी अब भी जीवित है। जागीरदारी उठने का सारे राजस्थान के जागीरदारो और ठेकाणेवालो मे हाहाकार मचा हुआ है, लेकिन बूढी ठाकुरानी का कहना है—"अपणा ठेकाणा कठे जावे, नी जावे। राव जागाजीरी छवरी रोप्योडी है" (अपना ठेकाणा कहा जा सकता है, नही जायेगा। राव जागाजी की यह स्थापित की हुई छावनी है)।" सासू को बुढापे मे क्या, जीवन भर चिन्ता नही रही। उन्हे न सिलाई आती न बुनाई। पोथी-पत्रो से तो उनको कोई मतलब ही नही है। नौकरानिया समय पर आकर काम

करके चली जाती है। विशाल महल मे अकेली रहती है, तो भी वह कभी अकेलेपन की शिकायत नही करती। वह चुपचाप किसी जगह बैठी रहती, कभी लेट जाती, और कभी टहलने लगती। उन्हे बात करने के लिए किसी दूसरे की अवश्यकता नही, अपने आप से खूब बात कर लेती है, और अकेली बैठी हस भी लेती है। पास मे बादाम या चना भूना रक्खा रहता है, जिसे बीच-बीच मे मुह मे डालती रहती है। किसी ने उनके मुह से यह नही सुना, कि आज मेरी तबियत नही लग रही है। आठ बजे उनको नाश्ता चाहिए, जिसके लिए रात की ठण्डी बटिया रक्खी रहती है। लेकिन, सूखी बटिया पर वह सन्तोष करनेवाली नही है। उसके साथ दही, मक्खन या कडकडाया घी और बूरा भी चाहिए। बारह बजे उनका मध्यान्ह भोजन होता है। विधवा होने से वह मास नही खाती, लेकिन उनकी साग-सब्जी मे दो अगुल घी बहना चाहिए, नही तो वह कहती है—"राड चोरी ली दो, म्हारे पेट मे नी जावादे (राड ने चुरा लिया, हमारे पेट मे नही जाने देती है)।" बुखार उधर लगा हुआ है, और उधर फरमाइश है–"भुजिया (पकौडी) बनाके लाओ, बादाम का हलवा जल्दी लाओ।" बहू कहती, आपका पेट खराब हो जायगा, बुखार मे ऐसी गरिष्ठ चीज नही खानी चाहिए, तो वह कह देती– "मने बुखार चडे, जरे भावड आये (मुझे जब बुखार चढता है, तो खाने की इच्छा होती है)।" चाहे कुछ भी हो, लेकिन वह एक दिन भी बिना खाये नही रह सकती। बहू कभी कह देती—"हुकम (सरकार), आजकल गर्मी के दिनो मे बीमारी का डर है, इसलिए सबको कह रक्खा है, कि एक-एक फुलका कम खावे।" लेकिन वह इसके लिए तैयार नही थी। "मुझसे भूखा नही रहा जाता"—यही उनका जवाब होता।

अपने बच्चे को छ-सात महीने तक तो उन्होने अपना दूध पिलाया, उसके बाद गाय या बकरी का दूध पिलाने लगी। आध सेर दूध गरम करवा लेती, फिर बोतल मे डालकर उसके मुह मे लगा देती, और सारे दूध को पिलाकर छोडती। बच्चे का पेट फूलकर कुप्पा हो जाता, लेकिन वह कहा जान छोडनेवाली थी। किसी की बात मानने के लिए तैयार नही थी। पीछे तो बच्चे की आदत ऐसी हो गई, कि वह आध सेर दूध घट-घट पी जाता। उनसे कहा जाता, दो-तीन घण्टे का फर्क देकर दूध पिलाना चाहिए, लेकिन वह माननेवाली नही थी। थोडी देर दूध पिलाये हुआ, कि फिर दूध औटने के लिए आग पर रख उसको भी बोतल मे डालकर बच्चे के मुह मे लगा देती। दूध से ही उन्हे सन्तोष नही होता, बल्कि पत्थर पर घिस-घिसकर कितने ही बादामो को भी चटाती रहती। एक बार उनको ख्याल आया, बच्चे का नाखून अपने हाथ से काट दे। लेकिन नाखून तो कभी काटा नही था,

इसलिए नाखून के साथ चमडी भी उन्होने उतार दी। उस वक्त बच्चा दो-तीन वर्ष का था। खून बहने लगा, तो अगुलियो पर पट्टिया बाध दी। भाभी ने देवर से पूछा, तो उसने कहा—"भाबा नख कतरिया, म्हारी ओगडिया कटगी (मा ने नाखून काटा, मेरी अगुलिया कट गई)।" देवर चार-पाच वर्ष का था, एक दिन भाभी ने उससे कहा—"आओ, खाना खा लो।"

देवर ने कहा—"मू तो नी खाऊ (मै तो नही खाता)।"

"क्यो नही खाते ?"

"म्हारा भाबा कूटे (मेरी मा मारेगी)।"

"नही कूटेगी।"

इस पर देवर ने बात खोलते हुए कहा—"भाभीसा कई चीज देवे, तो खाइजो मन थने जेर दे देही (भाभीसा कोई चीज दे, तो मत खाना, तुझे जहर दे देगी)।"

यह सुनकर भाभीसा को होश आ गया, और उसने कान पकड लिया, कि फिर खिलाने-पिलाने का आग्रह नही करूगी, नही तो यदि कोई बीमारी लगी, तो सासू मुझे ही बदनाम करेगी। इसके बाद भाभी अपने यहा देवर को पानी भी नही पिलाती।

खलपा मे देवर ने वर्णमाला और पहाडे पढ लिये थे। अब वह सात-आठ वर्ष का हो गया था, और आगे पढाने की जरूरत थी। बहू ने सास से पूछा—"आपकी मर्जी हो, तो देवर को चौपहिया के स्कूल मे पढने के लिए बैठा दे।" जनपुर से तीन-चार मील पर अवस्थित चौपहिया मे पुराने राजा के चचा प्रसादसिह ने जागीरदारो और बडे राजपूतो के पढने के लिए छात्रावास-सहित एक स्कूल खोला था। लेकिन सास अपने बेटे को दूर कैसे भेजती ? उन्होने कहा—"म्हारी छाती हेटाऊ म्हारे टाबर ने नी काढू (अपनी छाती के नीचे से अपनी सन्तान को नही निकालूगी)।"

इस पर बहू ने कहा—"नही निकालोगी तो यह पढ-लिख नही पावेगे, यह हमको गालिया देगे कि भाई-भावज ने हमे किसी लायक नही बनाया।" काफी समझाने-बुझाने के बाद एक दिन सासू अपने पुत्र लाजसिह को स्कूल मे बैठाने के लिए राजी हुई। चौपहिया मे उसे भरती करा दिया गया। वहा के सभी विद्यार्थी मेस मे भोजन करते थे। लालजी की सेवा के लिए एक नौकर रख दिया गया था। दस वर्ष से ऊपर वहा पढता रहा, लेकिन दिमाग मे तो गोबर भरा था, मैट्रिक भी नही पास कर पाया। पीछे पजाब की परीक्षा मे अपने नाम से किसी दूसरे को बैठाकर मैट्रिक पास किया।

अध्याय १७

सौत आई (१९४० ई०)

ब्याह के बाद वर्ष बीतते गये, किन्तु वह जल्दी-जल्दी कैसे बीतते ? दु ख और चिन्ता की घडिया महीनो और वर्षो के बराबर होती है, यद्यपि बीत जाने पर उनका अस्तित्व स्वप्न-सा मालूम होता है। गौरी ठाकुर के सुधरने की आशा करती थी। हर साल ख्याल आता, शायद इस साल ठीक हो जाय, लेकिन "मर्ज बढता गया ज्यो-ज्यो दवा की।" एक तरफ दाम्प्त्य जीवन काटो की सेज बन गया था, दूसरी ओर ठेकाणे का कोई प्रबन्ध ठीक से चल नही पाता, न कोई अच्छा आदमी टिकना। किये-कराये पर इस तरह पानी फिरते देख गौरी का भी उत्साह ढीला पड जाता था। वह खलपा कम, जनपुर मे ज्यादा रहती और जसपुर तथा मगलपुर मे भी जाकर घावो को भरने की कोशिश करती। बाबोसा और मा कितनी ही बार बेटी-दामाद को अपने यहा बुला लिये करते। एक बार गौरी के जीजा-जीजी भी आये। बूढे ठाकुर अपने दोनो बेटियो और दोनो दामादो को बम्बई आदि की सैर कराने ले गये। सोचा होगा, दूसरी बेटी और उसके पति के मधुर सम्बन्ध के कारण शायद छोटे दामाद पर भी कुछ प्रभाव पडे, लेकिन व्यसन जब राजरोग के रूप मे परिणत हो जाय, तो उसके हटने की क्या आशा हो सकती है ? यात्रा से लौटने पर ठाकुर कभी जनपुर भी आ जाते, किन्तु अधिकतर खलपा जाना पसन्द करते। वैसे अब उनके मनमानी करने मे उतनी बाधा नही थी। पत्नी चहती थी, कि वह प्रसन्न रहे। मृत सास की बूढी डावडिया कहती रहती—"इतने दिन ब्याह हुए हो गये, कोई सन्तान नही। वश चलाने के लिए दूसरा ब्याह हो जाना चाहिए।" ननदे भी आने पर इसके लिए जोर लगाती। यदि ससुर जिन्दा होते, तो इसमे शक नही, कि बेटे का दूसरा ब्याह कबका हो गया होता। ठाकुर मे दोष ही दोष नही थे, गुण भी थे। यौन निर्बलता उनमे थी, लेकिन वैसे वह अपनी पत्नी से खुलकर मिलने मे आनाकानी नही करते। दूसरे ही लोगो ने नही, बल्कि जब गौरी ने भी दूसरा ब्याह करने के लिए कहा, तो उन्होने साफ इनकार करते हुए कहा—"जिन्दगी भर आराम से रह लेना चाहिए। मरने के बाद कौन गद्दी

सम्हालेगा, इसकी परवाह नही करनी चाहिए ।" उनको सचमुच ही सन्तान की इच्छा नही थी । लेकिन गौरी के मन मे होता था, शायद दूसरी बहू के आने पर हालत मे सुधार हो जाय, या कम से कम एक और भी दु ख-सुख मे साथ देने के लिए तो आ जायेगी । उसे अपने एक-दो सम्बन्धियो की सौता का उदाहरण देखने को मिला था, जिनके पारस्परिक प्रेम को देखकर स्त्रिया ईर्ष्या करती थी । वह समझती थी, उसे भी उसी तरह की सौत मिल जायगी, जो दु ख की जगह सुख और सन्तोष का कारण बन सकती है । ठाकुर साहब के बार-बार इनकार करने पर भी गौरी इस फिकर मे थी, कि कही अच्छी लडकी मिले, तो ब्याह करा दू । सौतेली सास के नीम सी कडवी होने पर भी उसने अपने दिल मे उसके प्रति मैल नही आने दिया था । वह सोचती थी, सौत के लिए मेरे दिल मे ईर्ष्या नही होगी, तो क्यो बिगाड होगा । जनपुर के महाराजा ऊधोसिह की दादी बुआ बामा मे ब्याही थी । उनको किसी से मालूम हुआ, कि गौरी अपने पति का दूसरा ब्याह कराना चाहती है । उनके पूछने पर गौरी ने, "हा" किया, फिर बुढिया ने कहा--"मै तो अपनी ओर से नही कहती, किन्तु यदि तेरी इच्छा हो, तो मेरे सगे-सम्बन्धियो की एक लडकी यहो पर है, तू देख ले । मै इस बात का विश्वास दिलाती हू, कि यदि वह तेरा मन नही रखेगी, तो मै उसे अपने पास रख लूगी, और ससुराल नही जाने दूगी ।" बुढिया जिस वक्त यह प्रस्ताव रख रही थी, उसी समय गौरी को राजस्थान की प्रसिद्ध कहावत याद आ रही थी--

"सौत बुरी सूली भली, नितहि छिपावै नैन ।
सौत बुरी काचा चून की, आध बटावै पीव ।"

वह बुढिया की बात सुनकर लडकी को देखने गई । लडकी स्वभाव मे भली मालूम हुई, लेकिन रग थोडा सावला था । बुढिया के पूछने पर गौरी ने कहा-- "ठीक है, मै उनसे भी पूछकर जवाब दूगी ।" यह खबर राजमाता को भी लगी, उन्होने मजाक करते हुए गौरी से कहा--"मै सुन्यो के था होक देखना फिरो हो (मैने सुना है, कि तुम सौत देखती फिरती हो) ?" गौरी ने कहा--"हा, देखी तो ।" "कैसी लगी ?" "ठीक है, जरा काली है ।" राजमाताने हसते हुए कहा--"यही सौत अच्छी होगी ।"

ठाकुर के पास पूछने पर उन्होने ऐसी लडकी से ब्याह करने से इनकार कर दिया ।

× × × ×

जब मालूम हो गया, कि ठाकुर ओर ठाकुरानी दूमरे ब्याह के लिए तैयार है, तो फिर राजस्थान के अन्त पुरो मे लडकियो की क्या कमी थी ? कितने ही राज-महलो मे तो आजन्म कुमारिया बैठी रहती है। कुल भी चाहिए, और धन भी, साथ ही दहेज के लिए उसी के अनुसार पीहरवालो के पास पैसा होना चाहिए। ये तीनो बाते नही बैठे तो, लडकी का ब्याह कैसे हो सकता ? लेकिन बुढापे मे कदम रख लेने तक भी कोशिश तो यही की जाती है, कि लडकी किसी के मत्थे मढ दी जाय। राजपूताने की बाईस रियासतो मे दासा भी एक है, वहा के राजा की बहिन बनोरा के कुवर (राजानुज) से ब्याही थी। बनोरा के मृत महाराजा की बहिनो मे से कई कुवारी थी, जिनमे एक तो चालीस को पहुच गई थी। उसका भाग्य ही समझिये, जो दौड मे वह औरो से आगे बढ गई। उसकी न अपने भाई से पटती थी, न आठ सौतेली माओ से—अपनी मा मर चुकी थी। भाभियो से भी पटती नही थी। सदा अकेले रहती थी। किमको मालूम था, राजमहल मे उससे कुछ कम ही उमर की किन्तु काफी बडी तेरह कुवारियो के रहते उसे पति का मुह देखने का सौभाग्य प्राप्त होगा। राज इतना पैसा दे नही सकता था, इसीलिए पितृकुल मे कुवारी रहते ही इन राजकन्याओ को अपना जीवन समाप्त करना था। भाईबन्द, हित-कुटुम्बी कोशिश करते रहते थे। दासावालो को भी राजकुमारी के ब्याह की चिन्ता थी। वह भी लडके की फिकर मे थे। औरा-ठाकुर की बहन दासा ब्याही थी, और रोमे-ठाकुर औरा का चचा था। रोमे पहले ही जला-भुना हुआ था, इसलिए वह भी चाहता था, कि खलपा के ठाकुर से ब्याह हो जाय, तो मै गौरी से बदला ले सकूगा। चारो ओर से खलपा के ठाकुर के कान मे ब्याह का मन्तर पढा जाने लगा, बडे-बडे सब्जबाग दिखलाये जाने लगे। दासा का राव बनोरा की राजकुमारी के ब्याह के लिए रोमे आया हुआ था। सिखा-पढाकर ठाकुर ने खलपा भेज दिया। वह सबेरे नौ-दस बज ठाकुर के पास पहुचा। राव बात करना अच्छा जानता था। उसने भोले ठाकुर के सामने राजकुमारी के शील-गुण का इतना बखान किया, कि उन्हे वह बिल्कुल पसन्द आ गई। फिर अपनी पत्नी के पास जाकर कहा—"तुम ब्याह करने की बात कर रही थी, बनोरा की बहिन के लिए आदमी आया है।" पत्नी ने कहा—"फोटो भी लाया है ?"

"फोटो तो नही लाया, किन्तु अच्छी बतलावै।"

"मै तो देखकर कहूगी, कही बूजीसा (सौतेली-सास) जैसी न आ जावे।"

"नही, लडकी अच्छी है, मैने स्वीकृति भी दे दी है।"

जब स्वीकृति दे ही दी, तो और क्या कहा जा सकता। लडकियो की उमर

बतलाने का कायदा नही है, और न उसे पूछा ही जा सकता है, लौडियो को भेजकर दिखवाया जा सकता था, लेकिन ठाकुर को इसकी अवश्यकता नही मालूम हुई।

पुरी के ठाकुर और ठाकुरानी गौरी के साथ विशेष स्नेह रखत थे। उनको पता लगा, तो उन्होने समझा, कि शायद ठाकुर अपनी स्त्री से छिपाकर ब्याह कर रहे है, इसलिए उन्होने अपनी ठाकुरानी को भेजा। गौरी ने कह दिया—"मुझे मालूम है, और मे भी सहमत हू।" हिम्मतसिह मामा की बीवी भी आई। गौरी के ब्याह मे सबसे बडा हाथ हिम्मतसिह मामा और उनकी ठाकुरानी का था। उन्होने आकर खलपा के ठाकुर को बहुत समझाया—"हम भी तुम्हारे रिश्तेदार है, इस तरह दूसरा ब्याह करना ठीक नही है, घर बिगड जायगा। बहुत समझाया-बुझाया, और ठाकुर ने उनके सामने कह भी दिया—"मै नही ब्याह करूगा।" लेकिन यह सब ऊपरी मन से ही था। रोमे के ठाकुर, दासा के राव आदि ने मिलकर उनको ब्याह के लिए बिल्कुल तैयार कर लिया था।

जसपुर मे मामा अनन्तसिह की लडकी की शादी थी। गौरी को न्योते मे जाना था। इसी समय खलपा-ठाकुर का ब्याह भी तै हुआ। उन्होने पाच-छ दिन पहले ही गौरी को नौकर-चाकर और वकील साहब शिवलाल को देकर भेजते हुए कहा—"चलकर अजमेर मे ठहर जाना। ब्याह करने जा रहा हू, वहा से मै भी अजमेर मे मिलूगा।" गौरी मोटर पर अजमेर चली, और ठाकुर साहब ब्याह रचाने बनोरा गये। तीन दिन मे ही ब्याह, बिदाई और खलपा मे कुलदेवो की पूजा की रसम अदा कर बहू को लिवाये वह सुबह नौ बजे अजमेर आ पहुचे।

गौरी की छोरिया रसोई बना रही थी, एक नौकर रसोईघर मे बैठा था, दूसरे बाहर गये हुए थे। गौरी सोफा पर पडी-पडी किताब पढ रही थी। इसी समय नीचे से किसी ने आवाज दी—"चादनी लाना, पर्दा करना है।" गौरी के कानो मे ये शब्द आये, लेकिन उसको ख्याल आया, शायद कोई रिश्तेदार ठाकुरानी आई होगी। अजमेर मे कई रिश्तेदार रहते थे। नौकर चादनी लेकर नीचे चला गया। थोडी देर मे सीढियो पर घुघरू की आवाज सुनाई दी। गौरी ख्याल करने लगी—शायद छोरी गेदी की बहिन आ रही है। ठाकुर स्वय नीचे रह गये थे, इसलिए भी गौरी को पता नही लग सका। जरा सी देर मे सोफे पर लेटी-लेटी गौरी ने दरवाजे मे गुलाबी सलमे-सितारे की पोशाक पहिने मुह खोले किसी स्त्री को देखा। उसके साथ दो छोरिया भी थी। गौरी सोचने लगी—यह कौन सी ठाकुरानी होगी। उसने किताब को छाती पर रखकर उसे ध्यान से देखना शुरू किया, लेकिन कुछ ही क्षणो मे स्त्री ने जल्दी-जल्दी पास आ गौरी के दोनो हाथो को पकडकर

उठाते हुए कहा—"जीजा, क्या मुझसे नाराज हो गई ?" अब गौरी को ख्याल आया। वह सौत को ध्यान से देखने लगी। चेहरा बतला रहा था, कि वह प्रौढा स्त्री है, चालीस नही तो पैंतीस की जरूर होगी। उसका माथा चौडा और ऊचा था, नाक छोटी और चिपटी थी, आखे भी छोटी-छोटी थी, कद ठिगना और रग गेहुआ था। शरीर मे न पतली न मोटी, किन्तु सुडौल नही थी—पेट कुछ निकला हुआ, सीने से कमर मोटी थी। नवागता को बात करने मे जरा भी सकोच नही था। अन्त पुरिकाओ के लिए यह नई-सी बात थी।

उसने झट उठाकर गौरी को खडा कर लिया, फिर लौडियो से कहा—"उन्हे बुला लाओ।" तीन दिन की ब्याही स्त्री मे इतनी फुर्ती अन्त पुरो मे दुर्लभ थी, इसमे सन्देह नही। ठाकुर साहब ऊपर आकर पास खडे हो गय। दुलहन ने मजाक मे उन्हे धक्का दिया, और उनके शरीर के लगने से गौरी के पैर उखड गये और वह सोफे पर बैठ गई। ठाकुर को भी पसन्द नही आया, और उन्होने कहा—"ऐसी क्या बेवकूफी करती है।" दो-तीन मिनट बाद ठाकुर वहा से चले गये।

गौरी को अब सौत के साथ शिष्टाचार दिखलाना था। सबसे पहले खाने-पीने की बात पूछी—"आप मास खाती है ?"

"खाती हू, लेकिन झटके की।"

"यहा तो हलाल मास बन रहा है।" यह कहकर गौरी ने नौकरानी को हुकुम दिया—"सिक्ख होटल से झटके का पकाया मास ले आओ।" सौत सब तरह का मास खाती थी, लेकिन वह झूठ बोलने मे सिद्धहस्त थी।

अप्रैल-मई के गर्मियो के दिन थे। ब्याह के जेवर-कपडे उस वक्त तकलीफ देते होगे, यह ख्याल करके गौरी ने कहा—"आप कपडा बदलकर स्नान कर ले, बहुत गर्मी है।"

वह कपडा बदलने चली गई। थोडी देर मे लौडियो जैसे कपडे को पहनकर आई—उसके सिर पर गोदे की ओढनी थी। गौरी ने सोचा—"बेचारी की मा नही है, भाई-भौजाई क्यो अच्छा कपडा देने लगे ?" सौत चन्द ही मिनटो मे ऐसा बात-व्यवहार करने लगी, जैसे वर्षो से साथ रही हो। एक सिगरेट का केस ले आकर वह अपनी सौत से बोली—"इसे खोल दे, तो आपकी चतुराई समझू ?" गौरी ने चारो ओर घुमाकर देखा, एक ओर एक छोटी सी कील दिखलाई पड रही थी। यह मालूम करने मे उसे कठिनाई नही हुई, कि इसी के दबाने से डिब्बा खुलता है। उसने कील दबा दी और डब्बा खुल गया। सौत के सामने गौरी ने अपनी चतुराई

साबित तो कर दी, लेकिन जीवन मे अपनी चतुराई को साबित कर सकेगी, यह तो आनेवाले दिन बतलायेगे । खाना तैयार हो जाने पर गौरी ने सौत की डावडियो से कहा—"खाना ले आओ।" इस पर सोत ने कहा—"काई हुकम, दारू नी अरोगो (क्यो सरकार, शराब नही मगवायेगी) ?"

"मेरे पास तो दारू नही है ।"

इस पर सौत ने झट कहा—"हमारे साथ है, बनोरा की दारू ।"

"पीती हो, तो मगवा ले ।"

देशी शराब की बोतल भी आ गई, ठाकुर साहब भी पहुच गये। उन्होने शराब की बोतल देखकर कहा —"दारू कहा से आ गई ?"

"बोरा की है"—सौत के बोलने मे कुछ अक्षरो का उच्चारण नही होता था, इसीलिए वह बनोरा की जगह बोरा कहती ।

गर्मी के कारण शराब के साथ गिलास मे बर्फ भी डाल दी गई। छोटी सौत पहले अपनी बडी सौत को देने लगी । उसने कहा—"गर्मी का मौसम और दुपहरी भी है । ऐसे समय तो वैसे ही पीना नही, फिर मेरी तो शराब पीने की आदत भी कम है ।"

ठाकुरसाहब ने कहा—"थोडा तो पी लो, सगुन के लिए ही सही ।"

गौरी ने मजाक करते हुए कहा—"हा, क्यो न पीऊगी, आज मुझे बहुत खुशी भी है ।"

इस पर सौत ने झट कह दिया—"खश क्यो होने लगी, मै जो सौत आई हूँ।"

गौरी ने गिलास को ओठो मे लगा लेना ही अच्छा समझा, लेकिन उसी समय सौत ने धक्का दे दिया और कुछ शराब मुह मे चली गई। ठाकुर और उनकी बीबी ने कुछ ही शराब पी, लेकिन नई दुलहन तो बोतल पर बोतल उडेल जानेवाली थी। इन चन्द घूटो से उसका क्या बननेवाला था ? लेकिन इस वक्त उसने अपने ऊपर सयम किया। ठाकुर ने अपनी नई बहू को समझाते हुए कहा—"यह बहुत अच्छी है, तुम्हे बहुत अच्छी तरह रक्खेगी, मेरी सासू भी बहुत भली है, वह मुझे बेटे की तरह प्यार करती है ।"

खाना खाने के बाद ही सौत ने बहुत आग्रह-पूर्वक कहा–"आप अपना जेवर दिखलाये ।" जान छुडाना मुश्किल हो गया । दिखला दिया। देखकर उसकी आखे चौंधिया गई । उसके पास कान की सिर्फ दो हीरे जडी लौगे थी, जो भी उसने अपने हाथ-खर्च से बनवाया था । गौरी को ख्याल आया–"बेचारी बे मा की लडकी, कौन इसे जेवर-कपडा देता ।" आवेग मे आकर उसने अपना जडाऊ

लटकनदार मोतियो का कण्ठा पहिना दिया। बहू अपने ऊपर सयम रखना जानती ही नही थी, उसने तुरन्त आग्रह किया—"चले सिनेमा देखने।" बनोरा मे सिनेमा-घर नही था, लेकिन राजकुमारी ने इन्दौर मे जाकर कितनी ही बार सिनेमा देखा होगा। बडी सौत ने बहुत कहा,—"यहा पर्दे का इन्तिजाम नही है, अजमेर मे हमारे बहुत रिश्तेदार है, कोई देख लेगा, तो कहेगा कि बिना पर्दे सिनेमा देखने गई।" उसकी जिद्द देख गौरी ने ठाकुरसाहब की ओर मजाक करते हुए कहा—"ओ ओ करमापति, इधर आइये, इन्हे सिनेमा दिखला लाइये। मै नही जाऊगी, बुआ या मौसी के लडके आ जायेगे, मुझे पहचान लेगे।" सौत का नाम करमा था, इसलिए गौरी ने अपने पति को करमापति करके सम्बोधित किया। पति पर्दे के पक्षपाती नही थे। मोटर मे ले जाते वक्त कितनी ही बार वह पर्दा हटवा देते। उन्होने वकीलसाहब को बुलवा सिनेमाघर मे बक्स रिजर्व कराने का हुकुम दिया। वकीलसाहब से बडी ठाकुरानी पर्दा करती थी, और छोटी ने तो पहिले ही दिन पर्दा खोल दिया था। दोनो ठाकुरानियो को लेकर ठाकुरसाहब सिनेमा देखने गये। खैरियत हुई, कि कोई परिचित नही मिला।

जनपुर से शिवलालजी ने मगलपुर तार देकर नई शादी के बारे मे सूचित कर दिया था। मा को बहुत दुख हुआ। उसने खबर पाते ही खाना छोड दिया। परिणाम को जितना वह समझती थी, उतना उनकी लडकी नही समझ रही थी। शाम के वक्त खाने मे बनोरा की देशी शराब की जगह ह्विस्की की बोतल मगवाई गई। तीन दिन ठाकुरसाहब दोनो बीबियो के साथ अजमेर मे रहे, और वहा के आनासागर, फतेहसागर और दूसरी दर्शनीय जगहो को दिखलाते फिरे। फिर वह नई बीबी को लेकर मोटर पर खलपा के लिए रवाना हो गये, और बडी बीबी जसपुर के निमन्त्रण मे चली गई। गौरी की मोटर अजमेर से जसपुर की ओर बढ रही थी, और उसका मन पीछे की ओर भाग रहा था—"स्त्रिया ठाकुरसाहब की नई शादी के बारे मे पूछेगी, तो मै क्या जवाब दूगी। अच्छा होता, कि किसी से भेट न होती।" मन जसपुर जाने के लिए बिल्कुल नही करता था, लेकिन पीछे लौटा भी नही जा सकता था। तीन दिन तक सौत के साथ रहने का मौका मिला था। उसके स्वभाव और बात-व्यवहार को देखकर निश्चित हो गया था, कि इसके साथ नही पटेगी। करमा बडी बातूनी, बडी चचला, बिल्कुल निरकुश थी। ऐसी जबर्दस्त स्त्री के सामने ठाकुर साहब जैसा दब्बू आदमी कैसे शिर उठाकर रह सकता था। गौरी समझती थी, कि सौत मे समझ की कमी है, लेकिन यह उसकी गलती थी। करमा मे व्यावहारिक बुद्धि उसकी अपेक्षा कही अधिक थी। राज-

कुमारी होने का उसे अभिमान भी था, और उसके कारण भी वह अपने ठाकुर-पुत्र पति पर धौस जमाती थी। वह बडी ढीठ थी। खलपा मे पहिली बार रहने वहा से गौरी के चादी के थाल और कटोरिया अपने साथ लेती आई थी। यहा वह अपनी लौडियो से कह रही थी—"देखना, थाल सम्हालके लाना।" लौडी (गेदी) थाल को पहचान गई। उसने अपनी मालकिन से कहा—"बाईसा, बर्तन तो हमारे ही है। इसे इस तरह कहने मे शर्म नही आती।" आते अभी दो दिन भी नही हुए, कि उसने सब चीज की खोज-खबर लेनी शुरू की—"ठेकाणे पर कितना खर्च है ? कौन-कौन काम करनेवाले है ?" गौरी ने अपने पति की ओर सकेत करते हुए कहा—"इनसे पूछ लो। मुझे क्या मालूम।" गौरी को सौत की एक-एक चेष्टा ठीक नही जचती थी। उसने वकील साहब की राय पूछी। शिवलालजी बेचारे गम्भीर आदमी थे, कैसे तुरन्त अपनी राय देते। उन्होने कह दिया—"ठीक ही है। इनके कारण आपकी तबियत लग जायेगी।"

ठाकुर साहब ने अपनी बडी बीबी को जसपुर भेजते हुए हिदायत की—"वकील साहब को तुरन्त लौटाना, और जसपुर से जल्दी चली आना।"

इस पर गौरी ने जवाब दिया—"मुझे बाबोसा मगलपुर बुला रहे है, वहा जाकर दो महीना तो जरूर रहना है।"

गौरी को अब खलपा की फिकर नही थी। फिकर के लिए एक दूसरी चीज चली आई थी, इसलिए उसने कुछ दिन निश्चिन्त हो पीहर मे रहना पसन्द किया। अभी सौत के लिए उसके दिल मे ईर्ष्या नही पैदा हुई थी, लेकिन उसकी चेष्टाओ से दिल को भारी धक्का लगा था। उसका मन भीतर ही भीतर किसी अदृश्य आशका से विचलति हो रहा था।

गौरी जसपुर पहुची। देखा, मा का चेहरा बिल्कुल उतरा हुआ है। मामिया भी बडी चिन्ता प्रकट कर रही थी। मा का दुखी चेहरा देखकर गौरी मन मे कह रही थी—"मा, यदि तू मुझे न जन्म देती, तो आज यह दुख तुझे न झेलना पडता।" ननिहाल के ब्याह मे उसका मन नही लगा। हमेशा पति के नये ब्याह के सम्बन्ध मे हर एक स्त्री के चेहरे पर प्रश्न-चिन्ह बनते देखकर उसे बडी शर्म आती। ब्याह खतम होते ही वह मा के साथ जसपुर के ही नरपुर हौस मे चली गई। वकील साहब को लौटा दिया, क्योकि अभी जल्दी उसे पतिगृह मे लौटना नही था। महीने भर वही रही। डावडियो मे से किसी ने कह दिया और मा

को पता लग गया, कि बेटी ने एक कण्ठा अपनी सौत को दे दिया। उन्होंने गौरी से कहा—"तुझे कौन सी खुशी हुई, कि कण्ठा दे आई। तू पागल है पागल।" गौरी को भी दु ख था, यद्यपि अभी वह मात्रा मे बहुत कम था। मा का चेहरा बिल्कुल उतरा-उतरा था। मा असाधारण सुन्दरी थी, और इस उमर मे भी उनका सौन्दर्य बहुत कुछ बना हुआ था। बेटी के भविष्य का ख्याल करके उनके चेहरे पर हर वक्त चिन्ता और दु ख की रेखाए खिची रहती। खाना खाने बैठती, तो पानी पी-पीकर किसी तरह एक पतला फुलका गले के नीचे उतारती। गौरी को यह देखकर बहुत आत्मग्लानि होती। बाबोसा की चिट्ठिया पर चिट्ठिया आ रही थी। जसपुर से मा-बेटी मगलपुर गई। वहा भी वही आशका और शर्म—"तुम असफल नारी निकली, तुम अपने पति का मन नही रख सकी, इसलिए तो उसने दूसरा ब्याह किया।" लेकिन जब ओखल मे शिर पड गया, तो मूसलो के गिनने की क्या अवश्यकता ? गौरी अभी उतनी दार्शनिक नही हुई थी, कि समझती—"काल सबसे बडी शक्ति है, वह सभी चीजो को भुलवा देता है, बस सात दिन धीरज धरना चाहिए।" बाबोसा ने दामाद के दूसरे ब्याह की कोई चर्चा नही चलाई, लेकिन उनका चेहरा भी बहुत उदास था। उनके आसपास के बैठे मुसाहिब भी मातम कर रहे थे, मानो गौरी मर गई हो, लेकिन गौरी को अभी भविष्य का आभास पूरा नही मिला था, इसलिए वह हसती रही।

मगलपुर पहुँचने के बाद ही खलपा से तार आया—"आदमी लेने के लिए जा रहे है।" बाबोसा ने तार दिया—"अभी आदमी न भेजो।" लेकिन दो-तीन बार तारो द्वारा सवाल-जवाब होने के बाद एक दिन चार-पाच आदमियो के साथ शिवलालजी आ गये। गौरी बहुत अधिक चाहने पर भी मगलपुर मे एक महीने से अधिक नही रह सकी।

ठाकुर नई पत्नी के साथ जनपुर की अपनी हवेली मे थे, वही गौरी भी आ गई। भण्डार की चाबी गौरी के पास थी। नई सौत ने उसकी कोई परवाह नही की, और आते ही ताला तोडकर सामान निकलवा लिया। पुरी की छोटी ठाकुरानी को खाने के लिए बुलवाया गया था। उन्होंने चादी के बर्तनो को देखकर कहा—"यह तो सलमियाजी के है, आपके दायजे के नही है।" सौत ने स्वीकार किया और यह भी कि ताला तुडवाना अच्छा नही था। पुरी की ठाकुर की बहिन ने कहा—"आपको ऐसा नही करना चाहिए था।" पुरी की ठाकुरानी ने मगलपुर चिट्ठी लिखकर गौरी को सूचित करते हुए लिख भी दिया था, कि आकर अपना सामान सम्हाल लो।

गौरी को यह खबर पाकर भी जनपुर जाने की जल्दी हो गई थी।

× × × ×

ठाकुर साहब के साथ दोनो सौते बैठकर खाना खाती। नई सौत मे चाहे कुछ दोष भी थे, पर वह लडने-झगडनेवाली नही मालूम होती थी। एक साल तक दोनो सौते साथ-साथ रही, उनमे कभी झगडा नही हुआ। अजमेर मे ही गौरी ने कह दिया था--"मै तुम्हे सौत की तरह नही, बल्कि बहिन की तरह मानूगी। बस, यही ध्यान रखना, कि बाहरवाले हम पर न हसे।" नई ठाकुरानी नाचना अच्छा जानती थी। ढोलणिया बाजा बजाती, और दोनो सौते अन्त पुरिकाओ मे बहुप्रचलित सुन्दर नाचो को नाचती, कभी रेडियो और ग्रामोफोन पर भी वह नाच करती। सौत ने बहुत आग्रह किया, कि बडी ठाकुरानी भी पति के पास रहने के अपने अधिकार को जरूर स्वीकार करे, लेकिन उहोने एहसान लेना नही चाहा।

जनपुर मे सिनेमा के भीतर पर्दावाली रनिवास की स्त्रियो के बैठने का विशेष इन्तिजाम था। मानूराम सानी छोटी स्थिति मे बढकर करोडपति सेठ हो गया था, राजस्थान मे उसकी जगह-जगह उसकी कोठिया थी। जनपुर मे उसका एक सिनेमा-घर भी था। एक बार दोनो सौते सिनेमा देखने गई थी, और पर्देवाली जगह मे बैठी। थोडी देर बाद दरवाजेवाली स्त्री ने ट्रे मे दो गिलास ह्विस्की लाकर कहा—"सानीजीने आपके लिए भेजा है।" बडी ठाकुरानी ने सानी का नाम सुना था,लेकिन उसके साथ कोई परिचय नही था। समझा, शायद गलती से गिलास उसके सामने आये है, और इस बात को नौकरानी से कह दिया। नौकरानी गिलास को लौटा-कर ले गई और थोडी देर बाद फिर लौटकर बोली—"खलपावाली दोनो सरकारो के लिए भेजा है।" इस पर छोटी सौत ने कहा---"रख ले।" गौरी ने एक गिलास को लौटा ले जाने के लिए कहा, तो उसने उसे भी रख लिया। दोनो गिलास सामने रक्खे थे। पीने मे तो परहेज नही था, किन्तु मद्यपान का प्रदर्शन गौरी के लिए बुरा मालूम हो रहा था। उसके जोर देने पर सौत ने गिलासो को कुर्सी के पास नीचे रख लिया और वह पियक्कड दोनो गिलास चढा गई। इन्टर्वल अभी नही हुआ था, इसी समय छोटी सौत उठ खडी हुई। बडी ने समझा, बाथरूम मे जाती होगी। इन्टर्वल हुआ, फिर खेल दुबारा शुरू होने का वक्त आया, लेकिन सौत नही लौटी। गौरी को डर लगा कि शराब बहुत पी ली थी, कही लुढक न गई हो। उसने जाकर गुसलखाने मे देखा, किन्तु वहा कोई नही था, फिर दरवाजेवाली को पूछा, तो मालूम हुआ कि सानीजी से बात कर रही है---दरवाजेवाली ही सानीजी को बुला

लाई थी। सानी लम्पटता के लिए बदनाम था, इसलिए गौरी को यह सुनकर बहुत आश्चर्य भी हुआ। उसने जाकर आड से देखा—दरवाजे के बाहर सानी खडा था, और दरवाजे मे खडी उसकी सौत बहुत घुल-घुलकर उससे बात कर रही थी। गौरी चुपके से उलटे पैर लौट आई। उसके मन मे तूफान मचा हुआ था, आखिर वह उसके पति की पत्नी थी, घर भर की इज्जत एक थी। सामने सिनेमा के रजतपट पर वह चलती-फिरती तस्वीरे देख रही थी, लेकिन उसके मन पर तरह-तरह की चिन्ता की तस्वीरे घूम रही थी। खेल खतम होने मे जब दस-पन्द्रह मिनट रह गये, तो सौतरानी आ गई। गौरी ने पूछा—"कहा गई थी ?"

"गुसलखाने मे गई थी, जरा तबियत खराब-सी है।"

"मै तो गुसलखाना देख आई, सोचा शायद नशे के कारण कही गिर न गई हो, लेकिन वहा आपको नही देखा।"

इन शब्दो को सुनकर सौत का मुह एकदम फक हो गया। गौरी ने चेहरे के इस परिवर्तन को देख लिया, और उसे अपने सन्देह पर विश्वास हो गया। उसके बाद करमा कितने ही समय तक अपनी सौत के सामने बहुत सहमी-सहमी रहती। लेकिन गौरी ने इस घटना का जिक्र किसी से नही किया। यह ठीक है, कि रनिवासो मे बहुत सख्त पर्दा होता है, स्त्रियो को बाहरी पुरुष की छाया से भी बचाने की कोशिश की जाती है, लेकिन जेलखाने मे भी तो कडा पहरा होता है, राजनीतिक बन्दियो को बाहर से किसी तरह का सम्पर्क स्थापित करने नही दिया जाता, किन्तु क्या जेल-अधिकारी अपने लक्ष्य मे सफल होते है ? अन्त.पुर के पर्दों की भी यही हालत है। आजन्म कुवारिया आजमन्म ब्रह्मचारिणी नही होती। जब सारा वातावरण अश्लीलता और कामुकता के भीषण दृश्यो से भरा हो, तो वहा निग्रह कैसे चल सकता है ?

दो महीना जनपुर मे रहने के बाद खलपा जाने का विचार हुआ। ठाकुरसाहब अपनी दोनो पत्नियो मे समदर्शिता बरतना चाहते थे। उन्होने दोनो के लिए एक तरह के कपडे बनवाये और दोनो के लिए एक-एक मोटर खरीद दी। वकील साहब ने दूरदर्शिता दिखाते हुए एक मोटर का लाइसेस बडी ठाकुरानी के नाम कर दिया, नही तो शायद आगे चलकर उस पर भी छोटी सौत अपना हाथ साफ करती।

अध्याय १८

मां की मौत

दूसरे ब्याह के बाद ठाकुरसाहब की सालगिरह का दिन आया। उन्होने अपनी दोनो बीबियो के लिए एक ही तरह की सलमा-सितारे का घाघरा-लुगडी बनवा दिया। इससे पहले वह अपनी पत्नी को घाघरा-लुगडी देने की जरूरत नही समझते थे। जरूरत क्यो समझते, जब कि खुद उसके पास से पैसा मागते रहते। सालगिरह के लिए नौकरो को साफे ठेकाणे से मिले, किन्तु नौकरानियो की लुगडी ठाकुर-साहब ने अपने हाथ-खर्च से खरीदी। नाच-गाने की खूब महफिल हुई, तरह-तरह के मास और पकवान बने। सौत ने बडी ठाकुरानी से कहा--"आप तो जेवर पहनती नही, मुझे पहनने के लिए अपने जडाऊ दे दे।" बडी ठाकुरानी ने अपनी सौत को खूब पहना-ओढा दिया। सालगिरह के उपलक्ष मे बडी बहू भी थोडी नाची, छोटी बहू तो शराब मे भूत बनकर खूब नाचती रही। नाचते-नाचते उसे कै होने लगी। पीछे वह नशे मे बेहोश होकर पड रही।

सास का निवास अन्त पुर मे अब दूर हो गया था, क्योकि अदालत लगनेवाले कमरे के ऊपर जो नये कमरे बने थे, उनमे अब ठाकुर और उनकी दोनो ठाकुरानिया रहने लगी थी। यदि नजदीक होता, तो शायद बडी ठाकुरानी सास का हाथ-मुह धुलाने और पैर दबाने बराबर जाया करती। गौरी अब दो-चार दिन बाद ही सास के पास जाती। सौन भी कभी-कभी चली जाती, लेकिन वह सेवा करनेवाली बहू नही थी। सास बडी बहू के साथ सहानुभूति दिखाते हुए कहती--"बीनणी, थारे दुख होइ ग्यो। ये हात हू एडा काम क्यो कीधा (बहू, तुम्हे दुख हो गया। तुमने अपने ही ऐसा काम क्यो किया)?"

व्याह के साल भर तक अभी सौतो का सम्बन्ध बुरा नही हुआ था। ठाकुर साहब दोनो से हसते-बोलते और खाना भी दोनो के साथ बैठकर खाते, दोनो के साथ समान बर्ताव करते।

सालगिरह मनाकर सप्ताह बाद फिर वह जनपुर चले आये। उस साल बीच मे दो बार बडी ठाकुरानी अपने मायके हो आई। यद्यपि सौतो के बीच मे अभी

कोई मनमुटाव नही हुआ था, लेकिन छोटी ठाकुरानी के लच्छन जल्दी ही खुलने लगे। वह जरा-जरा-सी बात मे अपनी छोरियो को पीटती। छोरिया रोती-चिल्लाती आगे-आगे भागती, और वह गाली देती पीछे-पीछे डण्डा लिये दौडती। उसकी चीख नीचे अदालत मे बैठे लोगो तक पहुचती। पीटते वक्त वह इसका ख्याल नही करती, कि कही मर्म-स्थान पर घाव न लग जाये। खून निकाल देने भर से ही सन्तोष नही करती, बल्कि वह आहत को लालमिर्च के चूरे को घाव मे डालकर तडपाती। गुस्सा आने पर आठ-आठ दस-दस वर्ष की बच्चियो के देह मे दियासलाई की कीली जलाकर चिपका देती। पीहर मे वह अपनी एक लौडी को जान से मार आई थी। पीटते-पीटते सन्तोष नही आया, वह उसे पटककर छाती पर बैठ मुह पर थप्पड मारने लगी। इस पर भी सन्तोष नही हुआ, तो पकडकर गला दबा दिया और लौडी वही ठण्डी हो गई। जब कोई लौडी उसके हाथ धुलाती, तो अकारण भी वह उसके गाल मे चीटी काट-काटकर खून निकाल देती।

जब मार के मारे लोहू-लोहान लौडिया चिल्लाती, तो बडी ठाकुरानी से रहा नही जाता, और वह उन्हे छुडाने के लिए आती। इस पर करमा रूखे स्वर मे कहती—"आप बीच मे न पडे।" मारने के लिए कारण-अकारण की कोई अवश्यकता नही थी। उसकी जूती पडी हुई हो और किसी लौडी का पैर उस पर पड जाये, कि उसकी शामत आ गई। किसी चीज के लिए एक लौडी को भेजती। अभी वह रास्ते ही मे होती, कि जल्दी के मारे दूसरी को भेजती, फिर तीसरी को, और अन्त मे देर करने का बहाना करके उन्हे पीटने लगती। उसके साथ जो डावडिया आई थी, उनमे से एक लगडी भी थी, जिसे पीहर मे ही किसी दिन नाराज होकर उसने सीढियो पर से ढकेल दिया, और बेचारी की एक टाग हमेशा के लिए टूट गई। वस्तुत सौत को पीहर से लौडिया नही मिली थी, बल्कि मालन, ब्राह्मणी, भीलनी जैसी कुछ नौकरानिया दी गई थी। वह इतनी निर्दयतापूर्वक मारखाने के लिए तैयार नही थी, इसलिए पीछे एक-एक करके सभी भाग गई। करमा बडी खूखार औरत है—इस बात का हल्ला जल्दी ही सारे गढ मे हो गया। खलपा मे साठ घर दारोगा थे, लेकिन कोई उसके यहा नौकरी बजाना नही चाहता था। तुलसी नाम की एक ब्राह्मण-विधवा राजकुमारी के साथ आई थी। एक दिन किसी बात पर नाराज होकर उसे पीटने लगी। तुलसी जोर-जोर से चिल्ला रही थी। छोरियो ने बडी ठाकुरानी से कहा, तो वह छुडाने गई। बेचारी की टट्टी निकल आई थी, लेकिन तब भी अभी छोटी ठाकुरानी का गुस्सा शान्त नही हुआ था, वह पीटती ही जा रही थी। बडी ठाकुरानी ने फटकारा—"यह इसानियत नही है,

ऐसा भी क्या मारना !" तुलसी को बहुत चोट लगी थी, इसलिए बडी ठाकुरानी ने अपनी दो छोरियो गेदी और रोहणी को मालिश करने का हुकुम दिया, इस पर सौत ने गुस्से मे आकर कहा—"आप मेरी नौकरानियो को बिगाडना चाहती है, मालिश कराके उनके साथ हमदर्दी दिखलाती है।" वह आदमियो पर ही बेदर्दी से हाथ नही छोडती थी। उसके पास दो छोटी-छोटी कुतिया थी, जिनको भी वह उसी तरह पीटती थी। छ-सात महीने के बाद सौत पीहर गई, लेकिन वहा उसे कौन पूछनेवाला था। हफ्ते बाद वह लौटकर फिर चली आई।

बेटी के भावी दु ख की आशका से गौरी की मा बहुत चिन्तित हो उठी थी, वह खाना भी ठीक से नही खाती। मा की इसी अवस्था के कारण गौरी दो बार वहा हो आई थी। इधर बीमारी कुछ और बढ गई थी। बाबोसा की चिट्ठी आई, फिर तार भी आया, इसलिए मगलपुर जाना जरूरी था। गौरी की दहेज मे मिली चीजे खलपा मे थी। यद्यपि सौत पर उसे विश्वास नही करना चाहिए था, क्योकि उसकी हथ-चलाकी प्रकट हो चुकी थी, लेकिन अभी गौरी का उस पर इतना अविश्वास नही हुआ था। चादी के बरतन और दूसरी चीजो के साथ-साथ अपने कपडे, सोने के सारे और कुछ मोतियो के जेवरो को भी वही छोड वह जनपुर से मगलपुर चली गई। वकील शिवलाल ने ब्याह के चार महीने बाद ही अपने पद से इस्तीफा दे दिया था। अब ठाकुरसाहब की फजूल-खर्ची और बढ गई थी, और कर्ज तेजी से बढने लगा था। वकील साहब उसे रोकने मे असमर्थ थे, इसलिए वह नही चाहते थे, कि ठेकाणे को कर्ज मे डुबोने की बदनामी मे उन्हे भी शामिल किया जाये। उन्होने अपने पद को छोडते हुए ठाकुरसाहब से कहा—"वैसे मै सेवा करने के लिए तैयार रहूगा, लेकिन मै अब जिम्मेदारी नही ले सकता।" ठाकुरसाहब अपनी ज्येष्ठा पत्नी को मोटर पर पोसी तक पहुचाने आये। वहा से वह छोटी ठाकुरानी के साथ खलपा लौट फिर दोनो बनोरा जा, दस-पन्द्रह दिन बाद वापस आये। पोसी से गौरी मगलपुर चली गई। बडी ठाकुरानी के हट जाने पर अब रोमे के ठाकुर को मौका मिला। उन्होने खलपा के ठाकुर को बुलाकर खूब भोज दिया। दोनो का आना-जाना शुरू हुआ। खलपा प्रथम श्रेणी के ताजीमी सरदार का ठेकाणा था, जिसमे कभी पचासी गाव थे, पीछे कुछ भूलो के कारण दरबार ने कितने ही गावो को छीन लिया, और अब उसके पास बारह गाव रह गये थे। पोलका, खलपा, औरा, आमोर, आमणिया, मीगज, राढपुर जैसे आठ जनपुर के प्रथम

श्रेणी के ठेकाण थे। रोमे तीसरी श्रेणी का छोटा सा ठेकाणा था। रोमे का ठाकुर चाहता था, खलपा का प्रबन्ध मेरे हाथ मे आ जाय, तो फिर चैन की वशी बजे। उसे सलमिया ठाकुरानी से डर लगा रहता था, इसलिए वह ठाकुर को भडकाता रहता--"इस सलमिया लडकी से होशियार रहना। वह बडी जबर्दस्त है। तुम्हे नाको चने चबवायेगी।" चार-पाच महीने तक दोनो ठाकुरो मे बडा मेल रहा।

उधर मगलपुर मे मा की हालत खराब होती जा रही थी, इसलिए उसे दवा कराने के लिए जसपुर लाना पडा। वहा नरपुर हाउस मे वह ठहरी थी। सासू और दूसरो की चिट्ठियो से मालूम हुआ, कि सौत ने खलपा मे पहुचकर ताला तोड सारी चीजे ले ली। हाथी के हौदे, छडी तथा बरतनो की चादी को गलाकर बेच दिया, सोने के जेवरो मे भी थोडे-से को रखकर बाकी को गलवा डाला। उसे डर लगा, कि यदि पहली ही शकल मे रहेगे, तो शायद सौत दावा करेगी। गौरी को यह खबर मिलने पर दु ख तो हुआ, लेकिन वह बीमार मा को छोडकर कैसे जा सकती थी ? जो होना था, वह तो गया था, अब वह जाकर भी करती क्या ? करमा ने सोना-चादी सबको सानी के पास रख दिया था, जिसे छोटी ठाकुरानी ने अपना धर्मभाई घोषित कर रक्खा था। यह भी पता लगा, कि सानी के पास खूब भोज-पार्टिया हो रही है। भला, ऐसे ऐश-जैश मे पडे ठाकुरसाहब नौ महीने तक अपनी बडी स्त्री को एक भी चिट्ठी न लिखे, तो इसमे आश्चर्य क्या ?

गौरी अब अपनी बीमार मा की सेवा मे लग गई। इसी समय मा की आखो मे दर्द होने लगा, जिसकी चिकित्सा के लिए उसे दिल्ली लाना पडा। वहा आखो का आपरेशन हुआ। महीने भर रहने पर आखे अच्छी हो गई, लेकिन और बीमारी अभी पहले ही जैसी थी। मा को फिर जसपुर वापस लाया गया। बाबोसा और याया बराबर जसपुर आते-जाते रहते। याया तो अपनी देवरानी के पास से हटना नही चाहती थी।

बहुत दिनो तक वैद्य और डाक्टरो की दवा करने पर भी जब कोई फायदा नही हुआ, तो बाबोसा मा को मगलपुर ले गये। पहले जोडवाले महल मे ठहरे। मा मे बैठने-उठने की ताकत नही थी। उन्हे कुर्सी पर बैठाकर ले जाया जाता। जोड पहुचने पर मा ने कहा—"मुझे नहला दो।" बेटी ने स्वय बाल धोकर नहलाना चाहा, लेकिन मा ने कह दिया—"मै डावडियो से करा लूगी।" चौकी पर बैठाकर अभी बाल ही धो पाया था, कि मा बेहोश हो गई। डावडिया दौडी-दौडी बेटी को बुलाने आई। वहा पहुचने तक वह होश मे आ चुकी थी। मा को नहलाकर

पलग पर लिटा दिया गया। डाक्टर साथ था, उसने दवाई दी। जोड मे दो-तीन दिन रहने के बाद मगलपुर चलना ही अच्छा समझा गया। खुली ट्रक मे पलग-पर लिटाकर मा को रख दिया गया। ट्रक को बहुत धीरे-धीरे चलाया गया। हालत गम्भीर देखकर नसीराबाद से डाक्टर तारा को भी बुला लिया गया, लेकिन दवा का कोई असर नही दिखलाई पड रहा था।

दीवाली करीब आ रही थी, नवम्बर का महीना था, जाडा थोडा-थोडा शुरू हो गया था। इस इलाके मे साल मे एक ही फसल होती है। नीचे धरती जल नही देती, इसलिए फसल आकाश के भरोसे ही करनी पडती है। बाजरा, मूग, मोठ की खेती होती है। बरसात के दिनो मे तो यह रेगिस्तान फसलो से ढक जाता है। मतीरा, काकडी, कचरे जैसे फल, मतीरी आदि नरकारिया भी इस बालुका-भूमि मे दिखाई पडती है। नवम्बर मे अब फसले कट चुकी थी, बाजरो की बालो को काटकर कडवी को अभी भी खडा रख छोडा गया था। रेत मे जगह-जगह तरकारी के काम आनेवाले भुगा, फूबी, भूडली (छत्रक) अपना सफेद शिर निकाले झाक रहे थे——इनकी सब्जी मे अण्डे जैसा स्वाद होता है। रेगिस्तान मे कही-कही छोटी-छोटी पहाडियो की तरह चालीस-चालीस हाथ ऊचे टीबे (टीले) खडे थे, जिनके ऊपर बिना पत्ते की हरी-हरी सीखोवाले फोगो के दो-दो तीन-तीन हाथ ऊचे पौधे खडे थे। दूर-दूर तक जगह-जगह शमी, केर, नीम के वृक्ष दिखलाई पडते थे, जिनके भीतर कही-कही पीली बालू देखी जा सकती थी। घासे अब पीली पड गई थी। फसल के कट जाने से गाय-भैंमे, भेड-बकरिया और ऊट खुले चर रहे थे। कचरे पीले पडकर मीठे हो गये थे, और लोग तरकारी के लिए उनकी माला बनाकर सुखाने की तैयारी कर रहे थे। बहुत-से खलियानो से अनाज उठ गया था, लेकिन कुछ खलिहान अब भी उठे नही थे। पशुओ और पक्षियो से बचाने के लिए गाडे गये मचान (डोचे) अब खाली हो गये थे। और जहा खेतो मे अभी तक आदमियो की आवाज सुनाई देती थी, वहा निर्जन बालुका भूमि निकलती आ रही थी, तो भी वनस्पतियो के अवशेष अभी जहा-तहा मौजूद थे। बरमात की वर्षा के कारण रेत दबी हुई थी, और हवा के तेज न होने से बालू मे लहरे नही पडी थी। टीबो के पास कही-कही काली मिट्टीवाली तलैया भी थी, जिनमे अभी पानी देखा जा सकता था। इन तलैयो मे मेढक-मेढकिया थी, यद्यपि मछलियो की सम्भावना नही थी।

किसानो का काम अभी खतम नही हुआ था। उन्हे अभी खलिहान का काम पूरा करना था, कडवियो को काटकर जमा करना था, फिर जानवरो के चारे की

चीजो को बालू के भीतर दबने से पहले ही इकट्ठा कर लेना था। इसीलिए यहा वाले दीवाली के दिन नही, बल्कि होली पर वह अपने घरो की लिपाई-पुताई करते है। मगलपुर शहर मे लोग अपने मकानो की सफाई मे लगे हुए थे। गढ मे भी एक ओर दीवाली की सफाई हो रही थी, और दूसरी ओर ठाकुरानी की बीमारी से उदासी छाई हुई थी।

दीवाली के दो-चार दिन ही पहले गौरी के मामा अगमसिह मर गये। उसी के आसपास सिरोहीवाली बुआ की लडकी मर गई। मा की बीमारी के कारण गौरी नही जा सकी, और उसने दुर्गा की बहू को श्राद्ध मे भेजा। जाते वक्त उससे कह दिया था, कि कलयुगिया के यहा से टपोरिया (हरीमिर्चो का अचार), जसपुर के मशहूर मालपूये और दूसरी चीजे लेती आना। लेकिन ये चीजे तब मगलपुर पहुची, जब कि उन्हे खाया नही जा सकता था।

मा की तबियत दिन-पर-दिन खराब होती जा रही थी। उन्हे ऊपर के कमरे मे रक्खा गया था, जिसमे हवा और रोशनी अच्छी तरह मिल सके। कई महीनो की बीमारी के कारण मा दुबली हो गई थी, लेकिन अभी उनकी हड्डी-हड्डी नहीं निकली थी। अन्तिम दिन से दो दिन पहले दोपहर को मा ने कहा—"बाल धोकर मुझे नहला दो।" छत पर चौकी पर बैठाकर बेटी मा का बाल धो रही थी। मा के मन मे तरह-तरह के विचार पैदा हो रहे थे। अपनी एकलौती बेटी की सेवाओ से प्रसन्न होकर कहा—"बेटी, तूने मेरी बडी सेवा की, तू सदा सुखी रहेगी।" फिर कुछ सोचकर कहा—"तेरा कोई कुछ बिगाड नही सकेगा।" यह तो भविष्य के गर्भ की बात थी, लेकिन मा की बीमारी का कारण तो आखिर वही बेटी की सौत आने की चिन्ता थी। नहलाकर बेटी बाबोसा के पास खाना खाने गई। मा को बेटी अपने हाथ से पाउडरवाला दूध बनाकर ग्लूकोस के बिस्कुट के साथ चार बार दिया करती। गौरी जल्दी-जल्दी कुछ ग्रास मुह मे डालकर ऊपर आई, तो मा ने कहा—"मुझे नीचे के कमरे मे ले चलो।" उसे कुर्सी पर बैठाकर बिचली मजिल के कमरे मे लाया गया।

× × × ×

उस दिन सुबह डाक्टर से पहले वैद्य आया। मा ने बेटी से कहा— मेरे लिए दूध बना दो।" वह बिल्कुल साधारण तौर से बातचीत कर रही थी। वैद्य ने नब्ज देखने के बाद बाबोसा से जाकर कहा, कि आज नब्ज अच्छी नही है। बेटी घबरा न जाये, इसके लिए उन्होने उसे धीरज धराते हुए कहा—"वैसे तुम्हारी मा की तबियत ठीकही

है, लेकिन आज गोपाष्टमी है, उनके हाथ से कुछ पुण्य करा देना अच्छा है।" पुण्य कराने के लिए बाबोसा ने अपने पास से दो हजार, मा के हाथ-खर्च मे एक हजार, और याया के पाच-सौ रुपये छुवाये। बेटी जान रही थी, कि यह गोपाष्टमी का नही, अन्तिम दान है। उसे सारी दिशाए सूनी-सूनी मालूम हो रही थी, और कटि के नीचेका अपना शरीर निष्प्राण हो गया सा मालूम होता था। डाक्टरोने पायरिया बतलाकर दात निकलवा दिये थे, और उसकी जगह नकली बत्तीसी लगवा दी थी। दान करा देने के बाद नौ-दस बजे तबियत कुछ ठीक मालूम होने लगी। राजपूतनी रसोईदारिन खाना बना रही थी। मा को अपनी बेटी की बडी चिन्ता थी, उन्होने रसोईदारिन से कहा--"गौरी के लिए गोभी-आलू-मटर-टमाटर डालकर अच्छी तरकारी बना दो। बेटी चिढ न जावे, उसे बीकानेरी रोटिया बहुत पसन्द है। तुलसी से कहो, कि उसके लिए बीकानेरी रोटिया बना दे।" बीकानेरी रोटिया परतदार परोठो की तरह बनती है, और उन्हे पकाकर घी मे अच्छी तरह चुपडा जाता है। वह खाने मे बहुत मुलायम और स्वादिष्ठ होती है। बीकानेरी रोटिया और तरकारी तैयार हो जाने पर मा ने गौरी से कहा--"तुम मा-बेटी दोनो मेरे सामने बैठकर खाओ।" लेकिन उस स्थिति मे याया या बेटी के मुह मे ग्रास कैसे जाता? मा समझती थी, बेटी खूब प्रसन्नता के साथ भोजन का स्वाद ले रही है, लेकिन वह ग्रास तोड-तोडकर मुह हिलाती उसे कटोरी के पीछे दबाती जा रही थी। पडोसी ठाकुर जससिह काका आकर बोले--"भाभी, आज तबियत कैसी है?" मा ने मुह पर प्रसन्नता लाते हुए कहा--"ठीक है लालजीसा, मरना तो है ही अब।"

चार बजे शाम को मा अपनी जेठानी से अलग बात कर रही थी--"मरना तो है ही, केवल आपकी बेटी की फिकर है, लेकिन आप और जेठजीसा है, इसलिए मुझे किसी बात की चिन्ता नही।"

अन्तिम घडिया नजदीक आती मालूम हो रही थी। गीता सुनाने के लिए पण्डित आया। ठाकुरानी स्वय भी गीता-पाठ किया करती थी, इसलिए वह समझ गई, कि कौन-सी पोथी का श्लोक पढा जा रहा है। गीता सुनाने का मतलब था, यमदूत दरवाजे के भीतर आग ये है। लेकिन उन्होने बिना भी कुछ चिन्तित हुए कहा--"क्या गीता सुनाने लग गये? क्या समझते हो कि मै बेहोश हू?"

•गीता सुनाई जाने लगी। बेटी ने इसी समय पूछा--"मा, दूध लाऊ?"

"अब दूध नही चाहिए।"

बेटी ने दिल को दबाकर फिर कहा--"पान दू?"

"मुह से बत्तीसे निकाल दे।"

बत्तीसी निकालने के लिए बेटी ने हाथ बढाया, लेकिन अभी दात निकाल नही पाई थी, कि वह स्वय बेहोश हो गई। उसे पास के कमरे मे ले जाया गया, और मा के लिए आये डाक्टर अब बेटी का उपचार करने लगा।

चिराग जल गये, मा के कमरे मे बाबोसा, काकोसा, डाक्टर, वैद्य और कितने ही दूसरे आदमी बैठे थे। दस बज गये। मा मे अभी भी बेहोशी का लक्षण नही दिखाई देता था। वह ठीक से बाते कर रही थी। बाबोसा ने अपनी अनुज-वधू को ढाढस देते हुए कहलाया--"गौरी की फिकर मत करो।"

इस पर मा ने जवाब दिया--"आप है, तो फिर मुझे क्यो फिकर हो ?"

याया ने पूछा--"मै कौन हू ?"

"भाभीसा।"

दूसरो के बारे मे भी पूछा। उनके भी नाम और चेहरे को वह पहचानती थी। बेटी के बारे मे पूछने पर जेठानी को कहा--"आपकी बेटी है।"

इस तरह बातचीत करते आधी रात बीत गई। एक बजे के समय जबान कुछ लडखडाने लगी। तुलमी का पत्ता और गगाजल दिया गया। बेटी वही गद्दी पर निर्जीव-सी पडी थी। अब मा को उठाकर नीचे तिबारे मे ले गये, लेकिन लडकी वही रही, उसके पास डाक्टर-वैद्य और दूसरे कितने आदमी बैठे रहे। उसने रजाई ओढ लिया था। डेढ-दो बजे मा को अन्तिम स्नान करा रहे थे, उसी समय एक हिचकी आई और प्राण-पखेरू उड गये। पडोसन चाची ने कहा---"भाभीसा, आप दोनो जैसी देवरानी-जेठानी सारे सलमाडा मे नही दिखलाई पडी।" कीचड मे कमल पैदा होता है। सामन्तवर्ग गन्दा, बहुत बुरी तरह का गन्दा कीचड है, इसमे शक नही, लेकिन उसमे भी कभी-कभी कोई कमल उग आते है, मा वैसा ही कमल थी। उनके हृदय मे सबके लिए अपार दया थी। वह सबका हित करना चाहती थी। इस तरह की सती-साध्वी, दयाशीला महिलाए इतिहास मे और इस वर्ग मे भी कभी-कभी और भी हुई होगी, जिन्होने अपने दु खपूर्ण जीवन-भर अपनी शक्ति के अनसार दुखियो के बोझो को हलका करने की कोशिश की, और फिर अन्त मे बालू के ऊपर के पद-चिन्ह की तरह लुप्त हो गई। शान्तिकुमारी की शिक्षा-दीक्षा ऐसी नही हुई थी, कि वह दुनिया के दु खो की जडो तक पहुचती, और अपने को भूलकर उन्हे हटाने मे आनन्द अनुभव करती। दार्शनिक और आदर्शवादी बुद्धि न पाने पर भी उनका हृदय करुणापूर्ण था, क्या यह कम था ?

अधेरा रहते ही आसपास के ठाकुरो और बिरादरीवालो को सूचना देने के लिए सवार छूटे। लोग आने लगे। मा के दत्तक पुत्र बालसिह के पास तीन दिन

पहले खबर दी गई, तो उन्होने कहला भेजा—"मै मोटर भेजता हू, यही मखनपुर उन्हे भेज दे।" भला ऐसी बीमारी मे उन्हे कैसे मोटर मे भेजा जा सकता था ? मृत्यु के दिन बालसिह आये भी, तो शराब मे चूर। ऐसे आदमी को देखकर बाबोसा कैसे सन्तुष्ट हो सकते ? उन्होने उसे हाथ ही नही लगाने दिया, और अपने गोद लिये लडके से दाह-कर्म करवाया। बाबोसा बुखार मे थे, इसलिए वह श्मशान तक नही जा सके। वह गढ के दरवाजे के पासवाले मन्दिर तक गये। वही अन्धा सरदार अपनी अनुजवधू के लिए खुलकर आसुओ की धार बहाने लगा, उसकी सारी धीरता और गम्भीरता के बाध टूट गये। आठ-नौ बजे अर्थी श्मशान की ओर चली, साथ मे बाजा बज रहा था, कोतल घोडे चल रहे थे, रुपये-पैसे लुटाय जा रहे थे। दामाद के पास भी तार दिया गया था, लेकिन उनको आने की फुरसत नही थी, और न इसकी ही फुरसत थी, कि किसी आदमी या लौडी को पुछार के लिए भेज देते। नराधम इस वर्ग मे अधिक आसानी से मिल सकते है, इसलिए इन दोनो ठाकुरो के इस समय के बर्ताव से आश्चर्य करने की अवश्यकता नही। सहस्राब्दियो से लोगो का खून चूसकर मोटा हुआ यह वर्ग इन्सानियत के गुणो को अपने मे लाने मे असमर्थ है। अपभ्रंश से महाकवि ने इस वर्ग के लिए ठीक ही कहा था—

चमरानिलेहि उडेउ गुणाइ। अभिसेक धोयउ सुजनत्तननाइ।

आज से हजार वर्ष पहले पुष्पदत के अनुसार चवर डुलाने से इनके गुण उड गये, और अभिषेक के जल ने इनकी सुजनता को खतम कर दिया। इस वर्ग मे दूसरी आशा ही क्या की जा सकती थी ? अच्छा ही हुआ, जो आज यह वर्ग नाम-शेष हो रहा है। धर्म के नाम पर, जाति और सस्कृति के नाम पर, डाकुओ और हत्यारो से गठबन्धन करके अपने अस्तित्व को कायम रखने के लिए चाहे यह वर्ग कितना ही हाथ-पैर मारे, लेकिन अब उसके दिन फिर लौट नही सकते।

शाम को पडोस की चाची छाछ और भोजन लेकर आई। गौरी ने समझा, यदि मै न खाऊँगी तो बाबोसा और याया चौबीस घण्टे से उपवास करने आज भी निराहार रह जायेगे, इसलिए उसने कटोरी भर छाछ मिली बाजरी को राबडी पी ली।

अध्याय १९

हृदय-हीनता

दाह-क्रिया हो जाने के दूसरे दिन बाबोसा ने मा के दु ख मे जलती गौरी को धीरता धराने के लिए पास बुलाया। गौरी का हृदय विदीर्ण हो रहा था, खासकर बाबोसा के पास जाने पर तो वह बिल्कुल छटपटाने लगा, लेकिन अपने कातर बनकर दूसरो को दु खी करना उसे पसन्द नही था। बाबोसा ने कुछ ही शब्द कहे थे, कि गौरी ने उन्हे सन्तुष्ट करते हुए कहा--"अपने स्वार्थ के लिए मै मा के और जीने की कामना कर सकती थी, लेकिन मा के लिए यह अच्छा नही होता। उसका तो आपके सामने ही मरना अच्छा था। आपके बाद भी अगर वह बैठी रहती तो बालसिह जैसे बेटे के राज्य मे उसे तिलतिल जलना पडता।"

चार-पाच दिन बाद बहिन वन्दनकुमारी अपने पति के साथ आ गई। दोनो बहिने साथ रहती, साथ ही सोती। गौरी के हृदय को भारी अवलम्ब मिला। नीचे आगन मे शोक मनाती स्त्रिया रोदन-क्रन्दन करती, जहा गौरी को न जाने देने के लिए बाबोसा ने हुकुम दे रक्खा था। यद्यपि दाहकर्म मगलपुर मे हुआ था और श्राद्ध भी वही होने जा रहा था, लेकिन बालसिह भी अपनी गोदवाली मा का श्राद्ध किये बिना कैसे मुह दिखाते, इसलिए श्राद्ध दोनो ही जगह हुआ। कलक को धोने के लिए बालसिह ने कुछ और उदारता दिखलाते हुए मखनपुर, नरपुर और लोखर (पाण्डवो के तीर्थ) के तीन गावो की ब्रह्मपुरी (महाभोज) कराई। बारह दिन बाद खलपा के ठाकुरसाहब का तार आया, कि मै बीमार हू। खैर, यह तो पता लग गया, कि दामाद साहब अभी दुनिया मे है। गावो मे छूटे सवारो से सूचना पाकर नरपुर, मगलपुर और मखनपुर तीनो ठेकाणो के सभी गावो के पुरुषो ने दाढी-मूछ मुडाकर ठाकुरानी के प्रति अपनी श्रद्धा दिखलाई, और अपने यहा के कुए और तालाबो पर पानीवाडा किया।

गौरी मा की सेवा मे इतनी तल्लीन थी, कि वह सोना भी भूल गई थी। मा की चारपाई के पास रात को भी वह किताब लिये बैठी रहती। वह किसी काम को लौडियो पर नही छोडना चाहती थी। उस समय तो थकावट नही मालूम हुई, किन्तु अब उसका शरीर बिल्कुल शिथिल हो गया था।

ठाकुर के बारे मे जो खबरे आई थी, उससे गौरी ने यही अच्छा समझा, कि इस वक्त चली जाय। उसके साथ लौडियो और उनके बच्चो के अतिरिक्त कुछ राजपूत भी गये। जीजा-जीजी फुसावा तक साथ रहे। जसपुर मे अपनी कार थी, जिस पर चढकर गौरी जनपुर चली गई। यद्यपि वकील शिवलालजी ने ठेकाणे से इस्तीफा दे दिया था, लेकिन वह गौरी को अपनी सेवाओ से वचित नही रखना चाहते थे। बाबोसा ने उन्हे कह दिया था, कि गौरी के हाथ-खर्चवाले गाव का काम तो आपको ही करना होगा। कार जनपुर मे खलपावाली हवेली मे जा लगी। उस दिन सानी को भोज दिया गया था। सौत गुसलखाने मे श्रृगार-पटार मे लगी हुई थी, ठाकुर साहब शाला मे बैठे थे। मोटर की आवाज सुनकर उन्हे मालूम हुआ, कि सेठजी आ गये। वह स्वागत के लिए बाहर दौड आये। देखा, बडी ठाकुरानी है। उन्होने बाबोसा के कुशल-मगल के बारे मे पूछा। मगलपुर से आये मर्द उनके साथ बैठक मे चले गये, ठाकुरानी सीढियो पर चढती अपने कमरे की ओर गई। सौत को भी सेठ के आने का सन्देह हुआ था, इसलिए वह भी उतावली हो बाथरूम से निकल आई। सामने जेठी सौत को देखकर उसका फूल-सा खिला चेहरा कुछ मुर्झा गया। उसे शिष्टाचार के लिए भी यह कहने की जरूरत नही मालूम हुई, कि मा के मरने मे मेरी सवेदना है। हा, उसने यह जरूर पूछा—— "आपकी तबियत ठीक तो है ?"

थोडी देर मे सेठ अपनी रखेली और ड्राइवर भी अपनी रखेली के साथ आ गये। सब बैठक मे चले गये। सौत ने पुछवाया, कि खाना ऊपर खायेगी या नीचे महफिल मे ? अभी मा को मरे एक ही पखवारा हुआ था, महफिल मे गौरी का खान-पान कैसे हो सकता था ? पराये पुरुषो और उनकी रखेलियो के साथ रग-रलिया मचाने की बडी ठाकुरानी की आदत भी नही थी। उन्होने कहला दिया—— 'मुझे आज नही खाना है।" उनकी छोरियो, उनके बच्चो और साथ आये जनो—पन्द्रह-बीस आदमियो—को खाना खिला दिया गया। बैठक मे ह्विस्की की बोतलो पर बोतले खुल रही थी, खान-पान की खूब चहल-पहल थी, ठहाके मारे जा रहे थे, हा-हा ही-ही हो रही थी। मगलपुरवाले राजपूतो ने ऐसी महफिले नही देखी थी। हल्ला-गुल्ला सुनकर उनको आश्चर्य हो रहा था, सोच रहे थे—"दोनो सौते लड तो नही गई।" छोरियो से पूछने पर उन्होने बतलाया, कि नीचे महफिल हो रही है। बूढे राजपूत ने इस पर कहा—"बाबा, मैने तो ऐसी महफिल दुनिया मे कोई देखी नही।" दो बजे रात तक आनन्द-मौज, नाच-गाना होकर महफिल बर्खास्त हुई——आज छोटी ठाकुरानी ने अपने नृत्य का कौशल खूब दिखलाया था।

सुबह भी ठाकुर साहब अपनी बडी पत्नी के पास कुशल-मगल पूछने नही आये। दोपहर को इधर-उधर नजर डालते चोर की तरह सीढियो पर चढने लगे। चार ही पाच सीढिया चढे थे, कि नीचे से छोटी ठाकुरानी के पीहर के नौकर ने पुकारा—"आपको बुला रही है।" ठाकुर साहब ने कहा—"अभी आता हू।" एक कदम और आगे बढे, इसी वक्त फिर आवाज आई—"पहले यहा आइये।" ठाकुर की हिम्मत नही थी, कि कदम अगली सीढी पर रखते, वह उलटे पैर लौट गये। पिछले कितने ही महीनो मे सौत ने ठाकुर को अगुलियो पर नचाने लायक बना लिया था, यह साफ-साफ दिखलाई पड रहा था। ठाकुर उस समय जो सीढियो से लौटकर गये, तो फिर बडी ठाकुरानी के पास नही आये।

तीन-चार दिन तक बडी ठाकुरानी को नीचे से खाना बनकर आता था, और मगलपुरवालो को भी खाना दिया जाता था। फिर एक दिन सौत के पीहर के नौकर ने आकर उस कमरे के जाजम को उठा लिया, जिसमे मगलपुरवाले राजपूत ठहरे थे। सुबह का खाना दे दिया गया, दोपहर बाद ठाकुर और उनकी छोटी बहू मोटर पर चढकर सिनेमा देखने निकल गये। रसोइये ने बडी ठाकुरानी को कह दिया—"शाम का खाना यहा नही बनेगा, हमे ऐसा ही हुकुम है।" गौरी ने दोपहर को खाने का सब सामान मगवा लिया और छोरिया ऊपर खाना बनाने मे लग गई। यह विचित्र अनुभव था, और बहुत ही दु खदायक। इतनी जल्दी बात यहा तक पहुच जायेगी, इसकी उसे आशा नही थी।

इसके बाद गौरी के पास मिलने के लिए जब स्त्रिया आती, तो ठाकुर साहब के द्वारा दरवाजे पर बैठाये दो नौकर उन्हे यह कहकर रोक देते, कि भीतर जाने का किसी को हुकुम नही है। ठाकुरानियो के लिए रोक नही थी। खलपा की हवेली बहुत लम्बी-चौडी थी, उसका एक हाता बहुत बडा था। उसी मुहल्ले मे सौ-डेढ-सौ मुसलमान लोहार रहते थे। भोज करने के लिए उनके पास कोई बडा स्थान नही था। प्रसाद वकील के समय मुश्किल से और सो भी पैसे लेकर उन्हे बडे हाते मे भोज-भाज करने की इजाजत देता, लेकिन गौरी की ठकुराई मे अवस्था दूसरी थी। वह समझती थी, खाली जगह पडी है, यदि वह इसका उपयोग ले ले, तो हमारा क्या बिगडता है। लोहारो को अपने काम के लिए हर वक्त यह आगन मिल जाया करता था। लोहार और लोहारिया सभी बडी ठाकुरानी के बडे भक्त थे। मा के मरने की खबर सुनकर लोहारिया जब पुछार करने आई, तो उन्हे भी ठाकुर साहब के आदमियो ने रोका, लेकिन वह कब माननेवाली थी, वह जानती थी, कि

यहा जनपुर मे खलपा के ठाकुर साहब की कुछ भी चलनेवाली नही है। वह यह कहकर भीतर चली गई--"देख्या थाणो माजन (रग-ढग) है तो वाइज छाछ बेचणवाली।" गौरी भी अपने लिए एक-दो दूध देनेवाली भेसे मगवाकर जनपुर मे रखती थी, और काम से फाजिल जो छाछ होता, उसे मुहल्ले की लोहारियो को ऐसे ही बाट दिया करती। सौत छाछ का दाम वसूल करने लगी थी, इसलिए लोहारियो ने उसे छाछ बेचनेवाली ठाकुरानी नाम दे रक्खा था। खलपा मे खबर गई, तो वहा मे भी कितनी ही स्त्रिया चलकर ठाकुरानी के साथ सवेदना प्रकट करने के लिए जनपुर आई, उनके लिए भी कडी मनाही की गई। गौरी ने उन्हे खाना खिला रास्ते के लिए पैसा देकर उसी दिन लौटा दिया। खलपा से जो पुरुष सवेदना प्रकट करने के लिए आये थे, उनमे से एक के हाथ पकडकर ठाकुर के आदमियो ने जूते लगाने शुरू किये, इस पर मगलपुरवालो ने आकर उन्हे छुडाया।

× × × ×

अब सौत हर तरह से तग करने पर उतारू थी। वह चाहती थी, कि नाको मे दम होकर उसकी सौत यहा से भाग जाये। मगलपुर के मर्द जिस वक्त खाना खाने बैठते, उसी वक्त वह हल्ला करवाती--"ठाकुरानी बाहर जा रही है, इसलिए पर्दे के लिए पुरुषो को यहा से हट जाना चाहिए।" बेचारे खाना छोडकर अलग हो जाते, और करमा निकलने मे घण्टो लगा देती। छोरियो को आने-जाने मे भी बहुत बाधा डालती, गालिया देती रहती, लेकिन अपनी छोरियो की तरह उनके ऊपर हाथ उठाने की उसकी हिम्मत नही होती थी।

उग्रपुरवाली ननद के पति मर गये। बरस दिन की काल-कोठरी (कोणा) छोडकर वह भाई के पास जनपुर चली आई थी और नीचे ही ठहरी हुई थी। सवेदना प्रकट करने के लिए गौरी भी नीचे उतरकर उसके पास गई, तो बहिन ने व्यग्य करते हुए कहा--"आपने क्यो नीचे आने की तकलीफ की?" "मैने भूल की"—कहकर दिल से भी गौरी ने अपनी भूल स्वीकार की। ठाकुर साहब ने अपने आठ-नौ वर्ष के भाजे को ऊपर भेजा, जिसने आकर कहा--"मामीसा, मामूसा जन्मपत्री मगावै है।" गौरी ने ठाकुर साहब की जन्मपत्री दे दी। लडका फिर ऊपर आकर कहने लगा--"और भी जन्मपत्री मगावै।" लेकिन वहा तो एक ही जन्म-पत्री थी, और जन्मपत्री कहा से देती। वैसा कह देने पर लडका फिर तीसरी बार आकर कहने लगा—"छोटी मामीसा की तस्वीर मगाते है।" सौत की तस्वीर गौरी

मगलपुर भूल आई थी, इसलिए कह दिया—"मे मगाकर दे दूगी।" सौत ने गौरी के कई हजार के जेवर और चादी-सोने की चीजे ताला तोड करके ले लिया था, इसके बारे मे तो कुछ नही, लेकिन अजमेर मे जो कण्ठी उसे गौरी ने दी थी, उसे भाजे के हाथ भेजकर सौत ने कहलवाया—"यह अपनी कण्ठी रख लो, और हमारी पानो की डिबिया दे दो।" गौरी ने डिबिया देते हुए कहा—"कण्ठी मैंने वापस लेने के लिए नही दी थी, लेकिन यदि वह रखना नही चाहती, तो मजबूर हू"—कहकर उसने कण्ठी रख ली।

सौत और ठाकुर साहब गौरी को हवेली मे रहने देना नही चाहते थे, क्योकि उनकी महफिल खुलकर जमने नही पाती थी। अकल के अन्धे ठाकुर साहब और उसकी चालाक छोटी बहू का सबसे गहरा दोस्त था सेठ सानी। पान-गोष्ठियो मे ठाकुरानी मुक्त होकर अपना नृत्य-कौशल दिखलाती और सेठ से निछरावल प्राप्त करती। गौरी के रहते उसके लिए पूरी स्वतन्त्रता नही थी। पहली बार सिनेमा मे जाने के समय जो दृश्य देखा था, उससे गौरी को इन महफिलो का रहस्य मालूम हो गया, जिसे सौत भी जानती थी। सेठ कितने और ठाकुरो का सर्वस्व हरण कर चुका था, और अब खलपा के ठाकुर को भी कौपीन पहनाना चाहता था। यह खबरे बाबोसा के पास भी पहुची, और उन्होने और भी कुछ हट्टे-कट्टे आदमी मगलपुर से भेज दिये। सलमाडा के इन एक दर्जन मजबूत आदमियो के सामने ठाकुर के दो-तीन मरियल आदमी झगडा करने की हिम्मत कैसे कर सकते थे? छोटी ठाकुरानी लौडियो की मार-पीट मे बहुत तेज थी ही। उसके मार के कारण टाग टूटी छोरी खलपा के एक दारोगा के साथ भागकर जनपुर ही मे किराये के मकान मे रहती थी। उस दिन एक दूसरी छोरी पर मार पडी। उसने अपने पति से सलाह कर ली, और वह दो बजे रात को हवेली से निकलकर लगडी छोरी के पास चली गई। ठाकुर साहब ने पुलिस मे रिपोर्ट करवाई, कि हमारा पाच हजार का जेवर लेकर भाग गई। छोरी और उसके मर्द को पकडकर कोतवाली मे ले गये, और साथ ही ठाकुर के भी दो-तीन आदमियो को बुलवा मगाया। छोरी के शरीर पर बहुत जगह मार के नीले दाग पड़े हुए थे। उसने अपने घावो को दिखलाकर कहा, कि ठाकुरानी बहुत बेदर्दी से मारती है, इसीलिए मे जान बचाकर भाग आई। पुलिस ने छोरी और उसके पति को छोड दिया और ठाकुर के आदमियो को हवालात मे बन्द कर दिया। ठाकुर को खबर लगी, तो उन्होने पुलिस को पैसे देकर किसी तरह अपने आदमियो को छुडवा मगवाया।

ठाकुर साहब अपनी छोटी स्त्री की बात मे आकर बडी ठाकुरानी को जो

तकलीफे दे रहे थे, उसकी खबर दूसरे ताजीमी सरदारो और रिश्तेदारो को मिले बिना नही रही। पोसी-ठाकुर तो सीधे फटकारते हुए कहते--"रे डप्पोल (मूर्ख), थोडी तो अकल रख, क्यो अपने घर को डुबाता है, और क्यो उस मूर्ख स्त्री की बात मे पडा है ?" गौरी के विवाह कराने मे जिनका सबसे ज्यादा हाथ था, वह हिम्मतसिह मामा भी ठाकुर को बहुत समझाते, लेकिन "मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलहि बिरचि सम।"

बाबोसा बार-बार चिट्ठी लिखकर गौरी को चले आने के लिए लिखते, लेकिन वह मैदान छोड कायर बनने के लिए तैयार नही थी। उसने लिख दिया--"मुझे आपने जिस घर मे दे दिया है, मै तो वही रहूगी, यहा से नही हिलूगी।" खलपा-ठाकुर जानते थे, कि उनकी बडी बीबी जनपुर मे अनाथ नही है। महाराजा के ए० डी० सी० उसके नजदीकी और पक्षपाती हैं, उसका मामा दरबार मे बहुत रसूख रखता है, जो समय-समय पर स्थानापन्न जज का काम करता है। सेठ के साथ इतनी बेतकल्लुफी भी ठाकुरो के वर्ग मे अच्छी नही समझी जाती, इसलिए भी ठाकुर खलपा बहुतो की सहानुभूति खो बैठा था। उसके कह देने पर गौरी हवेली छोडकर नही जा सकती थी । सेठ को भी महफिल फीकी होने का बहुत अफसोस था, इसलिए उसने अपने एक बगले को किराये पर देने के लिए मजूर किया और ठाकुर साहब अपना सामान वहा भेजने लगे। जाते समय उन्होने बहुत-से कमरो मे ताले लगवा दिये और जिसमे कोई ताला खोलकर भीतर न चला जाय, इसके लिए उन पर लिखकर कागज की चिटे (चेपे) लगा दी। आगन मे छोटी ठाकुरानी कागज की चिट काट रही थी, ठाकुर साहब उस पर नाम लिख रहे थे और ननद लेई लगा रही थी। मरदाने के सभी कमरो मे चिटे लगाई गई। गौरी की लौडियो की टट्टी पर भी चिट लगा दी गई। जाडो के दिन थे, एक कोठरी मे नहाने-धोने के लिए जलते चूल्हे पर पानी से भरा देग रक्खा था, उसके दरवाजे पर भी चिट लगा दी गई। गौरी ने जिस कोठरी मे ईधन की लकडिया भरवा रक्खी थी, उस पर भी चिट लगा दी गई, और जिस कमरे मे सारी हवेली की बिजली की स्विच थी, उस पर भी ताला और चिट लग गई। शाम को जब बत्ती जलाने के लिए स्विच दबाई गई, तो वह जली नही। खैर, शहर था, मोमबत्ती और लालटेन मगाने मे देर नही हुई।

अगले दिन हिम्मतसिह मामा को खबर लगी, तो आये। वह बहुत दुखी थे, अपनी भाजी की इस अवस्था को देखकर कह रहे थे--"मै ही वह पापी हू, जिसने अपनी भाजी के भाग्य को बिगाडा।" फिर उन्होने और पोस के ठाकुर ने भी कहा,

कि कल हम सब दरवाजो को खुलवा देगे। पास-ठाकुर ने महाराजा ऊधोसिह के पास हस-हसकर खलपा के ठाकुर की सारी बेवकूफिया सुना दी, और कहा कि किस तरह सलपुर भागने से पहले वह सभी दरवाजो मे चेपे लगा गया है। महाराजा ने अपने छोटे भाई से कहा, कि ठाकुर के आदमी को बुलाकर उसके सामने ताला खुलवा चेपे हटवा दो, यदि ताला न खोले, तो उसे तोडवा देना। महाराजा के अनुज ठाकुर के आदमी के साथ हवेली मे गये। "ताला खोलो" कहने पर ठाकुर के आदमी ने कहा—"मेरे पास चाबी नही है।" लोहारो का तो मुहल्ला ही था, ताला तोड दिया गया, बिजली के लिए अलग स्विच लगवा दी गई। सब कमरो को घूमकर राजानुज ने देखा, वहा न एक भी दरी थी, न एक फर्नीचर, केवल एक कमरे मे मिट्टी का एक बडा-सा घडा था। उन्होने उसे देखकर ठाकुर के नौकर से कहा—"यह लो अपना धन, इसी के लिए चेपे लगवाई थी ना ?"

ठाकुर साहब सेठ को रिझाने के लिए अपनी छोटी बहू के साथ दूसरी जगह चले गये, खलपा की हवेली अब गौरी के हाथ मे थी। जिस वक्त कलह बहुत जोरो पर थी, और उसकी खबर मुहल्ले के लोहारो और दर्जियो को मिली, तो उनके पचो ने ठाकुर साहब के हवेली मे रहते समय ही आकर ठाकुरानी से कहलवाया—"हम सदा सेवा के लिए हाजिर है, जिस वक्त भी हमारी जरूरत हो, हमे हुकुम दे।" ठाकुरानी का यह सहानुभूतिपूर्ण बर्ताव ही था, जिसके कारण यह अशिक्षित, सीधे-सादे मुसलमान लोहार-दर्जी उनके लिए प्राण देने को तैयार थे। सौत ने और छोटी सौतो को बडी सौतो को दबाकर रखते देखा था। वह समझती थी, कि मै भी वैसा कर सकूगी, लेकिन, वह नही जानती थी, कि उसके लिए काफी बुद्धि उसमे नही है, और न उसकी सौत दूसरी सौतो जैसी मन और शरीर से बहुत दुर्बल है। बाबोसा मगलपुर बुला रहे थे, हिम्मतसिह मामा अपनी जनपुर की हवेली मे आने के लिए कह रहे थे, लेकिन गौरी अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ रही, और उसे नही, बल्कि उसकी सौत को वहा से भागना पडा। आठ महीने जनपुर मे रहने के बाद बहिन के बडे लडके के देहान्त होने पर गौरी बलमू चली गई। बलमू से लौटने के बाद बाबोसा के बार-बार के आग्रह को मानकर उनसे मिलने वह मगलपुर भी गई। बाबोसा बहुत कह रहे थे—"हम जोडवाली कोठी तुझे लिख देते है, या अगर जसपुर की हवेली पसन्द हो, तो उसे तेरे नाम कर देते है, तू यही आकर रह। लेकिन गौरी सौत को पीठ नही दिखाना चाहती थी, और न यही चाहती थी, कि आगे चलकर गोदवाले भाई उसे कहे—"इसको अपने घर

ठिकाना नही लगा, तो हमारी कोठी लेकर बैठ गई।' दो महीना मगलपुर रहकर उसे फिर जनपुर आना पडा।

जनपुर की हवेली मे यद्यपि नौकर-नौकरानिया थी, लेकिन उसे अनुपस्थित देखकर ठाकुर साहब वहा के सारे फर्नीचर और दूसरी चीजो को उठवा ले गये। इसकी खबर वकील साहब और मामाजी ने अपनी चिट्ठी मे लिख भेजी। आने पर गौरी ने देखा, सभी कमरे खाली है, मेज-कुर्सिया गायब है, रेडियो का भी पता नही है। एक कोठरी की ओर उनकी नजर नही पडी थी, इसलिए वहा तीन दरिया और छतवाले बिजली के तीन पखे बच रहे थे। बिजली का झाड भी उठ गया था। सलपुर मे ठाकुर-ठाकुरानी को सेठ जिस तरह नगा नचा रहा था, महफिले कर रहा था, उसके कारण ठाकुर की सब जगह बडी बदनामी हो रही थी। ढोलणिया आती, गाना गाती, बाजा बजाती, ठाकुरानी ह्विस्की के नशे मे मस्त हो नाचती, सेठ सौ-सौ रुपये की निछरावल देता। महफिलवाले शराब मे मस्त हो, गिलासो को इधर से उधर फेकते, और तरह-तरह की कुचेष्टाए करते। यह ऐसी बाते थी, जो अकल के कोरे ठाकुर के बगले के भीतर तक ही बद नही रह सकती थी।

× × × ×

हवेली से इस तरह निकल जाने का सौत को बहुत मलाल था। वह चाहती थी, कि हवेली को बेच दे, फिर देखे सलमिया-ठाकुरानी कहा रहती है। ठाकुर ने हवेली को एक लोहार के हाथ बेच देना चाहा, लेकिन महाराज के हुकुम से वह उसे बेच नही सका। महाराज ने कहा—"जब तक बडी ठाकुरानी उस हवेली मे रहती है, तब तक तुम उसे बेच नही सकते, फिर हवेली तुम्हारी है, इसके लिए राज की ओर से मिला पट्टा दिखलाओ।" पट्टा कहा था ? उसके अभाव मे वह राज की ओर से मिली भेट भर मानी जा सकती, बेचने का अधिकार ठाकुर को नही हो सकता था। यह देखकर ठाकुर और उनकी छिछोरी ठाकुरानी का मुह छोटासा हो गया।

पीछे महारानी ने पूछा—"तुम्हे बगले मे रहना पसन्द है या हवेली मे ?" गौरी को पुराने ढग की हवेली से नये ढग का बगला अधिक पसन्द था। यह कहने पर महारानी ने कहा—"कोई किराये का बगला देख लो, किराया हम ठेकाणे से दिल-वायेगे।" गौरी ने रामबाडा मुहल्ले मे नेली के सुन्दर बगले को पसन्द किया, जिसका किराया सौ रुपया मासिक था। गौरी उसी मे चली गई। खलपा को किराया और

बिजली-पानी का टैक्स देना पडता। इसके बाद ठाकुर को अपनी हवेली बेचने की छुट्टी मिल गई। अकल के अन्धो, गाठ के पूरो की जो अवस्था होती थी, वही ठाकुर की भी हुई। इतनी अधिक जमीन और इमारत रखनेवाली हवेली को उन्होने अस्सी हजार मे बेच दिया। इसे कहने की अवश्यकता नही, कि इसमे से कुछ हजार सेठ की पाकेट मे गये। फिर सेठ ने एक लाख पन्द्रह हजार मे एक बगला खरिदवा दिया, जो उस बगले का आधा भी नही था, जिसे कि गौरी ने सौ रुपये मासिक किराये पर लिया था, और जिसे कुछ दिनो बाद चालीस हजार मे खरीद भी लिया। नये बगले के खरिदवाने मे भी कई हजार सेठ की जेब मे गये। छोटी ठाकुरानी की कीर्ति चारो ओर छा गई थी। उसने बहुत कोशिश की, कि महारानी के पास पहुचे, लेकिन वह बहुत बदनाम हो चुकी थी, इसलिए महारानी उससे नफरत करती थी।

महाराजा ऊधोसिह मर गये, साल भर बाद जनपुर भी राजस्थान मे विलीन हो गया। खलपा ने किराये का रुपया देना बन्द कर दिया, ठाकुर और उनकी दूसरी बीबी बदला लेकर बहुत खुश हुई होगी, लेकिन अब उनके सामने तो खलपा के सारे ठिकाणे के हाथ से चले जाने की समस्या खडी हो गई थी, सेठ भी उन्हे अच्छी तरह मूडमाड चुका था।

ठाकुर साहब ने एक मोटर अपनी बडी बीबी को भी खरीदकर दे दी थी। सौत इस फिकर मे थी कि कैसे उसे ले लिया जाय। यदि गौरी मगलपुर जाते उसे अपने साथ न ले गई होती, तो इसमे शक नही, और चीजो की तरह मोटर भी ठाकुर साहब अपने यहा ले जाते। जबर्दस्ती लेना सम्भव नही था, क्योकि गौरी के साथ मगलपुर के कितने ही मजबूत आदमी भी थे। अपने दोस्तो की सलाह से अकल के अन्धे, गाठ के भी खोटे ठाकुर ने अपनी बडी बीबी पर इस बात का मुकदमा दायर कर दिया, कि जबर्दस्ती हमारी मोटर रख ली है। अदालत से बयान लेने के लिए बडी ठाकुरानी के पास आदमी आया, और ठाकुरानी ने जो सच्ची-सच्ची बात थी, कह दी। शिवलालजी पहले ही से कुछ जानते थे, इसलिए उन्होने लाइसेन्स भी बडी ठाकुरानी के नाम ले लिया था। ठाकुर की कीर्ति जनपुर मे सब जगह फैली थी ही, अदालत ने उनका मुकदमा खारिज कर दिया।

× × × ×

खलपा के पुराने सभी कामदार धीरे-धीरे हट गये। जनपुर मे गये अफसरो ने इस्तीफा दे दिया और खलपावालो को नौकरी से निकाल दिया गया था। अब

सारा कारोबार ठाकुर के दोस्त सानी ने अपने हाथ मे ले लिया था। उसने अपनी तरफ से कामदार रक्खे। ठाकुर-ठाकुरानी जितना ही पागल हो, जितना ही अधिक खर्च करे, उतना ही अधिक वह सेठ के हाथ मे बध रहे थे, इसलिए खर्च-बर्च कराने मे सेठ ने बडी उदारता दिखलाई। छ महीने पहले खरीदी मोटर मे कोई दोष निकालकर कम दाम मे अपने फर्म द्वारा बिचवा देना, और तडक-भडक-वाली नई मोटर बड़े दामो मे खरिदवा देना। तीन महीने मे रेफ्रीजेटर को भी बदलवा देता। ठाकुरानी को इच्छा प्रकट करने भर की देर थी, और उनके लिए गहने और कपडे मौजूद रहते। अपनी बडी सौत के जेवरो मे से भी काफी उसके पास थे। छोटी ठाकुरानी का सेठ छोड और किसी पर विश्वास नही था। सेठ को उसने अपना भाई बना रखा था। सेठ खलपा भी जाता, वहा भी शराब-नाच की महफिले गर्म होती। ठाकुरानी अपनी डावडियो को कहकर भाई के लिए गन्दी से गन्दी गालिया गवाती—गन्दी गाली सुनने मे ठाकुरानी को बडा आनन्द आता। वस्तुत सामन्ती जीवन आम तौर से अब गन्दे कीडो का जीवन था, मानवता को दबाकर वहा पशुता प्रधानता प्राप्त किये हुए थी। मनुष्य को पशुता की तरफ जाने से रोकने के लिए जितनी मात्रा मे सस्कृति की अवश्यकता है, यदि वह उतनी न मिले, तो वेश-भूषा और बाहरी तडक-भडक आदमी को मनुष्य नही रहने देती। राजस्थान के ठाकुर तलवार अब भी समय-समय पर कमर मे लटकाते है, लेकिन यह केवल राजपूती-शान का प्रहसन भर है। अग्रेजी राज्य ने उन्हे हर तरह की विलासिता के लिए मुक्त छोड दिया था, और साथ ही खर्च के लिए निश्चित आमदनी भी रहने दी थी। अब उनके आराध्य थे आहार-निद्रा-भय-मैथुन। वह पश्चिमी विलासिता को जितना ही अपने स्वामियो और गुरुओ के सत्सग मे आकर सीखते जाते, उतना ही उनका खर्च बढता जाता, जिसकी वजह से उनकी आमदनी अपर्याप्त होती जाती। ऐसी अवस्था मे यदि ठाकुरानिया भाई या देवर (लालजीसा) बने सेठो के सामने नाचती-गाती, उन्हे हर तरह से रिझाती, तो इसमे आश्चर्य ही क्या ? सामन्तशाही के इस अन्तिम गढ मे भी अब तलवार के मूल्य से पैसे का मूल्य बढ गया था, इसलिए सामन्ती ऐंठ कैसे चल सकती थी ? खलपा मे 'भाई' के लिए डावडिया गन्दी-गन्दी गालिया गाती, वहा के लोगो मे चर्चा होती—"यह अच्छा भाई है, जो कि बहिन उसके सामने ऐसी गाली गवाती, उसके सामने शराब मे बदमस्त होकर हाव-भाव करती नाचती है!" जब शराब पीकर करमा बेसुध हो जाती, तो 'भाई' और उसका ड्राइवर कोमलागी के शरीर मे हाथ लगा उसे चारपाई पर ले जाकर लिटा देते। सेठजी अपने 'सदाचार' के

लिए कई रियासतो मे बडी ख्याति प्राप्त कर चुके थे, अपने दारोगा-ड्राइवर की स्त्री पर उनका विशेष अनुराग था। ड्राइवर ने इसे घाटे का सौदा नही समझा था, और उसने अपने लिए अलग रखेली रख ली थी। सेठ ने उसको मालामाल कर दिया था, इसलिए यदि वह अपने नाम से सेठजी की रखेली को घर मे रक्खे, तो कौन घाटे का सौदा था ?

ठाकुर और ठाकुरानी गौरी के हाथ-खर्च को बन्द करने के लिए बडे इच्छुक थे, लेकिन कोई उपाय नही चलता था। दरवाजो मे चिटे लगवाई, वह भी उखाड फेकी गई, हवेली बेचने मे भी उनकी बात नही चली, मोटर का मुकदमा करके हार गये, इसलिए उन्हे आशा नही थी, कि अदालत का दरवाजा खटखटाने पर फैसला उनके अनकूल होगा। जनपुर मे पाच सौ घर हिन्दू-मसलमान ढोलणियो के है, जिनका काम है दरबार और ठाकुरो के पास जाकर गाना-नाचना। "खिसि-यानी बिल्ली खम्भा नोचै" की कहावत के अनुसार और कुछ नही चला, तो ठाकुर साहब ने ढोलणियो से कह दिया—"यदि तुम बडी ठाकुरानी के यहा नाचने-गाने जाओगी, तो हम तुम्हे अपने यहा नही आने देगे।" ढोलणियो ने कहा—"हम तो कमीन है, अपने पेट के लिए हमे सभी जगह जाना पडता है।" दोनो ने फिर कहा—"तुम दस्तखत करके दे दो, कि हम वहा नही जायेगे, तभी हम तुम्हे अपने यहा आने देगे।"

"हमने उनका बहुत नमक खाया है, हमसे यह नही होगा, कि अब वहा जाना छोड दे।"

ढोलणियो ने अब ठाकुर साहब के यहा जाना छोड दिया, तो वहा दूसरी ढोलणिया बुलाई जाने लगी। पहली ढोलणियो को लुभाने और चिढाने के लिए सेठ ने नई ढोलणियो मे सौ-सौ दो-दो-सौ रुपये इनाम बाटे। जब यह खबर गौरी को मिली, तो उसने ढोलणियो से कहा—"अगर तुम वहा जाओ, तो मै नाराज नही हूगी। अपनी रोजी के लिए तुम वहा भी जाओ, या यहा नही आओ, मुझे इससे कोई अप्रसन्नता नही होगी।"

ढोलणियो ने कहा—"हम शहर मे चार घर और कमा खायेगे, लेकिन आपका चौखट नही छोडेगे।"

नाच-शराब के समय ढोलणिया ठाकुर साहब के दरबार मे उपस्थित रहती। सेठ, ड्राइवर दोनो की रखेलिया, ठाकुर और ठाकुरानी कैसी-कैसी रासलीलाए करते, वह सब देखती रहती। ठाकुर शराब के प्रेमी नही थे, लेकिन सेठ उन्हे उसमे भी निष्णात करना चाहता था, और वह भी कभी-कभी पीकर लुढक जाते।

ब्रह्मा ने अकल मे वचित तो कर ही दिया था, ऊपर से शराब पीकर अब उनको क्या सुध-बध रहती ? उन्हे यह भी पता नही था, कि राजधानी मे उन पर और उनकी स्त्री पर कितनी थू-थू हो रही है । राजमहल मे रानिया और ठाकुरानिया पूछती--"तुम्हारी सौत की यह-यह बाते ठीक है ?" तो गौरी अपनी अज्ञानता प्रकट करती । उसे सुनने की इच्छा भी नही होती, इसलिए बहुत-सी बातो से सचमुच ही वह अपरिचित थी । ठाकुर के पुराने लगोटिया यार दूसरे ठाकुर लोग इतनी दूर तक जाने के लिए तैयार नही थे, इसलिए उन्होने अब उनका साथ छोड दिया, और सेठ ही उनका सब कुछ था । लेकिन यह एक ठाकुर की ही बात नही थी, बीसवी सदी के दूसरे पाद मे पहुचते-पहुचते ऐसे ठाकुरो और राजाओ की कमी नही रह गई थी, जो अब नाममात्र के अन्नदाता थे, और उनका सब कुछ सेठो के हाथ मे था । रानियो और ठाकुरानियो के कितने ही 'भाई' और देवर सेठो मे थे । सामन्ती रोबदाब और सदाचार की दीवार बडी तेजी से ढहती जा रही थी । कर्ज के बोझ से दबी जाती पुराने युग की यह गुडिया सेठो के हाथ का खिलौना बनती जा रही थी । अग्रेजो के रहते समय थोडा-सा अकुश भी था, लेकिन उनके हटने के साथ जब दिल्ली के देवता सेठो की वशी पर नाचने के लिए तैयार थे, उनकी कुजी इन धरनासेठो के हाथ मे थी, तो राजस्थान की छोटी-बडी गुडियो के बारे मे क्या कहना ? सेठो को अफसोस इसी बात का हो सकता है, कि रियासतो के विलयन और जागीरो के उच्छेद के बाद जिस तरह उनकी तूती चारो तरफ बोलती है, उसका आनन्द वह अधिक दिनो तक नही ले सकते । लाल आधी आने के लिए तैयार है, और युगो से चली आती जाति-प्रथा सेठो को अपने घर मे किसी राजकुमारी या ठाकुर-कुमारी से ब्याह करके रखने की इतनी जल्दी इजाजत नही दे सकती । अगर इगलैण्ड की तरह यहा भी पाच-सात पीढियो का मौका मिलता, तो इसमे शक नही, कि रनिवासों की लाडलिया सेठो के घरो की शोभा बढाती, और श्वेतरक्त की यहा भी उसी तरह छीछालेदर होती, जैसी युरोप मे हुई ।

× × × ×

रोमे के ठाकुर साहब ठाकुर का दूसरा ब्याह कराने मे सबसे आगे थे । उन्होने समझा था, कि इस तरह वह बडी ठाकुरानी का मान-मर्दन करते ठेकाणे का सारा प्रबन्ध अपने हाथ मे कर लेगे, लेकिन उनकी बहुत दिनो नही चली, क्योकि ठाकुर-ठाकुरानी के अन्धाधुन्ध खर्च के लिए वह रुपया नही दे सकते थे । छ महीने

होते-होते रोमे-ठाकुर दूध की मक्खी बना दिये गये, और सारा कारबार सेठ के हाथ मे चला गया। रोमे की ठाकुरानी और महाराजा ऊधोसिह की रानी का पीहर एक ही जगह था, इसलिए दोनो मे बहुत मेल था। ठाकुरानी राजमहल मे आती, तो गौरी से भेट होती। एक दिन वह पास मे बैठी देखकर बोली--"यह खलपा के ठाकुर की बहू है क्या ?"

गौरी ने भी व्यग्य करते हुए कहा--"लोग ऐसा ही कहते है, मुझ तो नही मालूम।"

रोमे की ठाकुरानी काकी-सास थी और उनकी सहानुभूति भी अब अपने पति की तरह ही गौरी के लिऐ थी। वह सवेदना प्रकट करते हुए बोली--"थारा होक तो चोखा कोई नी। थाणे घणे तकलीफा दी (तुम्हारी सौत कोई अच्छी नही, उसने तुम्हे बहुत तकलीफ दी)।"

गौरी ने जवाब मे कहा--"यह काकोसा का प्रताप है।"

"बीनणी, वह पछतावै है, थारोई फिकर करे है।"

"मेहरबानी है काकोसा की, कम से कम अब तो मेरी फिकर करते है।"

× × × ×

करमा की बात बहुत चल रही थी, इसका अर्थ यह नही कि वह ठाकुर साहब को उनके पुराने जीवन से रोक सकी। हा, सेठ की वह कृपापात्र थी, और खजाने की कुजी सेठ के पास थी, इसलिए ठाकुर भी उसके हाथ से बाहर नही थे। करमा शायद ठाकुर पर नियन्त्रण करना चाहती भी नही थी। ठाकुर जितना ही बिगडते जावे, उतना ही सेठ और ठाकुरानी की पाचो घी मे थी, इसीलिए खलपा-ठाकुर ही क्या, दूसरे ठाकुरो और राजाओ को भी कर्ज और विलासिता से दबाकर अपने हाथ मे रखने के लिए सेठ वारुणी और बारबनिताओ का प्रयोग खुलकर करते।

उग्रपुर से खलपा-ठाकुर का इतना ही रिश्ता था, कि उनकी परित्यक्ता पत्नी वहा की महारानी की मौसेरी बहिन थी। ठाकुर के कृपालु सेठ का एक मित्र उग्रपुर मे भी भारी प्रभाव रखता था, और खुद सेठ सानी की भी और राजधानियो की तरह उग्रपुर मे भी अपनी कोठी थी। उग्रपुर का सेठ भी धन के बल पर सामन्तिनियो के साथ रासलीला रचाने मे कम नही था, दोनो सेठो की मैत्री से लाभ उठाकर ठाकुर और ठाकुरानी एक दिन उग्रपुर की यात्रा पर निकले। महारानी को खबर दी गई, कि खलपा के ठाकुर और ठाकुरानी आ रहे है। वह समझी---"मेरी मौसेरी बहिन आ रही है," इसलिए आने के समय उन्होने अपने

मामा हिम्मतसिह के लडके गोविन्द को कार और आदमियो के साथ स्टेशन भेज दिया। उनकी मौसेरी बहिन कभी उग्रपुर नही आई थी, इसलिए उन्होने बडी प्रसन्नता के साथ भाजे से कहा—"गोविन्द, खलपावाला बेन आया, तू वणारे हामो जा, मेलॉ ले आ।"

गोविन्द बहिन को महल मे लाने के लिए स्टेशन गया। वहा ट्रेन मे ठाकुर साहब मिले। उनसे कुशल-मगल पूछकर गोविन्द ने कहा--"मै जरा जीजा (बहिन) से मिल आऊ।" जाकर देखे, तो जीजा का कही पता नही, वहा तो कोई दूसरी बैठी है। पूछने पर मालूम हुआ, कि यह तो जीजा की सौत है। उसने स्टेशन से महारानी को टेलीफोन किया। हुकुम आया—"उन्हे ले जाकर गेस्ट-हाउस (अतिथि-भवन) मे ठहरा दो।" जब ठाकुरानी आ गई, तो उसके साथ शिष्टाचार तो दिख-लाना ही था। जनपुर की ठाकुरानी होते हुए भी करमा को कभी वहा के महल मे जाने का सौभाग्य प्राप्त नही हुआ था। जब कोशिश करके भी वहा प्रवेश नही हो सका, तो उसने अग्रो को खट्टा कहना शुरू किया--"मै वहा जाना ही नही चाहती।" सौत के सम्बन्ध से उग्रपुर के महलो का दरवाजा उसके लिए खुल गया। महारानी उसे अपने साथ रावलजी के अन्तपुरवाले दरबार मे भी ले गई। करमा मे कोई सयम तो था नही, जीभ उसकी फर-फर चलती। उसने वहा जाते ही चटपट रावलजी को चचा बना लिया, और किसी का सकेत पाने से पहले ही ठाकुरानियो के बैठने की ऊची जगह पर जा बैठी। रावल ने शराब पीने के बारे में पूछा, तो झट कह दिया—"मै तो देशी (आसा) नही पीती, ह्विस्की पीती हू।" रावल के दरबार मे ह्विस्की की क्या कमी थी, और खलपा की ठाकुरानी आधे चौथाई प्याले से तृप्त थोडे ही होनेवाली थी, वह पीकर उसी दिन हाहा-हीही करनेवालियो मे शामिल हो गई।

इतना ही तक होता तो भी गनीमत। गेस्ट-हाउस मे उग्रपुर का सेठ अपने दारोगा-ड्राइवर के साथ आता, वहा भी पार्टिया और महफिले जमने लगी। शराब के लिए रावलजी का भण्डार खुला हुआ था, लेकिन ठाकुर-ठाकुरानियो के साथ सेठो की इतनी स्वतन्त्रता अच्छी नही समझी जा सकती। ठाकुरानी को उग्रपुर का सत्कार बहुत अच्छा लगा, और वह वहा दो-दो बार हो आई, यद्यपि इसके फलस्वरूप उसके पति पर उग्रपुर मे भी जनपुर की तरह ही थू-थू होने लगी।

अध्याय २०

अन्नदाता-युगल

उग्रपुर की महारानी जनपुर की महारानी की मामी-सास लगती थी। दोनो राजवशो मे अच्छा सम्बन्ध था। एक बार रावल अपनी रानी और दूसरे नौकरो-चाकरो के साथ स्पेशल ट्रेन से जनपुर गये। साथ मे चालीस-पचास डावडिया (बाया) और बहुत से नौकर-चाकर थे। स्पेशल ट्रेन मे गेहू और गेहू के आटे की बोरी, घी-चीनी आदि ही से सन्तोष नही किया गया, बल्कि गेहू की बोरिया और आटा पीसने की चक्की भी दूसरे खाने-पीने के सामान के साथ एक डब्बे मे रक्खी थी। जनपुर मे रावल का उनके योग्य ही सत्कार हुआ। उग्रपुर-महारानी और जनपुर-महारानी की भेट-मुलाकात बराबर होती रहती। वहा गौरी भी प्राय मौजूद रहती। उग्रपुर की महारानी ने अपनी मौसेरी-बहिन से कहा—"वह तो दो बार हो आई, तू तो आती ही नही। हमारे साथ चल।" गौरी ने कहा—"जैसी आपकी आज्ञा।" इसी समय जनपुर-महारानी आ गईं, और उनसे भी उग्रपुरवाली ने कहा—"हमारी बहिन की सौत तो दो बार हमारे यहा हो आई, अब की छुट्टी दिलाओ, तो मै बहिन को अपने साथ ले जाऊ।" उग्रपुर-महारानी ने यह सोचकर कहा था, कि बहू के जाने के लिए सास से आज्ञा लेने का काम जनपुर-महारानी कर देगी। लेकिन उन्होने इसकी जरूरत न समझते हुए कहा—"मामीसा, आपे उण उरडा बेगण ने क्यो बुलाई (आपने उस उर्द-बैगन को क्यो बुलाया)?"

उग्रपुर-महारानी ने कहा—"मैने कहा बुलाया, वह तो अपने आप दो बार हो आई।" फिर उन्होने पहली बार 'उरडाबेगण' के स्टेशन पर लाने के लिए कार भेजने की कहानी सुनाई। जनपुर-महारानी ने कहा—"घेली राडराने कई पुछावणे हो, आप त ले जाओ। (उस राड—सास—से पूछने की क्या अवश्यकता, आप अपनी मौसेरी बहिन को ले जाइये)।"

उग्रपुर की यात्रा महारानी के साथ हुई, जिसका बयान करने के पहले यह बतला दे, कि उग्रपुर की महारानी अपनी मौसेरी-बहिन के साथ "मेला गया"

(रावलजी के पास गई) तो गोविन्दसिह की बहू ठाकुरानी–गोरी की मामी––ने दरबार को नजर और भेट करके 'खम्मा घणी' करी। गौरी भी घूघट निकालकर रसम अदा की। नजर के रुपयो मे कुछ और मिलाकर लौटा देने का रवाज है। उसके बाद महाराणा ने पूछा–"यह कौन है?" महारानी ने जवाब दिया–"हुकम, म्हारे मामीसा री बेटी बेन है खलपावाला।" रावलजी ने इस पर कहा––"वह तो घूघट नही निकालती थी, यह ऐसा क्यो करती है?" इस पर महारानी ने गौरी से कहा––"अन्नदाता ने हुकम बक्सा है, घूघट मत निकालो।" लेकिन गौरी को शरम आती। फिर शराब आई, तो गौरी वैसे भी शराब कम पीती थी, और यहा तो उसे लज्जा भी घेरे हुए थी। यह देखकर रावलजी ने कहा–– "वणारे तो कठेइज शरम नी है, मारा ह्र अच्छी तेरे बाता करता, मेन-मने काको बी बणाई दो (उसे तो कोई शरम नही थी, मुझसे भी अच्छी तरह बात करती, उसने मुझे चचा भी बना लिया)।"

उग्रपुर राजस्थान मे पुराने रूढियो मे सबसे ज्यादा जकडा था, जनपुर उसकी अपेक्षा बहुत आगे बढा हुआ था। उग्रपुर की महारानी को जनपुरवाली के सम्पर्क मे आकर कुछ ज्यादा देखने-सुनने की आजादी थी। जब महारानी की मोटर आगे-आगे चलती, तो उसे चारो ओर से बन्द रखकर ही सन्तोष नही किया जाता, बल्कि ताला बन्द करके अपनी मोटर ले डोढीदार भी बराबर पीछे-पीछे रहता। महारानी की मोटर किधर जानी चाहिए, और किधर नही जानी चाहिए, इसकी जिम्मेदारी डोढीदार मोला के ऊपर थी। एक दिन जनपुर की महारानी ने सोचा, कि आज मोला को खूब छकाना चाहिए। ड्राइवर को उन्होने सिखला दिया, कि मोला की मोटर दूसरी सडक पर मोड ले जाना। दोनो महारानियो की मोटरे आगे-आगे चली, पीछे-पीछे मोला की मोटर थी। किसी चौरास्ते पर मौका पाकर दूसरी मोटर और सडक पर चली गई, और मोला की मोटर कितनी ही देर तक दूसरी सडक पर दौडती रही। आगे जब महारानी की मोटर दिखाई नही पडी, तो मोला बहुत घबराया। ड्राइवर ने कहने पर उत्तर दिया––"मुझे क्या मालूम, जनपुर छोटा-सा कस्बा थोडे ही है, न जाने कहा चली गई। आज तो कोई पार्टी का प्रोग्राम भी नही।" मोला को कोई अकल नही थी। उसने मोटर को रानीबाग ले जाने के लिए कहा, जहा पर कि रावलजी ठहरे हुए थे। उस समय रावलजी के पास जनपुर के कितने ही सरदार बैठे थे। इसी समय घबडाया हुआ मोला आकर बोला–– "अन्नदाता, बडो हुकम, गजब वहि ग्या (अन्नदाता, आज्ञा, गजब हो गया)।"

रावलजी ने कहा—"कई हुयो रे ?"

"महाराणीमारो पत्तो नी है (महारानी साहब का पता नही है) ।"

"हाते कोण है (साथ मे कौन है) ?"

"जनपुर माराणीसा है, हुकम ।"

इस पर सन्तोष की सास लेते हुए रावल ने कहा—"पछै कई डर है रे (तो फिर क्या डर है) ?"

जनपुर के ठाकुरो को वहा अपनी हसी रोकना मुश्किल हो गया था। अन्त-पुर मे जब यह बात पहुची, तो महारानी और दूसरी ठाकुरानिया हस-हसकर खूब मजाक उडाती रही ।

पहले ही निश्चय हो गया था, इसलिए गौरी भी अपनी मौसेरी बहिन के साथ उग्रपुर गई। उसके साथ तीन लौडिया और तीन-चार नौकर थे। स्पेशल-ट्रेन मे एक सैलून रावल का था, एक महारानी का, फिर दर्जे के मुताबिक सरदारो के फर्स्ट-सेकेण्ड क्लास के डब्बे थे। नौकरो-नौकरानियो के लिए कितने ही तीसरे दर्जे के भी डब्बे थे और एक डब्बे मे सामान रक्खा हुआ था। महारानी का सैलून बाहर से किस रग का था, यह नही मालूम, किन्तु भीतर से उसका रग भूरा था। वहा सोफा और कुछ कुर्सिया थी, दो पलग भी पडे हुए थे । खिडकियो मे तेहरे आड लगे हुए थे, जिनमे से एक मे सूराखदार कमल के फूल लकडी मे बने हुए थे। चाबी घुमाने से वह सूराख बन्द होते और खुलते, हवा का एकमात्र रास्ता यही सूराख थे, और इन्ही सूराखो के जरिये बाहर की चीजे भी देखी जा सकती थी। अन्त पुरि-काओ को कुजी के छेद जैसे सूराख से भी देखने का अच्छा अभ्यास होता है, इसलिए वह इतने बडे सूराख से भी बाहर की चीजे देख सकती थी। खिडकियो के बाहर सीकचे लगे हुए थे, और सेलून के दरवाजे मे ताला बन्द था। इसे कहने की अवश्यकता नही कि सामन्त अन्त पुरिकाओ पर उससे भी कडा ध्यान रखते है, जितना कि जेलवाले अपने किसी भयकर कैदी पर। महारानी के साथ दो उग्रपुर की ठाकुरानिया और मौसेरी बहिन के अतिरिक्त छ-सात बाया (डावडिया) थी। वैसे सैलून मे काफी आराम का प्रबन्ध था, बाथरूम भी था, टब नही था, किन्तु शावर के स्नान का प्रबन्ध था। आठ बजे स्पेशल-ट्रेन रवाना हो पाच बजे उग्रपुर पहुच गई। खाना बनाने का प्रबन्ध ट्रेन मे था। दीवाली के कुछ ही दिन पहले यात्रा हो रही थी, इसलिए गर्मी नही थी, तो भी पखे लगे हुए थे, बत्तिया भी थी। रास्ते मे भोजन के समय थाल लगकर महारानी के पास आ गये।

जब ट्रेन जनपुर से चली, तो अन्त पुरिकाए फूलवाले छेद से बाहर देखने की

कोशिश करने लगी। गौरी ने अपनी ओर की खिडकी को खोल दिया। महारानी ने कहा—"बैन, खिडकी मती खोलो।"

गौरी ने बडी नरमी के साथ कहा—"जगल है, यहा शहर थोडे ही है। जनपुर की महारानी जब बाहर जाती है, तो ऐसे स्थानो मे खिडकी खोल देती है। हा, बाहर गर्दन निकालकर नही देखना चाहिए।"

जनपुर-महारानी जब ऐसा करती है, तो उग्रपुर-महारानी भी वैसा क्यो न करे, यह सोचकर उन्होने कहा—"तो बैन, मारी बारी बी होली दो।"

फिर क्या था, सभी खिडकिया खोल दी गई। ताजी हवा जब भीतर आई, तो वह गद्गद् होकर कहने लगी—"हरे, कैडी हवा आवै है। मैदान दिखै है। हाउ लागी र्‌यो है।" महारानी ने ताजा हवा का आनन्द लेते हुए कहा—"बैन, मै तो इत्ता बरसा मे आज-इज सौगन भागी है।"

गौरी ने अपनी सफलता पर इत्मीनान दिखलाते हुए कहा—"आप खूब बाहर मैदान देखे, हवा खाये। स्टेशन से पहले सिगनल आयेगा, उस समय मै खिडकिया चढा दूगी।" इसके बाद उग्रपुर तक खिडकियो के खोलने और चढाने का काम गौरी ने अपने जिम्मे ले लिया। स्टेशन आने पर खिडकिया बन्द होती, नही तो खुली रहती। गौरी ने सोचा, शायद उन्हे स्टेशन देखने की लालसा हो, इसलिए कहा कि यदि स्टेशन देखना है, तो दो पर्दो को हटाकर केवल जालीवाले पर्दे को रक्खे, इस पर महारानी ने कहा—"आपन हटे पडे तो (यदि हम दीख जाये तो) ?"

गौरी ने समझाकर कहा—"अन्दर जब अधेरा रहता है, तो जाली से बाहर-वाला आदमी भीतर के आदमी को नही देख सकता।" इस पर भय करते हुए महा-रानी ने कहा—"नी बेन, अन्नदाता ने मालूम वहि जावे, तो नाराज वहि जावे।" उन्होने स्टेशन पर उसे देखने की कोशिश नही की।

महारानी के साथ चलनेवाली ठाकुरानियो मे एक ब्रह्मसम्बन्धवाली थी, अर्थात् उसने नाथद्वारा के वल्लभ कुलवाले गोस्वामीजी से मन्त्र लिया था। सैल्न मे सब खाती-पीती थी, लेकिन वह बेचारी टुकुर-टुकुर देखती रहती, खाने की बात तो अलग, वह पान भी नही ले सकती थी, केवल जर्दा मिली हुई सुपारी कभी-कभी मुहू मे डाल लेती। "ब्रह्म-सम्बन्ध 'लीदो है' सुकान्ताजी बाजी, रोटी नी खावो, तो फल मगाई द"—कहकर महारानी ने ठाकुरानी को कुछ खिलाना चाहा, इस पर ब्रह्मसम्बन्धिनी ने कहा—"नी हुकम, रेल मे नी खाउ, हिनान कीदा बिना नी खाउ।" बेचारी सारे रास्ते भूखी रही, रात को भी उसे खाना नही मिला, दूसरे

दिन जाकर अपने हाथ से बनाकर उसने खाना खाया। वह भगवान् के भजन खूब गाती थी, गला भी उसका बडा सुरीला था।

यद्यपि उग्रपुर स्टेशन पर ट्रेन पाच बजे पहुच गई थी, लेकिन कनाते, चादनी लगाकर अन्त पुरिकाओ को उतारने मे काफी समय लगा। मारी जक्शन मे उनके लिए चाय आ गई थी, इसलिए भूख की कोई चिन्ता नही थी। स्टे ान से आगे-आगे रावलजी की मोटर चली, पीछे-पीछे महारानी और दूसरो की मोटरे। स्वागत के लिए डावडिया मगल-गीत गा रही थी। उग्रपुर मे पातरो का रवाज नही है। वहा नाच-गाने का काम बाया करती है, जिनको कि दूसरी जगह डावडिया कहते है। महारानी साहिबा के महल मे पहुचते-पहुचते चिराग जल गये थे, उन्हे रावलजी के पास जाना था, इसलिए जल्दी करनी थी।

× × × ×

महारानी का निवासकोष्ट पुराने महल के एक बडे कमरे मे कुछ थोडा-सा परिवर्तन करके तैयार किया गया था। पचास हाथ लम्बा, पन्द्रह हाथ चौडा एक लम्बा हाल था, यही उनका ड्राइगरूम, बैठका, शयनकक्ष और भोजनकक्ष था। इसमे एक तरफ एक दरवाजा था, कई शीशे और जालीवाली बडी-बडी खिडकिया थी, दरवाजे के बाहर आठ हाथ लम्बा, आठ हाथ चौडा एक छोटा सा आगन था। वहा पास मे एक कोठरी थी, जो स्नान-गृह, परिधान-गृह का काम करती, और इसी मे शीशा लगी जेवर-कपडे रखने की अलमारिया थी। हाल को सजाने की बहुत कोशिश की गई थी, छत से झाड-फानूस, गोले, हडिया और एक बिजली का पखा लटक रहा था। मोमबत्तियो की जगह अब झाडो और हडियो मे बिजली जलती थी। हाल मे कोई सोफा नही था। एक ओर एक गोल मेज थी, जिसके किनारे चार कुर्सिया पडी थी। फर्श पर दरी नही, एक जाजम बिछा हुआ था, जिसमे दीवार के सहारे पाच हाथ चौडा लम्बा गद्दा बिछा हुआ था, एक चादी का पलग झरोखे के पास था, कुछ और मेजे थी, जिन पर बडे-बडे दर्पण रखे हुए थे। दीवारो पर नीचे-ऊपर चार पाती तस्वीरे थी, जिनमे नये पुराने रावलो के रगीन चित्र थे, जसपुर-जनपुर के महाराजाओ की भी तस्वीरे थी, और महारानी के पति की तो वहा हर तरह की आधे दर्जन से अधिक तस्वीरे थी। यह तस्वीरे कमरे को सजाने का काम नही दे रही थी, बल्कि मालूम होता था वह तस्वीरो का गोदाम है। पुस्तक का कही नाम-निशान नही। दीवारो पर शेर, बाघ, हरिन आदि के शिर लगे हुए थे, मेज पर भी भुसभरा हुआ एक बाघ रक्खा था। जैसे

रानिया जेवर मे लदी रहती है, उसी तरह इस हाल की दीवारे भी तस्वीरो और शिरो से लदी हुई थी। छोटे आगन के पास ही सीढिया थी, जिससे चढकर एक दूसरे कमरे मे जाया जा सकता था, जहा महारानी ने अपनी मौसेरी बहिन का बास करवाया था। कमरा अच्छा आरामदेह था, उसमे फ्लश का बाथरूम भी था। फरनीचर मे दो पलगे थी, मेज-कुर्सी नही थी, इसकी जगह जाजम पर एक कालीन बिछा हुआ था। एक झरोखा पल्ला तालाब की ओर खुलता था, जिससे बाहर का सुन्दर दृश्य दिखलाई पडता था।

महाराज की दो रानिया थी, एक अबोरवाली, जो कि यही गौरी की मौसेरी बहिन थी, और छोटी रानी खुलमावाली थी—खुलमा जनपुर मे एक ठेकाणा है।

पहुचते ही महारानी को हडबडी मच गई, जब सुना—"मेलारी खिडकी खुलवा-झारी है।" उन्होने अपनी बहिन के आराम के लिए जल्दी-जल्दी हुकुम देकर तैयारी करनी शुरू कर दी। साढे पाच बजे वह शृगार-कोठरी मे चली गई। लौडिया पास मे सहायता देने के लिए तैयार थी, लेकिन अधिकतर सजाने का काम इस साठ वर्ष की बुढिया को खुद करना पडा। उसके बाल सफेद हो गये थे, लेकिन खिजाब ने उन्हे काला बना दिया था। पहले उन्होने साबुन से मुह धोया, फिर मुह पर कोई मुखराग लगाया, तौलिया से पोछते ही गोरा चेहरा निकल आया। आधुनिक मेकअप अभी उग्रपुर के रनिवास मे दाखिल नही हुआ था, नही तो चेहरे पर पडी झुर्रियो को काफी हटाया जा सकता था। कुर्ती-काचली पहनकर महारानी दर्पण के सामने जमीन पर बैठ गई, सिगार-दान और जेवरो की पेटी पास मे रक्खी हुई थी। कुर्ती-काचली मे अतर लगाकर उन्हे महका दिया गया था। पहला जमाना होता, तो लौडिया बाल गूथने के समय ही उसमे बोर (शिर-फूल) लगा देती, लेकिन अब कुछ नवीन बाते भी स्वीकार की जाने लगी है। बाल को पहले पटिया बनाकर फिर उस पर बोर लगाया। बीच मे अन्नदाता की तस्वीर थी। अन्नदाता की तस्वीर के बारे मे मत पूछिये। एक सेट तो महारानी के पास सारे आभूषण ऐसे थे, जिसमे अन्नदाता की सैकडो तस्वीरे जडी हुई थी। महारानी ने बोर लगा गोल चक्कर सजाया, शिर मे मोती की लडिया इतनी पहनी, जिनसे बहुत-सा बाल ढंक गया। कान मे साकली सहित मच्छी लटकाई गई। मोती के झूटने भी झोटो मे शोभा देने लगे। हाथो को आठ अगुल तक तरह-तरह के आभूषणो से भर दिया गया। आभूषण एक ही तरह के रोज नही पहने जाते, और न उनको मिलाकर पहना जाता। एक दिन सारा शरीर सफेद जडाऊ आभूषणो से

ढका रहता। दूसरे दिन खाली मोतियो के आभूषण होते, तीसरे दिन लाल-मणियो की बहार होती, चौथे दिन सारे शरीर पर हरे-हरे पन्ने चमकते, पाचवे दिन अन्नदाता के चित्रो का आभूषण शरीर पर सजाकर दिखलाया जाता, कि महारानी का रोम-रोम अन्नदाता की भक्ति से भरा है। सोना लौडियो का जेवर समझा जाता। वैसे कभी-कभी महारानी भी पहन ले, तो उसमे हरज नही माना जाता। पैरो मे तो अधिकतर सोने ही के जेवर महारानी पहनती। गर्दन मे सारी छाती को ढाके हुए हार, नकेलस, टूसी, कठला आदि भूषण डाले गये। दसो अगुलियो मे जडाऊ अगूठिया और छल्ले थे। हाथपान दूसरे आभूषण के मेल का ही पहना गया। महारानी के शिर मे चमकती हुई जडाऊ बिदिया चिपक नाक मे जडाऊ काटा शोभा देने लगा। आखो मे फिर सुरमा भरा गया, जिसने कोटर-लीन पुतलियो को और भी गहराई मे डालने मे सहायता की। पैरो और हाथो मे मेहदी तो सौभाग्य-वती महारानी के लिए हमेशा ही होनी चाहिए। फिर घाघरा-लुगडी पहनी, लौडियो ने उस पर अतर मल दिया। महारानी सज-धजकर बिल्कुल मूरत-सी बन गई, उनके लिए शिर-हाथ हिलाना भी मुश्किल था। डेढ घण्टे के परिश्रम के बाद वह साठ वर्ष की उमर मे केवल दस वर्ष की कमी कर सकी। चेहरे पर झुरिया वैसी ही थी, आखो के गडहे मौजूद थे, ओठ और दात भी उसी दिशा की ओर सकेत करते थे। महारानी न मोटी थी न पतली, कद मे कुछ ठिगनी थी। प्राचीन और अर्वाचीन शरीर-प्रसाधनो मे कितना अन्तर है। निश्चय ही आधुनिक मेकअप महारानी को तीस वर्ष की तो अवश्य बना सकता था, लेकिन "कापर करो सिगार" वाली बात थी। रावल तो जन्म से ही षण्ढ थे, यह जानते हुए भी न जाने क्यो बेटी के बापो ने अपनी लडकियो को उनके चरणो मे न्योछावर कर दिया? ऐसा होने के कारण बल्कि रानियो को सजाने की ज्यादा चिन्ता रहती है, क्योकि रावल अपनी तृप्ति केवल नजरो से कर सकते थे।

सिगार उधर हो रहा था और इधर बीच-बीच मे खबर आती जा रही थी "मेलारी खिडकी खुली है।" जल्दी-जल्दी सिगार-कोठरी से निकलकर महारानी ने पग आगे बढाया। कोई शिर खुली या विधवा स्त्री आकर असगुन न कर दे, इसलिए एक लौडी आगे-आगे पुकारती जा रही थी—"कोई हामे मत आइजो, मेला पधारे (कोई सामने मत आओ, महारानी साहिबा महल की ओर पधार रही है)।" खिडकी खुल गई थी, इसलिए बुढिया हसती जा रही थी। खिडकी तक पहुचने मे दो सौ गज से अधिक रास्ता पार करना था, वहा कही पर सीढिया थी, कही अधेरा रास्ता था, और कही अधेरी सुरग भी थी। कुछ डावडिया आगे-

आगे जा रही थी, कितनी ही ठाकुरानिया और डावडिया पीछे-पीछे भगी आ रही थी। आखिर मे दीवार पर 'धर्मादित्य' का लाछन आ गया। उग्रपुर के रावल को धर्म का आदित्य कहा जाता, साथ ही उसकी प्रतीक यहा दीवार पर काच की किरणो से घिरे एक गोलमुख सूरज को दीवार पर बनाके रक्खा गया था। उसकी बगल मे ही चार-पाच सीढिया चढने के बाद 'पीतम-निवास' आ गया, जिसमे रावल निवास करते थे। यह भी एक लम्बा सा हाल था। गद्दी-मसनद लगी हुई थी। धर्मादित्य का अर्धाग बिल्कुल सूखा हुआ था, इसलिए वह हिल-डोल नही सकते। पहले ही उन्हे उठाकर गद्दी पर बैठा दिया गया था। मसनद मे वह इतने छिप गये थे, कि केवल शिर भर दिखाई पडता था। महारानी घूघट निकालकर आगे गईं, हाथ मे आचल पकडकर खडी-खडी 'खम्मा घणी' करके वह रावलजी के पास मे बाये बैठ गई। रावलजी ने महारानी के अभिवादन का कोई जवाब नही दिया। फिर ठाकुरानिया आगे बढकर अन्नदाता को 'मुजरा वारना' करने लगी (पजो के बल बैठकर दोनो हथेलियो और शिर को जमीन पर रख प्रणाम कर खडी हो दोनो हाथो को कनपटियो मे लगाकर वारना देना), इसी तरह तीन बार देवता के सामने प्रणाम भी। ठाकुरानियो के प्रणाम का जवाब अन्नदाता हाथ जोडकर देते। इस समय ठाकुरानिया धोक देती मुजरा-वारना कर रही थी, उस वक्त "किकिणि-ककण-नूपुरधुनि" से वायुमण्डल मुखरित हो रहा था। महारानी को अपने पति के सामने जमीन पर शिर और हथेली रखकर धोक देने की जरूरत नही होती।

बगल मे महारानी के बैठ जाने के बाद दूसरी ठाकुरानिया भी अपने पद के अनुरूप पाती से बैठ गई। रावलजी के सामने चादी की एक छोटी-सी चौकी लाकर रख दी गई, फिर लकडी की सन्दूक बगल मे रक्खी गई, जिसके भीतर बढिया शराब पुराने शीशो मे रक्खी थी। रावल ने कही से एक कुजी निकालकर कलम-दान खोल चाबी दे दी। सदूक खुल गई। फिर शराब को निकालकर अपने हाथ से एक गिलास मे डालकर महारानी की तरफ बढ़ाया। महारानी ने खडी होकर 'खम्मा घणी' कहकर गिलास को हाथो मे ले शराब को पी लिया। महारानी के खडे होते ही दूसरी ठाकुरानिया भी अपनी गिलासो को जमीन पर रखकर सम्म्रानार्थ खडी रही। महारानी ने बैठकर गिलास को रख दिया। अब पान-गोष्ठी आरम्भ हो गई। डावड़िया शराब की बोतले लिये हुए उनको दे रही थी, सोडा की बोतले भी वहा मौजूद थी। रावल अब शराब नही पीते, लेकिन उनके कारण रानियो और ठाकुरानियो के पीने मे कोई बाधा नही थी। सबके सामने

एक-एक तश्तरी मे कबाब, सूले या दूसरी तरह के मास रक्खे हुए थे, विधवाओ के लिए भग का शरबत और मिठाइया तथा पकवान मौजूद थे। बेचारी ब्रह्मसम्बन्ध-वाली ठाकुरानी वहा मल्लू बनकर चुपचाप बैठी थी। गौरी शराब पीना नही चाहती थी। आसा को रग से पहचाना जा सकता था, इसलिए उसने अपनी गिलास मे सोडा डालकर फूल (सफेद) शराब पीने का अभिनय किया। मौसेरी-बहिन का पहिले रावलजी से परिचय कैसे हुआ, इसे हम पहले लिख चुके है। पानगोष्ठी के समय डावडिया अपने नाच-गाने से मनोरजन कर रही थी, लेकिन रावल महफिलो के शौकीन नही, वह यह सब रसम के लिए ही करते थे। आठ बजे के करीब जब खाने का थाल आनेवाला था, इसी समय कलमदान सामने (सन्दूकची) रख दी गई। रावल ने निकालकर चाभी दे दी। ठाकुरानियो को खुले सैलून मे जाने का हुकुम हुआ। भीतर मामूली गद्दा बिछा हुआ था। वहा कोई फर्नीचर या कीमती चीज नही थी, न जाने क्यो उसकी चाभी इतनी हिफाजत से रक्खी गई थी। सैलून मे भेजने का मतलब यह था, कि ठाकुरानिया वहा जाकर इच्छानुसार पान और भोजन करे। कायदा यह था, कि सैलून मे जाते वक्त अपने गिलास और तश्तरी को ठाकुरानिया स्वय लेती जाये। किसी ठाकुरानी ने गौरी को खाली हाथ जाते देखकर जब कहा, तो गौरी ने कहा—"हमारे यहा तो डावडिया गिलास और तश्तरी उठाती है, हम नही उठायेगे।" फैशन मे जनपुर उग्रपुर का पथ-प्रदर्शक था, इसलिए दूसरी ठाकुरानिया भी तश्तरी और गिलास वही छोडकर सैलून मे चली गई। अबसे जनपुर का रवाज उग्रपुर मे भी स्वीकृत हो गया। सैलून मे जाकर जिनको और भी शराब पीना था, वह और भी पीती रही। इधर रावल और महारानी के सामने थाल आया। रावल सिर्फ एक छोटा सा फुलका खा सकते थे, रानी बेचारी की शामत थी। पतिव्रता ऐसे अल्पाहारी पति के सामने अधिक फुलके कैसे खा सकती थी ? साथ ही अब वहा आकर रात भर पति के पास ही रहना था, इसलिये खाना मिलने की कोई आशा नही हो सकती थी, इसके लिए वह पहिले ही से खाना खाकर आती होगी, इसे कहने की जरूरत नही। खाना खतम होते ही रावल को उठाकर किसी ने पलग पर पटक दिया। महारानी अपने वस्त्राभूषण को उतारकर लौडियो की मदद से उसे ठीक से रखने मे डेढ घण्टे तक लगी रही।

रात बिताकर सबेरे पाच बजे ही वह अपने निवास-स्थान मे लौट आईं। अब सजने-धजने की अवश्यकता नही थी, लौडिया पेटियो मे जेवर-कपडे लिये पीछे-पीछे आईं और महारानी आगे-आगे। यह अच्छा है, कि उग्रपुर मे साढे छ

बज ही नाश्ता मिल जाता है, और नौ बजे भोजन भी आ जाता है, इसलिए रानी को अगर रात को भूखा भी रहना पडा हो, तो भी बहुत तकलीफ की बात नही थी ।

गौरी एक दिन उग्रपुर के आसपास के महलो को देखने गई । पिछले साढे तीन सौ वर्षो मे जब हर रावल ने अपने महल बनवाने के शौक को पूरा किया हो, तो महलो की क्या कमी ? पत्ला तालाब से आगे फूलसर आता है । वही पर ललित-प्रसाद नामक उग्रपुर का बहुत सुन्दर महल है । महल नये ढग का बना होने से बहुत आरामदेह है । जसपुर-जनपुर की महारानिया जब आती है, तो यही उन्हे टिकाया जाता है । सीसमहल भी देखा, यहा का सारा फर्नीचर काच का है—काच के ही सोफे, काच की ही कुर्सिया, काच की ही मेजे और काच के ही पलग । वहा से 'सखी-बाग' मे गई । शाहजादा खुशाब (पीछे शामिल) बाप से बागी होकर जब उग्रपुर आया था, तो वह और उसकी लौडिया इसी महल मे ठहराई गई थी, इसीलिए इसका नाम सखी-बाग पड गया । यह सुन्दर महल है । नहाने के लिए यहा पुष्करिणी है, जिसे चेबचा या हौज कहते है । उस दिन इस महल मे महारानी, ठाकुरानिया और उनकी सेविकाए जल-विहार के लिए आई थी । महारानी तैरना जानती थी, उनकी साथिनो मे से भी अधिकाश तैर लेती थी, किन्तु कुछ ऐसी भी थी, जो तैरना नही जानती थी, और डुबाऊ पानी होने से कुण्ड मे उतरने मे डरती थी । उन्हे घसीटकर पानी मे ले जाना मनोरजन का अच्छा साधन था, इसलिए अन्त पुरिकाओ को पकड-पकडकर ले जाने मे आनन्द आता था । महल की परिचारिकाए कहती—"आज राणीसा चेबचा मे अगोल्यो पदराई (आज रानी साहिबा कुण्ड मे स्नान करने पधारी)।" यह केवल स्थान नही था । अन्त पुरिकाओ मे से किसी ने घाघरे को समेटकर पहन रक्खा था, किसी ने साडियो की काछ बाधी थी, किसी ने अण्डरवियर पहना था, इसका अर्थ यह हुआ, कि जिसके लिए कृष्ण को चीर-हरण लीला दिखानी पडी, वह बात अब यहा नही रह गई थी । बीच-बीच मे तैरना और स्नान करना और बीच-बीच मे बायके के हाथ से मद्यचषक को लेकर कण्ठ-सिचन भी चलता रहा । वहा छतरी बनी हुई थी, जहा से कूदकर अन्त पुरिकाए जल-क्रीडा करती ।

बहुत देर तक जल-क्रीडा चलती रही ।

बाहरी महलो के देखने के अतिरिक्त नगर के महल शकर-भवन और शर्व-

भवन भी देखे, वहा सजावट अच्छी थी। वह पुराने महल है, इसलिए आराम के साथ रहने के आधुनिक सुभीते काफी प्राप्त नही है। युवरानी इन्ही महलो मे रहती है। राजस्थान के कितने ही राज्यो मे जो नाम पड जाता है, उस पद से ऊपर उठने पर भी बना रहता है, जैसे जनपुर की महारानी को तब भी युवरानी कहा जाता, जब कि वह महारानी हो गई, और उसके बाद पति के मर जाने पर राजमाता हो जाने के समय भी युवरानीसा ही उनका नाम रहा। पुराने महलो मे छतो पर नहाने के लिए छोटे-छोटे हौज है, जिनमे आजकल नलो द्वारा पानी ले जाया गया है।

पल्ला सरोवर के बीच मे जयभवन और जयमन्दिर नामक महल बने है। एक दिन वहा अन्त पुरिकाए गई। अन्त पुरिकाओ के आने पर पुरुष नामधारी कोई जन्तु भीतर नही रहना चाहिए, इसलिए वहा केवल रानिया, ठाकुरानिया और बादिया ही थी। एक ठाकुरानी हाथ धोने गई। सीढियो पर से उसका पैर फिसल गया और वह जेवर से लदी-फदी पानी मे घडाम से जा गिरी। अन्त पुरिकाओ ने चिल्लाना शुरू किया—"अरे राम, अरे राम डूबिया रे।" इतनी अकल आई, जो स्वय ठाकुरानी को पकडने नही गई, नही तो उस दिन पल्ला मे कई सदा के लिए जल-क्रीडा करने चली जाती। पास ही कोई गाव की मजदूरिन खडी थी। उसने आवाज सुनी, और जाकर झट से पानी मे घुस चोटी पकडकर किनारे निकाला। ठाकुरानी ने थोडा ही पानी पिया था। रानीसा घबरा गई थी। खैर लिटाकर मुह से पानी निकाला गया, बेचारी जलपरी बनने से बच गई।

इस महल मे नीले मखमल का पर्दा था, सभी गद्दिया भी नीले मखमल से ढकी थी। एक मोटर और एक मोटर-बोट मेहमानियो के घूमने के लिए हर वक्त तैयार रहता था, और उनका उन्होने पूरा फायदा उठाया।

× × × ×

दीवाली के दूसरे दिन गोरधन-पूजा होती है। नारणपुर अपनी गोरधनपूजा और अन्नकूट के लिए बहुत मशहूर है। महारानी ने अपनी पाहुनी दोनो बहिनो को कितनी ही ठाकुरानियो, लौडियो और नौकरो के साथ मोटर पर चढाकर नारणपुर भेज दिया। ठाकुरानिया छ-सात थी, जो पर्दे और तालेवाली तीन खाने की मोटर मे बैठकर गई। दो लारियो मे लौडिया थी। नौकर अलग लारियो पर थे। जमात सुबह ही रवाना हो गई। पहले रास्ते मे एलीशजी का दर्शन किया, फिर आगे बढी। नारणपुर के दर्शन के लिए जाना था, इसलिए भजन-

गीत के बिना यात्रा कैसे हो सकती थी ? बाजी और दूसरी ठाकुरानिया धीरे-धीरे भजन गा रही थी, लेकिन मोटर की भडभडाहट और खिडकियो की फडफडाहट मे गाने की आवाज बाहर नही जा सकती थी। बाजी और दूसरी ठाकुरानियो ने गौरी से भी कहा—"तुम भी भजन गाओ नारायणजी का, बडा महातम है।" गौरी और उसकी बहिन ने कह दिया—"हमे तो भजन नही आत्ता, हम तो आप लोगो के भजन को सुन करके ही पुण्य कुमायेगी।"

रावलजी ने सनातन तरीके से पर्दे का बहुत कडा इन्तिजाम नही कर सकने पर अपनी पाहुनियो से कह दिया था—"काग्रेस का राज है, पर्दे का उतना इन्तिजाम नही हो सकता, कोई पर्वाह नही, चली जाओ।" यह कहने पर भी मोटर के काले शीशो के बाहर काला पर्दा पडा ही, और अन्त पुरिकाओ के बैठने के खाने मे ताला लगाकर तीसरे खाने मे प्रहरी बैठे। नारणपुर मे मन्दिर के पास ही एक बडे मकान मे अन्त पुरिकाओ का दल उतरा। फिर एक के बाद एक दर्शन और झाकी शुरू हुई। सबेरे के वक्त गोरधन-पूजा थी। एक जगह गोबर के भारी ढेर का गोरधन (गोवर्धन) बना हुआ था। कृष्ण की तरह मोर-मुकुट पहने सजे-धजे ग्वाले बडी सुन्दर तथा शृगार की हुई चालीस-पचास गायो को लेकर आये। चारो ओर भीड घेरे थी और ग्वाले गायो को भडका रहे थे। डर लग रहा था, गाये कही किसी के पेट मे सीग न चला दे। गायो से गोबर्धन को रौदवाकर ग्वाले चले गये, और स्त्रियो ने गोबर्धन के गोबर को लूट लिया। नारण के गोरधन के गोबर को घोलकर यदि पी ले, तो वन्ध्या को पुत्र हो जाता है। थोडी देर बाद स्त्रियो ने हल्ला किया—"चलो अमुक झाकी है, दर्शन करने चलो।" भीड का क्या ठिकाना ? लाखो आदमी उस दिन वहा जमा हुए थे। सीढियो पर सटे हुए कितने ही नर-नारी खडे थे, पीछे से धक्का लगा, तो जैसे पहाड से टूटी चट्टान गिरे, उस तरह आदमियो की पाती ऊपर से नीचेवालो पर गिरी, खैरियत यही हुई, कि कोई दबकर मरा नही। एक झाकी के खतम होते ही थोडी देर भी विश्राम नही कर पाये थे, कि दूसरी झाकी के दर्शन का हल्ला हुआ और सब बापजी के दर्शन के लिए चली। आठ-नौ वर्ष की कान्ता ने भी दर्शन करने के लिए जिद्द की। ठाकुरानिया घूघट काढे हुई थी, किन्ही का घूघट पाच-छ अगुल का था और किन्ही-किन्ही का हाथ-हाथ भर का। एक पतली सुरग मे घुसकर जाना था। उस भीड और धक्के मे एक साथ चलना कैसे हो सकता था ? दोनो बहिनो ने हाथ मे हाथ कसके पकड लिया था, इसलिए वह एक साथ रह सकी। ब्रह्मसम्बन्धिनी बाजी का पता नही लगा, वह किधर गई। कान्ता उस भीड मे पिस रही थी। उसे एक

लौडी ने अपने कन्धे पर रख लिया। वह रो रही थी । मना करनेवालियो ने कहा——"और करेगी दर्शन ?" बहुतो के पैर जमीन पर से उठ गये थे, और वह जनसमुद्र मे तैरती स्वर्ग की ओर बढ रही थी। लोगो ने अपने जेवर खोल रक्खे थे, नही तो पाकिटमारो के लिए इससे अच्छा मौका नही मिल सकता था । भीड पास पहुच गई, लेकिन अभी नारणजी का पट नही खुला था। जैसे ही पट खुला, आदमियो का रेला भीतर की ओर जोर से चला। पारी बुढिया पुण्य लूटने के लिए उस रेले मे बही चली जा रही थी। गौरी ने यह कहते उसकी लम्बी चोटी पकडकर पीछे घसीटा——"क्या मरने जा रही है ?" गौरी को तो मुकुट के भी दर्शन नही हुए, लेकिन यदि कहती कि दर्शन नही हुए, तो उस धक्के मे फिर ढकेली जाती, इसलिए उसने कह दिया——हमे तो नारणजी का दर्शन हो गया। ठाकुरानिया और बाया हाथ जोडे नारणजी से प्रार्थना कर रही थी——"ए नारण धणी, हे बापजी, म्हाणा अन्नदातारो राज पाछौ आइजो। अणा काग्रेस्या राडरारो कालो मूडो करीजो, बापजी ओ।" उन्हे क्या मालूम था, कि नारणजी के बापजी भी उतर आवे, तो भी अब अन्नदाता का राज लौटनेवाला नही है। डेरे जाकर ज्यादा आराम नही करने पाये थे, कि फिर साथवालियो ने किसी झाकी के दर्शन के लिए हल्ला किया। गौरी ने अब की साफ इनकार कर दिया——"बस एक बार दर्शन कर लिया, वही बहुत है।" साथवाली कहने लगी——"आपके लिए ही तो हमे भेजा है।" कोई यह भी कह उठी——"ए मा, आपरे तो भगती कोईनी।" गौरी ने कह दिया——"तुम्हारी चाहे जो मर्जी करो, मै तो अब भीड मे जाकर मरने के लिए तैयार नही।" दोनो बहिने और एक लौडी भी रह गई। किन्तु बुढिया पारी सबसे पहले स्वर्ग जाने के लिए तैयार थी। वह धक्कम-धुक्का मे किसी तरह मन्दिर मे पहुची। एक बुढिया ठाकुरानी धोक (प्रणाम) देने के लिए झुककर कहने लगी थी——'हे बापजी "किन्तु बात न समाप्त होते ही भीड उसके ऊपर आ पहुची। साथवालियो ने बडी मुश्किल से काकीसा को दबने से बचाया। इस झाकी के बाद लौटकर मिठाई, पूडी, दही, साग का भोजन हुआ। ब्रह्म-सम्बन्धिनी बाजी ने फल खाकर दूध पिया।

अन्नदाता ने कह रक्खा था, कि भिगो की लूट अवश्य दिखलाना।

भिगो की लूटका देखना उतना आसान नही था। अपार जनता उमडी हुई थी, रात के दस बजे रहे थे, जब कि अन्नकूट लूटने के लिए भिग-भिगनिया आये। बिजली की रोशनी से रात का दिन हो रहा था। अन्त पुरिकाओ को बैठकर देखने के लिए एक कोठा मिल गया। लेकिन वहा तक पहुचने मे भी कम आफत नही थी।

कान्ता भी देखने जा रही थी, दिन का रोना उसे भूल गया था। पास जानवाली किसी स्त्री के कपडे मे उसका कर्णफूल उलझ गया, जब कान खीचा, तो वह जोर से चिल्लाने लगी। खैर, स्त्री को रोककर किसी तरह उसे छुडाया गया, लेकिन उसके कान से खून बहने लगा। वहा कमरे मे बैठने के लिए दरी बिछी हुई थी, एक कुर्सी भी रक्खी थी, जहा से बैठकर अन्नकूट की लूट को देखा जा सकता था। अन्नकूट मानो चावल का पहाड था। उस दिन चार सौ मन चावल इसके लिए पकाया जाता है। इतना चावल पकाना आसान नही है, इसलिए बहुत सा कच्चा चावल ही नीचे रखकर ऊपर मे भाप निकलते गरम भात को डाल देते है, इस तरह भात का एक पहाड तैयार हो जाता है। पहले अन्नकूट को चटाइयो से ढाक रक्खा गया था, फिर भोग लगाया गया। आधी रात हो चुकी थी, जब कि फाटक का एक किवाड खोल दिया गया, कोई चार हजार भिग और भिगनिया धक्कम-धुक्का करते आये। भिगो ने गर्दन मे चादर बाधकर पेट के सामने झोला बना रक्खा था, और भिगनियो के शिर पर बडे-बडे छाबडे थे। फाटक खुलते ही सीटी बजाते, हल्ला करते भिग अन्नकूट की ओर झपटे। पुलिस चाहती थी, कि वह थोडा-थोडा करके आवे, लेकिन वह उनको भी ढकेलकर भीतर चले गये। भिग चावलो को अपने झोलो मे भर-भरकर भिगनियो के पास ला उनके छावडो मे डालकर फिर भात लूटने के लिए चले जाते। मिट्टी के बडे-बडे घडो मे दाल, कढी और दूसरी चीजे भरकर रक्खी हुई थी। एक भिग ने कढी का घडा उठाकर शिर पर रक्खा, तो वह फूट गया और उसके सारे शरीर पर कढी पड गई। बिजली के प्रखर प्रकाश मे उसका काला शरीर अब पीला दीखता था। चावलो की लूट मे पाच भिग गिर गये, और वह कुचलकर वही निष्प्राण हो गये। उनकी लाशे जब निकाली जाने लगी, तो पहले तो अन्त पुरिकाओ को मालूम हुआ, कि काला झोला भरकर लिये जा रहे है, लेकिन जल्दी ही मालूम हो गया, कि पाच भिग दबकर मर गये। ठाकुरानिया कहती—"एबा, बापजीरा मन्दिर मे मरिया हीदा हुरग गया परा।" गौरी ने कहा—"यदि बापजी के मन्दिर मे मरने से सीधे स्वर्ग जाने को मिलता है, तो चले अपने भी स्वर्ग को।" सुकान्ताजी बाजी और पारी बुढिया को बहुत कहा गया, कि चलो सरग जाने का इतना अच्छा मौका नही मिलेगा, लेकिन वह वहा जाने के लिए तैयार नही थी, कहने लगी—"नारण धनी यही बैठी-बैठी के कोई मौत दे दे, तो अच्छा।"

रात को एक-डेढ बजे भीड हटी, तब अन्त पुरिकाए कोठे से उतरकर अपने टिकने के स्थान मे जाकर सो रही। अगले दिन कामरी भी दर्शन करने

जाना था, जो नारणपुर से चार-पाच मील पर है। रास्ते से थोडा हटकर कामरी से एक मील पहले ही रावसागर का बहुत बडा सरोवर है। वहा भी रावल के महल बने हुए है। पत्थर के सुन्दर काम की हुई गुम्बददार छतरिया सरोवर के किनारे खडी है। आठ बजे पहुच अन्त पुरिकाओ ने वहा स्नान किया, इधर-उधर घूमकर सरोवर को देखा, फिर वह कामरी चली गई। यहा उतनी भीड नही थी, इसलिए मन्दिर मे दर्शन अच्छी तरह हुआ। लौटकर नारणपुर मे मध्यान्ह-भोजन कर जमात चिराग जलते उग्रपुर लौट आई। अन्नकूट का दर्शन गौरी जैसी कम भक्ति रखनेवाली स्त्रियो के लिए जिन्दगी भर के लिए एक बडी शिक्षा थी। जितना धक्का खाना पडा था, उसके कारण तीन दिन तक उनके सारे शरीर का हाड-हाड टूटता रहा।

× × × ×

दीवाली नजदीक आ रही थी, इसलिए मेला (महलो) से गाव तक की झोपडियो को साफ-सूफ करके लक्ष्मी के स्वागत की तैयारी होने लगी थी। उग्रपुर के पुराने महल पक्के ही नही है, बल्कि कितनो की गचे सीमेट जैसी है, जिन्हे धो देने से काम चल जाता है। झाड-फानूस भी कपडे से पोछे जा रहे थे, चित्रो और जानवरो के मुण्डो से ढकी दीवारो को बिल्कुल साफ करना आसान नही था, लेकिन उन पर भी पुचारे फेरे गये। दूसरे रनिवासो मे ऐसे समय मे अन्त पुरिकाओ को अलग करके पुरुष ही सफाई करने के लिए आते है, लेकिन उग्रपुर के रनिवास मे शायद दूध पीनेवाला लडका ही जा सकता है, इसलिए सारा काम स्त्रियो (बाया) को करना पडता है। उस दिन महारानी साहिबा भी काम मे लगी हुई थी। बहिन ग्यारह बजे तक नही आई, तो उन्होने बुला भेजा और आने पर कहा—"क्यो नही आई ?" बहिन ने जवाब दिया—"आप काम मे लगी हुई थी, इसलिए नही आई।"

"तू तो मेहमान नही है।"

नीचे उस बडे हाल के फर्श को समेट लिया गया था और वही सन्दूक और दूसरे सामान रक्खे हुए थे। कीमती कपडो मे भी धूप लगवाना था, जेवरो को भी साफ करके रखना था। जब हर रोज नये-नये कपडे और नये-नये आभूषण पहनने जरूरी थे, तो उनकी बीस-पच्चीस सन्दूके हो, तो अचरज करने की क्या जरूरत ? जिस वक्त सौत ने गौरी के कीमती कपडो और जेवरो पर हाथ साफ किया, उस वक्त तो उसे दुःख हुआ था, लेकिन उसका भी अपना एक दर्शन है, जो

कि बहुत कुछ "गत न शोचामि" के आधार पर है, इसलिए महारानी के सामने फैले हुए जजाल को देखकर वह मन ही मन कह रही थी—"अच्छा हुआ जो मुझे मुक्ति मिल गई।" अब उसके पास उतने ज्यादा कपडे सुखाने के लिए नही थे। बाया सफाई का काम करते हुए मिलकर गीत गाती थी, मेहनत को हलका करने के लिए यह सबसे पुराना तरीका है। इसे कहने की अवश्यकता नही, कि उग्रपुर के रनिवास के सभी तरीके बहुत पुराने है। जसपुर, जनपुर ही नही, राजस्थान के कसौरा जैसे छोटे-छोटे रजवाडो मे भी अन्त पुर मे बायो या पातरो को नृत्य और सगीत की बाकायदा शिक्षा दी जाती है, और वह पक्के गानो और पक्की नाचो मे निष्णात होती है। आखिर, अन्त पुर के भीतर जब रण्डी का नाच नही कराया जा सकता, तो रनिवास मे विराजते महाराजा साहब के मनोरजन के लिए कोई उत्कृष्ट मनोरजन तो होना ही चाहिए। यद्यपि उग्रपुर की बाया पक्का गीत नही, बल्कि लोक-गीत गा रही थी, लेकिन उनका गला बहुत सुरीला था, गाने मे सुर-ताल भी था, जिसके कारण गाना बहुत मीठा लग रहा था।

महारानी खुद भी काम कर रही थी। चीजो को इधर से उधर रखने या झाडने-पोछने मे वह बायो से पीछे नही रहना चाहती थी, शायद छोटी महारानी का स्वभाव इससे भिन्न हो। बडी महारानी जहा साठ वर्ष से ऊपर की थी, वहा छोटी उनकी आधी उमर से भी कम की थी। किसी समय बडी महारानी ने रावल को नाराज कर दिया था। भला कोई स्त्री वैसे पुरुष को कैसे पसन्द कर सकती है? राजस्थान के राज-कानून मे इसके लिए कोई गुजाइश नही थी, कि प्रत्यक्ष-पुस्त्वहीन पुरुष ब्याह न कर सके। कही बात-बात मे महारानी के मुह से निकल गया—"मेरे बापू ने मुझे तुम्हारे जैसे आदमी के हाथ मे दे दिया!" रावल वैसे बुरे आदमी नही, बल्कि उनको बहुत भद्र पुरुष कहा जा सकता है। यदि वह बाल्य से ही पुस्त्वहीन थे, तो इसमे उनका कोई दोष नही। उनका बर्ताव छोटे-बडे सबसे बहुत अच्छा और अकृत्रिम होता था। महारानी के कहने पर उनको दु ख हुआ। चाहे वह एक इन्द्रिय से हीन हो, लेकिन उन्हे एक अभिन्न सगिनी की अवश्यकता तो थी, और राजस्थान मे ऐसे सामन्तबापो की कमी नही थी, जो अपनी लडकी ऐसे महाप्रतिष्ठित व्यक्तियो को दे दे। रावल ने दूसरी शादी कर ली। दूसरी रानी का आदर भी बढा, लेकिन पीछे उसे भी इस ब्याह के लिए बडा अफसोस हुआ, और उसने असहयोग कर दिया। अब भी बडी महारानी अपनी छोटी सौत के लिए झरोखा खुलवाकर महलो मे आने के लिए सन्देशा भेजती है, रावल भी उसकी दिलजोई करना चाहते है, लेकिन वह इसके लिए तैयार नही,

बुलाने पर भी नही आती। कभी कहती मेरी तबियत खराब है, तो कभी कोई दूसरा बहाना कर लेती। सभी जानते है, कि यह बहाना है। दोनो सौते कभी ही आपस मे मिलती है, वैसे उनका आपस मे झगडा नही है। छोटी के न आने के कारण बडी महरानी को अब रोज "महला जाना" पडता, इसके लिए रोज-डेढ-दो घण्टा सिगार करना पडता और रोज यदि पहले से खाकर न जाय, तो रावल की देखादेखी एक फुलका खाकर भूखो रहना पडता।

रावल का निवास पीतम-निवास जनाने और मरदाने का सम्मिलित दरबार-घर है। पहले वहा रावल को घेरे सरदार लोग बैठे शराब पीते रहते। रावल के सीधे-सादे स्वभाव से सभी लोग फायदा उठाना चाहते। कोई कहता—"अन्न-दाता, फलानी चीज बखसाओ।" कोई किसी और चीज को मागता। रावल के सामने स्पष्टवक्ता दरबार कह देते—"आपने सरदारो को मगता बना दिया है, यदि आप देने से इनकार करते, तो ये लोग बराबर भीख मागने के लिए तैयार न रहते।" जब रनिवास की खिडकी खुलने को होती, तो सरदार चले जाते, फिर दरबार पुरुषमय की जगह स्त्रीमय बन जाता। अब महिलाओ के कोमल कण्ठ से 'खम्मा घणी' की मधुर ध्वनि रावल के कानो मे पडती। इसका यह मतलब नही, कि महिलाओ से बातचीत करने मे रावल को अधिक रस या आसक्ति थी। अनासक्ति योग तो उन्हे प्रकृति ने ही सिखला दिया था। ठाकुरानिया रावल को कैसे मुजरा करती, यह बतला आये है। नजर भेट करते समय ताजीमी सरदार की ठाकुरानी के कुछ विशेष अधिकार थे। वह भेट की चीज अपनी दाहिनी हथेली मे रखकर रावल की पहली हथेली से जोड देती, फिर रावल दूसरे हाथ से पकड-कर ठाकुरानी की हथेली से भेट की मोहर या रुपया अपने हाथ मे उडेलकर उसे बद्धपद्म जैसा बना देते। साधारण ठाकुरानियो के भेट वह हाथ से उठा लेते।

महारानी अपनी बोली मे चिट्ठी लिख सकती थी, वह रामायण भी पढ लेती, लेकिन उनको पढने का कोई शौक नही था। पूजा मे श्रद्धा तो है, लेकिन उसमे भी उनका श्रम और समय ज्यादा नही लगता। जाडो के दिन आ गये थे, और उस समय रोज नहाना उनके लिए आवश्यक नही था। 'मेला' (महलो) से लौटकर हाथ-मुह धो साधारण कपडा पहिन लेती। इसी समय बाया छोटी चौकी लाकर उस पर पूजा की सामग्री रख देती। उसी गद्दे पर महारानी बैठ जाती, उनका मुह झरोखे की ओर होता। आमला माता उग्रपुर के रनिवास की कुलदेवी है, जिनका चित्र पूजा के लिए वहा मौजूद होता। महारानी गद्दे पर आलथी-पालथी मारकर बैठ कुमकुम का बिंदु माथा पर लगा देती, फिर घी के दीवे को आरती

की तरह दो-तीन बार घुमा देती, एक कटोरी मे मेवो का भोग भी रख देती, फिर बैठकर आचल पकडे हाथ जोड माता के पगे लागती। बस पूजा हो गई, न माला फेरना था न कोई स्तोत्र-पाठ करना। हा, माताजी की पूजा के बाद पाच सुहागिनो के पगे लागना अत्यावश्यक था, क्योकि इसी के पुण्य से वह चिर-सौभाग्यवती रह सकती थी। पाचो की सख्या पूरी करने के लिए वहा उपस्थित लौडिया, पद मे छोटी या बडी ठाकुरानी, या गौरी की तरह छोटी बहिन भी शामिल कर ली जाती। चिराभ्यस्त बाया नपे-तुले शब्दो मे आशीष देती—"आपरो चूडो-चूनडी अम्मर वहि जाजो, यो जोडी हे एलीशजी, अम्मर कर दीजो।"

कभी-कभी महारानी चाय पीकर पूजा करती, और कभी पूजा करने के बाद चाय पीती। इस समय वह साथ चाय पीने के लिए अपनी मेहमान-बहिन को नही बुलाती, उसके लिए चाय, टोस्ट, बिस्कुट आदि चीजे ऊपर चली आती। उग्रपुर मे भोजन बहुत जल्दी तैयार हो जाता, और नौ बजे ही थाल बाहर के रसोडे से ड्योढी पर चला आता। वही से आवाज लगाते—"ए बाया, राणीसारो थाल पदराइजो-ो-ो।" बाया दौडकर वहा पहुचती, और सफेद कपडे से ढके थाल को शिर या हाथ पर ले आती। रावल और महारानी के थाल को रसोइया मुह पर बिना कपडे की पट्टी बाधे ड्योढी पर नही ला सकता। आगे ले जानेवाली बायो को पट्टी बाधने की जरूरत नही। थाल यद्यपि नौ बजे ही पहुच जाता, लेकिन महारानी उसे जब इच्छा होती तब खाती। अक्सर उनका भोजन दस-ग्यारह बजे होता।

खाने के साथ शराब रात के समय भले ही आवश्यक समझी जाती, लेकिन दिन को उसकी अवश्यकता नही होती। यदि महारानी या उनके साथ खानेवाली ठाकुरानियो को पीने की इच्छा होती, तो वह शराब मगा देती। जब सारे राजस्थान मे ह्विस्की का राज्य था, तो उग्रपुर मे उसका बायकाट कैसे होता? लेकिन तब भी वहा ह्विस्की की अपेक्षा घर की बनी आसा या फूल का बहुत अधिक प्रचार था। मेसाल मे मौवा (महुआ) के दरख्त बहुत होते है, शराब बनाने मे मौवे को इस्तेमाल किया जाता है। पन्द्रह-बीस दिन तक महुए का पास डाल देते है, जब मादकता आ जाती है, तो उसे भट्टी पर चढाकर अरक निकाल लेते है। रग लाने के लिए पहले मिस्री मिला देते और पीछे अरक मे केसर डाल देते है, इसी शराब को 'आसा' कहते है। रग न डालने पर अरक का रग शुद्ध स्फटिक जैसा सफेद होता, इसी को 'फूल' कहते है। उग्रपुर मे शराब का पीना बहुत अधिक प्रचलित है। सारे राजस्थान की तरह बनिया-ब्राह्मण स्त्री-पुरुष आम तौर से मास-शराब नही खाते-

पीते, लेकिन बाकी जातियो मे सभी पीते है। गरीब औरते भी कपडे गिरवी रख-कर शराब पीती है। उग्रपुर के रनिवास मे बायो का ज्यादा जोर है। महारानी के साथ वह बहुत खुलकर बात करती है, जिसका यह अर्थ नही, कि वह उनके सामने सम्मान प्रदर्शित करने मे त्रुटि करती है। हा, लौडी नही, बल्कि सखी की तरह वह महारानी के साथ हसती-खेलती हा-हा ही-ही करती रहती है। दूसरे रनिवासो या ठकुरानी-निवासो मे दो डावडिया भी हो, तो आपस मे झगडे बिना नही रहती, उग्रपुर के रनिवास मे सौ-सवा-सौ बाया है, गौरी ने अपने दो महीने के निवास मे वहा एक दिन भी उन्हे लडते नही देखा। दूसरे दरबारो से उग्रपुर की बायो को बहुत ज्यादा काम करना पडता है। बाया और ठाकुरानिया बार-बार महारानी के ऊपर 'अन्नदाता पिरथीनाथ' की बौछार किये रहती।

खाने के थाल मेहमानियो और महारानी के चादी के होते, और कटोरिया भी चादी की। दूसरी ठाकुरानियो के वह पीतल या किसी दूसरी धातु के भी हो सकते थे। महारानी और रावल के थाल के नीचे पत्तल का होना जरूरी था—शायद यह प्रसाद की स्वतन्त्रता के लिए वन-वन घूमने के जीवन का अव-शेष था। थाल मे कटोरियो मे उडद और मूग की दो प्रकार की दाल होती, साथ ही आठ कटोरियो मे रसालू, पालक आदि के साग भी होते। एक रस वाला और एक सूखा दो प्रकार का मास भी होना जरूरी था। मसालेदार मासोदन (सोइता) के साथ एक नमकीन मासवाला पुलाव भी रहता। लड्डू, हलवा, खीर मालपूआ जैसी मिठाइयो मे से कोई एक चीज जरूर रहती। दाल-बाटी, चूरमा और दूसरी चीजे भी रोज बदल-बदलकर बना करती। फुलके और बटिया चुपडे और रूखे भी होते। बटिया के लिए पहले मोन डालकर आटे को गूधा जाता, फिर उसे तवे पर सेककर घी मे डुबाकर निकाल दिया जाता। एक थाल मे इतना खाना होता, जिससे दो आदमियो का पेट भर जाता। महारानी का बचा हुआ खाना बाया खाती। बायो के लिए खाना खल्ले (बडे दोने) और दोनो मे आता, जिसमें मास, सब्जी, दाल, मसालेदार खिचडी और आठ रोटिया होती। मेहमान-डावडियो को मिठाई भी मिलती। मेहमान-नौकरो और नौकरानियो की खातिर करने मे कोई कसर नही उठा रक्खी जाती। महारानी अपनी बहिन को भी पास बैठकर खिलाना चाहती, लेकिन उसे यह अच्छा नही लगता, कि मै तो चादी के थाल मे खाऊ, और दूसरी ठाकुरानिया कासे-पीतल के थालो मे। महारानी कहती—"यह तो यहा का रवाज है।" सचमुच ही सदियो के रवाजो को कैसे टाला जा सकता है?

पह फटने से पहले ही महारानी मेला से लौटकर आती, तब तक ठाकुरानिया उठ जाती। ब्रह्मसम्बन्धवाली ठाकुरानी का गला भी बहुत सुरीला था, और उन्हे सूर तथा मीरा के बहुत से पद याद थे। बायो मे भी कितनी ही अच्छी गानेवाली थी। प्रात काल सबकी इच्छा होती, कि कुछ गाना सुने। सूरदास के पद खूब राग से गाये जाते थे। राजस्थान मीरा की भूमि है। कभी यही के महलो मे वह महान् गायिका अपने मधुर पदो से आकाश को गुजाती रही होगी। 'मीरा को भला कैसे भूला जा सकता था। गौरी ने बायो और सुकान्ताजी बाजी से कहा—"मीरा मस्तानी के भी एक गीत गाये।" उन्होने मीरा के पद गाये, लेकिन आवाज इतनी धीमी कर दी, कि ऊपर के कमरे से वह दूर न जा सके। बाजी ने कारण बतलाते हुए कहा—"रानीसा सुन लेगी, तो नाराज होगी। मीरा अपने पति से बागी थी, और महारानी परमपतिभक्ता है, इसीलिए वह नही चाहती, कि पति-विद्रोहिणी मीरा के पद वहा गाये जाय।" महारानी साहिबा हद से ज्यादा अपने को पतिभक्ता दिखलाना चाहती थी। एक बार उन्होने जोश मे आकर पति का अनादर कर दिया था, जिसके कारण सौत आ गई, उसी समय से उन्होने कान पकडा और पति-व्रत धर्म का अखण्ड व्रत ले लिया। इसके लिए चरम श्रेणी की खुशामद आवश्यक चीज है, जिसमे बुढिया बडी पक्की निकली। रावल के मुह से कोई बात निकलने नही पाती, कि वह पहले ही से हाथ जोडे "बडो हुकम" कहने के लिए तैयार रहती। यदि हाथ मे शराब की गिलास रहती, तो भी "बडो हुकम" कहते दूसरा हाथ भी गिलास से लग जाता। गुडियो जैसे इस खेल को देखकर गौरी का बहुत मनोरजन होता और वह मजाक करती हुई अपनी ममेरी-बहिन से कुछ हसी की बात कह देती। ममेरी-बहिन उसको मना करते हुए कहती—"तुम तो अन्नदाता के सामने घूघट निकाले बैठी रहती हो, तुम्हारे हसने-मुस्कराने को भी कोई नही देख सकता, और मै बिना घूघट की वैसा करने पर मारी जाऊगी।"

दरबार मे रावल की पोशाक बहुत सीधी-सादी होती, शिर पर लहरिया पगडी, जिस पर हीरा या पन्ना का एक लम्बा सिरपेच लगा रहता। इसके अतिरिक्त उनके शरीर पर कोई आभूषण नही होता। जाडो मे वह गरमकोट पहनते, पैरों मे मामूली पायजामा और मोजा होता।

प्रकृति की ओर से पुस्त्व-वचित रावल वैसे बडे मधुर स्वभाव के थे। वह मेह-मानो के खातिर-तवाजा का बहुत ध्यान रखते, यदि हिल-डोल सकते तो न जाने क्या करते। सैकडो बूढी, प्रौढा और तरुण लौडिया अन्त पुर मे रहती, उनमे से एक-एक से अलग अलग दु.ख-सुख की बात पूछते। बुढियो से कहते—"फलानी, तुम्हारी

बहू अच्छी तरह से तो रखती है, सब अच्छा है न ?" चार-पाच साल के लडके अन्त पुर के बीच मे भी आ सकते थे। रावल के पास बच्चे और लडकिया बिना रोक-टोक चली जाती, उनको वह अपने हाथ से मिठाइया बाटते। प्रतिष्ठित मेहमान और मेहमानियो से यदि ज्यादा हाल-चाल पूछते, तो उनके लिए यह कोई विशेष बात नही थी। वह कभी-कभी छोटे बच्चो की वही गद्दे पर मल्ल युद्ध कराते। रावल जब महल से बाहर घूमने के लिए निकलते, तो रोज सौ रुपये की इकन्निया भुनाकर नौकर साथ लिये चलता, जिन्हे वह बाटते रहते।

× × × ×

शिकार—रूप-चौदस आई, दीवाली हुई, दूसरे भी त्योहार हो गये। इनके करने का ढग प्राय वही था, जैसा कि राजस्थान के दूसरे दरबारो मे होता है। दीवाली के बाद शिकार का समय आ गया। पुरानी प्रथा के अनुसार दो महीने रावल को शिकार मे बिताने थे। मेसाल के गद्दी के असली मालिक भगवान् एलेश माने जाते है, रावल तो अपने को उनका दीवान समझते है, इसलिए वह शिकार मे तभी जा सकते थे, जब कि एलेश की आज्ञा मिले। एक दिन सदल-बल रावल मोटर से एलेश की ओर चले। साथ मे सौ-डेढ सौ लौडिया और कुछ ठाकुरानिया भी थी, दो-तीन सौ ठाकुर और दूसरे परिचारक थे। रसोइये सब सामान लेकर पहले ही एलेश चले गये थे। पहरभर दिन चढे आगे-आगे रावल की मोटरे चली, फिर महारानी की मोटर। उसके बाद दूसरी कितनी ही लारिया और मोटरे थी। महारानी अधिकतर कार मे नही, बल्कि विशेष तरह की लारी मे चलती। लारी मे तीन खाने होते, जिनमे अगले खाने मे ड्राइवर की सीट रहती। बीच के खाने मे लम्बाई मे दो सीटे होती, जिन पर छ जने बैठ सकते थे, उसके पीछे उसी तरह दो लम्बी और सीटे होती, जिनमे रक्षि-पुरुष रहते। पर्दा भयकर था। काले शीशो के ऊपर से काले पर्दे लटकाये थे। न रानिया-अन्त पुरिकाए बाहर की चीज देख सकती, और न बाहर वाले उन्हे देख सकते। इस खाने का दरवाजा पीछेवाले खाने मे खुलता था। रानी और अन्त पुरिकाओ के बैठ जाने पर इस दरवाजे मे ताला लगा दिया जाता और फिर तीसरे खाने मे इन चिरवन्दिनियो के रक्षक बैठ जाते। महारानी बडे सरल स्वभाव की थी, चलते वक्त "तुम भी चली आओ" कहकर कइयो को बुला लेती, और जब सीट मे जगह नही होती, तो अपने खड़ी रह जाती। दो लौडिया सीटो के नीचे बैठ जाती। सास लेने के लिए हवा का रास्ता केवल छत मे एक छोटा सा जालीदार सूराख था। उस

तालाबन्द लारी के लुढक जाने पर अन्त पुरिकाओ को मरने के मिवा कोई रास्ता नही था ।

रावल ने एलेश की पूजा कर आज्ञा लेने के वास्ते फूल चढाया । यदि फूल एलेश पर न टिककर गिर जाये, तो इसका अर्थ समझा जाता, कि भगवान् ने शिकार मे जाने की आज्ञा दे दी । एलेश ऐसे बन है, जिस पर शायद ही कभी फूल टिक जाता हो, और कुछ ऊचाई से विशेष स्थान पर गिराने से तो वह वैसे भी नही टिक सकता । फूल नीचे गिर गया, उसे उठाकर रावल ने अपने पाग मे खोस लिया । भोजन तैयार हुआ, यहा मास नही बना, केवल मीठा और दूसरा निरामिष भोजन था । खा-पीकर रावल राजधानी लौट आये ।

दो-तीन दिन बाद ज्योतिषियो ने शिकार का शुभ महूरत निश्चित किया था । उस दिन रावल, महारानी और उनका सारा दल शिकारी पोशाक मे था । रावल ने हरी पाग और हरा कपडा पहना । महारानी की घाघरी भी हरी थी । सरदारो को राज्य की ओर से हरी पागे और डावडियो को हरी लूगडी मिली थी । ठाकुरानिया गोटा लगी हरी लूगडी मे सजी थीं। इसे कहने की अवश्यकता नही, कि सब्जपरी बनी महारानी के शरीर पर कम जेवर नही था । शिकार मे सौ-डेढ सौ आदमी, कितने ही हाथी-घोडे थे । हाकावाले भी बहुत थे, जिनके हाथो मे भाले थे । हाका करने के लिए ढोल और दूसरे बाजे भी साथ मे थे । पल्ला ताल के किनारे-किनारे मोटरे जगल की ओर चली । एक छोटी पहाडी के ऊपर दोमजिला शिकारगाह (मोर, ओदी) थी । मोटरे वहा तक गई । आखिरी रास्ता मोटर के लिए अच्छा नही था । महारानी और उनकी साथी अन्त पुरिकाए मोर के ऊपरी मजिल पर चली गईं, और नीचे रावल अपने चन्द मुसाहिबो के साथ उतारे गये । सडक के पास चार हाथी थे, जिन पर हथियारबन्द सरदार बैठे थे । जगल मे हाका हुआ । लोगो ने हल्ला करना शुरू किया। ढोल की आवाज चारो ओर गूजने लगी, सबसे पहिले जगल के लाल और काले मुहवाले बन्दरो ने इस घनघोर घोष को सुनते ही एक डाली से दूसरी डाली पर कूदना शुरू किया । कुछ देर बाद सामने-वाली पहाडी से एक बाघिनी नीचे की ओर निर्द्वन्द्व मस्तानी चाल से उतरती आई । बीच-बीच मे वह बेपर्वाही से अगल-बगल झाक लेती थी । ओदी मे किसी को सास की आवाज निकालन की भी आज्ञा नही थी । ऊपर महारानी भी अपनी बन्दूक सम्हाले बैठी थी, नीचे रावल और उनके मुसाहिब उसी तरह तैयार थे । बाघिनी तीस गज पर आ गई । इसी समय एक साथ कई गोलिया दागी गई, लेकिन उसे एक भी नही लगी । वह छलाग मारती हाथियो के पास से निकल गई ।

हाथीवालो को उसका पीछा करने का हुकुम हुआ, लेकिन वह कहा हाथ आने-वाली थी ? वह एक नाला फादकर जगलो से ढके पहाड मे घुस गई। सूअर का शिकार तो बिल्कुल सुलभ था, इसलिए खाली हाथ लौटने की अवश्यकता नही थी।

पाच-छ बजे शाम को फिर रावल का दल महल मे लौट आया। शिकार की सफलता पर सरदारो और अन्त पुरिकाओ ने नजर निछरावल की। आज शराब का भी विशेष आयोजन था और नाचने-गाने का भी। शिकार का मास दूसरे दिन बना। सूअर की चर्बी (साटो) का सोइता, मसाला लगाकर सेकी हुई पसली का मास (सूला), सभी अच्छी तरह तैयार किया गया और अगले दिन शाम के वक्त शिकार का उत्सव-भोज हुआ।

आठ-दस दिन बाद फिर उसी ओदी मे शिकार करने के लिए रावल गये। उस दिन एक चरख (लकडबग्घा) निकला, जिसे ओदी के नीचे गोलियो ने बेध दिया। चाहे किसी की गोली से भी शिकार मरे, लोग तो यही कहते—"अन्नदातारी गोलियो मरियो।" उस दिन एक काफी तगडा चीता भी "अन्नदातारी गोली" का शिकार बना। गौरी कई बार महारानी के साथ शिकार मे गई, उसे बाघ का शिकार देखने का मौका नही मिला, लेकिन जिस तरह से शिकार किया जाता था, उसमे रावल और महारानी के लिए खतरे की कोई बात नही थी। वह तो पहले से ही पक्की बनी सुरक्षित ओदियो मे बैठ जाते, हा, हाका-वाले या पीछा करनेवाले सरदारो पर कभी-कभी मुसीबत आती। एक बार एक हाथी ही बेकाबू हो गया, जिससे पेडो मे लगकर एक सरदार के दात टूट गये।

शिकार के समय का अधिक समय रावल जलसागर नामक विशाल सरोवर के तट पर बिताते। यह कई मील लम्बा-चौडा सरोवर पहाडो के बीच मे एक बडा बाध बाधकर बनाया गया है। यहा पर बाकायदा महल बना हुआ है, और नये जमाने मे बना होने के कारण उग्रपुर के महलो से ज्यादा सुखद है। जब महीने-दो महीने के लिए वहा जाकर रहना हो, तो रोज-रोज के शृगार को बदलते रहने के लिए महारानी को बीस-पच्चीस बडी-बडी सन्दूको मे जेवरो और कपडो को ले जाना जरूरी ही था। एक पूरी लारी ने उनकी शृगार लारी का काम दिया। बायों के भी नाचने-गाने के समय थे। फिर उसी तरह रावल की मोटर आगे-आगे चली। असगुन न होने देने के लिए पहले से इन्तिजाम कर लिया गया था,

इसे कहने की जरूरत नही। हाथी-घोडे, बहुत सी लारिया और कई सौ आदमियो ने वहा जाकर जगल मे मगल कर दिया। सरदारो के रहते समय दरबार मे नाचने के लिए उग्रपुर से रण्डिया बराबर आती रहती। उग्रपुर को राजस्थान मे विलीन हुए दो वर्ष बीच चुके थे, और अब राज्य का सारा कोष रावल के हाथ मे नही था। उनके पद का उपहास करते कितने ही लोग "महाराज खं" कह दिया करते, लेकिन राजस्थान के अन्य सामन्तो और राजाओ की तुलना मे रावल शील-स्वभाव मे देवता थे, यह निश्चित है। उन्हे अपनी पेशन के अतिरिक्त मेहमानो पर खर्च करने के लिए पाच हजार मासिक ही मिलता था, लेकिन वह पूर्वजो के समय से चले आते खर्च को कम करने के लिए तैयार नही थे। कहा करते--"मुझे अब कितना दिन जीना है, मै तो उमी तरह से अपना खर्च-बर्च रखूगा।" उनका खर्च पहले ही जैसा उदारतापूर्वक चलता। रावल के उत्तराधिकारी उनके गोद लिये हुए युवराज को भविष्य की फिकर चाहिए, रावल तो पुराने उदार रवाजो मे से एक को भी छोडने के लिए तैयार नही।

उधर रावल का डेरा जलसागर पर पडा, और दूसरी ओर शिकारो की खबर लेने के लिए लोग छूटे। दो-तीन दिन बाद शिकार की खबर आई। पता लगा। 'कलका का मोर' नामक शिकारगाह के जगल मे बघेरा है। खबर मिलते ही मोटरे उस मोर की ओर रवाना हुई। चारो ओर खूब हरे-भरे ऊचे पहाड थे। अन्त मे जिस पहाडी के ऊपर मोर (शिकारगाह) थी, उस पर मोटर को सीधे चढना पडा। गौरी को डर लग रहा था, कि किसी समय भी मोटर यदि जरा भी फिसली, तो फिर किसी एक की भी हड्डी जुडी नही रह सकती। यहा मोर दो अलग-अलग पहाडियो पर थी, एक मे महारानीजी अपनी साथिनो के साथ बैठी, दूसरी मोर तक मोटर नही जा सकती थी, इसलिए रावल को तामदान पर उठाकर ले गये। हाका पडा। बघेरा जगल से निकला। रावल ने बन्दूक चलाई और साथ ही तीन-चार और भी गोलिया छूटी, बघेरा वही ढेर हो गया।

उस साल शिकार कम थे, सूअर भी उतने अधिक नही मिले थे, तो भी हर दूसरे-तीसरे रावल शिकार के लिए निकला करते। कभी वह खाना खाकर जाते और कभी खाना और शराब साथ मे रहती।

जलसागर मे जल-विहार के लिए 'ईश्वर-विमान' स्टीमर था। कानवेस का पर्दा करके भीतर महारानी और ठाकुरानियो के बैठने का स्थान, बाहर रावल के दरबार की जगह बनाई गई। अन्दर रनिवास मे ढोलणिया गा रही थी, बाहर मरदाने मे रण्डिया नाच रही थी। मास-शराब स्टीमर पर साथ थे। उग्रपुरवाले

नारणपुर जैसे परम पवित्र वैष्णव तीर्थस्थान मे जाने पर भी अपने मास-दारू को ले गये बिना नही रहते। उस दिन जलसागर मे खूब जल-विहार होता रहा। जगह-जगह टेढी-मेढी पहाडियो और उनके टाप का चक्कर काटते 'ईश्वर-विमान' घूमते-घूमते शाम को चिराग जलने के वक्त लौट आया। रावल एक ही दिन जल-विहार के लिए गये, लेकिन महारानी और उनकी मेहमान-बहिन को वह आग्रह करके बराबर जल-विहार के लिए भेजते रहे।

जलसागर के पास जगल के भीतर गगाप्रासाद और हरिप्रासाद जैसे कितने ही महल बने हुए है। रावल स्वय तो वहा जाने के लिए उत्सुक नही थे, लेकिन वह अपनी मेहमान-महिलाओ को दिखलाना चाहते थे। इन महलो तक मोटर नही जाती, जीप भी मुश्किल से कुछ ही दूर तक जाती, और अन्त मे हाथी का सहारा लेना पडता। गौरी अपनी ममेरी बहिन, ब्रह्मसम्बन्धिनी सुकान्ताजी बाजी, दिल्ली की एक महिला डाक्टर तथा एक डावडी के साथ मोटर मे निकली। १९५१ का सन् था। दुनिया मे जो उथल-पुथल मची थी, उसे देखते हुए रावल भी समझ रहे थे, कि अब दूसरो के लिए पुरानी पाबन्दियो को लादने का प्रयत्न करना ठीक नही है। उन्होने हुकुम दे दिया था, कि आगे पर्दा करने की जरूरत नही। मोटर ने कुछ दूर ले जाकर पाचो महिलाओ को उतार दिया। वहा एक बहुत बडा हाथी सवारी के लिए मिला। अच्छा-सा हौदा कसा हुआ था, जिससे लुढकने का डर नही था। लौडी-सहित चारो महिलाए हाथी पर बैठी। जैसे ही हाथी उठने लगा, वैसे ही महिलाए चिल्ला उठी। वह समझने लगी, अब सबकी सब गेंद की तरह उछलकर नीचे पडनेवाली है। उन्होने पास के डण्डे को पकडकर किसी तरह अपने को सम्हाला। गौरी को छोडकर बाकियो ने कभी हाथी की सवारी नही की थी। रास्ता बहुत सकरा था। एक ओर पहाड था और दूसरी तरफ जल-सागर का सीधा खडा तट। हाथी जब-तब चिघाड मारता, तो महिलाओ के प्राण निकलने लगते। वह अपने पास के दरख्तो की डालियो को तोडता चलता, और कभी-कभी इतना तिर्छा हो जाता, कि उसका पैर नीचे खड्ड की बारी से दो-एक अगुल ही दूर रह जाता। यदि वहा से वह फिसल पडता, तो पाचो महिलाओ और महावत को योगियो की मौत बिल्कुल सुलभ थी, लेकिन अभी वह ऐसी मौत के लिए लालायित नही थी। आगे कही पर हाथी लीद करने लगा, धमाधंम की आवाज आई, माहिलाए और घबराई, सोचा कही पहाड तो नही टूट रहा है। उस भयकर परिस्थिति मे ब्रह्मसम्बन्धिनी ठाकुरानी कहती—"हू-हू-हू, हे नारण धनी, हे नारण धनी।" उस महिलामण्डली मे गौरी ही ऐसी थी, जो कि मृत्यु के

बारे मे विदेह बनी हुई थी। वह नारण की भक्तिन से कहती—'सुकान्ताजी, आप तो बहुत धर्म-पुण्य करती है, भगवान् को भजनी है, आपने ब्रह्मसम्बन्ध लिया है, लेकिन आप हमे सरग नही ले जा सकती। मै आपको सीधे सरग की ओर ले जा रही हू।'' गौरी को इस तरह मजाक सूझ रहा था, और उधर भक्तिन का हार्ट-फेल होने लगा था। डाक्टरनी का मुह तो बिल्कुल लाल हो गया था। थोडी दूर जाने के बाद हाथी ने चिघाडना बन्द कर दिया, लेकिन डालियो को वह बराबर तोडता रहा। अन्त मे धैर्य का बाध टूट गया, और गौरी को छोडकर सभी ने सत्याग्रह कर दिया। 'हवाप्रासाद' सात मील और दूर था। वहा जाने की भला किसमे हिम्मत थी। सब गगाप्रासाद के पास ही उतर गईं। महावत बहुतेरा कहता रहा, लेकिन उन्होने एक नही मानी, और हाथी को वही से लौटा दिया। यह कहने पर, कि यहा नाहर-बघेरे बहुत है, महिलाओ ने जवाब दिया—"नाहर हमे भले खा जाय, लेकिन हम तो हाथी पर नही लौटेगे।" महावत ने यह भी कहा—"अब रावल का नही, काग्रेस का राज है, कही भील मिल गये, तो जेवर-कपडा छीनकर मार डालेगे।" महिलाओ मे एक छोड सबका मत यही था, कि वह फिर हाथी पर बैठनेवाली नही है। गौरी को मगलपुर मे हाथी पर चढकर जाने का लडकपन ही से अभ्यास था, इसलिए उसे कोई डर नही था। बीच-बीच मे जब वह समझाने की कोशिश करती, तो चारो आगबगूला बन जाती, और उसकी बात भी सुनने के लिए तैयार नही होती। जलसागर का महल उस जगह से दिखलाई पड रहा था, इसलिए भी महिलाओ की हिम्मत हो रही थी। लौडी पगडण्डी के रास्ते से परिचित थी, और हाथी के आये रास्ते को छोड वह इसी रास्ते उतरती मोटर के पास पहुच राजमहल लौट आईं। महावत ने राजपूतनियो की वीरता की कथा पहले ही सुना दी थी। उस दिन शाम के वक्त रावल के दरबार मे पहुचने पर अन्त पुरिकाओ ने बहुत रस ले-लेकर आज की साहस-यात्रा की बात को कई-कई बार सुना। इसके बाद तो रावल आग्रह पर आग्रह करते, कि 'हवा प्रासाद' जरूर देख आओ। हसी-मजाक उडानेवाली उग्रपुर की ठाकुरानियो मे कितनी हिम्मत है, इसका पता भुक्तभोगिनी ठाकुरानियो को मालूम था, इसलिए उन्होने रावलजी से अर्ज किया—"यदि अन्नदाता यहा की ठाकुरानियो को भी हमारे साथ कर दें, तो हम जायगी।" जब अन्नदाता ने ठाकुरानियो को 'हवाप्रासाद' देख आने के लिए आग्रह किया, तो उनका चेहरा बदल गया, और बहुत आग्रह करने पर उन्होने साफ कह दिया—"चाहे हमे अन्नदाता जलसागर मे धक्का देकर फेक दे, तो

भी हम हाथी पर चढकर हवाप्रासाद जाने के लिए तैयार नही ।"

जलसागर महल से दो-तीन मील पर पहाडी के ऊपर एक चबूतरा बना हुआ ह, जहा से इस कृत्रिम महासरोवर का बडा सुन्दर दर्शन होता है। वह इतना विशाल मालूम होता है, जैसे कोई सचमुच सागर हो। वहा से उसका परला कूल नही दिखाई पडता। रावल अपनी मेहमान महिलाओ को अधिक से अधिक चीजे दिखलाना चाहते थे, इसलिए उन्होने अन्त पुरिकाओ को वहा भेजने का प्रबन्ध किया। चबूतरे पर तम्बू लग गया। स्वादिष्ट सूअर का मास, कई तरह के भोजन और शराब लेकर महारानी अपने मेहमानो, बायो और पचास-साठ नौकरो के साथ मोटर पर वहा पहुची। आज वहा वनभोज का निश्चय हुआ था। जलसागर चाहे आदमी के हाथो का बना हो, किन्तु अपनी विशाल जलराशि के कारण वह एक तीर्थ भी हो गया है। वहा महिलाओ ने स्नान किया, और नारियल चढाकर जलदेवता की पूजा की। चौतरे पर महारानी की महफिल लगी। पहले शराब, फिर भोजन हुआ। लौडियो को शराब की थोडी भी मात्रा अधिक कर देने से नशा चढ जाता है। बल्कि यह कहना चाहिए, उनके लिए नशा शराब मे नही, बल्कि पेट मे होता है। जिस वक्त वह अपनी स्वामिनी को रिझाना चाहती, उस समय वह नशे मे बदमस्त होने का अभिनय सफलतापूर्वक कर सकती। गाना-बजाना भी हुआ, हसी-मजाक भी, कई घण्टे आमोद-प्रमोद मे बिताकर मोटरे राजमहल लौट आई। रावल ने अपनी रानी से पूछा—"थारी बेन ने चोतरो पसन्द आयो ?" महारानी ने हाथ जोडकर तुरन्त जवाब दिया—"घणोज आयो।" और साथ ही यह भी कहा, कि "सलमिया कन्याए मगल को मास नही खाती, लेकिन आज हमारी बहिन को चौतरा, सागर और वनभोज इतना पसन्द आया, कि उसने मास भी खाया।"

एक दिन रावल की सवारी फिर शिकार के लिए चली। मोटरो पर चढकर मील भर पर अवस्थित शिकारगाह मे ग्यारह बजे पहुच गये। यहा भी दुमजिले मकान बने हुए थे, जहा रोज सूअरो के सामने अनाज डाला जाता—"आओ" की आवाज देते ही पहले तो मोर और कबूतर दाना चुगने के लिए आ गये, फिर अपने बच्चो-कच्चो को लिये सूअरिया और सूअर आये। कुछ सूअर बडे-बडे थे, उनकी सफेद-सफेद खागे बाहर निकली हुई थी। रावल और महारानी पास-पास कुर्सी पर बैठे बन्दूक साधे तैयार थे। साथ की महिलाए पास मे खडी थी। रावल और महारानी की गोलियो से दो सूअर मारे गये, बाकी भाग निकले। दन्तैल सूअर मृत्यु से निर्भय होता है। प्राण-सकट आने पर भी वह पीठ दिखाकर भागने की जगह डटकर लडता है। किन्तु लोहे के सीकचो और पत्थर की दीवारो

की आड मे सुरक्षित बेठे बन्दूकधारी मे बेचारा क्या लडना ? किसी दन्तैल ने वीरता दिखलाते हुए अपनी सूअरियो से कहा था—

तू जा भूडण रिवछडै, म्हे जाऊ घणठट्ट ।
मेला रोवाऊ कामणी, के मास विकाऊ हट्ट ।

बच्चो के लिए भूडणिया (सूअरे) भगी जरूर, लेकिन बेचारा सूअर महलो मे कामनियो को नही रुला पाया, और उसने अपने प्राणो से हाथ धोये । शिकार-गाहो मे ही उस दिन खान-पान हुआ, और शाम तक लोगो के साथ रावल-रानी महल मे लौटे ।

× × × ×

एक दिन बघेरे की खबर आई । सुबह ही अन्नदाता ने हुकुम दिया—शिकार मे चलना है, सब लोग तैयार हो जाओ । रावल तो नौ बजे ही खाना खा लेते । वह खाकर लेट गये । महारानी भी चाहती थी, कि खाने से निबट-ले, लेकिन उनकी बहिन ने कहा—"यहा से खाना ले चलकर वही जगल मे खायेगे, बडा आनन्द आयेगा ।" सलाह मानकर टिफन-बक्सो मे सब तरह के भोजन और शराब की बोतले रख दी गई । बारह बज गये, लेकिन रावल अभी सो ही रहे थे । रानी ने कहा—"अब क्या करे ?" किसी-किसी ने खाने की सलाह दी, लेकिन फिर उनकी लालबुझक्कड बहिन ने कहा—"अब इतनी देर ठहरे, तो थोडा और ठहर जाय, अन्नदाता तो उठने ही वाले है ।" इस प्रकार रानी और अन्त पुरिकाए बिना खाये-पिये दो बजे तक प्रतीक्षा करती रही । फिर रावल उठे, मोटरे शिकारगाह की ओर रवाना हुई । शिकारगाह मे ऊपर-नीचे-सामने गोली छोडने के लिए बने छेदो (शहतीरो) से जाडे की ठण्डी-ठण्डी हवा आ रही थी । अन्त पुरिकाओ ने शराब से भरी गिलासो को इन छेदो मे रख दिया, जिसके कारण वह और ठण्डी हो गई, और ठाकुरानियो ने पीते समय जीभ चटकारते हुए कहा—"आज तो ठण्डो-ठण्डो दारू घणेइज हौ लाग्यो ।" सब ठाकुरानियो को ठण्डी शराब बढिया लग रही थी, लेकिन बेचारी ब्रह्मसम्बन्धिनी ठाकुरानी केवल मुह देखती रह गई । वहा दो ओदिया थी, और रावल अन्त पुरिकाओ की ओदी से अलगवाली मे शिकार के लिए जा बैठे थे । इधर खाना चल रहा था, उधर हाकेवाले चिल्लाते हुए बाजा बजा रहे थे, कुत्ते जगलो मे दौड रहे थे । वैसे होता, तो बघेरे के लिए कुत्ते रसगुल्ले से भी अधिक मधुर होते है, लेकिन इस वक्त तो उनके ऊपर प्राणो की पडी थी, वह कुत्तो को क्यो छेडने लगे ? हाकेवालो मे हर एक को एक रुपया इनाम

दिया जाता है, जिसके लोभ से वह स्वय बडी सख्या मे आ जाते। आवाज नजदीक आ रही थी, इसी समय एक चीता जगल से निकला और एक सरदार की गोली के लगने से वही ढेर हो गया। चीते को उठाकर शिकार-मण्डली लौटी। दस्तूर के मुताबिक रावल ने आज के शिकारो को अन्त पुरिकाओ के देखने के लिए भीतर भेजा। अन्त पुरिकाओ ने देखा, कि चीते के दातो के बीच मे अब भी एक कचरा (जगली ककडी) पडी हुई है, जिसे न जाने किस ख्याल से उसने मुह मे दबा रक्खा था, जब कि प्राणान्तक गोली उसके शरीर मे लगी। एक बडे सूअर का भी शिकार हुआ था, उसे भी देखने के लिए भीतर भेजा गया था। बीरन मामा की बीबी को सूअर का मास बहुत पसन्द था। रानी और दूसरो को मजाक सूझी। उन्होंने कहा—"मामीसा, आपको सूअर बहुत पसन्द है, कितना बडा सूअर है, जरा इस पर हाथ रखकर बैठ जाये, तो फोटो खीच लिया जाय।" बेचारी बात मे आ गई और जैसा भाजियो ने कहा, वैसे ही दोनो हाथो को रखकर सूअर के पीछे बैठ गई। खीचा हुआ फोटो रावल के सामने पहुचा, और वह मजाक करते हुए अपनी ममेरी-सास के कहने लगे—"मामीसा, आपको सूअर इतना पसन्द है, कि उसे कच्चा ही खाने के लिए बैठ गई?" सभी अन्त पुरिकाए हस पडी। मामी बहुत लज्जित हो कहने लगी—"मैंने अपनी भाजी से ऐसी आशा नही रक्खी थी। इसने मुझे धोखा दे दिया।"

ब्रह्मसम्बन्धिनी बाजी साठ वर्ष की बुढिया विधवा थी। जन्तर-मन्तर और दवाइया खाते-खाते उन्होंने अपने स्वास्थ्य को खराब कर लिया, लेकिन कोई लडका-लडकी नही हुई। ब्रह्मसम्बन्ध लेकर अब वह नारणजी की भक्ति मे लगी हुई थी। मनचली अन्त पुरिकाओ को मजाक के लिए उनसे अच्छा आदमी कहा मिल सकता था? हाथी पर चढने के दिन उनकी जो हालत हुई थी, उससे पहले रानीजी की दोनो मेहमान बहिने कहती—"बाजी, पानी पीने को दो।" बाजी जब तक स्नान न कर ले, तब तक किसी खाने-पीने की चीज मे हाथ नही लगा सकती थी, वह कैसे पानी देती? इसलिए कुछ आश्चर्य की मुद्रा मे मीठे स्वर मे कहती—"ए बा, लाडीसा हुकम, मू तो हिनान की दोडी कोई नी (मैंने तो अभी स्नान ही कोई नही किया)।" दूसरा मजाक था, दोनो बहिने उनका हुकुम लेकर गीत गाने लगती—

सुकान्तजी बाजी खेले सिकार, ए तो घणा सिकारी रे।
ए तो नाहर मारे रे सूर खावे रे, सुकातजी बाजी घणा रिझालू रे।
ए तो घणा रसीला रे ।

बेचारी वैष्णवी रानी जहा जाती, वहा चली जाती थी, लेकिन उससे और हिंसा से क्या सम्बन्ध ? वह हसती हुई दोनो बहिनो से कहती—"एबा, क्या मने पापोदडा भेडी करो (क्यो मुझे पाप लगाओ) ।"

रावल के अन्त पुरी दरबार मे सब मास खाते, शराब पीते, जो नही खाती वह मिठाइया और भाग से तृप्ति-लाभ करती, लेकिन बाजी सिर्फ मुह देखती रहती। सर्दी के दिन थे, तो भी मेला मे लौटने पर रात को वह ठण्डे पानी से नहाती, और पहले के तैयार रक्खे खाने को खाती, नही तो रात को बनाती, फिर पान खाती। दोनो बहिने उनके सामने मजाक करने के लिए बैठी रहती। कभी चोके मे आने की भी धमकी देती। वह जानती थी, कि हमारा चौका तो बीस कोस का है, और बाजी का बीस अगुल का भी नही। यदि वह भीतर चली जाती, तो बाजी बेचारी को भूखो ही रात काटना पडता, इसलिए वह चौके के भीतर नही जाती थी। कभी कहती—"बाजी, आप तो बहुत पुण्य का काम करती है, आपके लिए जरूर विमान लेने के लिए आयेगा, हमे भी एक-एक पाया पकडा देना, जिसमे हम पापिने भी आपके साथ स्वर्ग चली चले।"

दोनो बहिने बाजी को बहुत चिढाती, लेकिन यदि कुछ देर वह उनके पास न जाती, तो ढूढते-ढूढते कमरे मे आ पहुचती। बाजी का शिकार-गीत अधिक दिनो तक कैसे छिपा रह सकता था। किसी ने महारानी के पास खबर पहुचाई, फिर महारानी ने बाजी से कहा—"मै तो समझती थी, कि आप पुण्य करती है, आपको तो शिकार का भी शौक है।" इस पर बाजी कुछ खीज दिखाते हुए कहती—"क्या करू अन्नदाता, दोनो बहिने सारे दिन शिकार गाती रहती है।" वैसे बाजी समझदार औरत थी, लेकिन अपने एकान्त नीरस जीवन को केवल भक्ति से ही तो सरस नही बनाया जा सकता, इसलिए उन्हे इस तरह का विनोद बुरा नही लगता था। रात को रावल के दरबार से जब लौटती, तो महारानी के वही रह जाने के कारण अन्त पुर मे अब अपना राज था। यहा एक स्वतन्त्र दरबार लगता, जिसमे किसी एक रावल या महारानी की प्रधानता नही होती। नातिप्रौढाए, ठाकुरानिया, बहुत सी डावडिया और बाजी भी इस दरबार मे शामिल होती। बाजी का गला बडा सुरीला था, और बायो मे गुलबदन, सुकान्ता रानी कोकिलकण्ठी थी। बाजी केवल भक्ति के पद गाती। कभी नरसिह मेहता के पद को अलापती—

"मोडो आयो रे गिरधारी, ले जा गाठ तिहारी।
तेने सगरी बात बिगाडी।"

अथवा--

मोहन मोटो रे, भक्तारा भीड़ ।
काइ थारो टोटो रे। मोहन०
चोर-चोर के माखन खायो, ओगुन खोटो रे ।

बाजी ओर गुलबदन भी बिना साज के ही गाती थी, लेकिन उनका गाना बेसुर-ताल का नही होता था । बीच-बीच मे बाजी के शिकार के भी गीत गाये जाते और हसी-मजाक के फौवारे छूटते। दोनो बहिने शराब का अभिनय करते पानी का गिलास हाथ मे लेकर बाजी के सामने खडी हो जाती, और कहती-"लो सुकान्तजी बाजी मनुवार लो ।" बाजी का पीहर उग्रपुर मे था, और ससुराल जनपुर मे । जनपुर मे भी दोनो बहिनो के पास बाजी का आना-जाना बहुत होता था, इसीलिए जब दोनो बहिने कुछ समय नही दिखाई पडती, तो वह कहने लगती--"आप दोनो बेना नी देखो, म्हारा हिया फ्टवा लागी जावै ।" इसी यात्रा मे जलसागर मे अनादिकाल से अन्त पुरिकाओ के लिए बन्द खिडकिया दोनो बहिनो के प्रयत्न से खोल दी गई, इसमे बाजी की मदद बडी सहायक हुई थी। बाजी अपनी रसोई आप बनाती थी, इसलिए उनके पास सभी बर्तन और सामान थे । खिडकिया खोलने के लिए जब चीमटा मागा, तो बाजी ने कहा--"रानीसा नाराज हो जायगी ।" किन्तु, दूसरे ही क्षण वह चीमटा लेकर आ गई और जलसागर की तरफ की खिडकियो को खोल दिया। दोनो बहिनो ने कहा--"बाजी हम आज जेल तोड रही है, बडा कसूर है ।" इस पर बाजी ने यह कहकर सन्तोष कर लिया--"ए बा, थे जाणो दोनो बेना ।"

जलसागर मे शिकार, वनभोज और हसी-मजाक मे समय बीत जाता था। इनके अतिरिक्त बायो का एक काम था टूटे जेवरो की रलमिल गई मोतियो को अलग-अलग करके उनकी लडिया पिरोना। छोटे-बडे सात तरह के छेदोवाली सात छोटी-छोटी कटोरिया थी, जिनमे मोतियो को डालकर उन्हे उनके आकार के अनुसार छाट लिया जाता, फिर एक-एक आकार की मोतियो की अलग-अलग लडिया गूथी जाती ।

अध्याय २१

बाबोसा भी चले गये !

वडे चाचा अर्थात् बाबोसा दुनिया मे गौरी के सबसे बडे हितैषी थे। वह अपनी भतीजी को अपनी पुत्री से भी ज्यादा प्यार करते थे। जब उनकी अनुज-वधू मरी, उसके साल-डेढ-साल के भीतर ही उनका बडा नाती, दामाद और अन्त मे बेटी भी मर गई। एक के बाद एक इन भयकर आघातो की उनके मन पर भारी चोट पडी। बाहर अपनी मर्मव्यथा का प्रदर्शन न करते हुए भी भीतर से उनका मन व्याकुल रहता, जीवन नीरस मालूम होता। वह चाहते कि अपनी भतीजी को बराबर पास रखे, लेकिन यह सम्भव न था। फिर भी साल मे तीन बार उसे जरूर अपने पास बुलाते।

मा के मरने का आघात गौरी पर भी बहुत सख्त पडा था। जीजी के मरने पर वह मगलपुर गई। वहा उसे बुखार आने लगा। बुखार ९९-१०० डिग्री तक रहता--जब पन्द्रह दिन तक वह लगातार रहता दिखाई पडा, तो बाबोसा को फिकर पडी। अपने नगर, नरपुर तथा लखनपुर के भी डाक्टरो को दिखलाया। उन्होने कहा--"शायद तपेदिक हो।" गौरी की मानसिक स्थिति ऐसी थी, कि वह इस बीमारी से दुखी होने की जगह प्रसन्न थी। इस दुखमय जीवन मे तिल-तिल जलते जीने से क्या फायदा? तपेदिक भी आदमी को घुला-घुलाकर मारता है, इसका उसे ख्याल नही था। फिर जसपुर के डाक्टर को दिखलाया गया। उसने कहा--" टी० बी० का अभी पता नही है।"

बाबोसा इतने से सन्तुष्ट रहनेवाले नही थे। वह नही चाहते थे कि उनकी प्यारी बेटी भी इतनी जल्दी दूसरे प्रियजनो का अनुसरण करे। वह कहते--"क्या सभी मेरे सामने ही मरेंगे, और नेत्रहीन होने पर भी अपने हृदय को वज्र बनाकर मै यह सब-कुछ सहने के लिए बना रहूगा?" बाबोसा ने भतीजी को दवा कराने के लिए बम्बई भेजने का निश्चय किया। वकील साहब को बुलाया, उनके साथ दो बादियो और छ-सात नौकरो के साथ गौरी को बम्बई भेज दिया। वहा

डाक्टर देशमुख और डाक्टर बिलिमोरिया-जैसे प्रसिद्ध डाक्टरो से दिखलाया गया, एक्स-रे कराया गया, किन्तु टी० बी० का कही नामोनिशान नही था। डाक्टरो ने बतलाया—"बुखार का कारण टी० बी० नही, बल्कि कोई भारी सदमा है, जिसकी प्रतिक्रिया यह बुखार है । इन्हे बम्बई की खूब सैर करायें, सिनेमा दिखाये और हर तरह से खुश रखने की कोशिश करे ।" गौरी डेढ महीने समुद्र के किनारे वास कर बम्बई की सैर करती, सिनेमा और दूसरे मनोरजनो मे दिल बहलाती रही। फिर वर्षा आ गई, इसलिए उसे पूना ले गये। बुखार अब भी छूटा नही था। डेढ महीना पूना मे रहकर फिर सब लोग बम्बई चले आये। यहा एक दिन बुखार १०३ डिग्री तक पहुँचा। गौरी को कुछ घबराहट-सी मालूम हुई, उससे बैठा नही जा रहा था। थर्मामीटर लगाने पर पता चला कि बुखार १०३ डिग्री है । उसे आराम करने के लिए लिटा दिया गया । तीन दिन बुखार इतना ही रहा। जब कुछ कम हुआ, तो उसे मगलपुर ले आये। यहा कुछ दिनो टेम्परेचर ९९ डिग्री रहकर नार्मल हो गया। बाबोसा ने आराम की सास ली, क्योकि अब टी० बी० का भय नही रहा ।

प्रियजनो के मरने के बाद तीन-चार वर्ष तक बाबोसा उसी तरह अपनी नीरस जिन्दगी को बिताते रहे। इसके बाद एक दिन गौरी को उनकी चिट्ठी मिली—"तबियत खराब होने से मै जसपुर जा रहा हूँ, तू भी आ जा ।" जब तक अनुज-वधू जिन्दा थी, तब तक बाबोसा उसी के हाथ का बनाया भोजन करते थे। उसके मरने के बाद जब तक भतीजी उनके पास रहती, वह उसके हाथ का खाना पसन्द करते। लडकपन से ही बाबोसा के सामने सबसे अधिक जिसकी सिफारिश लगती, वह गौरी थी। इस समय जिन लोगो पर बाबोसा नाराज होते, वह गौरी के पीहर आने का इन्तजार करते रहते । लेकिन अब गौरी अपनी जिम्मेदारी समझती थी, इसलिए बाबोसा से बिना असली हाल पूछे, वह किसी के लिए सिफारिश करने को तैयार नही होती थी। फिर भी बाबोसा उसकी बात रखने के लिए कितनो को माफ कर देते थे ।

बाबोसा के जसपुर पहुँचने के चार-पाच दिन बाद ही गौरी भी वहा पहुच गई। पता लगा, मूत्रनाली मे कैन्सर हो गया है । रेडियो-इलाज होने लगा । प्रसिद्ध डाक्टर सेन उनकी दवा करते थे । डाक्टर सेन से पूछने पर जब उन्होने कैन्सर कहा, तो गौरी को भारी धक्का लगा, और वह बेहोश-सी हो गई। डाक्टर ने उसे देखकर बतलाया—"इनका हृदय कमजोर है, इन्हे ऐसे समय के लिए बराबर अपने साथ कोरामिन रखना चाहिए।" उसी दिन से गौरी का दुर्बल हृदय जरा भी

आघात पहुचने पर विकल हो जाता और उसके होश उडने लगते। वह अपने पास बराबर कोरामिन रखने लगी।

लेकिन गौरी तो अपने बाबोसा की सेवा-सुश्रूषा करने आई थी, वह अपनी परवाह क्यो करने लगी? खानसामे का बनाया भोजन बाबोसा को हजम नही होता था, बेटी के हाथ का बनाया भोजन उन्हे खाने मे भी अच्छा लगता और हजम होने मे भी। इसमे मनोवैज्ञानिक कारण भी था और उससे भी अधिक था गौरी का उनके हाजमे की अवस्था देखकर खाने की चीजो को तैयार करना। जब वह देखती कि दस्त साफ हुआ है, तो पूरा खाना देती, यदि कब्जियत मालूम होती, तो आधा खाना ही खिलाती। बाबोसा का भी बेटी के हाथ के खाने पर इतना विश्वास हो गया था, कि जब वह किसी सहेली के आग्रह पर सिनेमा या और कही जाने के लिए इजाजत मागती, तो वे कहते—"मेरे दूध-चाय का अन्दाज बताकर जाना।" खाने मे उन्हे गेहूँ का दलिया, मधु, नमकीन चावल, मूग के आटे की कढी-जैसी हल्की चीजे दी जाती। बाबोसा के शयनकक्ष की बगल के ड्रेसिंग-रूम को ही रसोईघर मे परिणत कर दिया गया था, जिस पर अँगीठी रखकर गौरी उनके लिए खाना बनाती। बाबोसा कमरे मे अक्सर टहला करते। जीवन के अन्तिम चार महीनो मे ही उन्होने चारपाई पकडी। कभी-कभी उनकी तबियत कुछ ठीक हो जाती, तो गौरी महीने-बीस दिन के लिए जनपुर चली जाती। बाबोसा इतना वियोग भी सहने के लिए तैयार नही थे। यद्यपि उनका नाती पद्मराज बराबर रहकर अपने नाना की सेवा करता, वह दो बच्चो का बाप था, तो भी बाबोसा उस पर विश्वास न करते हुए कहते—"यह तो बच्चा है!"

रियासतो के विलयन का काम होने लगा था। राजस्थान मे सब जगह घबराहट छाई हुई थी। ऐसे समय कोई भी मुल्ला-महन्त राजस्थानी गुडियो का धर्म के क्षेत्र मे ही नही, बल्कि राजनीति के क्षेत्र मे भी गुरु बन ठेकानेवाले जागीरदारो की अपने आसन्न भविष्य की चिन्ता से फायदा उठाता। महानन्द नाम का एक ढोगी साधु इस समय उनका पथप्रदर्शक बन गया था। बाबोसा ने जलसिह के लडके भरतसिह को गोद ले लिया था। इसमे शक नही, यदि उनके अनज बलवन्तसिह के लिए गोद लिया हुआ व्यक्ति भलामानुस होता, तो बाबोसा भी उसे ही अपना उत्तराधिकारी बनाते। भरतसिंह वैसे बुरा नही था, लेकिन महानन्द की पूछ बनकर भटकने से उसे फुरसत नही थी, इसलिए कभी-ही-कभी बीमार बाबोसा की सेवा मे आता। बाबोसा की बीमारी मे खर्च भी ज्यादा हो रहा था। भरत के बाप के हाथ मे ठेकाने का कारबार था। वह नही चाहते थे

कि भारी रकम डाक्टरो और दवाई मे स्वाहा हो। जसपुर रहने मे खर्च ज्यादा पडता था, इसलिए वह चाहेते थे कि बाबोसा को मगलपुर ले जाकर दवा कराये। डाक्टर सेन बीमारी की गम्भीरता को जानते थे, इसलिए वहा ले जाने की सलाह नही दे रहे थे।

एक दिन चिराग जलते गौरी जसपुर बाबोसा के पास पहुँची। बाबोसा की तबियत कुछ ज्यादा खराब हो गई थी। बेटी की आवाज सुनते ही बाबोसा ने कहा—"मेरी बेटी आ गई, अब मेरी तबियत ठीक हो जायगी।" डाक्टर सेन ने पूछा—"वह मगलपुर ले जाने के लिए तो नही आई है ?" इस पर बाबोसा ने कहा—"यह मेरी गोद की नही, बल्कि अपनी लडकी है।"

बाबोसा को मालूम था कि खर्च को कम करने के खयाल से ही उन्हे मगलपुर ले जाने पर जोर दिया जा रहा है। गौरी फिर डाक्टर के परामर्शानुसार पथ्य देने लगी। कैन्सर भीतर-ही भीतर अधिक बढ गया, जिसके कारण उन्हे अब बुखार भी आने लगा था। गौरी चार बार पथ्य देती। दूध को एक उफान देकर बोतल मे डाल ठण्डे पानी मे रख देती और उसी दूध को उन्हे पिलाती। कभी उबले अण्डे या आमलेट भी खाने को देती। लेकिन अब हालत सुधरने की कोई आशा नही रही थी। डाक्टर ने आपरेशन कराने की सलाह दी, लेकिन वह बडे खतरे की चीज थी, इसलिए बाबोसा और गौरी नही चाहते कि केवल एक डाक्टर के ऊपर भरोसा करके इतना जोखिम उठाया जाय। वह इसके लिए बम्बई जाना चाहते थे। दत्तक का बाप सोचने लगा, बम्बई जाने पर तो हमारा दिवाला निकल जायगा। लेकिन दूसरा कोई चारा नही था। खर्च कम करने के लिए गौरी उस समय बाबोसा के साथ बम्बई नही गई। नाती पद्मराज और दत्तक पुत्र भरतसिह उनके साथ गये।

बम्बई मे डाक्टरो ने देखकर कहा—"कैन्सर बहुत भीतर तक फैल गया है, आपरेशन के सिवा अब कोई चारा नही है।" एक बार आपरेशन निश्चय भी हो गया और गौरी के पास जसपुर मे आने के लिए तार भी आ गया, किन्तु फिर जोखिम से डरकर दूसरे तार मे खबर आई—"हम यहा से जसपुर लौट रहे है।" रेल मे बैठाकर उन्हे ले आने लगे। रनपुर मे उनका पेशाब बन्द हो गया और भारी पीडा होने लगी। किसी तरह सदलपुर होते उन्हे जसपुर ले आये। अब तुरन्त आपरेशन करने के सिवा और कोई रास्ता दिखाई नही पडा। उसी

दिन गोरी को तार मिला—"आपरेशन हो गया, तुरन्त आओ।" वह रात के बारह बजे ही मोटर द्वारा जनपुर से रवाना हुई और सुबह अजमेर मे खाना खाने के लिए जरा-सा रुककर फिर वहा से चलकर पाच वजे शाम को जसपुर पहुच गई। अभी तक बाबोसा की पत्नी गौरी की याया मगलपुर मे ही थी। बेटी को आई देखकर बाबोसा बडे खुश हुए। कहने लगे—"यह बेटी नही, मेरा छोटा भाई है। दूसरा कौन इसकी तरह मेरी खोज-खबर ले सकता है ?" दो दिन बाद याया और दूसरे लोग भी जसपुर पहुँच गये। आपरेशन होने के बाद बाबोसा ने सात महीने की और जिन्दगी पाई।

बाबोसा इस वक्त दुमजिले पर रहते थे। वही उनके लिए खाना बनता था। छत पर फूस का छप्पर खडा कर दिया गया था। उसी के नीचे गौरी उनके लिए भोजन बना देती। उस दिन नमकीन चावल बनाने के लिए उसने घी मे प्याज सुर्ख करके पानी डाला, तो छन्न-से ज्वाला निकली और छप्पर मे आग लग गई। वह बहुत तेजी से बढी नही, तो भी सारे छप्पर के जलने का खतरा तो था ही। याया को छोटी घण्टी मे आग बुझाने के लिए पानी लाते देख गौरी खतरे की बात भूल गई और उनके भोलेपन पर जोर-जोर से हँसने लगी। आग लगने पर लोग रोते है और यहा ठहाके की हँसी हो रही थी, जिसे सुनकर बाबोसा को भी आश्चर्य हुआ। जल्दी-जल्दी भिश्ती मशक मे पानी लेकर आया और आग बुझा दी गई। उस दिन बाबोसा को खाना एक घण्टे बाद मिला।

३० जनवरी, १९४८ को दिल्ली मे महात्मा गाधी की निर्मम हत्या की गई। बाबोसा की तबियत उस समय खराब थी, और धीरे-धीरे वे भी मृत्यु के नजदीक जा रहे थे। गौरी उस समय दूध लेने गई थी। लौटकर देखा, तो कोई आदमी बाबोसा के सामने खडा कह रहा था—"महात्मा गाधी को एक दुष्ट ने गोली से मार डाला।" गौरी दूध का गिलास लिये अपने पैरो पर खडी नही रह सकी। वह सोफे पर बैठ गई। बाबोसा ने कहा—"बहुत बुरा किया।" उनका दत्तक पुत्र वही पर खडा था। उसने कहा—"बहुत अच्छा किया। हमने तो इसकी खुशी मे ५) रुपये की मिठाई बाटी है।"

गौरी को यह बात सह्य नही हुई। उसने गुस्से के स्वर मे कहा—"महानन्द-जैसे ढोगी के पीछे-पीछे तुम दौड रहे हो, और यहा एक सच्चा महात्मा था, जिसके मारे जाने पर तुम मिठाई बाट रहे हो ?"

"साले ने सबको खराब कर दिया "—कहते हुए तरुण ठाकुर ने राजस्थान के अपने वर्ग की ओर से उद्‌गार प्रकट किया।

बाबोसा को बहुत बुरा लगा। उन्होंने कहा—"दुश्मन के मरने पर भी दो बूद आसू बहाते है, फिर यह तो वह आदमी था, जिसने हमारे देश को गुलामी से निकाला। किसको मालूम था कि अग्रेज यहा से जायगे ? यह इसी आदमी का प्रताप था, और तुम उसी के मारे जाने पर खुशी मना रहे हो ?"

बाबोसा के कैन्सर की चिकित्सा होते बरस-भर हो गया था, लेकिन उसके अच्छा होने की कोई सम्भावना नही थी। वह दिन-पर-दिन भीतर-ही-भीतर और भी बढकर भयानक होता जा रहा था। राजस्थान का सामन्तवर्ग भी भारत के शरीर म उसी तरह का भयकर कैन्सर है, और उसका सबसे बढिया इलाज यही हो सकता था कि आपरेशन करके जड-मूल से उसे निकाल दिया जाता। लेकिन गाधीजी के उत्तराधिकारियो ने इस वर्ग को उच्छिन्न करने की जगह जीवन-दान देना पसन्द किया। जिन लोगो का छुपा हाथ गाधीजी की हत्या मे था, उनमे ये सामन्त विशेष स्थान रखते थे। गोडसे को रजवाडो मे सबसे अधिक आश्रय मिला था, और विलयन के बाद से तो हम देखते है कि ये सामन्त सौराष्ट्र और राजस्थान मे हत्यारे डाकुओ की मदद से अपने खोये अधिकार को लौटाना चाहते है। इस सामाजिक कैन्सर को एक क्षण के लिए भी रखना खतरे से खाली नही है। पुराने जमाने की सडी-गली चार गुडियो को बनाये रखने के लिए हजारो आदमियो के जान-माल खतरे मे डालना कहा तक ठीक है ? उस दिन सुलह और शान्ति कराने के लिए आये चार किसानो को पाच सवार गोली मारकर रफूचक्कर हो गये, उन्हे कोई नही पकड पाया। क्यो नही पकड पाया ? इसलिए कि ठेकानेदार अब भी अपने गढो मे उनको शरण दे सकते है, अपनी भारी सम्पत्ति से उनकी हर तरह से मदद कर सकते है। सबसे पहले इनके हथियारो को छीनना चाहिए था, सबसे पहले इनके विष-दन्त को तोडना चाहिए था; लेकिन दिल्ली के देवता कैन्सर की चिकित्सा मरहमपट्टी से करना चाहते है !

खैर, महात्मा गाधी के निधन की खबर देकर जब आदमी चला गया और जब गौरी बाहर के सोफे से उठकर भीतर जाने लगी, तो दत्तक के पिता जलसिह काका ने उसे बुलाकर कहा—"इनकी तबीयत और भी खराब होती जा रही है, हवा-पानी बदलने के लिए अच्छा होगा कि हम इन्हे मगलपुर ले चले। यदि यहा कुछ हो गया, तो बहुत मुश्किल होगा।"

गौरी जानती थी, कि यह सब खर्च कम करने का बहाना है। वह यह भी जानती थी, कि चिकित्सा का जितना सुभीता जसपुर मे है, उतना मगलपुर मे नही होगा। जलसिह ने गौरी की सिफारिश से बाबोसा को जाने के लिए राजी करना

चाहा, लेकिन उसने कह दिया—"डाक्टर यहा से ले जाने की सलाह नही दे रहे है, डाक्टर सेन यह भी बतला रहे है कि यहा रहकर वे आठ महीने जीते रह सकते है, लेकिन यदि यहा से गये, तो दो महीना भी उनके लिए जीना मुश्किल होगा। ऐसी हालत मे मै कैसे बाबोसा से मगलपुर चलने के लिए कह सकती हूँ ?"

आखिर मे कह-सुनकर लोगो ने बाबोसा को मगलपुर जाने के लिए राजी किया। बाबोसा समझ रहे थे कि अब महाप्रयाण के दिन बहुत दूर नही है। वकील साहब बाबोसा के कहने पर ही गौरी के सरक्षक बने थे। पति ने जिस तरह अपनी बडी पत्नी को बाट का भिखारी बनाना चाहा था, उससे रक्षा करने मे सबसे अधिक जिस पुरुष ने काम किया, वह यही शिवलाल वकील थे। उन्होनै ठेकाने के वकील की आमदनी पर लात मारी, किसी के कहने-सुनने की परवाह नही की और बराबर इसी बात की कोशिश की कि दु ख और निराशा से भरे गौरी के जीवन मे थोडा भी आराम मिले। बाबोसा जानते थे, कि उनके बाद गौरी का जो पुरुष सबसे ज्यादा हितैषी है, वह यही वकील साहब है। गौरी आड मे से सुन रही थी, जब बाबोसा अपने हृदय के भावो को वकील साहब के सामने उडेल रहे थे—"मै अब नही जीऊँगा। गौरी के लिए तुम्हारे-जैसा हितैषी कोई नही है। जहा तक हो सके, इसकी मदद करना।" कहते-कहते बाबोसा अपने को सम्हाल नही सके। उनकी आखो से आसुओ की धारा बहने लगी। शिवलाल उदार-हृदय बृद्ध सामन्त की आखो से निकलते आसुओ को देखकर अधीर हो गये। आखो से वचित बृद्ध वकील के करुणापूर्ण चेहरे को नही देख रहा था, लेकिन उसके हृदय से कोई बात छिपी नही थी। उसी दिन बाबोसा मगलपुर के लिए रवाना होनेवाले थे और गौरी जनपुर जानेवाली थी। बाबोसा उस दिन गौरी के शिर पर हाथ रख बहुत देर तक रोते रहे। उन्हे अफसोस हो रहा था, कि मै अपनी बेटी को असहाय छोड रहा हूँ। वह जानते थे, अन्त पुरिकाएँ कितनी अबला है!

होली से पहले ही बाबोसा मगलपुर पहुँच गये। दस-पन्द्रह वर्ष पहले वहा की होली बडे गन्दे ढग से हुआ करती थी। होली के जलूस (डाकी) बडे ही घृणित रूप मे निकलते थे और लोग गालिया बकते थे। होली की डाकी को बन्द कराने मे बाबोसा का काफी हाथ था। उसकी जगह अब अच्छे गीत गाते जलूस निकलते थे। बाबोसा ने कहा—"होली के जलूस को अच्छी तरह निकालना चाहिए और रामा-सामा के लिए खर्च करने मे कोई कोताही नही करनी चाहिए।" होली अच्छी तरह बीत गई।

सातवे दिन (सीलसातम) को बासेडा आया। उस दिन बाबोसा की तबियत

खराब हो गई। जनपुर तार देने पर ही सन्तोष न करके बाबोसा ने आदमी भेजा कि जाकर मेरी वायली को मेरे पास ले आओ। तार मिलते ही गौरी जनपुर से मोटर से रवाना हुई। तीस मील की चाल से चलकर पाच घण्टो मे वह अमरपुर पहुँची। खाना खाकर वह तुरन्त जसपुर के लिए रवाना हुई। वैसे जसपुर से जल्दी रिजर्व डब्बा मिलना आसान नही था, लेकिन उस दिन तडाक-फडाक काम हो गया। उसी समय पद्मगज भी आ गये और वे भी मौसी के साथ डब्बे मे बैठ गये। पद्म-राज ने कहा कि मौसी, अब खिडकी बन्द मत करो। वे जानते ही थे, कि सामन्तो का युग खतम हो गया, अब अन्त पुरिकाओ को खिडकी बन्द और ताला बन्द करके रखना अधिक दिनो तक सम्भव नही हो सकता। रात के ढाई बजे गौरी की ट्रेन डनगढ पहुँची। आदमियो को ले जाने के लिए वहा मोटर और लारिया आई हुई थी। डब्बा कट गया था। इतनी रात को मगलपुर जाने की सलाह नही हुई, यद्यपि गौरी उडकर वहा पहुचने के लिए तडफडा रही थी। उसने बडी घबराहट मे बाबोसा की तबियत के बारे मे पूछा। लोगो ने कहा—"वैसे ठीक है, किन्तु जबान कुछ मोटी पड गई है।" यह सुनकर वह बहुत अधीर हो उठी, लेकिन दो घण्टे कटे डब्बे मे ही विश्राम करने के लिए मजबूर थी। फिर साढे चार बजे चलकर एक घण्टे मे मगलपुर पहुच गई।

धडकते हुए दिल से गौरी ने जाकर बाबोसा के पैर छुये। बाबोसा की जबान एक दिन पहले ही से बन्द हो गई थी, लेकिन जब उन्हे बेटी के आने की खबर मिली, तो हाथ का स्पर्श होते ही वह एकाएक बोल उठे—"बायली!" लेकिन बायली मे अब बोलने की ताकत नही थी। मुह खोलने का मतलब था चीत्कार निकलना। इसलिए उसने अपने ऊपर बहुत जोर देकर सयम करना चाहा। बूढे की आखो की जोत तो वर्षो से लुप्त हो गई थी। वह अपनी बायली और उसके स्वर से ही पहचान सकता था, और बायली मुह खोलकर बाबोसा को और दुखी करना नही चाहती थी। बाबोसा की बन्द जबान फिर खुली—"तेरी तबियत ठीक तो है?" फिर भी बायली बोल न सकी। उसको रोना आ रहा था। बूढा फिर बोला—"बायली!" लोगो ने भी कहा और गौरी को भी खयाल आया, इसलिए बूढे के फैले हुए हाथ के नीचे उसने अपने शिर को कर दिया। सरदार शिर पर हाथ रखे रोने लगे। पाच दफे उनके मुह से आवाज निकली थी। लोग आश्चर्य करते थे, लेकिन मन का भी शरीर पर काबू होता है और मनोवेग के सामने शरीर की इस तरह की बन्दिशे अक्सर टूटती देखी गई है। बाबोसा कोई बात कहना चाहते थे, किन्तु वे जानते थे, भरतसिह वही बैठा है, इसलिए कुछ नही

बोले। पद्मराज ने भी नाना के पैरो मे हाथ लगाया और लोगो ने नाम बतलाया, तो वे केवल 'हा' कहकर रह गये। वह कुछ देर सोते रहे। लोग आसपास बैठे हुए थे। फिर गौरी ने कहा—"खाना लाऊं ?" बूढे ने कहा—'क्या बायली ने बनाया है ?" 'हा' सुनने पर उन्होने ले आने के लिए कहा। बायली ने दूध-दलिया ला अपने हाथ से उनके मुह मे चम्मच द्वारा डालना चाहा। लोग ताज्जुब करने लगे, जब बूढे ठाकुर ने कहा—"मै तो बैठकर खाऊँगा।" ममनद के सहारे उन्हे बैठा दिया गया। ग्यारह बजे दिन का समय था। बाबोसा का यह अन्तिम भोजन था। गौरी ने चम्मच भरकर उनके मुह मे जब दिया, तो उन्होने गर्दन हिलाकर कहा—"बू बायली खवावै ?" बायली ने 'हा' की। दो-चार चम्मच खिला देने पर कहा—"मेरे हाथ धुला दो।" बायली ने कहा—"आपका हाथ जूठा नही है।" इस पर उन्होने कहा—"मेरे मुह पर हाथ फेर दो।" फिर वह लेट गये।

गौरी जिस दिन सुबह पहुँची थी, उसी के दूसरे दिन रात को बाबोसा मरे। नो बजे रात का समय था, जब उनकी हालत कुछ-कुछ खराब होने लगी। गौरी वही पास मे बैठी थी। उन्होने पानी मागा। वह पानी लेने गई। लोगो ने कहा कि गगाजल भी मिला दो। महाप्रयाण के समय गगाजल यात्री का बहुत भारी सबल है। जल मुह मे पडने लगा। लोगो ने कहा—"बाईसा दे रही है।" उन्होने दो-तीन चम्मच जल अपनी बायली के हाथ मे पिया, फिर बैठने के लिए हाथ का सकेत किया। उनके फैले हुए हाथ को देखकर बायली उनके नीचे बैठ गई। दो घण्टे तक वह अपने हाथ को बायली के शिर पर रखे रहे। अपने बाबोसा की इन अन्तिम घडियो की किसी बात को कहना गौरी के लिए इन पक्तियो के लिए नोट लिखवाते समय सहज नही था। उसका गला बार-बार रुँध जाता था। वह बुद्धिवादिनी महिला है, लेकिन न-जाने क्यो भावुकता इतनी कूट-कूटकर उसके हृदय मे भरी है। खैर, बाबोसा फिर नही बोले। वह उसी तरह शिर पर हाथ रखे रहे। गौरी की आखो से आसू बह रहे थे। डर था, कही वह बेहोश न हो जाय। सिंह जलसिंह काका ने बहाने से उसे हटाना चाहा—"यहा कीर्तन होगा, तुम पर्दे मे चली जाओ।" गौरी गिडगिडाकर कहती रही—"मुझे यही बैठी रहने दीजिए, ही जब तक ये है, तब तक अलग न कीजिए।" दो-तीन बार आग्रह करने पर वह यह कहकर वहा से चली गई कि कीर्तन खतम होते ही मुझे बुला लेना।

वह ऊपर जाकर अपनी चारपाई पर लेट रही, किन्तु आसू आखो मे नीद के लिए जगह थोडे ही देनेवाले थे। रात के एक बजे किसी ने दरवाजा खट-खटाया। गौरी जल्दी से दौडी। किसी ने कहा—"डाक्टर साहब ताश मगा

रहे है, तबियत ठीक है ।" उसने समझा, अब बाबोसा की तबियत ठीक हो गई है, इसीलिए खेलने के लिए ताश मगाया है। इसी आशा मे वह सोई रही। बाबोसा तो चार बजे ही चल बसे थे !

लौडी ने देर करते देखकर गौरी से कहा—"उठो, हाथ-मुह धो लो ।" वह हाथ-मुह धोने के लिए जल्दी करने लगी और एक मिनट भी देर किये बिना बाबोसा के पास जाना चाहती थी। अभी वह अच्छी तरह हाथ भी नही धो पाई थी कि नीचे से रोने-पीटने की आवाज सुनाई दी। वह वहा से भगी, लेकिन पहला कदम रखने से पहले ही उसकी चेतना साथ छोडने लगी। चार ही कदम चलने पर छत के ऊपर वह बेहोश होकर गिर पडी। शिर फूटा नही, लेकिन चोट के कारण सूज गया। घण्टे भर वह वही बेहोश पडी रही। लौडिया उसे उठाकर चारपाई पर ले गई। होश आने पर वह तडफडाने लगी—"अब भी एक बार बाबोसा का कोई मुह दिखा देता !" लोग इधर गौरी के उपचार मे लगे हुए थे, वह आखो से आसू बहा रही थी और उधर भिनसार से ही सवार छूटे हुए थे और भाई-बद तथा बाबोसा के प्रिय प्रजाजन अपने ठाकुर की श्मशान-यात्रा की तैयारी कर रहे थे, दस बजे उन्हे 'भस्मान्त शरीर' करना था।

अब तक मगलपुर गौरी को कुछ दूसरा ही दिखाई पडता था। साल मे तीन बार बाबोसा के आग्रह पर वहा आने पर उसे बहुत सन्तोष और आनन्द मिलता था। पति से उपेक्षिता, पति-कुल से वचिता गौरी का एकान्त जीवन हमेशा जलता-सा जीवन था। जब वह मगलपुर की रेतीली भूमि मे आती, तो उसके हृदय पर शीतलता छा जाती। उसे मालूम होता, वह मगलपुर की राजा या उपराजा है। लोग अपनी-अपनी प्रार्थनाएँ ले उसे घेरे रहते, और वह भी दुखियो और असहायो कर थ क्रियात्मक सहानुभूति दिखलाने मे आत्म-तोष पाती। बाबोसा चले गये। ठीक को मगलपुर अब बिल्कुल पराया मालूम होने लगा। बाबोसा के न रह जाने फि अब वह सचमुच अपने को अनाथ अनुभव करने लगी।

दत्तक पुत्र भरतसिह ने बाबोसा का दाह किया। लोग नहा-नहाकर तीन बजे श्मशान से लौट आये। भरतसिह के पिता जलसिह के यहा से भोजन बनकर आया, क्योकि बाबोसा की हवेली मे अभी चूल्हा नही जल सकता था। गौरी की चाची (भरतसिह की मा) खाना लेकर आई, लेकिन गौरी के गले के नीचे एक भी ग्रास कैसे उतर सकता था ? उसने थोडी-सी छाछ पी ली। याया अब 'कोने'

मे बैठा दी गई, उनकी वैधव्य-दीक्षा होने लगी। गौरी हृदय से ही अशक्त नही थी, बल्कि उसको डर था कि अगर खडी होकर चलने का प्रयत्न करेगी, तो गिर जायगी। मार्च का महीना था। सर्दी अभी भी खतम नही हुई थी। याया बेचारी अँधेरी कोठरी मे पर्दे के भीतर रो रही थी। आठ-नौ बजे रात को हिम्मत करके गौरी अपनी याया (चाची) के पास गई। घण्टा-भर मा-बेटी दिल गला-गलाकर रोती रही। मा के मरने पर गौरी के लिए ससार इतना सूना नही मालूम हुआ। बाबोसा ने नये कमरो को बनवाते समय एक कमरा गौरी और उसकी जीजा बन्दनी के लिए बनवा दिया था। दोनो बहिने बराबर एक साथ रहना चाहती। बाबोसा जब गौरी को बुलाते, तो उसी समय बन्दनी को भी बुला लिया करते। बाबोसा के स्नेह की छत्रछाया मे रहकर दोनो बहिने करीब एक ही समय बिदा हो जाती। अब गोरी की वह प्यारी बहिन भी वर्षो से सदा के लिए उसे छोडकर चली गई थी।

बहुत देर तक रोते रहना अच्छा न समझकर चाची गौरी को वहा से उसके कमरे मे ले गई। याया के सोने के कमरे मे जाने की गौरी को हिम्मत नही होती, यद्यपि वह अब खाली पडा था। उस कमरे की खिडकियो से गढ दिखलाई पडता था और वह स्थान भी, जहा बाबोसा बैठा करते थे। पुरानी स्मृतिया जाग उठती और जो दृश्य सामने खीचता, उसका मन मे लाना भी गौरी के लिए असह्य हो जाता। बहुत रात बीते तक वह आसू बहाती कपडो को भिगोती रही। फिर किसी वक्त नीद आ गई, जिसने कुछ समय के लिए उसे दु ख-सागर से बाहर कर दिया।

सबेरे भाजा पद्मराज आया। नाना की मृत्यु पर उसे भी बहुत दु ख था। वह भी प्रियजनो के वियोग का मारा हुआ था। उसने बडे भाई को मरते देखा था, मा के मरने पर आसू बहाये थे, पिता के वियोग को दिल पर पत्थर रखकर सहा था। पद्मराज को देखकर गौरी को थोडी-सी तसल्ली हुई। दोपहर को भरतसिह ने भाजे को खाना खाने के लिए बुलाया, लेकिन पद्मराज जानता था, यदि मै साथ न खाऊँगा, तो मौसी भी भूखी रह जायगी। इसलिए वह मौसी के साथ ही खाना खाना चाहता था। इस पर दोनो भाई दानसिह और भरतसिह ने भी आकर साथ ही खाना खाया। पद्मराज मौसी का मन बहलाने की बडी कोशिश करता, और जब तक वह बैठा रहता, तब तक मन बहला भी रहता।

श्राद्ध वैसे राजस्थान के सनातनधर्मी सामन्तो के लिए एक अनिवार्य क्रिया है। सनातनियो और आर्यसमाजियो मे मृतक-श्राद्ध के लिए भारी विवाद हुआ

करता था, लेकिन आर्थिक बाते धार्मिक विश्वासो से भी बढकर होती है। आपत्-काल होने पर श्राद्ध को दूसरे समय के लिए उठा रखने का रवाज था। सामन्तो को व्याह और श्राद्ध मे घर फूकना पडता था। ब्याह के लिए तो भीतर-बाहर की भारी मजबूरिया थी, लेकिन हाथ खाली का बहाना करके वह श्राद्ध को कुछ समय के लिए उठा रख सकते थे। धीरे-धीरे उन्होने श्राद्ध के वृहत् आयोजन को भी छोड दिया। बाबोसा के मरने पर श्राद्ध के खर्च का सवाल आया, लेकिन ठाकुर जलसिह को डर लगा कि बायली बाबोसा के श्राद्ध के लिए जोर देगी। उन्होने गौरी से पुछवाया—"बाईजी से पूछो कि अब श्राद्ध की प्रथा उठ गई है, तुम्हारी क्या मन्शा है ?" गौरी को यह विश्वास नही था, कि श्राद्ध मे दिया-दिवाया बाबोसा के पास पहुँच जायगा, लेकिन वह यह जानती थी, कि मृत पुरुष के प्रति अपनी श्रद्धा दिखाने का यह एक साधन है। वह चाहती थी कि श्राद्ध के रुपयो से बाबोसा के स्मारक-रूप मे कोई परोपकारी सस्था स्थापित कर दी जाय। शायद चाची भी गौरी का मन लेने के लिए कहने लगी—"देखो बना, यो काई रवाज चाल्या है, जे सब जण कइ रया है के सराध नी करा। आपारो चोखो नी लागे।" उन्होने यह भी कहा, कि हम दूसरो के श्राद्धो मे खाकर आये है, उसका बदला भी तो चुकाना है। चाची की बात आधे मन से हो रही थी, यह गौरी को भी मालूम था। उसने कहा—"यह तो आपके घर की बात है। जैसी इच्छा हो, करे। मै तो बहिन-बेटी हूँ, कैसे कह सकती हूँ कि श्राद्ध करना ही चाहिये।"

गौरी उसके लिए कोई आग्रह नही करेगी, यह सोचकर श्राद्ध नही किया गया। शोक मे पूछ-ताछ करने के लिए जो आते, उन्हे खाना खिला दिया जाता। जिस तरह ब्याह मे पीली चिट्ठी भेजकर सगे-सम्बन्धियो को निमन्त्रण दिया जाता, उसी तरह श्राद्ध मे फाडी चिट्ठी द्वारा निमन्त्रण भेजा जाता है। वह चिट्ठी नही गई, इसलिए भारी संख्या मे श्राद्ध में शामिल होनेवाले लोग नही आये। बारहवे दिन सुखसेज (शय्या-दान) की गई। आगन मे निवार के पलग पर गद्दा, चादर, तकिया, रजाई रखकर राजपुरोहित को मुह ढाककर सुलाया गया और पास मे खाने के सारे बर्तन—जिनमे चादी का थाल, रामसागर, लोटा आदि भी शामिल थे—ही रखे गये। इस प्रकार अन्त पुर के आगन मे आकर बाहर के सरदारो को शय्या की परिक्रमा करते पाच-पचीस चढाने का अवसर मिला और बहुएँ भी परिक्रमा करके पलँग के पायो को पकडकर उसे हिलाने पाई। पुरोहित के उत्तर जाने पर पलँग और दूसरे सामान के बाहर निकालते समय अन्त पुर की स्त्रिया रोने लगी।

तेरहवे दिन शोक मनाने का विशेष दस्तूर करना था, वह भी हो गया। गौरी को मगलपुर काट खाने दौडता था। इसलिए उसने चाचा जलसिह से जाने की इजाजत मागी। गौरी को सचमुच मालूम हो रहा था कि यदि मै और यहा रहूँगी, तो रोते-रोते पागल हो जाऊँगी। सेकेण्ड या फर्स्ट क्लास का डब्बा प्रयत्न करने पर भी नही मिला, फिर जनपुर तक के लिए सैलून रिजर्व किया गया। उसी दिन पद्मराज के साथ वह रेल से रवाना हुई। जनपुर तक मौसी-भाजे साथ गये। वहा से भाजा मालवा की ओर गया और मौसी वही रखी अपनी कार पकडकर जनपुर चली गई।

बाबोसा बहुत उदार थे। ऐसे आदमियो के पास बहुत धन जमा नही हो सकता। उनके पास चालीस-पचास हजार रुपये थे, जिनमे से कुछ उन्होने अपने नाती को दिया और बहुत-सा अपने नौकरो मे बाट दिया। दो-तीन वर्ष पहले बाबोसा ने गौरी को एक चादी की ईंट दी थी, जिसे बेचने पर पाच हजार रुपया मिला। मरते समय उन्होने दो चादी की ईंटे गौरी को और दो पद्मराज को दी। वे जेवरो और रुपयो मे से भी गौरी को देना चाहते थे, लेकिन उसने नही लिया— 'आपने बहुत कुछ मुझे दिया है, और लेकर मै क्या करूँगी ?" बाबोसा जानते थे कि सम्पत्ति अब भरतसिह के पास जायगी और मेरे जीवन-भर सेवा करनेवाले राजपूतो के साथ उनका बर्ताव उतना अच्छा नही होगा। ठेकाने मे राजपूत नौकरो को तनख्वाह की जगह पर खेत दे दिये जाते थे, जिसे वह आधी बॅटाई पर किसानो को जोतने के लिए दे देते और उन्हे काफी अनाज मिल जाता। काग्रेस का राज्य स्थापित हो चुका था, राज्यो और जागीरो के दिन भी इने-गिने रह गये, तो भी बाबोसा चाकरी के लिए दी हुई भूमि को ऐसे नही छोडना चाहते थे, कि उनके उत्तराधिकारी जमीन को छीन ले। जसपुर मे जब वह बीमार थे, उसी समय उन्होने जमीन के सौ-सवा-सौ पक्के पट्टे लिखवाये। दूसरे ठेकानेवाले ठाकुरो ने जोर दिया—"आप ऐसा न करे, नही तो हमारे सभी राजपूत नौकर पट्टा करने के लिए कहेगे और ठेकाना उजड जायगा।" राजपूतो की सभा करते फिरने-वाले भरतसिह ने तो बाबोसा के साथ पट्टे पर हस्ताक्षर तक करना अस्वीकार कर दिया, लेकिन बाबोसा को इसकी कोई परवाह नही थी। उन्होने कहा— "मै वचन दे चुका हूँ, भरतसिह चाहे हस्ताक्षर करे या न करे, मै तो पट्टा दूगा।" भरतसिह ने गौरी पर बहुत जोर दिया, कि वह बाबोसा के बख्शीश करने मे हस्तक्षेप करे, लेकिन वह इसके लिए तैयार नही हुई। हा, भरतसिह जिन दो राजपूतो पर नाराज थे, उनके पट्ठो को थोडे दिन के लिए रुकवा अवश्य

दिया। बाबोसा यह विश्वास नही कर सकते थे कि जो पट्टा बाट रहे है, वह ठीक हाथो मे पहुँच जायगा। इसलिए उन्होने गौरी के हाथ से पट्टो को बटवाया। अन्त मे जब अपने पास के जेवरो का वितरण करते समय वह गौरी को भी देने लगे और उसने इनकार करते हुए कहा—"मै स्वार्थ के लिए बाबोसा की सेवा नही कर रही हूँ।" बाबोसा ने इतना ही कहा—"तू पागल है, छोरी।" बाबोसा ने पद्मराज को चादी की दो ईटो के अतिरिक्त हीरे के बटन, कण्ठे आदि भी दिये। किन्ही-किन्ही नौकरो को तीन-तीन चार-चार हजार रुपये भी मिले। मगलपुर के जो डाक्टर चौबीसो घण्टे उनकी सेवा मे रहते, उन्हे रुपयो के अतिरिक्त काफी जमीन का पट्टा कर दिया। सचमुच बाबोसा अपने मरने के पहले इतनी सुगन्ध बिखेर गये, जिससे उनके ठेकाने के गावो और नगरो मे बहुत दिनो तक उनकी सुकीर्त्ति फैलती रहेगी। बाबोसा गाधीजी के निधन-दिन के एक-डेढ महीने बाद मरे थे।

अध्याय २२

फिर ठाकुरसाहब

खलपा के ठाकुर भोलेभाले, बुद्धि के कच्चे, लेकिन हृदय के दुष्ट नही थे। उनकी कमजोरियो से पूरा फायदा उठाने के लिए सेठ मानूराम सानी और खलपा की छोटी ठाकुरानी ने आपस मे गठवन्धन किया था। उन्हे विगाडने के लिए दोनो पूरी तरह से कोशिश करते। कभी-कभी इस बन्दीखाने से निकल भागने की भी ठाकुर साहब को इच्छा होती, लेकिन उनके चारो तरफ ऐसे आदमियो को रख छोडा गया था, जो उन्हे हिलने-डोलने देना नही चाहते। सेठ ने पुराने ड्राइवर को हटाकर एक नया ड्राइवर रख दिया था। ठाकुर साहब पोसी का बहाना कर एक दिन अपनी कार मे बैठकर भाग निकले और जनपुर मे वह शाम के पाच बजे पहुचे। बडी बीबी के बगले पर जाने मे उनको सकोच हो रहा था, समझते थे, वह फटकारकर भगा देगी, यद्यपि उनका यह सोचना बिलकुल गलत था। वह सीधे गौरी के मामा हिम्मतसिह की कोठी पर गये। मामा का अपना पुत्र नही था, उनके छोटे भाई और उनके लडके बाहर गये हुए थे। ठाकुर साहब आकर चबूतरे के ऊपर कुर्सी पर बैठ गये, मोटर चौक मे खडी रही। छोटे बच्चो को पास बुलाकर उन्होने कहा—"मामीसा से कहो, कि खलपा का ठाकुर मुजरा भेजते है।" मामी को यह बात सुनकर एक बार बहुत आश्चर्य हुआ, यद्यपि इस ब्याह मे उनका और उनके पति का ही सबसे बडा हाथ था, लेकिन गौरी की तरह उसके मामा-मामी को भी ठाकुर साहब भूल गये थे। मामा के मरने पर भी उन्होने उसी तरह मुह नही दिखाया, जिस तरह सास और बाबोसा के मरने पर। बच्चो को समझाकर मामी ने कहा, कि उन्हे जाने न देना, और कहना कि घर के लोग बाहर से आ रहे है। देवर का बेटा बली और उसका छोटा भाई गोविन्द दोनो उग्रपुर से आये हुए थे। सरदार बाहर गये हुए थे, देर भी हो सकती थी, इसलिए मामी को डर लगने लगा, कि कही ठाकुर साहब चले न जाय। घर आये सजन को वह नही जाने देना चाहती थी, आशा करने लगी थी, कि क्या जाने गौरी का भाग्य फिर पलटा खाये। लेकिन, ठाकुर साहब जाने की मशा से नही आये थे।

चिराग जलते समय तक सरदार कोठी पर आ गये। उधर खलपा के ठाकुरसाहब ने भी यह कहकर मामी को दिलासा दे दी––"मै रहने के लिए आया हू । लेकिन मै किस मुह से सलमिया के बगले पर जाऊ, इसलिए मुझे साथ लेकर पहुचा दो।" ममेरे ससुर का परिवार दामाद को ऐसे कैसे छोड सकता था ? उन्होने कहा–– "ऐसे नही जाना होगा, यही आपको खाना खाना होगा ।" ठाकुर साहब को इस तरह निश्चिन्त बैठाकर गोविन्द मोटर ले अपनी बुआ के बगले पर गया। अप्रैल का महीना था, गौरी छत पर लेटी हुई थी। इसी समय मोटर की गनगनाहट सुनाई दी, और एक छोरी ने आकर कहा––"ठाकुर बलीसिह आये है ।" गौरी तरह-तरह का अनुमान दौडाने लगी–"रात को क्या काम है, कोई बीमार तो नही हुआ ।" मामीसा ने बेटे को कह दिया था, कि असली बात मत बतलाना, इसलिए बली ने बहाना बनाते हुए कहा––"सजन (बेटे) की सालगिरह है, बहुत-से लोग निर्मन्त्रित है, तुम्हे भी चलना होगा।"

गौरी ने कुछ आश्चर्य करते हुए कहा––"सालगिरह पर तो मामीसा सुबह ही कहलवाती थी, आज तो मुझे खबर भी नही दी ।"

बली ने यह कहकर सन्तुष्ट कर दिया–"खबर देनेवाला दूसरे कामो के कारण भूल गया, फिर मा को मालूम हुआ, तो बहुत नाराज हुई, और उन्होने मुझे भेजा है। बुआ, तुम्हे चलना ही होगा।"

जब तक गौरी को बैठाकर मोटर चलने नही लगी, तब तक बली ने असली बात नही बतलाई। फिर बली ने धीरे-धीरे कहा––"छोटे-बडे मे लडाई हो गई है, इसीलिए मा बुला रही है ।"

गौरी को ख्याल आया, कि दोनो ममेरे भाइयो मे कुछ अनबन हो गई है, इसलिए उसने कहा––"छोटे-बडे भाई कभी लड पडते है, इससे क्या ?"

अभी भी गौरी को असली बात न समझते देख बजरग ने कहा––"खलपा मे लडाई हो गई है, जीजाजी वहा से चले आये, और हमारे यहा बैठे है। उनका नाम लेने पर तुम नही आओगी, इसीलिए मैने असली बात नही कही।"

× × × ×

गौरी नाराज अवश्य थी, लेकिन वह पति के भोलेपन को जानती थी, इसलिए सारे तिरस्कार और उपेक्षा को सहते भी वह उसे अपना शत्रु नही समझती थी।

मामी ने दामाद के स्वागत मे खूब भोज की तैयारो की थी, ढोलणिया खूब गाना-बजाना कर रही थी , ठाकुर साहब ने गौरी से कहा––"मै हमेशा के लिए

उसे छोडकर चला आया हू, यदि वापस जाना होता, तो आता ही नही।" उसी रात को बारह बजे वह अपनी चिर-उपेक्षिता पत्नी के साथ उसके बगले पर चले आये। वह सभी चीजो के लिए उतावले हो गये थे, और उसी समय वकील साहब को बुलवाने के लिए कह रहे थे। गौरी ने कहा—"वकील साहब सोये होगे, इस समय जगाना अच्छा नही।" फिर भी उन्होने नही माना। उसी रात को वकील साहब बुलवाये गये। ठाकुर ने उनसे कहा—"देखो वकील साहब, उस चाण्डालन ने मेरा क्या हाल कर दिया ?" वह शायद यह बतलाना चाहते थे, कि छोटी बहू ने दु ख दे-देकर उनके स्वास्थ्य का सत्यानाश कर दिया। गौरी को यह बात सुनकर हसी आ गई, क्योकि ठाकुर के स्वास्थ्य पर कोई बुरा प्रभाव देखने मे नही आता था। वकील साहब से उन्हे बात करते छोड गौरी जाकर सो गई।

दूसरे दिन सुबह को बात करते समय गौरी ने कहा—"यही क्यो नही चले आये ?"

"मै कौन से मुह से आता ? मैने तुम्हे कितना दु ख दिया ?"

"मुझे दु ख दिया सो दिया, लेकिन मा, बाबोसा, हिम्मतसिह मामा की मृत्यु पर तो आना चाहिए था ?"

ठाकुर साहब तो दूसरो के हाथ की कठपुतली थे। सेठ और छोटी ठाकुरानी ने कब उन्हे भली सगत पाने का मौका दिया ?

ठाकुर साहब खलपा से भागते समय सिर्फ शरीर पर के कपडे, एक टार्च और एक बन्दूक के अतिरिक्त जेब मे सौ रुपये लेकर आये थे। जेब के रुपयो को तो उन्होने मामाजी के हवेली मे ही नौकरानियो को बख्शीश दे डाला। उनका हाथ तो खुला था ही। अगले ही दिन मगनीमल कामदार को बुलाकर उन्होने कहा—"हम भोज देगे, रुपये का बन्दोबस्त करो।" वकील साहब से भी रुपये का बन्दोबस्त करने के लिए कहा था, किन्तु वह ऐसे आदमी को कैसे कर्ज दिलाते ? बहिन के ब्याह मे बिना सूद पर दस हजार रुपये उनने दिये थे, जिसमे से तीन हजार अभी लौटे नही थे। उन्होने समझाकर कहा—"मै ठेकाणे का कामदार नही हू, पैसा कहा से ला सकता हू।" खैर, मगनीमल ने कुछ रुपये लाकर दिये। तीसरे दिन आनन्द भोज हुआ। बहुत से हित-मित्र सरदार और ठाकुरानिया बुलाई गयी, खूब अच्छा भोजन शराब और नाच-गाना हुआ। सभी इस पुनर्मिलन पर बहुत प्रसन्न थ, ठाकुर साहब भी बहुत उल्लसित थे। अगले दिन उन्होने कहा—"घर मे रक्खा यह रेफ्रीजेटर अच्छा नही है, इसकी जगह हम नया लायेगे।" गौरी ने बहुतेरा कहा—"अच्छा है, काम चल जाता है।" तो भी वह नही माने।

उनके भाग आने पर सेठ कैसे निश्चिन्त रह सकता था ? सोने की चिड़िया हाथ आई थी, जिसके सहारे मुफ्त मे वह भी मौज उडा लेता था, ठेकाणे को खूब लूट रहा था। उसके साइकिल-सवार दिन मे चार-चार, पाच-पाच बार गौरी के बगले का फेरा देने लगे। ठाकुर साहब सानी कम्पनी मे ही गये, क्योकि और जगह कर्ज कहा मिलता ? वहा से वह बारह सो का एक रेफ्रीजेटर और बारह सौ का छतवाला पखा खरीद लाये। खाने के लिए भी करमा की शिकायत करने लगे— "वह मुझे भूखो मारती थी, डावडियो के हाथ का खाना खिलाती, जिसमे कोई स्वाद नही था।" बेचारी छोटी ठाकुरानी खाना बनाना भी तो नही जानती थी, कैसे अच्छा-अच्छा भोजन बनाकर खिलाती ? उन्होने पानी और राई मे बने मिर्च के अचार को खाने की इच्छा प्रकट की, और कुछ विशेष सब्जियो और मास की भी।

ठाकुर साहब चार-पाच दिन इसी तरह रहते रहे। सेठ के आदमी बुलाने के लिए आते, लेकिन वह जाने के लिए तैयार नही थे। एक दिन एक साइकिल-सवार ने आकर ठाकुर साहब के हाथ मे चिट्ठी दी—"एक अमेरिकन साहब आया हुआ है, उसको खाना दिया जा रहा है, आप भी खाने पर आइये।" ठाकुर साहब ने "मानूराम सानी साला अमेरिकन के भोज मे खाना खाने आयेगा, मै वहा नही जाऊगा" यह कहकर टाल दिया। दूसरे दिन सेठ के आदमी ने आकर कहा— "मानूरामजी कहते है, कि वहा चले गये, तो कोई बात नही, लेकिन मेरे कर्ज का हिसाब कर जावे।" ठाकुर साहब ने यह कहकर साइकिलवाले को बिदा कर दिया, कि इसका जवाब मै फिर दूगा।

वकील साहब को बुलाकर उन्होने कहा—"साले का कर्ज है, एक लाख का इन्तिजाम कर दे, जिसमे उसका कर्ज बेबाक करके छुटकारा ले ले।" वकील साहब ठाकुर के मन की अवस्था को जानते थे, इसलिए भी इतनी जल्दी कैसे मान लेते, कि उनका मन हमेशा के लिए ठीक हो गया है। उन्होने कह दिया—"ठेकाणे का इन्तिजाम आपके हाथ मे है, इतनी रकम मेरे कहने पर कौन देगा ?"

अभी भी विश्वास का वातावरण पूरी तौर मे स्थापित नही हुआ था, लेकिन जिस किसी को भी पुर्नमिलन का समाचार मिलता, वह हर्ष प्रकट किये बिना नही रहता। राजमाता को मालूम हुआ, तो उन्होने गौरी को बुलाकर उसके गले में माला पहनाई, और कहा, कि अब फिर उन्हे सेठ के हाथ मे जाने न देना।

× × × ×

एक दिन फिर सेठ का आदमी आकर बोला—"सेठ सिर्फ पाच मिनट के लिए अपनी कम्पनी मे बुला रहे है।" सेठ से इस पाच मिनट के लिए कामदार मगनी-

मल को पाच हजार रुपया इनाम देना तै हुआ था, इसलिए उसने समझा-बुझाकर ठाकुर साहब को वहा जाने के लिए राजी कर दिया। ठाकुर साहब चलते समय अपनी बीबी से कह गये--"आज खाने के लिए सफेद कोरमा और बेसन के पकौडे बनवाना।" लेकिन गौरी को विश्वास हो गया कि अब गये, सो गये। थोडी ही देर बाद जीप आकर बगले के सामने खडी हुई, और एक आदमी ने खबर दी, कि अमेरिकावाले साहब के साथ ठाकुर साहब भी शिकार पर जा रहे है, इसलिए कार, बन्दूक और कपडे मगवा रहे है।" गौरी ने बहुत आशा नही बाधी थी, लेकिन तब भी दु ख तो हुआ ही, जब चीजो को निकालकर उसने बाहर भिजवाया।

अमेरिकन साहब के साथ शिकार यही था, कि सेठ ने जनपुर की दो रण्डियो और ह्विस्की की बोतलो को साथ ले मोटर पर बैठा ठाकुर साहब को सीधे आबू पहुचाया। तरकस मे जितने अधिक बाण हो, उतना ही असफल होने का डर कम रहता है, इसलिए सेठ ने छोटी ठाकुरानी को भी आबू बुला लिया। छोटी ठाकुरानी के ऊपर भी इन चन्द दिनो मे ऐसी-ऐसी घटनाए घटी, जिनकी चोट उनके जीवन भर मिटनेवाली नही थी। ठाकुर साहब के हाथ से निकलने की बात सुनते ही उन्हे भय लगा, कि अब तो वह बडी सौत के साथ खलपा आ जायेगे, और जैसे मैने हर एक चीज को अपने हाथ मे समेट लिया, वैसे ही अब सारी चीजे हाथ से निकल जायेगी, इसलिए उसने सभी जेवरो, चादी-सोने के बरतनो और दूसरी बहुमूल्य चीजो को लारी पर लादकर कामदार के हाथ सेठजी के पास भेज दिया। अनाज जो पडा हुआ था, उसे भी जैसे-तैसे भाव पर पोसी मे भिजवाकर बेचवा दिया। खाना पकाने के बरतन, यहा तक कि गद्दा, होल्डाल तक को भी उसने नीलाम करवाके पैसे बना लिये। सिर्फ अपने खाने-पकाने भर के लिए बरतन और कुछ सामान रह गया। एक ठाकुरानी मेहमान आई, तो नौकरानी के यहा से बरतन मगवाना पडा। उसने सोचा, अब अगर बडी सौत आ भी जाय, तो उसे खाली घर भर मिलेगा।

आबू रहते ही समय सेठ का आदमी गौरी के पास आया, कि रेफ्रीजेटर और पखा मगा रहे है। गौरी ने कह दिया--"ठाकुर साहब की चिट्ठी लाओ, तभी मै दूगी।" न ठाकुर साहब की चिट्ठी आई और न यह चीजे सेठ की दूकान मे लौट-कर गईं।

आबू मे दो महीने मौज करके सेठ उन्हे लिये उग्रपुर पहुचा। वहा ठाकुर साहब को अपेडिसाइट का भयकर दर्द होने लगा। वह गेस्ट-हाउस मे छटपटा रहे थे, और उधर सेठ के जमाई द्वारा दिये गये भोज मे ठाकुरानी शामिल हो अपना नाच

दिखा रही थी, जहा मे वह बडी रात को तीन बजे लौटकर आई। खलपा की कुछ डावडिया साथ थी, उन्हे यह बात बहुत बुरी लगी—कैसे कोई औरत अपने पति को इस तरह तडपते देखकर नाच-मौज करने जा सकती है!

अभी दर्द अच्छा नही हुआ था, इसी समय रेल पर विठाकर ठाकुर साहब को जनपुर लाया गया। कचहरी मे ही वकील साहब को इस बात का पता लग गया था। उन्होने गौरी के पास भी खबर भेज दी। गौरी स्वाभिमानी थी, स्वाभिमान को ठेस लगानेवाली बात उसे पसन्द नही आ सकती थी, लेकिन उसका हृदय दूसरी तरह का था, जिसे वह "कौन स्त्री अपने सोहाग को नही चाहती" कहकर खतम कर देना चाहती है, लेकिन उसके सारे जीवन से मालूम होता है, कि उसके हृदय में उदारता और सहृदयता कूट-कूटकर भरी हुई है। अपेडिसाइट की बीमारी से ही महाराजा ऊधोसिंह मरे थे, इसलिए वह जानती थी, कि यह बीमारी हसी-खेल की नही है। वह दो बजे डेढ मील पर अवस्थित सलपुर मे पति के बगले पर गई। गौरी की मोटर को देखते ही वहावालो को आश्चर्य हुआ। सेठजी और उसका भाई अन्त -पुर में विराजमान थे। जैसे ही बडी ठाकुरानी के आने की खबर मिली, वैसे ही घबडा कर जल्दी-जल्दी वह बगले से चले गये। ठाकुर साहब को जब मालूम हुआ, तो उन्होने अपनी छोटी बीबी से कहा—"वह आई है, तू जा सीढियो पर उसे ले आ।" सौत सीढियो पर आई, लेकिन उसका मुह नही खुला। गौरी ने भी बोलना अच्छा नही समझा, ठाकुर साहब के पास जाकर पूछा—"आपकी तबियत कैसी है?" उन्होने कहा—"अच्छी तो नही है, आपरेशन कराने के लिए कह रहे है।" पति से पूछने के बाद गौरी ने सौत से भी तबियत की हालचाल पूछी। उसने जवाब दिया—"अच्छी है, आपकी तबियत तो ठीक है?"

आपरेशन कराने से पहले एक्सरे करवाई गई। आपरेशन हो जाता, लेकिन इसी समय दर्द थम गया।

× × × ×

दस-पन्द्रह दिन बाद फिर जोर का दर्द शुरू हुआ। इसी समय जनपुर की राजकुमारी की शादी बेलहा-राजकुमार से होनेवाली थी, जिसके लिए राजमाता छालाप्रासाद से किला मे जानेवाली थी। उन्होने गौरी को कहला भेजा—"सामान ठीक-ठाक कर लेना, कल किले मे जाना है।" लेकिन अगले ही दिन साइकिल पर आदमी दौडा-दौडा आया और उसने कहा, कि आज ठाकुर साहब का आपरेशन होगा। इसी समय राज का सवार मोटर लेकर आया। डावडी ने आकर कहा—

कि राजमहल से चलने के लिए मोटर आई है। एक तरफ राजमाता का आग्रह था, दूसरी तरफ पति का खतरनाक आपरेशन होनेवाला था। गौरी को निश्चय करने मे देरी नही लगी, उसे पति के पास जाना था, उसी पति के पास जिसने उसके जीवन को शूलो की सेज बना दिया है। उमने राजहमल की लौडी से कहा—"मुझे तो आपरेशन मे ही जाना होगा।" इस पर घर की डावडियो ने कहा—"शायद छल से बुलाती हो, आपकी सौत का कोई ठिकाना नही।" इस पर पहले ड्राइवर को बगले पर पता लगाने के लिए भेजा, उसने लौटकर कहा, कि ठाकुर साहब को अस्पताल ले गये है।

डाक्टर जनक माजन जनपुर के बहुत कुशल सज्जन तथा स्वतन्त्रचेता पुरुष थे। वह गाधी-टोपी तथा खद्दर की पोशाक पहनने लगे थे। हाल ही मे मरे जनपुर के राजा काग्रेम को फूटी आखो भी नही देख सकते थे, वह ऐसे आदमी को अपने अस्पताल मे कैसे रहने देते? डाक्टर माजन ने राज की नौकरी छोडकर सलपुर मे अपना प्राइवेट अस्पताल खोल रक्खा था, जहा पर मरीजो की भीड रहा करती थी। ठाकुर साहब को वही आपरेशन के लिए ले गये।

गौरी का आग्रह देखकर राजमाता ने जाने की छुट्टी दे दी। राजमाता की चचेरी बहिन गौरी के गोद लिये हुए भाई भरतसिह की बीबी थी। उसकी मा भी उस वक्त राजमाता के पास ही थी। उसे भी साथ लेकर गौरी अस्पताल पहुची, तब तक कोकेन का इजेक्शन देकर आपरेशन हो चुका था,और ठाकुर साहब को होश भी आ गया था, कमरे मे वह बाते कर रहे थे। डाक्टर माजन भी वही थे। गौरी को वही कुछ दिनो ठहरना था, इसलिए थोडा हालचाल पूछकर वह अपने बगले चली आई, और बगले का इन्तिजाम ठीक करके जहा-तहा ताला लगा बिस्तरा ले अस्पताल चली आई।

दोनो सौते बरामदे मे सोया करती। ठाकुर साहब की देखभाल के लिए बराबर दो नर्से ड्यूटी पर रहती। जो कोई देखने आता, अफसोस प्रकट करता, लेकिन सौत ऐसी मिट्टी की बनी थी, कि न उसे अफसोस था, और न वह अफसोस प्रकट करना जानती थी। वह ऐसी बाते करती, जिससे नर्सो को आश्चर्य होता, और वह कह उठती—"यह कैसी औरत है?" भला ऐसी स्त्री के प्रति कैसे कोई सहानुभूति दिखला सकता है, प्राण-सकट मे पडे पति के प्रति जिसका ऐसा बर्ताव हो? नर्से वहा मौजूद थी, तो भी गौरी पास जाकर बैठती। कुछ ही साल पहले जनपुर-महाराजा का अपेडिसाइट का आपरेशन हुआ था, पेट को टाका लगा था, उनको छीक आई, टाका टूट गया, पेट फट गया, अतडिया निकल आई, और वह मर

गये। रात को छीक-छाक से कुछ हो न जाये, इसके लिए वह सम्हालने के वास्ते पास मे बैठी रहती। उसे रात-रातभर बैठी देखकर नर्से कहती—"आप जरा आराम करे, हम आपकी सौत को बुला लेते है।" इसके बाद नर्से सौत को बडी नोची निगाह से देखने लगी। वह गौरी को सोने के लिए भेजकर उसे उठा लाती। भला वह अपनी नीद हराम करने के लिए क्यो तैयार होती ? उसने डाक्टर से शिकायत की—"नर्से उपेक्षा करती है, ठीक से ड्यूटी नही देती।" डाक्टर के पूछने पर नर्सो ने सब बात बतला दी। गौरी ने भी पूछने पर कहा—"मै जब तक जागती रहती हू, तब तक तो उन्हे सोती नही देखती।" तो भी छोटी ठाकुरानी के आग्रह पर डाक्टर ने दो दूसरी नर्से दे दी, दो दिन के बाद वह भी छोटी ठाकुरानी के बर्ताव को देखकर उससे अप्रसन्न हो गौरी की पक्षपातिनी बन गई। बेचारी छोटी ठाकुरानी दिल मे जलती-भुनती रहती, साथ ही वह देखती थी, डाक्टर माजन की स्त्री आकर उसकी बडी सौत के साथ बडे प्रेम से बात करती, उसे ऊपर अपने कमरे मे भी ले जाती।

अस्पताल इतना बडा नही था, जिसमे रोगी के सम्बन्धियो के लिए भी अच्छी तोर से रहने का इन्तिजाम हो सके, इसलिए दोनो सौते सुबह नहाने-धोने के लिए अपने बगले पर चली जाती, लेकिन खाना आकर अस्पताल मे ही खाती।

आपरेशन के दूसरे दिन शाम को सेठ आया। डावडियो ने कहा—"सानी मानूरामसा पदार्‌या।" गौरी उसके सामने नही होती थी, इसलिए वह बराडे मे चली गई। सेठ अपने साथ शराब की बोतले लेता आया था। न जाने कैसा आदमी था, राक्षस और पशु से भी बदतर था, इसमे सन्देह नही। गिलास मे शराब भरकर छोटी ठाकुरानी ने बडी ठाकुरानी के पास भी भिजवाया। लानेवाली ने कहा—"आपकी बहिन ने मनुवार भेजी है।" गौरी ने इनकार कर दिया। वहा कमरे मे शराब की महफिल जम गई। सेठ और उसका ड्राइवर प्याले पर प्याले लुढकाने लगे, ठाकुरानी भी ऐसे प्याले उडेल रही थी, मानो उनके पति को कुछ हुआ ही नही। इतने ही से सन्तोष नही आया, बल्कि मना करने पर भी करमा ने ठाकुर के मुह मे शराब उडेलना चाहा। अपनी डावडी से खबर पाकर गौरी ने डाक्टर की स्त्री को कहला भेजा। टाका कच्चा होते समय शराब पिलाना प्राणो के खतरे की बात है, इसलिए बात सुनते ही डाक्टर जल्दी-जल्दी नीचे पहुचा। उसने अपनी आखो से देखा, कि सेठ जबर्दस्ती ठाकुर को शराब पिलाने का प्रयत्न कर रहा है। डाक्टर ने चिल्लाकर कहा—"क्या कर रहे है, ठहरिये।" सेठ का हाथ रुक गया, ठाकुर ने भी कहा—"मै शराब नही पीना चाहता था, लेकिन ये

जबर्दस्ती कर रहे है ।" डाक्टर ने कहा—"इनको एक बूद भी शराब नही दी जा सकती, नही तो मै जिम्मेवार नही हूगा ।" साथ ही उसने सेठ को फटकारते हूए कहा—"मेरा अस्पताल शराबखाना नही है, आप जाकर दूसरी जगह शराब पीजिये । यदि फिर मैने ऐसा होते देखा, तो अपने अस्पताल मे घुसने नही दूगा ।" सेठ अपना सा मुह लेकर वहा से चला गया । डाक्टर ने देवर के द्वारा उनकी छोटी भाभी को भी कहला दिया, कि मेरे अस्पताल मे फिर ऐसा न होने पाये । जब देवर लाजसिह ने आकर भाभी से डाक्टर की बात कही, तो वह एकदम भडक उठी—"मुफ्त दवाई करने यहा नही आये, हम पैसा देते है। डाक्टर को ऐसा कहने का क्या अधिकार है ? हम आज ही अपने बगले चले जायेगे ।" इस पर गौरी ने उसे ठण्डा करते हुए समझाया—"ठाकुर साहब अभी खतरे से बाहर नही है, डाक्टर को चिढाना अच्छा नही है। जो कुछ कहना-सुनना हो, पीछे कह लेना । इस वक्त तो उनके प्राणो के लिए शान्ति से काम लेना चाहिए ।" वह शान्त हो गई, और उसके बाद से दारू अस्पताल म आनी बन्द हो गई ।

सेठ अपने शिकार को हाथ से कैसे जाने देता, इसलिए डाक्टर की फटकार खाकर भी वह ठाकुर साहब के पास अस्पताल मे बराबर आया करता । एक दिन उसके सामने ही ठाकुर और छोटी ठाकुरानी मे झडप हो गई । अधिक लोग ठाकुरानी का पक्ष ले रहे थे, सेठ दोनो को खुश रखना चाहता था । हल्ला सुनकर गौरी ने दरवाजा खटखटाकर कहलवाया—"यह लडने का समय नही है, उनकी तबीयत इससे और खराब हो जायगी ।" सेठ के सदलबल चले जाने के बाद ठाकुर ने कहा—"यह मुझसे नाहक लडती रहती है ।" गौरी ने गम्भीर होकर कहा—"मै आपकी लडाई की पचायत करने नही आई, मै तो आपकी सेवा करना चाहती हू ।"

एक दिन सेठ के ड्राइवर का दामाद दोपहर को आया । इस समय उसके ठाकुर साहब के पास पहुचने के लिए पर्दा करनेवाली बडी ठाकुरानी को बराडे मे जाने की जरूरत थी, लेकिन बराडे मे बहुत धूप थी, इसलिए उन्होने वहा जाने से इनकार कर दिया, सौत को पर्दा करना नही था। ठाकुर ने भी कह दिया—"कह दो, यह समय मिलने का नही है ।" दामाद खाली हाथ चला गया । सौत गुस्से मे न जाने क्या-क्या बडबडाती रही । दोनो फिर लडने लगे, इस पर गौरी ने कहा—"कम से कम मेरे रहते समय न लडा करो, नही तो यह समझेगी, कि मै ही झगडा करवा रही हू ।" दोनो चुप हो गये ।

गौरी को सभी कहा करती—"आप क्यो सौत के हाथ का खाती है, वह किसी

दिन जहर दे देगी।" गौरी को जहर से क्या भय हो सकता था ? वह आत्महत्या करना नही पसन्द करती, लेकिन मृत्यु को अप्रिय वस्तु भी नही समझती थी, इसलिए कह देती—"यदि जहर खिला दे, तो अच्छा होगा, सारा किस्सा ही खतम हो जायगा।"

× × × ×

आपरेशन के दो-तीन दिन बाद खलपा से सासू और देवरानी भी आ गई। सासू बेचारी पुराने ढग की थी, इसलिए वह मेज पर खाना पसन्द नही कर सकती थी। गौरी को भी यह पसन्द नही था, कि हम दोनो चादी के थालो मे मेज पर खाये, और सास नीचे थाल रखकर खाये। सासू के आने की खबर पाते ही सौत ने खाने की चौकी वहा से हटवा दी। जब सासू का थाल जमीन पर रक्खा गया, तो गौरी ने सौत से कहा—"चौकी पडी है, दे दो न।" सौत को यह बहुत बुरा लगा। जिस समय सास आई, उस समय खाना अभी तैयार नही था। गौरी अपनी सास के स्वभाव को जानती थी। वह हर वक्त कुछ न कुछ खाना पसन्द करती है। जब सौत से खाना खाने के लिए कुछ देने को कहा, तो उसने कहा—"इस समय कहा से खाना आवे ?" गौरी ने कह दिया—"पास मे बाजार है, सब चीजे मिल सकती है।" इस पर करमा ने बाजार से कुछ खाने के लिए मगवा दिया। सास रात को जब सोई तो पुराने रवाज के अनुसार गौरी सास का पैर दबाने गई। बेचारी बुढिया अपना रोना रो रही थी—"दोनो बहुओ ने नाक मे दम कर दिया है। सदा तुम्हारी याद आती रहती है।" सासुओ का राज अब राजस्थान से बिदा हो चुका था, तभी तो खलपा जैसे सबसे पिछडे कोनो मे भी सास को रक्त के आसू रोना पडता था। सौत ने कह दिया था, रोशनी बुझा देना। गौरी ने इशारे से कहा भी—"न जरूरत हो, तो बत्ती बुझा दू।" बहुत दिनो बाद बहू का मुह सास देख रही थी, उस बहू का मुह, जिसने कभी उसका अनिष्ट नही सोचा, और सदा उसके साथ सहानुभूति-सम्मान दिखलाती रही, इसलिए उसने यह कहकर बत्ती नही बुझाने दिया—"थोडी देर और तुम्हारा मुह देखूगी, फिर बत्ती बुझा देना।" जब बत्ती को बुझते नही देखा, तो सौत आग-बगूला होती आई और स्विच दबाकर उसने बत्ती को बुझा दिया।

सास के आये दो-तीन दिन हो गये। उनका दिल बहलाने के लिए गौरी बराबर उनके पास रहकर बाते करती रहती। वह दोपहर के वक्त सास के पास बैठती।

सौत को यह बिल्कुल पसन्द नही था। वह जनाने की ओर से आनेवाले दरवाजे को भीतर से बन्द कर सो गई। उधर के बगडे मे रोगी नही लेट सकती थी क्योंकि धूप ज्यादा थी। दरवाजा खटखटाया, तो कोई जवाब नही मिला। उधर का दरवाजा खोलने के लिए देवर द्वारा नर्स को कहलवाया लेकिन वैसा करने का नर्स को हुकुम नही था। इस पर गौरी को भी कुछ गुस्सा आ गया, उसका कारण भी था, वह धूप मे कैसे बैठ सकती थी। जब उसने दरवाजा तोड देने की धमकी दी, तो वह खोल दिया गया—सौत सोने का अभिनय कर रही थी।

ठाकुर साहब के खाने के लिए खिचडी दी जाती थी, जो बगले मे बनकर आती थी। वहा आते-आते वह बिल्कुल ठण्डी और नीरस हो जाती। ठाकुर साहब ने गौरी से कहा—"तू बना दे।" लेकिन गौरी काफी तजर्बा रखती थी, उसने कह दिया—"मै नही बनाऊगी, यदि पेट मे कुछ हुआ, तो यह मुझे बदनाम करेगी।" वह गौरी से कहते, बगले से आते समय छाछ लेती आना। एक बार वह अपने साथ लाई भी, लेकिन फिर कुछ समझकर उसने पीने को नही दिया। गौरी इसी आदमी के करण इतने दुःख-पक मे पडी थी, लेकिन वह अब भी कहती—"कौन स्त्री अपने सोहाग को कायम नही रखना चाहती?" कई बार सौत के कहने पर उसने जवाव दिया—"यहा डाक्टर खाना नही बनाने देते" शाम को उसने डाक्टर की बीबी से पूछा, तो उसने कहा—"आप जो चाहे बना सकती है।" यह तो सौत का बहाना था, वह खाना बनाने के लिए क्यो तकलीफ करने लगी? अगीठी रखकर पास को कोठरी मे भोजन बनाने मे कोई दिक्कत नही थी। रोगी को खराब से खराब खाना मिलता था। पास मे सेठ का अपना सिनेमा 'ओलेम्पिक' था, जिसके रेस्तोरा से अच्छी आमलेट अवश्य आ जाती थी।

आपरेशन के तीसरे-चौथे दिन राजकुमारी की शादी थी। राजमाता ने बुला भेजा था, लेकिन गौरी नही गई। अस्पताल के सामने सेठ के भाई डाक्टर का बगला था। उसकी लडकी की शादी हो रही थी। सौत के लिए भी न्योता आया था। भला वह महफिल से कैसे अपने को वचित रखती? वह सबेरे ही से तैयार होने लगी। उसकी निर्लज्जता सेठ को भी पसन्द नही आई, और उसने अपनी 'धर्म-बहिन' से कहा—"आपका जाना अच्छा नही होगा। बाईजी की शादी के लिए राजमाता का बुलौआ आया, लेकिन पति की बीमारी के कारण आपकी सौत नही गई, आप जायेगी, तो लोग बदनाम करेगे।"

ठाकुर साहब सोलह-सत्रह दिन अस्पताल मे रहे। अब वह काफी अच्छे हो गये थे। इसी बीच मे सलपुर के बगले मे किसी ठाकुर साहब को टिका दिया गया

था, इसलिए वहा ले जाना अच्छा नही समझा गया। सेठ ने अपना बगला देने को कहा, इस पर गौरी बोली—"अपना बगला है ही,फिर क्यो पराये बगले मे जायेगे ?" ठाकुर जानते थे, कि बडी पत्नी के बगले पर उन्हे अधिक आराम मिलेगा, और वह जाने के लिए "हा" भी कर चुके थे, लेकिन पीछे सेठ और उसकी 'धर्म-बहिन' उन्हे सेठ के बगले ही मे ले गये। गौरी अपने बगले मे आ गई, जहा से वह एक-दो दिन बाद बराबर हालचाल देखने के लिए जाया करती। ठाकुर साहब ने कहा—"रोज क्यो नही आती ?" इस पर उसने जवाब दिया—"रोज आने के लिए मेरे पास मोटर के लिए पेट्रोल कहा है ? मोटर भेज दिया करे, तो आ जाया करूगी। इसके बाद दूसरे दिन ठाकुर साहब ने मोटर भेजी, और गौरी भी चली गई।

बीमारी से मुक्त होने की खुशी का सुनहला मौका था, ऐसे समय सेठ साहब भोज का आयोजन क्यो न करते ? ठाकुर साहब के हित-मित्रो की सख्या बहुत सकुचित हो चुकी थी, लेकिन उसकी कमी सेठ का परिवार पूरा करता था। खुशी मे नौकर और नौकरानियो को भी साफे और लुगडिया बाटी गई। गौरी के यहा आठ नौकर थे, जिनके लिए तीन साफे आये, और पाच डावडियो पर तीन लुगडिया। इस पर गौरी ने ठाकुर साहब से कहा—"इससे तो अच्छा होता, यदि आपने मेरे पास चीजे न भेजी होती। मै कैसे कुछ को दू और कुछ को न दू। अगर लौटा देती हू, तो आपको इसका दूसरा अर्थ समझाया जायेगा।" ठाकुर साहब ने बाकी साफे और लुगडिया भी भेज दी। गौरी के भाग्य को कोई पलटा नही खाना था, लेकिन उसने अपने पति के साथ अधिक से अधिक सेवा और सहानुभूति दिखलाई। जब वह बिल्कुल अच्छे हो गये, तो उसने उनसे कहा—"अब मेरी पेशन हो गई, मै मसूरी जाना चाहती हू।"

"ठीक है जाओ।" कहकर ठाकुर साहब ने इजाजत भी दे दी।

उसके बाद ठाकुर उसी पिजडे मे बन्द होकर खलपा चले गये।

अध्याय २३

करमा ने कमाल किया

छोटी ठाकुरानी के 'गुणो' के बारे मे जगह-जगह काफी कहा जा चुका है। पिछले दस वर्षो मे उसने अपने 'धर्म-भाई' से मिलकर ठेकाणे को सत्यानाश कर डाला। यद्यपि इतने ही दिनो मे ठेकाणे की आमदनी चालीस-पचास हजार से बढकर दो लाख हो गई, लेकिन उसने धर्म-भाई को तीन लाख का कर्जा करवा दिया, इसलिए कोई आश्चर्य की बात नही, यदि खलपा के लोगो के मुह से निकला करता—

करमा ने गजब किया। घर फ्कके खाक किया।

बडी सौत के अलग होते ही करमा का अकण्टक राज था। इसी समय से उसके ऊपर मृत ससुर पितर बनकर आने लगे। एक दिन उसने काफी शराब पी ली थी, उसी समय पहली बार ससुरजी शिर पर आये, और वह आखे निकालकर जोर-जोर से ई-ई-ई करने लगी। डावडियो ने आकर घेर लिया और कहना शुरू किया—"क्या हो गया बापजी ?" आवाज इतनी तेज की हो रही थी, कि कमरे के नीचे रास्ते पर जानेवाले लोग भी खडे होकर सुनने लगे। पितर ने तुरन्त डावडियो को जवाब दिया—"मै तो फूलसिह हू।" अन्त पुरिकाए सहम गई। बडे ठाकुर के आ जाने पर वैसा होना ही चाहिए था। फिर पितर ने कहा—"मेरे बेटे को बुलाओ।" आख के अन्धे, गाठ के अधूरे बेटे साहब आ गये। पितर के सामने धूप दी जाने लगी। फिर पितर ने कहा—"झाली (सौतेली-सास) को बुलाओ।" सास ने जो सुना, कि पति-देवता आये हुए है, तो डर के मारे पसीनें-पसीने हो तुरन्त दौडी-दौडी आई।" ससुर ने कहा—"तेरे पास टूटा बकस पडा है ना ?"

हाथ जोडकर सास ने कहा—"हा, बापजी, पडिया है।"

"उसमे बडी झाली (मृत-सौत) का फूल सोनें की सौत की मूर्ति पडी है ना ?"

"हा बापजी, पडिया है।"

"कल एक फूल और गढा, वह दूसरी पितरानी होगी, फिर तू दोनो पित-रानियो को पूजना ।" सास ने 'अच्छा बापजी' कहकर सन्तोष की सास ली । उन्हे विश्वास नही था, कि इतने सस्ते पितर देवता छोड देगे ।

अन्त पुर की और औरते बापजी से हाथ जोडकर कहने लगी—"इत्ता दिन परघट क्यू नी होया बापजी ?"

पितर ने बडे इत्मीनान से कहा—"वह दूसरी (गौरी) मुझे मानती नहीं थी, न धूप देती थी, इसीलिए मै पन्द्रह वर्ष प्रकट नही हुआ ।"

अब ससुर-देवता अक्सर आने लगे । जब कभी भी दारू की मात्रा अधिक हो जाती, तो फूलसिह पितरलोक छोडकर ठाकुरानी के शिर पर आ जाते । सैकडो वर्ष के पुराने गढ मे भूतो-प्रेतो की क्या कमी थी ? छोटी ठाकुरानी को उनका बडा डर रहता । उनको बडी लालसा थी कि रामजी एक बेटा दे देते । अब दरबार मे साधु-फकीरो, ओझा-सयानो की महिमा बढी । करमा की देह मे दर्जनो जन्तर वध गये—चोटी मे भी जन्तर, बाजू मे भी जन्तर, कमर मे तो डोरे से चालीस-पचास जन्तर लटक रहे थे । कुछ जन्तर भूतो-चुडैलोसे बचाने के लिए थे,कुछ बन्ध्यापन दूर करने के लिए और काफी सख्या मे वशीकरण के भी जन्तर थे—आखिर ठाकुर को वश मे रखना तो सबसे जरूरी बात थी । एक धोबी भूत-प्रेत झाडने मे बडा उस्ताद था । वह सालभर खलपा के ठाकुर के पास रहा । उसे राजगुरु कहा जाता था । बिहार मे लाखो-की आमदनीवाली एक महारानी ने भी इसी तरह का एक भूत झाडनेवाला अपने बेटे के लिए रक्खा था । कई वर्षो तक वह राजगुरु राजकाज मे दखल देता रहा । खलपा का धोबी राजगुरु एक साल से अधिक नही रह सका । औरा के ठाकुर साहव को खून के दबाव की बीमारी थी । ठाकुरानी ने अपने राजगुरु की महिमा औरा की ठाकुरानी के सामने वखानी, और गुरु का मान औरा मे भी कुछ दिनो तक खूब हुआ । वहा पर भी उसने ठाकुर साहब को जन्तर बाधा, लेकिन खून के दबाववाला भूत राजगुरु के मान का नही था ।

× × × ×

छोटी ठाकुरानी का 'क्षणे रुष्टा क्षणे तुष्टा' वाला स्वभाव था । एक क्षण मे खुश होकर वह किसी को हाथी पर चढाती, और दूसरे ही क्षण नाराज हो नीचे पटक देती । लौड़ियो मे कभी एक की चलती । सारे अन्त पुर और बाहर भी लोग समझते, कि उसी का राज है । फिर नाराज हो जाती, और धक्का देकर उसे महल से निकालते कह देती—"खबरदार, जो फिर कभी भीतर पैर रक्खा ।"

इतना ही कहने से उसको सन्तोष नही होता था । दरवाजे पर ड्योढीवाले को हुकुम हो जाता, कि उस लौडी को भीतर न आने देना । दारोगा जाति के लोगो के पास भी हुकुम चला जाता, कि उस लौडी को ब्याह-शादी, उत्सव-त्योहार मे कोई अपने यहा न बुलावे, नही तो उसकी भी ड्योढी बन्द हो जायगी। बूढी विधवा लौडिया दारू-मास नही खाया करती थी, लेकिन ठाकुरानी जबर्दस्ती उन्हे दारू पिलाती, मास खिलाती। वह विधवा होने के कारण गोटे के कपडे नही पहन सकती थी । ठाकुरानी उन्हे गोटे के कपडे पहनाकर हुकुम देकर गाव मे भेजती, कि जाकर अपने मकान के सामने रास्ते पर नाचो। नाच के साथ बाजा बजाने के लिए ढोली भी भेज देती । भला बेचारी आश्रिता विधवा या बुढिया हुकुम मानने से कैसे इनकार करके ठेकाणे की सीमा के भीतर रह सकती थी ? जाकर नाचती, गाव के लोग ठाकुरानी के इस छिछोरेपन पर आश्चर्य करते, मन में कुढते भी, लेकिन गुण्डे और छिछोरे आदमी बहुत खुश होकर उस नाच को देखते ।

खर्च के लिए 'धर्म-भाई' की कोठी मौजूद थी। खर्च करने मे कोताही नही थी, सेठ का खजाना खुला हुआ था । कर्ज मे गाव गिरवी रक्खे जा रहे थे । कुछ गाव सेठ ने अपने नाम लिखाये, कुछ अपने उसी ड्राइवर के नाम, जिसकी स्त्री सेठ की चहेती थी । ड्राइवर का उग्रपुरवाला जमाई भी एक गाव का गिरवीदार था । काग्रेस का राज्य हो गया, अर्थात् राजस्थान की रियासतो का विलयन हो गया । खलपा के काग्रेसी ठेकाणे की इस अन्धेरगर्दी को देख नही सकते थे, विशेषकर जनपुर के सेठ और उसके गोइन्दो की लूट-पाट उन्हे पसन्द नही थी। १९५१ मे उन्होने इसके बारे मे एक अर्जी लिखकर सरकार के पास भेजी, इस पर ठेकाणे को हुकुम हुआ, कि अपनी आमदनी और खर्च का हिसाब दो। कितने ही खर्चो का दिखलाना सम्भव नही था, इसलिए ठेकाणे की बही मे चलीस हजार की रकम बडी ठाकुरानी के नाम लिख दी गई, और यह भी लिख दिया गया, कि गोला ड्राइवर की मार्फत यह रकम उनके पास भेजी गई। जब बडी ठाकुरानी से पूछा गया, तो उन्होने कह दिया—"मुझे एक पैसा भी ठेकाणे ने नही दिया।" रसीद के बिना ठाकुरानी के नाम से चालीस हजार रुपया हजम कर जाना कोई आश्चर्य की बात नही थी, लेकिन यहा के काग्रेसवाले भी तो भारत के दूसरें काग्रेसवालो से बहुत पीछे नही है, इसलिए जब अधिक बोलनेवाले की कुछ पूजा कर दी गई, तो मामले को ढीला छोड दिया गया ।

× × × ×

जुलाई १९५१ मे 'धर्म-भाई' सेठ मानूराम सानी चल बसा। एक मामूली रेलवे के साठ-सत्तर रुपये के नौकर से बढकर वह करोडपति बना। राजपूताने की कई बडी-बडी रियासतो मे उसकी बडी-बडी कोठिया थी, राजा और ठाकुर उसकी नाजबरदारी के लिए तैयार रहते। उस दिन (अप्रैल १९५० मे) ठाकुर साहब के भाग आने पर छोटी सौत ने अपने सारे जेवर, धन, पैसे को ढोकर, सेठ के घर मे पहुचा दिया, और अपने को अकिचन बनाकर निश्चिन्त हो गई। जब सेठ बीमार पडे, तो 'धर्म-भाई' की खोज-खबर लेने ठाकुरानी साहिबा बराबर जाया करती। सेठ के कोई पुत्र नही था, उसका उत्तराधिकारी उसका जमाई था। सेठ ने अपने सात भाइयो को भी कुछ-कुछ सम्पत्ति देकर उन्हे लूट-खाने लायक बना दिया था। ठाकुरानी का सारा धन जमाई के हाथ मे गया, या भाइयो को भी कुछ मिला, इसके बारे मे कुछ नही कहा जा सकता। सेठ के मरने पर ठाकुरानी एक दिन जब सेठ के घर गई, तो सेठानी ने डाटकर कहा—"डाकण, कलमुही, क्या लेने आई है ? हमारे घर को तो तूने खराब कर दिया, अब क्या चाहती है ?" सेठानी पूरी कोल्हू थी। मालूम होता था, किसी बडे गोल पीपे के ऊपर शिर के नाम से छोटी हडिया रख दी गई है। रूप के लिए वहा कोई सवाल ही नही हो सकता था। वह आसानी से कुरूपाओ की रानी बन सकती थी, फिर सेठ ऐसी स्त्री की क्यो परवाह करने लगा ? सेठ स्वय भी ठिगणा, काला और कुछ तुन्दिल-सा कुरूप आदमी था, लेकिन उसकी कुरूपता को ढकने के लिए उसके पास करोडो का धन था—"सर्वे गुणा काचनमाश्रयन्ति।" वह बराबर रण्डियो और ह्विस्की की बोतले लिये परमुण्डे फलाहार करता। ठाकुरानी ने सेठानी की गालियो को शिर झुकाकर सुना, और उससे भी ज्यादा भविष्य की आशका से भयभीत क्या-क्या सोचती लौट गई। उसने ठेकाणे के कामदारो और नौकरो को बुलाकर पूछा—"तुम्हारे सामने ही सारा धन लारी पर ढोकर सेठ के यहा गया, कचहरी मे तुम्हे गवाही देनी पडेगी।" सभी कामदार और नौकर तो सेठ के ही आदमी, और सेठ की लूट मे साझीदार भी थे, वह क्यो 'आ बैल, मुझे मार' कहने के लिए तैयार होते ? उन्होने गवाही देने से इनकार करते हुए कहा—"हमको क्या मालूम, कि लारी मे क्या भेजा गया था।" ठाकुरानी महीने-दो-महीने नौकरो को रखकर गाली दे उन्हे बाहर कर देती, फिर उसके मित्र कहा से मिलते ? अन्धा-धुन्ध वेतन देने के लिए तैयार होने पर भी कोई विश्वासपात्र नौकर उसके पास रहने के लिए तैयार नही था। हिम्मतसिह मामा का ड्राइवर गोकुल अपने पहले मालिक के यहा पन्द्रह रुपया महीना पाता था। उसे खलपा की छोटी ठाकुरानी ने

तीन सौ रुपया महीने पर रक्खा, क्या, सेठ ने रखवाया। इसमे सन्देह नही, कि इस तनख्वाह मे काफी हिस्सा सेठ का भी था। जिस समय अभी वह पहले ही पहल नौकर हुआ था, और ठाकुर साहब ने हवेली के भीतर गौरी के पास औरतो का जाने की मनाही कर दी थी, उस समय रोकने का काम गोकुल को दिया गया था। वह एक औरत को गाली देते मारने दौडा। उसी समय उसके पुराने मालिक आ गये। मालिक राज्य के एक उच्च अफसर थे। उनका लडका पुलिस इन्स्पेक्टर भी साथ मे था। उन्होने गोकुल को फटकारा और इन्स्पेक्टर को पकडने के लिए कहा, तो वह पैरो मे पडकर गिडगिडाने लगा—"नही बापजी मेरा कसूर नही है, माफ कीजिए, मै ऐसा नही करूगा।"

जसपुर के ठेकाणे मे मालगुजारी अधिकतर बिगोडी है, अर्थात् बिगहे पर नगद लगान ली जाती है। मालर मे वह बटाई है और मालगुजारी अनाज के रूप मे ली जाती है। जैसा कि पहले कहा, खलपा ठेकाणे की आमदनी १९४० मे चालीस-पचास हजार थी, जो अनाज की महगाई के कारण अब दो लाख हो गई थी। ठेकाणा फसल का प्राय चौथाई हिस्सा लेता था, जिसमे से राज्य रेख-चाकरी ले लेता। उग्रपुर मे ठेकाणेदारो से रेख-चाकरी नही ली जाती, उसकी जगह ठाकुरो को दरबार मे उपस्थित रहकर चाकरी बजानी पडती है—प्रथम श्रेणी के ठाकुर तीन महीना, द्वितीय श्रेणी के छ महीना और तृतीय के नौ महीना आकर उग्रपुर मे बैठे रहते—शिकार मे साथ जाना, दरबार मे मुसाहिबी करना आदि कोई काम करते रहते। घर मे कोई मर भी जाय, तब भी विना रावल साहब की आज्ञा के वह घर नही जा सकते।

१९५१ के अन्तिम छ महीनो मे ठाकुरानी ने अपनी रक्खी धरोहर के पाने के लिए बडी कोशिश की, लेकिन न सेठ का दामाद स्वीकार करता था, कि धरोहर हमारे पास है, और न उसके भाई ही। वह कह देते—"जिसने धरोहर रक्खी है, उसके पास जाओ।" सचमुच ही अब वह धरोहर सेठके पास पहुचने पर ही मिलेगी। ठाकुरानी ने ठाकुर से कहकर मुकदमा दायर करवा दिया है, लेकिन धरोहर रखने का गवाह कौन है? अब गुलछर्रे उडाने के लिए पहली तरह रुपया कैसे मिल सकता, जब कि जागीरे खतम होनेवाली है। खलपा के हाथी और घोडे पहले जैसे नही रहे—यह ठाकुर साहब की अदूरदर्शिता ही है, जो कि आठ-दस घोडे और एक ऊट अब भी रक्खे हुए है। एक जीप और एक लारी भी उनके पास है। सलपुर का बगला अब अधिकतर खाली रहता है, क्योकि वहा की महफिलो के लिए पैसे का आगम खतम हो गया है। अब ठाकुर अधिकतर खलपा मे रहते

है। लगान मे अनाज कुछ आ जाता है, बस वही जीविका का साधन है। ठाकुर साहब को इस जगह पहुचाकर भी अभी छोटी ठाकुरानी उसी तरह उनके ऊपर हावी है। इन भूभारभृत सामन्तो और रानियो को काग्रेसी सरकार को धन्यवाद देना चाहिए, कि जो वह भूख के मारे भीख मागने के लिए अभी तक मजबूर नही हुए, बल्कि उल्टा डाकुओ की मदद से अपना राजपाट लौटाने और काग्रेसी सरकार को उखाड फेकने का स्वप्न देख रहे है।